'मेघदूत एवं शारिका सन्देश का काव्यशास्त्रीय तुलनात्मक अध्ययन'

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी (उ०प्र०)

पी-एच०डी० (संस्कृत) की

उपाधि हेतु प्रस्तुत
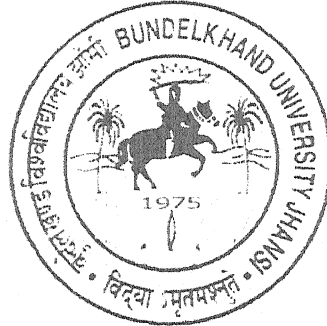
2005

शोध निर्देशिका :

डॉ० श्रीमती नमिता अग्रवाल

एम.ए., पी-एच०डी०

रीडर : संस्कृत विभाग

अतर्रा स्नातकोत्तर महाविद्यालय

अतर्रा (बाँदा) उ०प्र०

शोधकर्त्री :

सुमन शुक्ला

एम०ए० संस्कृत

(स्वर्ण पदक विजयनी)

अतर्रा स्नातकोत्तर महाविद्यालय

अतर्रा (बाँदा) उ०प्र०

अनुसंधान केन्द्र

अतर्रा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अतर्रा (बाँदा) उ०प्र०

उपोद्घात

नियतिकृत नियम रहितां ह्लादैकमयीमनन्य परतन्त्राम् नवरस ऋचिरां निर्मिति मादधती भारती कवेर्जयति काव्य प्रकाशकार मम्मट ने उक्त सुभाषित में काल जयी रचनाओं का अनुशंसन ही नहीं किया अपितु श्रेण्य साहित्य के कारक तत्वों का भी उल्लेख किया है। कनिष्ठिकाधिष्ठित कालिदास की रचनाओं में मानव मन के तीव्र रागानुबन्ध या अनुभूतियों का सूक्ष्म परिवेक्षण मिलता है। रसरुचिरा ह्लादैकमयी रचना कामिनी का भ्रूविलास ही उनका काव्य है। उन्होंने महाकाव्य, खण्डकाव्य, गीतिकाव्य एवं नाटकों की रचना कर यशस्वी कृतियों में सुकुमार कुसुम लोकोत्तर सौरभ का प्रसार किया है। मेघदूत उनका इसी प्रकार का संदेश काव्य है जिसमें रस पेशलता, अर्थवत्ता, सतर्कता तथा अलंकृति प्राण वायु के सदृश है तो रमणीयता अभिरामता के उच्छल तरंगों में सह्रदय भावुक रसमर्मज्ञ काव्यशास्त्रविद् डूबता उतराता रहता है। इसी मेघदूत की परम्परा का अनुगमन उत्तर भारत से लेकर दक्षिण भारत तक के कवियों ने समान रूप से किया है। शारिका सन्देश रामपाणिवाद का ऐसा ही काव्य है जिसमें शारिका के द्वारा दौत्यकर्म सम्पादित कराया गया है। अतः मैंने दोनों रचनाओं के काव्य शास्त्रीय तुलनात्मक अध्ययन हेतु शोध प्रबंध को सात अध्यायों में विभक्त किया है।

प्रथम अध्याय में दूतकाव्य की परम्परा का उल्लेख करते हुए वैदिक काल के ऋषियों रामायण, महाभारत कालिदास सहित अनेक संस्कृत के दूतकाव्यों का उल्लेख कर मेघदूत को समस्या पूर्ति के रूप में लेकर लिखे गये जैन कवियों के भी दूतकाव्यों का सम्यक अध्ययन किया है।

द्वितीय अध्याय में कालिदास एवं रामपाणिवाद का सामान्य परिचय उनके जीवनकाल और आलोच्य कवियों की सभी रचनाओं का परिचय विहगावलोकन की दृष्टि से किया है।

तृतीय अध्याय मेघदूत एवं शारिका सन्देश की कथावस्तु तथा उसके विश्लेषण से सम्बन्धित है। यहॉ पर मेघदूत एवं शारिका सन्देश की कथा मौलिक उद्भावनाऍ कथागत विरलता एवं प्रभाव गत साम्य–वैषम्य का निरूपण शास्त्रीय ग्रन्थों के परिप्रेक्ष्य में किया गया है।

चतुर्थ अध्याय आलोच्य काव्यों में भाव एवं रस विवेचन से सम्बन्धित है मेघदूत में अंगी रस रूप में विप्रलम्भ श्रृंगार प्रयुक्त है तो शारिका सन्देश में मधुरा भक्ति को अंगी रस स्वीकार

कर अन्य सहायक रसों के शास्त्रीय विवेचन पर आलोच्य काव्यों में विभाव अनुभाव एवं संचारी भावों का सम्यक विश्लेषण किया गया है।

पंचम अध्याय में आलोच्य दूत काव्यों में वर्णित प्रकृति एवं अन्य वस्तुओं का वर्णन किया गया है। प्रकृति के नाना रूपों—आलम्बन, उद्दीपन आदि के साथ अन्य वस्तु वर्णन में—नदी, समुद्र, गिरि, ग्राम, नगर स्थलों का उल्लेख कर आलोच्य कवियों के एत द्विषयक वैशिष्ट्य का निरूपण हुआ है।

षष्ठ अध्याय में आलोच्य दूतकाव्यों में भाषिक प्रतिमानों के सौन्दर्य का निरूपण है। शब्द विधान, वैचित्र्य, शब्द शक्तियॉ मधुर सरल, व्यास, समास भावानुकूल शैलियों के निरूपण के साथ प्रयुक्त छन्दगत विशेषताओं का निरूपण किया गया है।

सप्तम एवं अन्तिम अध्याय में काव्य शास्त्रीय सिद्धान्तों को प्रस्तुत कर आलोच्य दूतकाव्यों के उदाहरण प्रस्तुत किये गये है। काव्य शोभा कारक अलंकार विधान, रीतिगुण, वृत्ति, वक्रोक्ति और उसके भेद ध्वनि सम्प्रदाय के अन्तर्गत संलक्ष्य क्रम, असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि के उदाहरण देकर काव्य में प्राप्त अर्थ चारूत्व रसपेशलता वक्रव्यापार जनित सौन्दर्य का तुलनात्मक अध्ययन, विवचेन किया गया है। जिसमें यह दिखाने का प्रयास किया गया है। कि दोनों कवियों ने इसमें पर्याप्त कुशलता दिखाई है। रामपाणिवाद भाषा एवं व्याकरणविद् कवि हैं। और कालिदास रसविद् एवं भावुक।

ओज, प्रसाद, माधुर्य गुणों का सामान्य परिचय एवं उनके शब्दगत वैशिष्ट्य का निरूपण करते हुए वक्रोक्ति को विस्तृत रूप में निरूपित किया गया है।

निष्कर्ष रूप में मेघदूत और शारिका सन्देश की पृष्ठभूमि और कथावस्तु का विश्लेषण करते हुए कहा जा सकता है। कि दोनों कवि भौतिकवादी सभ्यता का प्रत्याख्यान न करते हुए भी प्रतीक रूप में हृदयस्थ मानवीय भावनाओं के कवि हैं। दोनों ही कवियों का जीवन परिचय अल्पज्ञात या अज्ञात है किन्तु दोनों के काव्य ग्रन्थ उनके प्रतिनिधि एवं विख्यात काव्य है।

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध डॉ0 श्रीमती नमिता अग्रवाल रीडर, (संस्कृत विभाग), अतर्रा महाविद्यालय, अतर्रा, के कुशल निर्देशन में प्रस्तुत किया गया है। डॉ0 नमिता अग्रवाल रामपाणिवाद के साहित्य की विदुषी हैं अतः शारिका सन्देश के मर्म को समझने एवं भावबोध की सरल व्याख्या में उनका निर्देशन मेरे लिए पाथेय बना है। उनकी विद्वता के विषय में मैं इतना ही जानती हूँ कि अपने नाम को सार्थक करती हुयीं ''नमिता न मिता अस्ति'' एतदर्थ मैं अपनी कृतज्ञता हृदय से ज्ञापित करती हूँ। संस्कृत विभाग के इसी महाविद्यालय के अध्यक्ष प्रो0 राजाराम जी दीक्षित, डॉ0 ओंकार नाथ मिश्र ने अपना अमूल्य समय देकर मुझे उपकृत किया है। डॉ0 वेदप्रकाश द्विवेदी अध्यक्ष रीडर (हिन्दी विभाग) अतर्रा महाविद्यालय, अतर्रा, ने संस्कृत काव्यशास्त्र के भवाटवी से मुझे निकाल कर आलोच्य कवियों के उदाहरणों को समझा कर जो मार्गदर्शन किया है। उसके लिए कृतज्ञता ज्ञापन बहुत औपचारिक प्रतीत होता है, ऐसे अवसर पर मैं श्रद्धापूर्वक स्मरण करती हूँ। मैं स्व0 आचार्य श्री राममनोहर मिश्र प्रधानाचार्य, संस्कृत विद्यालय, बाँदा, की हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने शारिका सन्देश के गूढ़ अर्थ को समझने में मेरी सहायता की। प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध को पूर्ण रुप में देखने की अभिलाषा मेरे पूज्य पिता श्री गया प्रसाद शुक्ल एवं माता श्रीमती जयन्ती देवी की थी, उनके स्नेह और औदार्य के प्रति कुछ भी कहना उचित नहीं लगता। इन्हीं की ज्ञानदायिनी प्रेरणा ने मेरे व्यक्तित्व को गतिशील बनाया। मैं प्रणत हूँ उन विद्वानों, कवियों, लेखकों, आलोचकों के प्रति जिनकी कृतियों, ग्रन्थों का अध्ययन करके मेरी बुद्धि नवीनता की ओर अग्रसर होकर इस शोध-प्रबन्ध को पूर्णता का रुप दे सकी, क्योंकि कालिदास में जितना शोध-कार्य हुआ है जिसके कारण वह विश्व विख्यात कवि रहे हैं, रामपाणिवाद उतने ही अल्पज्ञात कवि रहे हैं। बाँदा जिले के श्री युत् रामकृपालु द्विवेदी एवं वामदेव संस्कृत महाविद्यालय, बाँदा के पूर्व प्राचार्य, आचार्य श्री रामऔतार बाजपेई जी एवं आचार्य श्री रामेश्वर प्रसाद त्रिपाठी, सहायक विभागाध्यक्ष (व्याकरण) के सारल्य एवं ज्ञान के प्रति अभिभूत हूँ। इनके सहयोग से मुझे शोध कार्य लिखने में सहायता मिली है। मैं अतर्रा महाविद्यालय, अतर्रा, के पुस्तकालयाध्यक्ष श्री हीरालाल यादव जी का धन्यवाद करती हूँ क्योंकि उन्होंने सम्बन्धित सामग्री एवं आलोच्य ग्रन्थ उपलब्ध कराये हैं।

अन्त में शुभ्रा चतुर्वेदी का स्मरण करना बहुत आवश्यक है क्योंकि उनके अनथक प्रयास से यह शोध-प्रबन्ध समय से टंकित हो सका।

घोषणा

प्रस्तुत शोध प्रबंध मेरी मौलिक कृति है।

सुमन शुक्ला

भवदीया

सुमन शुक्ला

सुमन शुक्ला,

एम0ए0 संस्कृत

(स्वर्णपदक विजयनी)

अतर्रा, महाविद्यालय, अतर्रा

डॉ 0श्रीमती नमिता अग्रवाल
रीडर, संस्कृत विभाग,
अतर्रा स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
अतर्रा, बाँदा (उ 0प्र 0)

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि *कु0 सुमन शुक्ला* ने मेरे मार्ग दर्शन में रहकर *"मेघदूत एवं शारिका सन्देश का काव्यशास्त्रीय तुलनात्मक अध्ययन"* पी0 एच0 डी0 उपाधि हेतु शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किया है। इस शोध-प्रबन्ध को प्रस्तुत करने के लिए बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय के अधिनियम में उल्लिखित 200 दिन उपस्थित रहने के नियम का पूर्ण पालन किया है। यह शोध-प्रबन्ध उसकी मौलिकता का परिचायक है। इससे उत्तर और दक्षिण भारत के सांस्कृतिक एकता के क्षेत्र में एक नया आयाम उद्घाटित एवं स्थापित होगा, ऐसा मेरा विश्वास है। यह शोध-प्रबन्ध इनकी मौलिक कृति है।

दिनांक :-

शोध निर्देशिका

Namita

डॉ 0 श्रीमती नमिता अग्रवाल
रीडर, संस्कृत विभाग
अतर्रा महाविद्यालय, अतर्रा

अनुक्रमणिका

अध्याय- 3

आलोच्य काव्य ग्रंथों में वस्तु विश्लेषण

(क) - कथावस्तु

(ख) - स्रोत

(ग) - मौलिक उद्भावना

(घ) - साम्य वैषम्य

अध्याय- 4

मेघदूत एवं शारिका सन्देश : में भाव एवं रस विवेचन

(क) - रस सिद्धान्त

स्वरुप विश्लेषण

(ख) - आलोच्य काव्य

ग्रन्थों में अंगीरस

(ग) - आलोच्य काव्य

ग्रन्थों में अन्यरस

(क) - भावसन्धि एवं भाव शबलता

(ख) - विभाव, अनुभाव एवं संचारी भाव

(ग) - काम, प्रेम एवं सौन्दर्य विवेचन

(घ) - साम्य-वैषम्य

अध्याय- 5

आलोच्य दूतकाव्यों में प्रकृति एवं अन्य वस्तु वर्णन

(क) - मानव एवं प्रकृति

(ख) - प्रकृति वर्णन के रूप

1. आलम्बन एवं संश्लिष्ट रूप

2. उद्दीपन रूप

(ग) - अन्यरूप वर्णन

अन्य वस्तु वर्णन, नदी, समुद्र, गिरि, नगर, स्थलमार्ग, संस्कार, अवतारवाद।

अध्याय - 6

आलोच्य दूत काव्यों में भाषा-सौन्दर्य

(क) - शब्द-विधान

(ख) - शब्द शक्तियाँ

(ग) - व्यास समास शैली

(घ) - छन्द एवं भाषा

(ङ) - भावानुकूल भाषा

साम्य-वैषम्य

अध्याय - 7

काव्यशास्त्रीय सिद्धान्त एवं आलोच्य काव्य ग्रन्थ

(क) - अलंकार-विधान

(ख) - रीतिगुण, वृत्ति

(ग) - वक्रोति स्वरुप

(घ) - ध्वनि सिद्धान्त

(ङ) - साम्य वैषम्य

उपसंहार

सहायक सामग्री

शोध निर्देशिका

डॉ0 नमिता अग्रवाल

शोधकर्त्री

कु0 सुमन शुक्ला

संस्कृत में दूत काव्य परम्परा

(क) - काव्य-रूप

1. प्रबन्ध

2. मुक्तक

3. गीतिकाव्य

(ख) - दूतकाव्य परम्परा

स्रोत एवं विकास

(ग) - रामायण आदि काव्यों में दौत्यकर्म

(घ) - प्रमुख दूत काव्य

1. मानव आधारित

2. पक्षी एवं जड़ आधारित

प्रथम अध्याय

मेघदूत एवं शारिका सन्देश का काव्यशास्त्रीय तुलनात्मक अध्ययन

अथ प्रारम्भ

अपारे काव्य संसारे कवेरेव प्रजापतिः में समीक्षक आचार्य ने सार्वजनिक एवं सार्वभौमिक श्रेण्य साहित्य के अनुशीलन एवं अनुशंसन का मापदण्ड निर्धारित ही नहीं किया अपितु साहित्य की भावमयी व्याख्या भी प्रस्तुत की है बात यह है कि जिस प्रकार सृष्टि नियामक निर्माता प्रजापति ब्रह्मा अपनी रचना का उद्भावक होता है उसी प्रकार द्रष्टा स्वयंम्भुव प्रजापति कवि भी अपनी रचनागत पात्रों की हृद्यगत मनोभाव सुख–दुःख का सूत्रधार होता है। इस प्रकार प्रजापति एवं कवि निर्मित रचना के तन्यविष्ट काव्य अपने हृदय स्थित उमंगों, भावनाओं, क्रिया व्यापारों को समान रूप से व्यंजित करता चलता है।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है वह अपने विचारों से समाज के साथ अनुरक्ति उपेक्षा या तटस्थता का भाव रखकर जीवनयापन करता हुआ अपने हृदय की उदारता का परिचय देता रहता है। इस तरह आत्मा की उदारता को विद्वानों ने ज्ञान दशा कहा है तथा हृदय की यही उदारता रस दशा कहलाती है उसे हम कविता कहते है।.................1

भारतीय चिन्तन मनीषा के दार्शनिक क्षेत्रों में अन्नमय कोष से आनन्दमय कोष की यात्रा का उल्लेख कर इसे जीवनमात्र का काम्य या चरम पुरुषार्थ कहा है। इसी तरह साहित्यचार्यों ने रसो वैःसःकहकर आनन्द की चरमोपलब्धि काव्य का मूल प्रयोजन कहा है। प्रसिद्ध समीक्षक आचार्य राजशेखर ने काव्य पुरुष की कल्पना कर उसके जीवित लक्षण के रूप में आत्मा को एक मात्र तत्व बताया है।.........2 इस जीवित लक्षण में पर्याप्त मतभेद भारतीय एवं पाश्चात्य विद्वानों में है, क्योंकि भारतीय परम्परा में अलंकारों को सर्वप्रमुखता देकर भामह और रुद्रट ने काव्य का लक्षण प्रस्तुत करते हुए कहा है–

1– शब्दार्थो सहितौ काव्यम.............3

तो दण्डी शरीरं तावदिष्टार्थ व्यवच्छिन्ना पदावली................4 कहकर अपने काव्य को चिन्तन के बाह्योकरण तक सीमित रखा है जिसे वामन ने रीतिरात्मा काव्यस्य......................5 कहकर अलंकार एवं काव्य शोभा विधायक गुणों की भी चर्चा की है। काव्य के इन स्वरूपों के साथ

1– चिन्तामणि – रामचन्द्र शुक्ल पृ0, 2– काव्यमीमांसा – तृतीय अध्याय

3– काव्यालंकार –1/16, 4– काव्यदर्श–1/10,

5– काव्यलंकार–सूत्रवृत्ति

आन्तरिक ध्वनि रस आदि की चर्चा आनन्दवर्धन, कुन्तक, मम्मट, विश्वनाथ और पण्डितराज जगन्नाथ ने पर्याप्त रूप से की है जिनके उदाहरण संक्षेप में देकर संस्कृत साहित्य में काव्य के वास्तविक स्वरूप की चर्चा की जायेगी।

1– मम्मट – तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृति पुनः क्वापि——————1

2– काव्यस्यात्मा ध्वनिरिति

3– शब्दार्थौ सहितौ काव्यं वक्र कवि व्यापार शालिनी
वन्दे व्यवस्थितौ काव्यं तद्विअदाल्हादकारिणी

4– वाक्यं रसात्मकं काव्यं

5– रमणीयार्थ प्रतिपादकः शब्दः काव्यम्

तात्पर्य यह है कि संस्कृत समालोचना में काव्य की विवेचना बड़े विस्तृत रूप में उसके आन्तरिक एवं बाह्य रूपों में की गयी है। कहना नहीं होगा कि इसमें भावतत्व या रागात्मकता भावों के चाक्षुष प्रत्यक्षीकरण हेतु कल्पना और उस कल्पना को व्यवस्थित रूप देने के लिए बोधतत्व के साथ शैली तत्व को भी प्रामुख्य दिया गया है इसी परिप्रेक्ष्य में पाश्चात्य समालोचकों द्वारा काव्य स्वरूप का विहगावलोकन कर तदुपरान्त काव्य रूपों की चर्चा की जाएगी तभी अलोच्य काव्य मेघदूत और शारिका संदेश के आन्तरिक एवं बाह्यगुणों का प्रकाशन सम्यक् रूपेण हो सकेगा। पश्चिमी आलोचना शास्त्र में साहित्य के लिए लिटरेचर आर्ट और कविता समान रूप से व्यवहृत हुए है लिटरेचर अति व्यापक शब्द है आर्ट और काव्यकला तथा पोयटरी में प्रबन्ध और मुक्तक रूपों का विश्लेषण हुआ है यहाँ हम कविता की कुछ परिभाषाएँ देकर उनमें निहित तत्वों की समीक्षा करेगें।

मैकाले – By poetry we mean the art of employing words in such a manner as to produce an illusion on the imagination the are of doing by means of works. What the points does by means of colours.

1– मम्मटं – काव्यप्रकाश 1/4

2- ध्वन्यालोक 1/1

3- काव्यालंकार

4- साहित्य दर्पण

5- रस गंगाधर

वैली - Poet are all who love and feel great truths and tell them.

विल्सन - Poetry is the intellect coloured by feelings.

मिल्टन - Poetry should be simple sensuous and impassioned.

कॉलरिज - Poetry is the best words in the best order.

मैथ्यू आर्नल्ड - Poetry is at bottom a criticism of life.

हडसन - Poetry is an interprdation of life through imagination and emotion.

जानसन - Poetry is the art of uniting pleasure with truth by calling imagination to the help of reason ----------1

इस प्रकार पाश्चात्य साहित्यालोचन में काव्य को प्रबल मनोवेगों का स्वच्छन्द प्रवाह, श्रेष्ठ शब्दों का श्रेष्ठ क्रम में विन्यास करना, हार्दिक प्रसन्नता की चर्चा की गयी है उसके भावपक्ष की विस्तृत चर्चा अवश्य है किन्तु उसके शिल्प पक्ष की उपेक्षा मिलती है कहना नहीं होगा कि हृदयस्थ रागात्मक अनुभूतियों उसके आस्वादनीय अर्थ सौन्दर्य की अभिव्यंजना करने वाली वाणी साहित्य कहलाती है। जिसमें कवि की असाधारण प्रतिभा, उसके संस्कार और रूचि वैचित्र्य का महत्वपूर्ण हाथ होता है। कवि की आन्तरिक सौन्दर्यानुभूति जिस भी माध्यम से प्रकट होगी वह एक ओर सत्यं शिवम् सुन्दरम् का समन्वय होगा।

काव्य रूप - पिछले पृष्ठों में काव्य स्वरूपों की संक्षिप्त चर्चा कर यह देखा गया है कि आनन्दोपलब्धि उसका चरम काम्य रहा है यद्यपि काव्य अखण्ड, अविभाज्य होता है किन्तु बोध सौकर्य, अध्ययन सौविद्य के लिए उसका वर्गीकरण किया जाता रहा है। भारतीय समीक्षा शास्त्र के रूप में आकार, प्रवृत्ति, शैली को आधार बनाकर काव्य का विभाजन किया गया है। जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है -

भामह ने काव्य को गद्य-पद्य रूपों में विभक्त कर वर्ण्य विषय के आधार पर चार और स्वरूप के आधार पर पाँच भेद बताये हैं सर्गबन्ध महाकाव्य, अभिनेयार्थ नाटक आख्यायिका, कथा और

1- साहित्य शास्त्र के सिद्धान्त - डॉ0 सरोजनी मिश्र पृ0- 42-44 पर उद्धृत

अनिबद्ध ----------1

दण्डी ने गद्य-पद्य और मिश्र भेद कर मुक्तक, कुलक, महाकाव्य, नाटक, चम्पू, कथा, आख्यायिका का उल्लेख किया है ----------2

वामन ने गद्य-पद्य प्रभेद को स्वीकार किया है। प्रसिद्ध आचार्य हेमचन्द्र ने संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषाओं के आधार पर दृश्य-श्रव्य भेदकर पाठ्य, गेय, महाकाव्य, आख्यायिका, चम्पू, अनिबद्ध आदि उपविभाग किये है। इस विषय में आचार्य विश्वनाथ का वर्गीकरण अधिक वैज्ञानिक दिखाई देता है। जिन्होनें दृश्य-श्रव्य रूप में रूपक और उसके उपभेद - नाटक, प्रकरण, व्यायोग, समवकार, ईहामृग, वीथी, गोष्ठी, प्रहसन इत्यादि तथा श्रव्य के अन्तर्गत गद्य, पद्य, मुक्तक, युग्मकं, सान्दादितक, कलापक महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तक, वृत्तगन्ध, उत्कलिका प्राय, चूर्णक आदि उपभेदों की चर्चा की है। पाश्चात्य आलोचना क्षेत्र में विषयीगत एवं विषयगत या वर्णात्मक कविता, वीर्यगीत महाकाव्य, नाटक, गीतिकाव्य आदि की चर्चा है।

इस प्रकार प्राकृतन भारतीय आचार्यों में भामह, वामन आदि ने गद्य-पद्य को आधार बनाकर तथा परवर्ती मम्मट आदि आचार्यों ने प्रभाव की दृष्टि से उत्तम, मध्यम, अधम काव्य भेद प्रस्तुत किये हैं। इस सम्बन्ध में पाश्चात्य समीक्षकों में प्लेटो ने गीति, नाटक और महाकाव्य तथा उनके परवर्ती आचार्यों ने इन्हीं के विस्तृत भेद उपभेद किये है।

" भारतीय और पाश्चात्य दृष्टिकोण में काव्य भेदों के सम्बन्ध में मुख्य अंतर यह रहा है कि जहाँ भारतीय दृष्टिकोण ने इन पर विशेष बल देकर विस्तार से एतद्धिषयक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। वहाँ पाश्चात्य चिन्तन के क्षेत्र में इन पर अधिक गौरव का स्थान नहीं दिया। भेद-उपभेदों के लक्षण और उदाहरणों की चर्चा प्रायः नगण्य प्राय सी है।"------------3

क - प्रबन्ध काव्य - श्रव्य काव्यों में कथा के आधार पर प्रबन्ध काव्य की विस्तृत चर्चा की गयी है जिसके दो भेद सर्वमान्य है। 1- महाकाव्य 2- खण्डकाव्य।

प्रबन्ध का अर्थ है प्रकृष्ट रूप से कथा को बाँधना। इस प्रकार के काव्यों में कथा तत्व का प्रामुख्य रहता है। यदि वह चरित्र नायक के सम्पूर्ण जीवन का विन्यास करती है तो ऐसे काव्य महाकाव्य होते हैं।

1- काव्यालंकार 2- काव्यादर्श

3- समीक्षा के मान और हिन्दी समीक्षा की विशिष्ट प्रवृत्तियाँ पृ0 - 43

जो काव्य कथानायक के जीवन के कुछ अंशों का पल्लवन करते हैं उन्हें खण्डकाव्य कहा जाता है। भारतीय आचार्यों में भामह, दण्डी, विश्वनाथ ने सर्गबद्धता, अभिजात्य नायक, श्रृंगार, वीर रस का प्राधान्य, धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का निरूपण, प्रकृति के वैविध्य रूप आदि की विस्तृत चर्चा की है।-------1 इसी प्रकार पाश्चात्य विद्वानों ने महाकाव्य में प्रकथन प्रधान एक छन्द, कथा में नाटकीयता, प्रवाह, कौतुहलपूर्ण आश्चर्यजनक घटनाएँ, महद्दुदेश्य, मानव के अन्तर्मन के निगूढ़ तत्वों का उद्घाटन तथा उदात्त कलात्मक शैली का प्रयोग इत्यादि लक्षणों का उपयोग किया है।---------2 तात्पर्य यह है कि महाकाव्य में वस्तु, नेता, रस, शैली और महद् उद्देश्य की आवश्यकता होती है।

खण्डकाव्य नाम से ही छोटी रचना प्रतीत होती है। जिसमें नायक के जीवन से सम्बन्धित एक-दो घटनाओं का विन्यास किया जाता है। इसमें क्षिप्रता, भावावेग या भावोच्छलन का प्राबल्य रहता है। इसकी शैली सगुंफित, प्रवाहमयी होनी चाहिए। विश्वनाथ ने खण्डकाव्य का लक्षण देते हुए लिखा है -

''खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैक देशानुसारि च''--------3

संस्कृत में खण्डकाव्य को गीतिकाव्य भी कहा जाता है। गीतिकाव्य में एक ही घटना का विस्तृत लयबद्ध वर्णन होता है इसीलिए संभवतः कथा प्रधान लयात्मक काव्यों को गीतिकाव्य कहा जाता है। गीति शब्द गै धातु से 'क्तिन्' प्रत्यय लगाने पर बनता है। जिसमें संगीतात्मकता रागतत्व की प्रधानता होती है। इसी से मिलता जुलता पाश्चात्य जगत में लिरिक Lyrik शब्द व्यवहृत होता है। यह लिरिक शब्द लायर से बना है। जिसे वैणिक या वाद्ययन्त्र कहते है। कहना नहीं होगा कि पाश्चात्य जगत में सुख दुःखात्मक अनुभूतियों के गायन में इस वाद्ययन्त्र का प्रयोग होता था।

अतः संगीत प्रधान आत्म प्रकाशन से युक्त कविता को लिरिक पोयट्री कहा गया। जबकि संस्कृत साहित्य में राग-रागिनी निबद्ध वाद्ययन्त्रों के माध्यम से गायी जाने वाली रचना को संगीत नाम दिया गया है। अतः गीतिकाव्य का संगीत से बहुत अधिक सम्बन्ध नहीं है।

1- काव्यालंकार - 1/19 - 23
साहित्यदर्पण - 6/302
काव्यादर्श - 1/14 - 19

2- पोयटिक्स-अरस्तु पृ0 46-50
दि एपिक एयर क्राम्बी पृ0 559, पृ0 52-59

3- साहित्यदर्पण - 6/329

इतना अवश्य कहा जा सकता है कि हृदय की मार्मिक, कोमल, सान्द्र, अरन्तुद भावनाओं को वक्ता अपने अनुसार लय में बाँधकर गा सकता है। अतः संस्कृत साहित्य में प्रबन्ध काव्य के अन्तर्गत कथा प्रधान रूपों को खण्डकाव्य या गीतिकाव्य कहा गया क्योंकि भावों का उद्रेक तन्मयता भावाभिव्यंजन की क्षमता और न्यूनता गीतिकाव्य का मूलाधार है। इसके विपरीत जिन रचनाओं के छन्दों में पूर्वापर सम्बन्ध नहीं प्रत्येक पद स्वतंत्र सत्ता, अर्थ और रसोद्बोधन की क्षमता रखता है। उन्हें मुक्तक काव्य के अन्तर्गत रखा गया है। प्रबन्ध गीति एवं मुक्तक काव्य का अन्तर स्पष्ट करने के लिए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि सर्वप्रथम मुक्तक के स्वरूप की चर्चा करें।

मुक्तक काव्य-

मुच् धातु से 'क्त' प्रत्यय जोड़ने पर मुक्त शब्द निष्पन्न होता है। जिसका व्युत्पत्ति लभ्य अर्थ हुआ छोड़ा हुआ या स्वतंत्र। मुक्त शब्द से संज्ञा अथवा ह्रस्व अर्थ में 'कन्' प्रत्यय लगाने पर मुक्तक शब्द सिद्ध होता है। "मुच्यते इति मुक्तम् तदेव ह्रस्वं द्रव्य मुक्तकम्" अर्थात् मुक्तक उस पदार्थ का नाम है जो छोड़ा जा चुका हो और जिसका कलेवर छोटा हो। इसके स्वरूप की व्याख्या करते हुए कहा गया है कि जो काव्य व्यवच्छिन्न अपने में पूर्ण (निर्व्यूह) विशेष रीति से रचित तथा अतिशोभन हो वह मुक्तक की संज्ञा से अभिहित होगा।

विनाकृतं विरहितं व्यवच्छिन्न विशेषितम्। भिन्नंस्यादथ निव्यूढं मुक्तकम् चाति शोभनम्———1 अग्नि पुराण के अनुसार मुक्तक वह श्लोक है जो अपने आप में पूर्ण तथा चमत्कार की सृष्टि करने में समर्थ हो।

मुक्तकं श्लोकं एवैकश्चमत्कार क्षमः सताम्————2

अभिनव गुप्त ने इस काव्य की व्यवस्थित परिभाषा इस प्रकार की है।

पूर्वापर निरपेक्षापि हि येन रस चर्वणा क्रियते तदेव मुक्तकम्———3

पूर्वापर सम्बन्ध रहित रसोद्रेक कराने में जो पद्य समर्थ हो उसे मुक्तकं काव्य–कहा जाता है कहना नहीं होगा कि मुक्तक में एक चमत्कार, एक रससक्ति अनुभूति, एक मोहन चित्र, एक मार्मिक विधान प्रस्तुत करने की अपूर्व क्षमता होती है। विभाव, अनुभाव, और संचारी भाव एक उक्ति में केन्द्रित होकर पाठक को रस निमग्न कराने में पूर्ण रूपेण सक्षम होता है।

1– शब्द कल्पद्रुम – केशव

2– अग्निपुराण

3– लोचन – अभिनवगुप्त

डा0 रामसागर त्रिपाठी ने इसके स्वरूप का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि ऐसा पद्य जो निरपेक्ष रहते हुए पूर्ण अर्थ की अभिव्यक्ति में समर्थ हो, जिसका गुंफन अत्यन्त रमणीय हो काव्य के लिए अपेक्षित चमत्कृति इत्यादि विशेषताओं से युक्त हो अपनी काव्यगत विशेषताओं से जो आनन्द देने में समर्थ हो और जिसका परिशीलन ब्रह्मानन्द सहोदर रस चर्वणा के प्रभाव से हृदय की मुक्तावस्था को प्रदान करने वाला हो। इस प्रकार अतिशोभन, आनन्दन, मोक्ष-प्रापण और निर्मुक्तकता, ये गुण मुक्तक में प्रधान होते हैं। --------1

प्रबन्ध एवं मुक्तक में अन्तर – यहाँ यह स्पष्ट कहना आवश्यक प्रतीत होता है कि मेघदूत एवं शारिका सन्देश में कथा तन्तु अत्यन्त क्षीण विरल है। उसमें गीतिकाव्य या मुक्तक के लक्षण अधिक मिलते हैं किन्तु विद्वत परम्परा में उसे खण्डकाव्य या गीतिकाव्य के अन्तर्गत माना जाता है। अतः मुक्तक एवं प्रबन्ध में अन्तर स्पष्ट कर तदुपरान्त खण्डकाव्य के लक्षणों का निरूपण किया जाएगा।

प्रबन्ध अथवा कथा इतिवृत्त प्रधान काव्यों में रसोद्रेचन का कार्य अपेक्षाकृत सरल रहता है क्योंकि पाठक क्षीणतर कथातन्तु को भी पकड़े रहता है। मुक्तक पूर्ण स्वतन्त्र रहता है और इसी कारण वह रस का आश्रय लेता है। आनन्दवर्धन ने लिखा है - तत्र मुक्तकेषु रस बंधामि निवेशिनः कवेस्तदाश्रयम् (रस बंधाश्रयम्) औचित्यम् मुक्तकेषु प्रबन्धेष्विव रस बंधाभिनिवेशिनः कवयोः दृश्यन्ते यथा ह्यमरूकस्य कवेर्मुक्तकाः श्रंगाररस्यन्दिनः प्रबन्धायमानाः प्रसिद्धा एव। --------2

गीतिकाव्य – संस्कृत काव्य भेदों का वर्गीकरण श्रव्य और दृश्य के रूप में कर इसके अन्तर्गत गद्य-पद्य, चम्पू और पद्य में महाकाव्य, स्त्रोत, नीति, गीति और मुक्तक काव्यों की चर्चा की गयी है। हमारे आलोच्य काव्य घटना की विरलता होने पर भी खण्डकाव्य के अन्तर्गत माने गये हैं। इन्हें गीतिकाव्य भी कहा गया है।

अतः संक्षेप में गीतिकाव्य के स्वरूप उसके उपभेदों की चर्चा अब प्रासंगिक न होगीं। डा0 कपिल देव द्विवेदी ने गीतिकाव्यों के स्वरूप का निर्धारण करते हुए लिखा है- ''गीतिकाव्य काव्य का वह रूप है जो वाद्यों के साथ संगीतात्मक रूप में गाया जा सकता है। गीतिकाव्य प्रेम, शोक या भक्ति के भावों, विचारों या अनुभावों का प्रकाशन है। यह मानव ह्रदय का स्वाभाविक प्रवाह है। यह हृदयगत भावों का स्वतः सिद्ध प्रकाशन है। यह सामान्य कविता की अपेक्षा अधिक भावनाओं को

1- मुक्तक काव्य परम्परा और बिहारी - पृ0 2   2- ध्वन्यालोक

प्रभावित करता है।''----------1

डा0 नगेन्द्र ने लिखा है कि ''गीति काव्य की आत्मा है। भाव, जो किसी प्रेरणा के प्रभाव से दबकर एक साथ गीति में फूट निकलता है। स्वभाव से ही उसमें हार्दिकता का तत्व वर्तमान रहता है। उसमें एक प्रकार की एक सूत्रता तथा सुसंगठित एकता होती है जो समस्त कविता को अन्वित किये रहती हैं वह सत्य, क्षणिक एवं तीव्र मनोवेग का परिणाम होती है।''-----------2

डा0 गुलाबराय ने गीतिकाव्य की व्याख्या करते हुए लिखा है - ''यह काव्य अन्य विधाओं की अपेक्षा अधिक अन्तः प्रेरित होता है। इसी कारण इसमें कला होते हुए भी कुछ कृत्रिमता का अभाव रहता है।''---------3

महादेवी वर्मा ने गीतिकाव्य पर प्रकाश डालते हुए कहा है - ''साधारणतः गीति व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख दुःखात्मक अनुभूति का वह शब्द रूप है जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके। अनुभूति को तीव्र रखने के लिए तथा उसे दूसरों तक पहुँचाने के लिए भाव की अभिव्यक्ति पर कुछ संयम आवश्यक है।''---------4

तात्पर्य यह है कि गीतिकाव्य में व्यक्तिगत सुख-दुःखों की सहजानुभूति स्वतः द्रवीभूत होकर रागात्मक होती है। इसमें भावातिरेक रहता है यह भावातिरेक संगीतात्मक न होकर भी लयात्मक होता है। हमारे हृदय में सुख-दुःख के भावों का जो अगाध सागर लहराता है। उसमें भावनाओं की ऊर्मियाँ तरंगायित होती है। शब्दों के माध्यम से उसकी अभिव्यंजना होती है। इसमें वैयक्तिकता या निजीपन, आत्म निवेदन, संक्षिप्तता अपने कोमल और सान्द्र रूप में संनिविष्ट होतीं है।

महाकाव्य और गीतिकाव्य का अन्तर निरूपित करते हुए डा0 बाबूराम त्रिपाठी ने लिखा है - ''संस्कृत काव्यधारा में गीतिकाव्य वह काव्य है जिसमें मानव जीवन की किसी एक घटना का उद्घाटन अथवा मानव अन्तरात्मा के किसी एक पटल का चित्रण होता है।

1- संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ0 - 126

2- विचार और विश्लेषण पृ0 - 53

3- काव्य के रूप पृ0 - 29

4- दीपशिखा भूमिका में

महाकाव्यों में जहाँ मानव के समस्त जीवन की किसी एक विशिष्ट घटना का बड़ी तन्यमयता के साथ चित्रण किया जाता हैं गीतिकाव्य, महाकाव्यों से आकार-प्रकार में भिन्न होता है और गीतिकाव्य में गीतिकार का लक्ष्य भी महाकाव्यकार से भिन्न होता है।

इन गीतिकाव्यों का वर्ण्य विषय कहीं श्रृंगार, कहीं धर्म और कहीं नीति होता है। इन्हीं में से किसी एक विषय को लेकर गीतिकाव्य लिखे जाते हैं। महाकाव्य की अपेक्षा गीतिकाव्य की सबसे बड़ी विशेषता है। उसकी रसवत्ता, लालित्य युक्त मधुर पदावली और प्रासादिक शैली, महाकाव्यों में भी कुछ पद्य गीतात्मक माधुर्य युक्त एवं कोमलकान्त पदावली गुम्फित होते हैं, पर गीतिकाव्य के समस्त पद्य ही इस प्रकार के होते हैं। इनका एक भी पद्य शुष्क एवं नीरस न होगा। ---------1

गीतिकाव्य के प्रमुख तत्व निम्नलिखित माने जा सकते हैं -

1- वैयक्तिकता एवं सामाजिकता - पहले कहा जा चुका है कि गीतिकाव्य विषयी प्रधान काव्य है। वैयक्तिकता को उसका प्रमुख तत्व माना जाता है गीति में वस्तु जगत और सामाजिक जीवन के चित्रण की तुलना में व्यक्ति की आन्तरिक अनुभूतियाँ और संवेदनाएँ ही अधिक व्यक्त होती हैं। डा0 रामअत्रि सिंह ने लिखा है कि "विषय चाहे आत्म जगत का हो अथवा बर्हिजगत का गीतकार सदैव उसे वैयक्तिक ढंग से ग्रहण करता है। वह दूसरे का इतिहास न कहकर वैयक्तिक सुख-दुःख को ध्वनित करता है। --------2

मेघदूत एवं शारिका सन्देश में क्रमशः यक्ष और गोपिका हृदय की निजी अनुभूतियों की ही व्यंजना करती है। विषय भले ही वैयक्तिक हो किन्तु उसमें सर्वथा सामाजिकता जुड़ी रहती है। कवि एकान्त में अपनी अन्तर्रागिनी को मुखरित अवश्य करता है किन्तु उसमें बाह्य जगत किसी न किसी रूप में आ गया है।

2- राग एवं बोध का समन्वय - ऊपर कहा जा चुका है कि भाव प्रवणता या उद्दाम भावोच्छलन गीतिकाव्य का अपरिहार्य तत्व है। हार्दिक भावनाएँ संश्लिष्ट और प्रबल रूप में सहज ही स्फुटित होती है। इस प्रकार गीतिकाव्य में राग और बोध का विरोध न मानकर इन्हें अन्योन्याश्रित माना गया है। बात यह है कि यदि राग वृत्ति समाज निरपेक्ष भी युगीन अभिवृत्तियों का उसमें संकलन नहीं हुआ।

1- संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ0 - 90

2- स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी गीतिकाव्य का शिल्प विधान पृ0 - 10

तो कल्पनाएँ चाहें कितनी ही उच्च और बाहवी हो। यथार्थ भूमि से उसका कोई सम्बन्ध नहीं रह पाएगा। राग जगत में आये हुए परिवर्तन को समझना कवि को अनिवार्य होता है। अपनी प्रतिभा, अभ्यास और व्युत्पत्ति से युगीन यथार्थ की अभिव्यक्ति के लिए उसे बौद्धिकता का आश्रय लेना ही पड़ता है। यहाँ इतना अवश्य ही कहा जा सकता है कि योग बोध की अधिकतम अभिव्यक्ति के लिए रागतत्व को छोड़कर कवि कोरे जटिल, शुष्क, बुद्धिवाद के चक्कर में पड़ेगा तो वह क्रमशः गद्य के निकट हो जाएगा और गद्यात्मकता उसकी हार्दिक ह्रदयावर्जकता को नष्ट कर देगी। ------------1

प्रभावैक्य एवं संक्षिप्तता – अन्तर्धारा परस्पर अनस्यूत और संगुम्फित होती है। उसके मूल मेंअनुभूति का अखण्डित प्रतिबिम्ब विद्यमान रहता है। वह अपने चक्षु ऐंन्द्रिय विषय को मनस्पटल पर सृजित कर पाठकों के ह्रदयंगम हेतु उसे पुनर्सृजित करता है। ऐसे आवेश के क्षणों में वह आत्मकेन्द्रित हो उठता है। रामअत्रि ने लिखा है कि - ''भावों की सान्द्रता, एकरूपता, प्रभावान्विति गीति का स्वतन्त्र घटक न होकर उसका स्वाभाविक परिणाम है। जिसमें मनः स्थिति अनुभूति, भाव की एकान्विति, संश्लिष्टता, संक्षिप्तता को जन्म देती है। अनुभूति की सघनता ही उसे संक्षिप्त होने के लिए ही बाध्य करती है।-----------2

संगीतात्मकता – गीतिकाव्य की परिभाषा देते समय लिखा जा चुका है। यह लघु आकार गत की रचना गेय तत्व का आधार लेती है। भावानुकूल पद योजना, वर्ण मैत्री संगीत की छोटी-छोटी लहरियों को जन्म देकर पाठकों को अभिभूत करती है। डा0 मंजू गुप्ता ने लिखा है- ''गीतिकाव्य की पूर्ण परिणति संगीत में न होकर शब्दों के संगीतात्मक निबन्ध में है। यह संगीतात्मकता छन्दों का आश्रय अनिवार्य रूप से लेती है। छन्द सुव्यवस्थित लयों का संसार है। इसीलिए गीतिकाव्य में संगीतात्मकता या तीव्र लयात्मकता विद्यमान रहती है। ---------3

सारांश यह है कि गीतिकाव्य में वैयक्तिता तीव्र भावोच्छलन, प्रभावान्विति एवं लयात्मकता इस रूप में सम्मिलित की जाती है कि पाठक, श्रोता मंत्रमुग्ध होकर भावों की तीव्रता एवं लय के स्वरारोह में आकंठ निमग्न हो जाता है।

1- आधुनिक गीति और नवीन युग बोध - डा0 विजयेन्द्र स्नातक

2- स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी गीति काव्य का शिल्प विधान पृ0 - 13

3- आधुनिक गीतिकाव्य का शिल्प विधान पृ0 - 17

मेघदूत एवं शारिका सन्देश के आन्तरिक बाह्य विश्लेषण हेतु सर्वप्रथम यह अनिवार्य है कि उसके काव्य रूप का निर्धारण सुस्पष्ट रूप से हो सके। इस हेतु हमने काव्य भेदों के कुछ आधारों पर चर्चा कर प्रबन्ध, मुक्तक, गीतिकाव्य आदि की चर्चा की है।

वस्तुतः संस्कृत साहित्य में भामह ने प्रतिपाद्य वस्तु के आधार पर विश्वनाथ ने बंध, दण्डी ने काव्य शरीर, रूद्रट ने स्वरूप आकार की दृष्टि से विभाजन किया है तथा खण्डकाव्य का बहुत अधिक विश्लेषण संस्कृत काव्यशास्त्र में नहीं मिलता है। जबकि आलोचक परम्परा में मेघदूत को गीतिकाव्य मानकर भी बन्ध की दृष्टि से खण्डकाव्य कहा गया है। ऐसा ही कुछ संकेत शारिका सन्देश के विषय में भी कहा जा सकता है। अतः आलोच्य काव्य मेघदूत एवं शारिका सन्देश के अन्तर्वस्तु का विश्लेषण करने हेतु संक्षिप्त रूप में खण्डकाव्य के भी लक्षण तत्व उल्लिखित करना समीचीन होगा।

खण्डकाव्य सम्बन्धी अवधारणाएँ – खण्डकाव्य के स्वरूप की परिकल्पना रूद्रट ने प्रबंध काव्य के लघु रूप में की है। इस लघु रूप का नामकरण आचार्य विश्वनाथ ने दिया है ''खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैक देशानुसारि च'' ----------1

तात्पर्य यह है कि महाकाव्य के विपरीत लघु आकारगत रचना को खण्डकाव्य कहा गया है। जबकि यह कहना नितान्त अवैज्ञानिक है। वस्तुतः खण्डकाव्य से उस काव्य का बोध नहीं होता जो गुणों में महाकाव्य के समान होते हुए भी आकार में उससे छोटा होता है। दूसरा तथ्य यह है कि खण्डकाव्य में चतुर्वर्ग फल प्राप्ति का वर्णन हो तो उसे खण्डकाव्य माना जाए। यह लक्षण भी अतिव्याप्ति दोष से युक्त है। अतः खण्डकाव्य के स्वरूप निर्धारण हेतु यह विभ्रान्त रूप से कहा जा सकता है कि खण्डकाव्य में पूर्ण जीवन का एक पक्ष ही चित्रित होता है।

नायक के जीवन से किसी एक घटना को लेकर जिस लयात्मक प्रधान रचना की सृष्टि की
कहते हैं संस्कृत साहित्य के विकास में खण्डकाव्य
जाती है। उसे खण्डकाव्य^का स्वरूप निर्धारण अपेक्षित सा रहा है क्योंकि या तो इसे गीतिकाव्य का पर्याय मानकर उसे अन्तर्भुक्त कर लिया गया है।

या कुछ ने मुक्तक काव्यों की सामासिकता, लयात्मक और रसचर्वणा के कारण इन्हें मुक्तक काव्य कहा है। जैसे- मेघदूत, गीतगोविन्द, भर्तृहरि के शतकत्रय, स्त्रोतकाव्यों को भी गीति और खण्डकाव्यों के मध्य रखकर इनकी अन्तर्वस्तुओं का शैल्पिक अध्ययन किया है जबकि संस्कृत काव्य शास्त्र

1- साहित्यदर्पण - 6/329

से विकसित हिन्दी काव्य शास्त्र में खण्डकाव्यों का स्वरूप स्पष्ट किया गया है। इसीलिए प्रारम्भ में बन्ध की दृष्टि से प्रबन्ध महाकाव्य, खण्डकाव्य, मुक्तक काव्य, गीतिकाव्य आदि स्वरूप विश्लेषण किया गया है। मेघदूत और शारिका सन्देश में कथा तन्तु क्षीण विरल और समानान्तर गति से चलती है। संभवतः प्राकृतन संस्कृत आचार्यो ने इसे खण्डकाव्य कहा है। अतः संक्षिप्त रूप में विश्वनाथ की परिभाषा के परिप्रेक्ष्य में हिन्दी में इसके लक्षणों का जो विकास हुआ है। उसकी संक्षिप्त चर्चा आवश्यक प्रतीत होती है। हिन्दी के आचार्यों ने विश्वनाथ के सूत्र का ही भाष्य किया है। डा0 गुलाबराय ने लिखा है - ''खण्डकाव्य में एक ही घटनाको मुख्यतः दी जाकर उसमें जीवन के किसी एक पहलू की झाँकी सी मिल जाती है।'' -------------1

आचार्य बल्देव उपाध्याय ने अपना मन्तव्य व्यक्त करते हुए लिखा है कि ''वह काव्य जो मात्रा में महाकाव्य से छोटा परन्तु गुणों में से उससे कथमपि शून्य न हो खण्डकाव्य कहलाता है। महाकाव्य विषयप्रधान होता है परन्तु खण्डकाव्य मुख्य विषयी प्रधान होता है। जिसमें लेखक कथानक के स्थूल ढाँचे में अपने वैयक्तिक विचारों को प्रसंगानुसार वर्णन करता है।'' ---------------2

डा0 हरदेव बाहरी ने ऐसा ही अभिमत दिया है - ''इस प्रकार खण्डकाव्य में एक ही घटना होती है और उसमें मानव जीवन के एक ही पहलू पर प्रकाश डाला जाता है। उसमें महाकाव्य के अन्य गुण पूर्णतया विद्यमान रहते हैं।'' -----------3

डा0 शकुन्तला दुबे ने हिन्दी, संस्कृत और अंग्रेजी के Lyric Poetry का गम्भीर विश्लेषण करते हुए खण्डकाव्य का स्वरूप निर्धारण किया है - ''खण्डकाव्य का रचयिता महाकाव्यकार की भाँति युग को कोई महत् उपदेश नहीं देता है। वह वर्णनात्मक प्रबंधकाव्य है जिसमें कथासूत्र का होना अनिवार्य है। इसमें प्रासंगिक कथाओं का अभाव रहता है। यह कथा सर्गो या उसके बिना भी गूँथी जा सकती है।'' ----------4

सारांश यह है कि खण्डकाव्य का नायक इतिहास प्रसिद्ध अथवा कल्पित उदात्त या उद्धत

1- काव्य के रूप - पृ0 - 23

2- संस्कृत आलोचना - पृ0 - 62

3- हिन्दी काव्य शैलियों का विकास - पृ0 - 5

4- काव्य रूपों के मूल स्त्रोत और उनका विकास - पृ0 - 143

नायक भी हो सकता है। उसके जीवन के एक पक्ष की घटना का वर्णन होता है। कथा का आरम्भ, विकास, चरम सीमा और उसका निश्चित उद्देश्य होता है। इसमें कथा के विभाग या सर्गबद्धता की आवश्यकता नहीं होती। इसमें अनुभूति की तीव्रता का प्राधान्य होता है। इस प्रकार खण्डकाव्य के स्वरूप, लक्षण और तत्वों के आधार पर हमारे आलोच्य काव्य इसी सीमा में आते हैं।

दूतकाव्य परम्परा – आदिम मानव ने अपना मूल जीवन प्रकृति के सानिध्य में व्यतीत किया है। प्रकृति उसकी सहचरी और धात्री रही है। वृक्षों से फल, कल-कल निनादी नदी और निर्झर वायु के कोमल और कठोर संर्स्पर्श, गुपचुप झिलमिलाते कहानी सुनाते हुए कोई तारे प्रकृति के बहुरंगी रूपों को देख वह हर्ष, भय, विस्मय, कौतूहल आदि से लिप्त होकर अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति प्रारम्भ में परा, पश्यन्ती, मध्यमा और अन्त में वैखरी वाणी से करता रहा होगा। प्राकृतिक साहचर्य से जब उसे शब्द विधान प्राप्त हुए तो उसने अपने हृदयस्थ भावों, विचारों का संप्रेषण प्रतीक, संकेत तथा शब्दों से किया होगा। इन्हीं ध्वनि संकेतों का प्रतीकात्मक रूप भाषा बनी और यही भाषा उसके विचारों की संवाहिका भी। प्रकृति के मुक्त आँगन में रहते हुए मेघों के गर्जन-तर्जन विद्युत नर्तन पक्षियों के मधुर कूजन से निस्तब्ध नीरव रात्रि में झींगुर और खद्योतों से समुद्र के ताल तरंगों में उसे एक रहस्यमय मौन आमन्त्रण या सन्देश मिलता रहा है। जिसकी समझ वह बहुत देर से कर पाया।

मनुष्य सामाजिक प्राणी बना हृदयस्थ भावों, विचारों, व्यापारों का संयोग, विरोध, तटस्थता आदि के द्वारा वह अपने हृदय के संकीर्ण और मुक्त भावनाओं की व्यंजना और समाज से सामंजस्य या विरोध प्रकट करता रहा है। अतः अपने हृदय के भावों का संप्रेषण दूतकाव्य परम्परा का मूल स्रोत माना जा सकता है। जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान दशा कहलाती है। उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रस दशा की अभिव्यंजना जिस वाणी ने किया वह साहित्य कहलाई। जो नितान्त वैयक्तिक होते हुए रसानुभूति की दृष्टि से सामाजिक सम्पत्ति कहलायी मानव ने अपने भावों की इस अभिव्यंजना के लिए प्रारम्भ में प्रतीक फिर व्यक्ति और तब मनुष्येतर प्राणियों का आश्रय लिया इसी से दूतकाव्य की परम्परा और उसका विकास हुआ।

विश्व का सर्वतम एवं श्रेष्ठतम वाङ्मय भारतीय या वैदिक वाङ्मय है। अतः दूतकाव्य की परम्परा के स्रोत के रूप में हमें वैदिक साहित्य का आलोढ़न-विलोड़न करना होगा। प्राथमिक अनुभूतियाँ गीतात्मक होती हैं यह पहले कहा जा चुका है। गद्य तो मूलतः विचारों के विश्लेषण के लिए ही उपयुक्त रहता है। इसलिए ऋग्वेद विश्व के प्राचीनतम गीतिकाव्य है।

जिनमें मंत्रद्रष्टा ऋषियों की अनुभूतियाँ व्यञ्जित हैं। इन गीतिकाव्यों में भौगोलिक, स्थलीय दशा, दिशा मानवीय जीवन के क्रिया व्यापार, संस्कार, आकाशीय एवं द्युलोकीय परिवर्तनों पर इन ऋषियों की गहरी दृष्टि रही है। कुछ ने इनका यथार्थ वस्तुपरक चित्रांकन किया है। तो कुछ ने इनको आवाहित कर काम्य सिद्धि हेतु स्तुति, विनय, प्रशंसा, पूजन इत्यादि किया है। यज्ञ, हवन आदि के द्वारा अपने हव्य को इष्ट तक पहुँचाना, स्त्रोत, स्तुतियाँ एवं विनय जैसी भावनाओं के माध्यम से उन्हें बुलाना दूत काव्य के मूल स्त्रोत कहे जा सकते हैं।

दूत काव्य का अर्थ एवं उसका स्वरूप – पहले कहा जा चुका है कि दूरस्थ व्यक्ति आत्मीय जन को जड़-चेतन या अन्य किसी माध्यम से जो सन्देश भेजता है। अपनी हृदयस्थ बात कहता है इसे ही दूत काव्य कहा जाता है। डा0 रामकुमार आचार्य ने लिखा है – "संदेशस्तु प्रोषितस्य स्ववार्ता प्रेषणं भवेत् अथवा स्यात् सन्देश हरो दूतः जैसी व्युत्पत्तियाँ देकर दूत द्वारा संदेश प्रेषण ही इन काव्यों की मुख्य वस्तु है। इसी आधार पर यह काव्य अथवा दूतकाव्य कहलाते हैं। दोनों का अर्थ एक ही है।" --------------1

वस्तुतः दूतकाव्य का यह भावात्मक या साहित्यिक अर्थ प्रस्तुत किया गया है। साहित्य के अतिरिक्त दूत शब्द राजनीति क्षेत्र में अत्यन्त पुराकाल से प्रचलित है। मनुस्मृति, कौटिल्यीय अर्थशास्त्र आदि में शासन व्यवस्था के अन्तर्गत राजाओं के दूत उनकी आकांक्षाओं के वाहक स्थितियों के अनुसार साम, दाम, दण्ड, भेद के अनुसार अपने राजा का भला करना, अपनी वाग्मिता, राजनीतिक दक्षता, सन्धि विग्रहक भावों के यह अधिकारी होते थे। यहाँ कुछ राजनीतिक दूत के दायित्व बोधों का उल्लेख कर दूत के यथार्थ कर्म्य का मर्म समझाया जाएगा। मनुस्मृति में दूत के निम्न लक्षण उद्धृत है –

दूतं चैव प्रकुर्वीत सर्वशास्त्र विशारदम् ।
हंगिताकार चेष्टज्ञं शुचिम् दक्षं कुलोद्गतम् ।।
अनुरक्तश्शुचिर्दक्षस्स्मृति मान्देश कालयित् ।
वपुष्मान्वीतभीर्वाग्मी दूतो राज्ञः प्रशस्यते ।। --------------2

तात्पर्य यह है कि दूत, दूती, राजदूत, कुट्टनी आदि पदाधिकारी या व्यक्तियों से वैयक्तिक या राजनीतिक स्वार्थ सिद्धि के भाव और अभावमयी व्याख्यायें स्वरूप सामाजिक, राजनीतिक सम्बन्ध, राज्य निर्माण की परम्परा से प्रारम्भ हो गया था।

1- संस्कृत के संदेशकाव्य – पृ0 6   2- मनुस्मृति – 7/63-64

राजनीति के क्षेत्र से दूतकाव्य की भावमयी स्वरूप का उपयोग साहित्य क्षेत्र में हुआ है। इस संदर्भ में **डॉ०रामकुमार आचार्य का मत है**–"दूत के कार्य की श्रृंगार रस में बड़ी ही उपयोगिता मानी गयी है। विशेषतः दूत शब्द जब स्त्रीलिंग दूती बन जाता है। तो साहित्य में श्रृंगार रस के लिए कितने ही भावों में अनिवार्य हो जाता है।

दूत पुरुष पक्ष से अथवा नायक पक्ष से सम्बन्ध रखता है। दूती नायिका पक्ष से। दूत नायक की ओर से नायिका के पास पहुँचकर नायिका के पास, नायिका की केवल मनः स्थिति का ही पता नहीं लगता बल्कि नायिका के मन में प्रेमभाव को और भी उद्दीप्त करने का प्रयत्न करता है। नायिका को नायक से मिलने का संदेश देता है और उसे संकेत स्थान का पता भी बताता है।————————1

साहित्य दर्पण में नायक–नायिका भेद उनके सहायकों में दूतों की चर्चा विस्तृत रूप में की गयी है। संयोग काल में ये दूतियाँ सुख को बढ़ाती ही नहीं अपितु विरहावस्थाओं में पूर्व एवं मान के समय इनकी अनिवार्यता स्वतः सिद्ध है। इस प्रकार **आचार्य विश्वनाथ** ने दूत–दूतियों के भेदत्रय की चर्चा की है–

निसृष्टार्थो मितार्थश्च तथा सन्देशहारकः।
कार्य प्रेष्य स्त्रिधा दूतो दूतयश्चापि तथा विधाः।।
उभयोर्भावमुन्नीय स्वयं वदति चोत्तरम्।
सुश्लिष्टं कुरुते कार्यं निष्टार्थस्तु सः स्मृतः।।
मितार्थभाषी कार्यस्य सिद्धकारी मितार्थकः।
यावद् भाषित सन्देशहारःसन्देश हारकः।।————————2

वस्तुतःप्रेमी या प्रेमिकाओं की हृदयस्थ चिन्ता, अभिलाषा, उद्वेग, कामज्वर, उन्माद, आधि–व्याधि आदि कायिक, मानसिक अथवा वैवर्ण्य, पाण्डुरता, कृशता, मूर्च्छा, चिन्तसम्मोह आदि दशाओं का वर्णन कर दूत या दूती नायक या नायिका के चित्र को द्रवीभूत कर परस्पर सम्मिलन की स्वीकृति प्राप्ति करती है।

ऊपर दूतकाव्य के अन्तर्गत मनुष्यों के उपयोग की चर्चा की गयी है। किन्तु विरह जब उद्दाम अवस्था में पहुँच जाता है। कायिक, वाचिक, मानसिक अवस्थाएँ निरन्तर अपनी चर्मोवस्था में पहुँच जाती है। प्रेमी विस्मृत अवस्था को पहुँचकर मुमूर्ष होने लगता है। तब वह मानवेतर प्राणियों से भी संदेश ले जाने का आग्रह करता है।

मेघदूत और शारिका सन्देश ऐसे ही दूतकाव्य परम्परा के अन्तर्गत आते हैं। जिसमें कामार्त, उन्मत्त, प्रणयी, सद्यः विवाहिता पत्नी से विरही यक्ष धूम, ज्योति से उत्पन्न मेघ का अपना सन्देश वाहक बनाता है। तो दूसरी ओर कृष्ण के प्रति तीव्र मधुराभक्ति रखने वाली गोपिका शारिका को अपनी सन्देश वाहिका बनाती है।

डॉ०रामकुमार आचार्य ने लिखा है– "विरही जब विरह में उन्मत्त हो जाता है। तब उसे चेतन और अचेतन पशु और पक्षी और मनुष्य का विवेक नहीं रहता। वह हर किसी के सामने हँसता, रोता, गाता तथा प्रलाप करता है। ऐसी अवस्था में विरही नायक या नायिका का जिस किसी को भी दूत बनाकर अपने प्रिय के पास भेजना कुछ भी अस्वाभाविक नहीं लगता। जब चेतन और अचेतन का ही विवेक न रहे तब पशु–पक्षियों तक से अपनी विरह वेदना का निवेदन करना कुछ भी अनुचित नहीं प्रतीत होता है। इसीलिए अधिकांश सन्देश काव्यों में पशु–पक्षियों को दूत बनाये गये हैं।"————————1

दूतकाव्य की दूतकाव्य की परम्परा का विकास-

कला धर्म, दर्शन, सांस्कृतिक तत्वों के स्रोत के लिए भारतीय चिन्तन, मनीषा, वेदों को आदिम स्रोत ग्रन्थ के रूप में स्वीकार करती है। इस दृष्टि से दूतकाव्य परम्परा का स्रोत भी हमें वैदिक साहित्य में मिल जाता है। **डॉ०सी०एम० निखलानन्दन ने लिखा है**–"The Idea of conyeying messeges through messengers is found ever in the vedas."-------------1

ऋग्वेद मानव मेधा का प्राचीनतम दर्शन है। वैदिक ऋषि हव्य के माध्यम से अग्नि, वायु, इन्द्रादिक देवताओं का आवाहन एवं अपने काम्य की पूर्ति हेतु (काम्यपूर्त्यर्थ) उनसे संदेश संवाहक का कार्य लेते थे। किन्तु इन्हें हम शुद्ध, धार्मिक या सांस्कृतिक कार्य कह सकते हैं। वस्तुतः दूतकाव्य की परम्परा सरमा पणि संवाद के रूप में दिखाई देती है। जहाँ असुर पणि गायों को अपहृत कर गुफा में छिपा देते हैं। जिसकी खोज के लिए इन्द्र सरमा नाम की कुतिया को दौत्यकर्म एवं अन्वेषणार्थ नियुक्त करते हैं। इस स्थल के संवादों को दूतकाव्य की परम्परा के स्रोत के रूप में माना जा सकता है। प्रश्नोत्तर शैली में लिखित सूक्त के कुछ अंश इस प्रकार हैं–

किमिच्छन्ती सरमा प्रेदमाड.दूरेह्यध्वा जगुरिः पराचैः।
कास्मे हितिः का परितक्म्याडसीत् कथं रसायाः अतरःपयांसि।।

सरमा का उत्तर–

इन्द्रस्य दूती रिषिता चरामि मह इच्छन्ती पणयो निधीन्वः।
अतिष्कदो भियसा तन्न आवत्तथा रसायाः अतरम पयांसि।।

पणि–

कीद्दङि.इन्द्र सरमे का द्दशीका यस्येदं दूतीरसरः पराकात्।
आचगच्छान्मित्रमेना दधामाथा गवां गोपतिर्नो भवाति।।
एवा च त्वं सरम आजगन्थ प्रबाधिता सहसा दैव्येन।
स्वसारं त्वां कृणवै मा पुनर्गाअपते गवां सुभगे भजाम।।
नाहं वेद भ्रातत्वं नो स्वसृत्वमिन्द्रो विदुरंगिरसश्च घोराः।
गोकामा मे अच्छदयन्यदायमपात इव पणयो परीयः

1– शासिका संदेश भूमिका पृ0 – 1

दूरमित पणयो वरीम उद्गावो यन्तु मिनती ऋतेन ।

वृहस्पतिर्या अविन्दन्निगूढा सोमो ग्रावाण ऋषयश्च विप्राः ।। -----1

यदि इस प्रसंग को राजनीतिक दौत्यकर्म का स्रोत कहा जाये तो इसमें कोई अत्युक्ति नहीं। वस्तुतः पहले कहा जा चुका है कि दूत काव्यों के अन्तर्गत वे ही काव्य परम्परा उल्लिखित की जाएगी। जिसमें मानव मन की तीव्र, गहनतम, प्रेममयी भावनाओं का निदर्शन हो अर्थात् दूतकाव्य में नायक या नायिका या प्रेमी-प्रेमिका किसी को मध्यस्थ बनाकर हृदयस्थ कोमल, सान्द्र, सरल, आवर्जक भावनाओं की अभिव्यक्ति और उसके सम्प्रेषण का आग्रह करता हो। इस दृष्टि से भी हमें ऋग्वेद की घटना का स्मरण करना होगा। जिसमें श्यावाश्व ऋषि राजा रथवीति की पुत्री के प्रति आकृष्ट होता है। वह रात्रि को दौत्यकर्म के लिये आह्वान् कर अपना प्रणय सन्देश प्रेषित करता है। ------------2

इसीलिए सी0 एम0 नीलकण्ठन ने इसे पहला दूतकाव्य घोषित किया है। वे लिखते हैं - "Perhaps this is the first example of a message sent by a lover who experiences the sorrow of separation." --------3

वैदिक साहित्य मानवीय मन की नैसर्गिक अनुभूतियों का साहित्य है। जिसमें प्राकृतिक परिवर्तन में देवताओं का प्रक्षेपण कर उनसे अपने शत्रु के संहार तथा अपने लिए अर्थ, धर्म, कामादि ऐहिक एवं आमुष्मिक उन्नति की प्रार्थना की गयी है। अतः मानव मन की कोमल भावनाओं का मानव को ही आधार बनाकर व्यंजित करने हेतु जिसे आदि कवि का श्रेय प्राप्त है वह वाल्मीकि ही हैं। वैदिक ऋषि मंत्र द्रष्टा है उनका काव्य प्रकृति काव्य है जबकि वाल्मीकि चरित्र सम्पन्न धर्म विग्रह स्वरूप मानव की व्याख्या करता है। इसलिए दूतकाव्य की स्वाभाविक परम्परा इसी में ही वर्णित है। बात यह है कि दूतकाव्य में दो अनुबन्ध होते हैं। किसी कारणवश प्रिय वियोग जनित दुःख, आवेग, शोक, चिन्ता, आधि-व्याधि अभिलाषाओं की विवृत्ति जिसमें किसी न किसी मध्यस्थ की आवश्यकता होती है। सीताहरण के पश्चात् वाल्मीकि ने जिस कथा की अभिव्यंजना की है। उसमें सीतान्वेषण हेतु तत्पर दौत्यकर्म हेतु हनुमान की नियुक्ति सीता के समक्ष हनुमान की विश्वसनीयता हेतु वाग्मितापूर्ण कथन जिसमें राम के सन्देश के साथ उनकी विरह व्यथा का उल्लेख है तथा जिसका समापन सीता की अत्यन्त कारुणिक, त्रासद, भयंकर परिस्थितियों से घिरी विरहणी हृदय की अरतुंद गाथा राम के समक्ष व्यञ्जित की गयी है। परवर्ती काव्यों में इसे ही आधार रूप स्रोत के रूप में माना गया है।

1- ऋग्वेद - 10/8/108
2- ऋग्वेद - 5/61/17-19
3- शारिका सन्देश भूमिका - पृ0 2

यहाँ एतद्विषयक दौत्यकर्म निष्पादन प्रत्युत्तर की चर्चा कर इस परम्परा के विकास की दिशाएँ निर्धारित की जाएँगी। वैदिक साहित्य में जिस दौत्यकर्म की चर्चा है वह प्रतीकात्मक और शब्द वाणी से हीन है क्योंकि कुतिया और रात्रि दोनों ही भावाभिव्यंजन में असमर्थ है। जबकि वाल्मीकि रामायण में हनुमान वाग्मी और भावाभिव्यंजन में सर्वथा समर्थ कहे गये हैं। एतदर्थ कुछ श्लोक द्रष्टव्य हैं -

अतिबल बलमाश्रितस्तवाहं हरिवर विक्रमविक्रमैरनल्पैः
पवनसुत यथाधिगम्यते सा जनकसुता हनुमंस्तथा कुरूष्व

अहं रामस्य सन्देशाद्देवि दूतस्वागतः
वैदेहि कुशली रामः स त्वां कौशलमब्रवीत

एवं विश्वासिता सीता हेतुभिः शोककर्शिता
उपपन्नैरभिज्ञानैर्दूत तमधिगच्छती ----------1

यद्यपि रामायण में दौत्यकर्म अंगद और भरत, हनुमान संवाद में दिखाई देता है। किन्तु यह राजनीति से प्रेरित है जिन्हें हम अपने अध्ययन से बाहर समझते हैं। रामायण के पश्चात् महाभारत ऐसी कथा और भावनाओं का विश्वकोश है। जिसमें संसार में उपलब्ध सभी भावनाओं का चित्रांकन हुआ है। राजनीतिक दृष्टि से पाण्डव पक्ष से दौत्यकर्म हस्तिनापुर जाकर श्रीकृष्ण करते हैं। किन्तु हमारे आलोच्य परम्परा में कृष्ण रूकमिणी का प्रसंग ही श्रेष्ठ स्थल प्रदर्शन है। गुण श्रवणोत्थित राग से वशीभूत रूकमिणी पिता नियुक्त स्वयंवर के विरूद्ध श्रीकृष्ण को मनसः पति मानकर एक ब्राह्मण को अपने दौत्यकर्म निर्वाह हेतु प्रार्थना करती है। जिसमें कृष्ण के रूप, गुण, शील, शक्ति की चर्चा और अपनी उद्दाम अभिलाषा का ऐसा मार्मिक चित्रांकन है जिसे सुनकर कृष्ण अभिभूत हो उठे। इसी प्रकार हंस के माध्यम से नल दमयन्ती का प्रणय प्रसंग श्रवणगोचर होकर अनन्यता की सीमा तक पहुँचता है। महाभारत में पक्षी को दूत बनाकर सम्प्रेषण परवर्ती कवियों के लिए आधार बना। एक-दो उदाहरण इस प्रकार हैं -

अथ हंसा विससृपुः सर्वतः प्रमदावने ।
एकैकशस्तदा कन्यास्तान्हंसान्समुपाद्रवन् ।।

1- वाल्मीकि रामायण - 5/34-35

दमयन्ती तु यं हंसं समुपाधावदन्तिके ।
स मानुषीं गिरं कृत्वा दमयन्तीमथाब्रवीत ।

दमयन्ति नलो नाम निषधेषु महीपतिः ।
अश्विनोः सदृशो रूपे न समास्तस्य मानुषाः ।। -------1

यहाँ यह ध्यातव्य है कि कृष्ण कथा से सम्बन्धित श्रीमद्भागवत् सहित अनेक पुराणों में वीर्यशुल्का रूप में नायिकाओं का आमन्त्रण वर्णित है। जिसमें श्रीमद्भागवत् का विशेष स्थान है। भागवत में दो स्थलों पर दूतकाव्यों की चर्चा है। विरहिणी गोपियों को समझाने के लिए ज्ञानी पण्डित उद्धव योगमार्ग की चर्चा कर गोपियों को कृष्ण का सन्देश सुनाते हैं और दूसरा स्थल भ्रमरगीत के नाम से बहुत प्रसिद्ध हुआ है। गोपी-उद्धव संवाद के मध्य एक भौंरा गुनगुनाता आता है। कृष्ण सन्देश से आहत गोपियों का आक्रोश, प्रेम, प्रवंचक पुरूष के प्रतीक रूप भ्रमर और कृष्ण की समानता स्थापित कर कृष्ण की प्रवंचना, उनकी निष्ठुरता, अपने हृदय की अनन्यता दैन्य और विवशता का जो आक्षेप गोपियाँ करती हैं। उसमें दूतकाव्य की चरमसीमा दिखाई पड़ती है। उद्धव मथुरा पहुँचकर कृष्ण के पहुँचने का आश्वासन देते हैं।

आगमिष्यत्यदीर्घेण कालेन ब्रजमच्युतः ।
प्रियं विधास्यते पित्रोर्भगवान सात्वतां पतिः ।।

हत्वा कंसं रंगमध्ये प्रतीपं सर्व सात्वतां ।
यदाहं वः समागत्य कृष्णः सतयं करोति तत् ।। ---------2

भ्रमर के प्रति आक्रोश, रंग एवं स्वभाव की समानता के कारण हुआ है। जिसे परवर्ती संस्कृत के कवियों ने ज्ञान, प्रेमाभक्ति आदि के खण्डन-मण्डन रूप में व्यंजित किया है। एक गोपी का भ्रमर के प्रति आक्रोश द्रष्टव्य है -

मधुप कितवबन्धो मा स्पृशाऽध्रिं सपत्न्याः ।
कुच विलुलित-माला-कुङ्कुमश्मश्रुभिर्वः ।।
वहतुं मधु पतिस्तन्मानिनीनां प्रसादं ।
युदुसदसि विडम्बयो यस्य दूतस्वमीदृक् ।। श्लोक सं0 11

1- महाभारत नलोपाख्यान - 53 अध्याय
2- श्रीमद्भागवत - 10/46/34-35
3- श्रीमद्भागवत - 10/46/11-12

सकृदधरसुधां स्वां मोहिनीं पाययित्वा।
सुमनस इव सधस्तत्यजेऽस्मान् भवादृक्।।
परिचरति कथं तत्पादपदमं तु पद्मा।
ह्यापि बत हृतचेता उत्तमश्लोकजल्पैः।।   श्लोक सं012

किमिह बहु षडंध्रे गायसि त्वं यदूना।
मधिपतिमगृहाणामग्रतो नः पुराणम्।।
विजय सख सखीनां गीयतां तत्प्रसंगः।
सपित कुच रुजस्ते कल्पयन्तीष्टमिष्टाः।।   श्लोक सं013———(1)

तात्पर्य यह है कि सान्ध्यविग्रहक अथवा राजनीतिक क्षेत्र के दौत्यकर्म में साहित्यकता का अभाव यथार्थता के कारण होता है। जबकि मानव मन की तीव्रतम मधुर अनुभूति सम्बन्धी दौत्यकर्म में जहाँ एक ओर प्रेषक की अनुरक्ति, हार्दिकता दिखाई पड़ती है। वहीं दूसरी ओर माध्यम का चातुर्य, दाक्षिण्य एवं सन्देश प्रापक की उद्दीप्त भावों का अनुमान लगता है। इस हेतु मनुष्य एवं मनुष्येत्र प्राणियों की दोनों परम्पराएँ संस्कृत साहित्य में उपलब्ध है। इस दिशा में कालिदास का मेघदूत ऐसा जीवन्त प्रभविष्णु और काव्य सिद्ध हुआ। जिससे परवर्ती कवियों ने स्वतन्त्र या समस्या पूर्ति के लिए मेघदूत के पदों को ही ग्रहण कर अनेकों दूतकाव्य लिखे हैं।

दूतकाव्यों की परम्परा में मेघदूत के बाद हमें यह दो रूपों में दिखाई देती है। पहली परम्परा मेघदूत के अनुरूप शुद्ध हृदय की मार्मिक अनुभूतियों की अभिव्यंजना प्रधान दूतकाव्य है तथा दूसरी अपनी सम्प्रदायों के सिद्धान्तों की व्यावहारिक व्याख्या हेतु बौद्ध एवं जैनाचार्यों द्वारा लिखित सन्देश काव्य या दूत परम्परा है। यहाँ यह कहना पिष्टपेषण न होगा कि दोनों दूतकाव्यों की परम्परा में भाषा, भाव, शिल्पविधान मेघदूत से गृहीत है। कही मेघदूत की एक या दो पंक्तियों को लेकर समस्यापूर्ति पद्धति पर लिखे गये हैं। बौद्ध और जैनियों ने भी अपने इन काव्यों में श्लोकार्थ का प्रयोग कर उसकी आध्यात्मिक व्याख्या अथवा अपने गुरू या तीर्थाकार के जीवन चरित्र की भावमयी व्याख्या की है। निश्चय ही कालिदास ने जिस यक्ष–यक्षिणी के माध्यम से हृदय की मंजीष्ठ राग की विवृत्ति की है। उसका प्रभाव मनोविज्ञान।

1– श्रीमद्भागवत – 10/46 – 43 12, 13

आध्यात्मिक क्षेत्र में भी पड़ा है क्योंकि वेद के दशममण्डल के नासदीय सूक्त में द्वासुपर्णा वाले सूक्त में दो पक्षियों के माध्यम से जीव और ब्रह्मके सम्बन्धों को निरूपित ही नहीं किया अपितु उनके आध्यात्मिक तत्वों का भी उल्लेख किया है इसलिए यहाँ हम सबसे पहले दूतकाव्य की साहित्यिक परम्परा का उल्लेख कर तदुपरान्त आध्यात्मिक या साम्प्रदायिक दृष्टिकोण प्रधान दूतकाव्यों का विश्लेषण करेंगें।

दूतकाव्य की परम्परा की साहित्यिक धारा – ऊपर कहा जा चुका है कि दूतकाव्य में भावुक कवि हृदय के भावोच्छलन को, अपने अनुराग, तीव्र आसक्ति आदि की विवृत्ति किसी न किसी माध्यम से करता है। जिसमें मेघदूत का श्रेष्ठतम स्थान है। इसके अनुकरण पर दो प्रकार के दूतकाव्य लिखे गये हैं -

1- साहित्यिक धारा - जिसके अन्तर्गत कवियों ने अपने प्रियतम या प्रियतमा को गाढ़रागानुबद्ध हृदयगत अनुभूतियों का प्रेषण पशु-पक्षी या किसी मानव के द्वारा किया है।

दूसरे प्रकार की दूतकाव्य की परम्परा बौद्धों और जैनियों की है जिसमें बौद्ध या जैन कवि अपने धर्म, सम्प्रदाय के दार्शनिक या आध्यात्मिक सन्देश को दूतों के माध्यम से प्रेषित करने का कार्य किया है। यहाँ पहले साहित्य प्रधान सम्प्रदाय, निरपेक्ष काव्य धारा की सूची उसका वर्गीकरण तथा विश्लेषण कर इसी परिप्रेक्ष्य में बौद्धों और जैनियों के साम्प्रदायिक दूतकाव्यों की चर्चा की जाएगी।

साहित्यिक धारा के अन्तर्गत कालिदास का मेघदूत हमारा आलेच्य काव्य विषय है। अतः उसके उपरान्त दूतकाव्यों की सूची प्रस्तुत की जा रही है -

कविनाम	ग्रन्थ	समय
धोयि	पवनदूत	12वीं शताब्दी
पूर्णसारस्वत	हंस सन्देश	13वीं शताब्दी
वेदान्तदेशिक	हंस सन्देश	14वीं शताब्दी
अज्ञात	हंस सन्देश	15वीं शताब्दी
लक्ष्मीदास	शुक सन्देश	15वीं शताब्दी
वासुदेव	भृंग सन्देश	15वीं शताब्दी
उद्दण्ड	कोकिल सन्देश	15वीं शताब्दी
उदयकवि	मयूर सन्देश	15वीं शताब्दी

वामन भट्ट बाण	हंस दूत	15वीं शताब्दी
विष्णुदास	मनोदूत	16वीं शताब्दी
विष्णुस्त्रात	कोक सन्देश	16वीं शताब्दी
रूप गोस्वामी	उद्धव सन्देश	16वीं शताब्दी
रूप गोस्वामी	हंस दूत	16वीं शताब्दी
माधव कवीन्द्र	उद्धव दूत	17वीं शताब्दी
रूद्र न्याय पंचानन	भ्रमर दूत	17वीं शताब्दी
रूद्र न्याय पंचानन	पिक दूत	17वीं शताब्दी
श्री कृष्ण देव	भृंग दूत	18वीं शताब्दी
कृष्णसार भौम	पदांक दूत	18वीं शताब्दी
ब्रजनाथ	मनोदूत	18वीं शताब्दी
श्री कृष्णनाथ न्याय पंचानन	वाक् दूत	19वीं शताब्दी
भोलानाथ	पान्थदूत	20वीं शताब्दी
नित्यानन्द शास्त्री	हनुमत दूत	20वीं शताब्दी

इस प्रकार हम देखते है कि मेघदूत के आधार पर साहित्यिक क्षेत्र में विविध प्रयोग हुए हैं। यहाँ इन काव्यों का संक्षेप में परिचय देकर इनकी रचनाओं का वैशिष्ट्य निरूपित किया जाएगा। संस्कृत साहित्य के इतिहास ग्रन्थों में मेघदूत के बाद घटकर्पर का सन्देश काव्य उद्धृत किया जाता है। इस कवि के सन्दर्भ में गर्वोक्ति की किवदन्ती तो मिलती है। किन्तु उनके मूलग्रन्थ का विस्तृत विवेचन उपलब्ध नहीं है। यद्यपि जनश्रुति विक्रमादित्य के नव रत्नों में कालिदास के साथ घटकर्पर की चर्चा की है। फिर भी इसका निश्चित कार्यकाल अज्ञात ही है। इस सन्देश काव्य में प्रोषित पतिका का वर्णन है। इस सन्देश काव्य में कवि मेघ को माध्यम बनाकर अपने प्रिय को सन्देश भेजती है जिसका प्रारम्भ वर्षा ऋतु से हुआ है। यह संयोग ही कहा जाएगा कि कालिदास के मेघदूत में भी इसी कथा का वर्णन है। इस सम्बन्ध में डा0 रामकुमार का मन्तव्य है - ''संस्कृत के सन्देश काव्यों में इस काव्य का प्रथम स्थान है। यह काव्य मेघ सन्देश से पहले का ही लिखा हुआ है। इन दोनों काव्यों की कथावस्तु एक सी ही है। केवल इतना ही अन्तर है कि घटकर्पर के काव्य में पत्नी, पति के पास मेघ को दूत बनाकर भेजती है। दोनों काव्यों में वर्षा ऋतु के प्रारम्भ से ही दूत भेजा गया है।'' -------1

1- संस्कृत के सन्देश काव्य - पृ0 57

यमकाश्रित अलंकार प्रधान घटकर्पर के 22 छन्दों में इन्द्रवज्रा,बसन्ततिलका, रथोद्धता, द्रुतबिलम्बितछन्दों का प्रयोग है। विरह की विभिन्न दशाएँ, नायिका की हार्दिक भावनाओं का अभिव्यंजन अत्यन्त सामर्थ्यपूर्ण पद्धति से हुआ है।

धोयि का पवन दूत 12वीं शताब्दी का ग्रन्थ है। यह कवि राजा लक्ष्मण सेन का सभाकवि था। इसकी कथा बंगाल की राजधानी विजयपुर से प्रारम्भ होकर पाण्ड राजाओं की कुरकपुर नगरी तक जाती है।

यह मेघदूत के अनुसरण पर राजकुमारी कोवलयवती के विरह की कथा 104 श्लोकों में व-र्णित है। भाव, भाषा और शैली की दृष्टि से मेघदूत के अनुकरण पर लिखा गया यह काव्य सन्देश काव्यों में सर्व प्राचीन है। इसी प्रकार पूर्ण सारस्वत के हंस सन्देश में हंस को माध्यम बनाकर 102 मन्दाक्रान्ता छन्दों में यह कथा प्रस्तुत है। इसमें विरहिणी कृष्ण भक्त नायिका कृष्ण के लिए सन्देश भेजती है। दक्षिण भारत के अनेक स्थानों की इसमें चर्चा की गयी है। जहाँ से हंस वृन्दावन आकर नायिका के पूर्वराग जनित विरह का वर्णन करता है। ऐसा ही कुछ वर्णन हमें अपने आलोच्य काव्य शारिका सन्देश में भी मिलता है। जिसकी चर्चा और प्रभाव उपयुक्त स्थान पर की जाएगी।

वेदान्त देशिक का हंस सन्देश दार्शनिक सिद्धान्तों की भावपरक व्याख्या करता है। क्योंकि वेंकटनाथ रामानुज सम्प्रदाय में दीक्षित होकर वेदान्त देशिक के नाम से विख्यात हुए थे। दक्षिण के कांजीवरम् के समीप रहने वाले वेदान्त देशिक के हंस सन्देश की कथा रामकथा से सम्बद्ध है।

राम-रावण के युद्ध के पूर्व सीता के सान्त्वनार्थ राजहंस को दूत बनाकर लंका भेजा गया है। इसमें 2 सर्ग (आश्वास) है। प्रथम में 60 और द्वितीय में 51 श्लोक हैं। इसमें मन्दाक्रान्ता छन्द का प्रयोग है। ऋतुओं के अनुरूप राम ने अपनी विरहावस्था का भावपूर्ण वर्णन किया है। माधुर्य और प्रसाद गुण से सम्मिलित यह रचना नलदमयन्ती के हंस सन्देश से प्रभावित है।

दक्षिण भारतीय किसी अज्ञात लेखक का हंस सन्देश भी रॉयल एशियाटिक सोसायटी को पत्रिका के माध्यम से सूचना प्राप्त हुयी है। इसमें कथावस्तु का अभाव है। जिसको प्रतीकात्मक शैली में लिखा गया है। कोई शिवभक्त अनन्य प्रेयसी के सम्पर्क से माया विभूत हो जाता है और अन्त में मन रूपी हंस को दूत बनाकर शिवलोक में स्थित शिव भक्ति रूपी प्रेयसी के पास सन्देश दो भागों में भेजता है। पूर्व भाग में 50 और उत्तर भाग में 51 श्लोकों में शान्त रस प्रधान कथा कही गयी है। मेघदूत के

1- संस्कृत के सन्देश काव्य पृ0 - 384

अनुसरण पर मार्गों की दृष्टि से आध्यात्मिक मार्ग और उसके सहायक योग मार्ग की चर्चा की गयी है। इस प्रकार शैव सिद्धान्तानुसार अमृत योगावस्था की अनुभूति का वर्णन है।

मालाबार प्रान्त के लक्ष्मीदास का शुक सन्देश नायक के स्वप्न में बिछुड़ जाने पर रामेश्वर से स्वप्न में ही शुक सन्देश की कल्पना की गयी है। मेघदूत के अनुसरण पर मन्दाक्रान्ता छन्दों में निबद्ध यह काव्य दो भागों विभक्त है। इसका वैशिष्ट्य यह है कि वियोग स्वप्न जन्य है।

वासुदेव कृत भृंग सन्देश दक्षिण भारतीय कवि की रचना है। जिसमें विरही प्रेमी त्रिवेन्द्रम से श्वेतदुर्ग कोट्टक्कल स्थित अपनी प्रेमिका के पास सन्देश भेजता है। इसके पूर्व भाग में 95 और उत्तर भाग में 80 श्लोक है। जो मन्दाक्रान्ता छन्द में है। मार्गों के वर्णन में कवि ने धार्मिक तीर्थस्थलों में स्थित देवताओं की अर्चना पूजा का भाव प्रवण वर्णन किया है।

इसी तरह दक्षिण भारतीय कालीकट क्षेत्र निवासी उद्दण्ड कवि का कोकिल सन्देश मेघदूत की सुन्दर अनुकृति है। प्रेमी कालीकट स्थित अपनी प्रेयसी के पास यह सन्देश भेजता है। इसका कलापक्ष अत्यन्त मार्मिक, प्रकृति चित्रण रमणीय और नायिका के सौन्दर्य का चित्रांकन बिम्बात्मक रूप में किया गया है।

उदय कवि के मयूर सन्देश की सूचना आनन्दवर्धन के ध्वन्यालोक के लोचन नामक टीका में मिलती है। मालावार के राजा का राजकुमार अपनी रानी के साथ प्रासाद की छत पर विहार कर रहा था और आकाशचारी विद्याधर युगल को शिव दम्पत्ति समझ उपहास करने के कारण एक मास का वियोग रूपी शााप झेलना पड़ा। इन्हीं परिस्थितियों में यह सन्देश लिखा गया है। भावोत्कर्ष की दृष्टि से यह रचना अत्यन्त सुन्दर व महत्वपूर्ण प्रतीत होती है।

15वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में वामन भट्ट बाण कृत हंसदूत कवि की श्रेष्ठतम रचना है। नलाभ्युदय, रघुनाथ चरित, बाणासुर विजय, हंसदूत इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। कथा मेघदूत के अनुसरण पर लिखी गयी है। अन्तर इतना है कि यक्ष रामगिरि पर्वत पर न रहकर कैलाश पर्वत पर रहता है। इसके पूर्व भाग में 61 और उत्तर भाग में 60 मंदाक्रान्ता छन्द हैं। नवीन बात इसमें यह है कि हंस को सन्देश वहन के साथ अपने विहार हेतु अपनी प्रिया हंसिनी को भी ले जाने की कल्पना की गयी है।

विष्णुदास का मनोदूत दूतकाव्य परम्परा में एक विशिष्ट स्थान इसलिए रखता है कि इसमें श्रृंगार की अपेक्षा शान्त रस को अपनाया गया है। कवि विष्णुदास स्वयं एक भक्त के रूप में पाठकों

1- संस्कृत के सन्देश काव्य पृ0 - 384

के समक्ष आत्मग्लानि जनक अपने दुःख और पापों की सूचना देकर कृष्ण की शरण में जाने का विचार रखता है। यह काव्य 101 बसन्ततिलका छन्द में लिखा गया है। इसमें न तो किसी मार्ग की चर्चा है। पापों की स्वीकृति यमुना बृन्दावन और कृष्ण माधुर्य की दिव्य झाँकी अंकित है। विष्णुत्रात का कोक सन्देश त्रिवेन्द्रम संस्कृत सीरीज से प्रकाशित हुआ है। इसमें राजकुमार अपनी प्रेयसी के पास कोक के द्वारा अपना प्रेम सन्देश भेजता है। इसके पूर्वभाग में 120 और उत्तर भाग में 186 मन्दाक्रान्ता छन्दों का प्रयोग है। कवि को सूक्ष्म पर्यावरण निरीक्षण की सफलता प्राप्त है। इसकी हेतुत्प्रेक्षाएँ और नायक की अभिलाषाएँ अत्यन्त मार्मिक हैं।

चैतन्य महाप्रभु की कृष्ण भक्ति को बंगाल के सुरम्य प्रदेश से लाकर वृन्दावन के करील कुंजों तक फैलाने का श्रेय गोस्वामी त्रय का महत्वपूर्ण स्थान है। जिसमें रूप गोस्वामी के दो सन्देश काव्य मिलते हैं।

1- उद्धव सन्देश - इसमें भगवतोक्त कथा की अत्यन्त भाव परक व्याख्या है। उद्धव सन्देश श्रीमद्भागवत पर आधारित है। मथुरा प्रवास के समय कृष्ण को अकस्मात् गोपियों की याद आ जाती है। अपनी इस विरह दशा का अपने वयस्य मित्र उद्धव से उल्लेख करते हैं और अपने सन्देश वाहक के रूप में गोपियों के पास भेजते हैं।

इसमें कोई सर्ग या भाग का विभाजन नहीं हैं। कुल 131 श्लोक मन्दाक्रान्ता छन्द में कृष्ण गोपियों के मधुर रस पेषल ऐकान्तिक प्रणय की गाथा है। उद्धव का सन्देश और गोपियों की हताशा जन्य विलाप अत्यन्त करूणा प्लावित है। इस सम्बन्ध में डा0 रामकुमार का मन्तव्य है - "कवि की वर्णन शैली बड़ी रमणीय है। राधा और कृष्ण तथा गोपियों के विरह वर्णन में कवि ने बड़ी कुशलता दिखलाई है। भागवत के स्पष्ट प्रभाव को कवि ने बड़ी ही कोमलता के साथ पदविन्यास कर विषय को सर्वथा रमणीय बना दिया है।" ----1

इसी कवि का हंसदूत काल्पनिक कथा है। यद्यपि मूल कथा कृष्ण से ही सम्बन्धित है। श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध से कृष्ण चरित्र को लेकर सन्देश काव्यों में प्राप्त मंगलाचरण के अभाव की पूर्ति से इस काव्य का प्रारम्भ हुआ है। इसमें 142 शिखरणी छन्द हैं। जिसमें नायिका की सखि ने नायिका की ओर से प्रेमी को सन्देश भेजा है। कृष्ण के अंग-प्रत्यंग सौन्दर्य, उपालम्भ राधा के वैवर्ण्य के मार्मिक

1- संस्कृत के सन्देश काव्य - पृ0 384

चित्र अंकित है। श्रीकृष्णमाचारियर ने अपने **'क्लासिकल संस्कृत लिटरेचर'** नामक पुस्तक में इन दोनों ग्रन्थों की विस्तृत समीक्षा की है।[1]

इस सम्बन्ध में **डॉ0 रामकुमार आचार्य** ने लिखा है - ''इस प्रकार दूत काव्यों की परम्परा में भाव तथा रस का नया दृष्टिकोण उपस्थित करने में इन दोनों काव्यों का बड़ा महत्व है। श्रृंगार रस में भक्ति का पुट देकर कवि ने अपनी रचनाओं को रसिक तथा भक्तजन दोनों के ही हृदय का हार बना दिया है। दोनों काव्य कृष्णभक्ति के अमर सन्देश को पाठकों के समक्ष उपस्थित करते हैं।[2]

माधव कवीन्द्र का उद्धव दूत में भी कृष्ण गोपियों के प्राक्तन संवाद को ही स्थान दिया है, जिसमें कृष्ण की निष्ठुरता, गोपी, ग्वालबाल, राधा की करुण दशा उपालम्भ 114 अनुष्टुप छन्दों में वर्णित है। कवि को राधा की मूर्च्छा, जड़ता, आधि-व्याधि, प्रलाप, संमोह, अस्तित्व, विस्मरण इत्यादि भाव दशाओं के चित्रांकन में बड़ी सफलता मिली है। इतना अवश्य है कि इसमें कृष्ण के प्रेम का समान चित्रांकन हुआ है। रुप गोस्वामी के उद्धव सन्देश से इस काव्य ग्रन्थ का महत्व कम नहीं है क्योंकि श्रृंगार रस के साथ मधुराभक्ति का समान पुट दोनों में मिलता है।

रुद्रन्याय पंचानन बंगाल निवासी काशीनाथ विद्यानिवास के पुत्र थे। ये प्रसिद्ध नौयायिक और लगभग 40 ग्रन्थों के प्रणेता कहे गये हैं। भ्रमर दूत में सीता राम की कथा उपन्यस्त है। हनुमान सीता से चूड़ामणि लेकर जब वापस लौटते हैं, इसी मध्य सरोवर में केलिरत भ्रमर मिथुन में से सीता के प्रति अपने सन्देश सुनाने की प्रार्थना करते हैं। कवि ने उपमा, अर्थान्तरन्यास, काव्यलिंग, माधुर्यगुण से समन्वित इस काव्य को सरस बनाने में कोई कमी नहीं की है।

रुद्रन्याय पंचानन का पिकदूत कृष्णकथा से सम्बन्धित है। विरह व्यथित राधा अपनी उन्मत्त अवस्था में कोकिल को दूत बनाकर अपना संदेश भेजती है। इसमें मार्ग का नितान्त अभाव है। यह सन्देश काव्य शार्दूल विक्रीडित छन्द में लिखा गया है। इसमें बसन्त ऋतु और उसके उद्दीप्त कामभाव का अच्छा वर्णन हुआ है। श्रीकृष्ण देव की एक अन्य विशेषता है कि वे शतावधान कवि हैं। भृंगदूत 18वीं शताब्दी की रचना है। इसकी कथा भी कृष्ण कथा है। विरह व्यथिता चाँदनी रात में भ्रमण करती किसी

---

1. हिस्ट्री ऑफ संस्कृत क्लासिकल लिटरेचर भाग- 1 पृ0- 288

2. संस्कृत के सन्देश काव्य - पृ0- 396

गोपी को उषाबेला में भ्रमर दिखाई पड़ जाता है और यह गोपी उसे ही दूत बनाती है। ब्रज निवास के समय कृष्ण की माधुर्य परक लीलाओं, गोपिकाओं के वस्त्र हरण, गोवर्धन पर्वत उठाकर रक्षा परक प्रसंग की चर्चा कर सन्देश देने के बाद यह गोपी भ्रमर को भगवान वैजयन्ती माला में ही निवास करने का आशीर्वाद देती है। जिसका समापन अत्यन्त नाटकीय एवं सुखान्त रूप में हुआ है। माधुर्य अवतार कृष्ण साक्षात प्रकट होकर गोपी को अपने धाम ले जाते हैं। 126 मंदाक्रान्ता छन्द में लिखे गये इस काव्य में मेघदूत की पदावली का प्रभाव स्थान-स्थान पर दिखाई देता है।

बंगाल के संस्कृत विद्वानों में कृष्ण सार भौम का पदांक दूत अत्यन्त छोटा सन्देश काव्य है। कृष्ण विरहातुर गोपी कुंज में कृष्ण को न पाकर मूर्च्छित अवस्था में कृष्ण के चरण चिन्हों में कुलिश, कमल और रथ को देखकर उन्मत्त दशा को प्राप्त हो इन्हीं चरण-चिन्हों से दौत्य कर्म सम्पादित करने का आग्रह करती है। इसका स्रोत श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध का तीसवाँ अध्याय है। इसमें एक श्लोक शार्दूलविक्रीडित और शेष 45 मन्दाक्रान्ता छन्द में हैं।

तैलंग निवासी ब्रजनाथ का मनोदूत महाभारत के द्रौपदी निर्वसन कथा पर आधारित है। मायामय मार्ग में दुर्योधन की भ्रान्ति, भीम सहित द्रौपदी का हास्य, द्यूत क्रीड़ा एवं द्रौपदी के चीर हरण की घटना का संक्षेप में वर्णन कर कवि ने लगभग निर्वसन होती द्रौपदी द्वारा अपने मन को ही दूत बनाकर लज्जा रक्षार्थ हेतु प्रार्थना करती है। चिन्तित कृष्ण अपनी अनन्त शक्ति का प्रभाव दिखाकर द्रौपदी की रक्षा करते हैं। कुल 202 शिखरणी छन्दों में लिखा यह काव्य दूत काव्यों की अरन्तुद व्यञ्जना श्रृंगार और करूण एक साथ अभिव्यञ्जित करती है। मूलतः करूण रस में लिखी गयी यह रचना सहृदय हृदयाह्लादन अपने द्वितीय नाम को सार्थक करती है।

महामहोपाध्याय श्री कृष्ण न्याय पंचानन आधुनिक काल के विद्वान काव्य, नाटक, धर्म, शास्त्र, वेदान्त, व्याकरण, न्याय, मीमांसा में पारंगत थे। शकूदूत वि0 सम्वत् 1922 के आस-पास की रचना है। इसकी कथा का स्रोत रामायण है। राक्षसियों से घिरी सीता बसन्त ऋतु में दक्षिण से उत्तर की ओर चलने वाली वायु से पति राम के पास अपना विरह सन्देश भेजने का अनुनय करती है। 100 मंदाक्रान्ता छन्द में लिखी यह रचना राम और लक्ष्मण दोनों को सन्देश देती है। अशोक वाटिका में अपनी दैनन्दिनचर्या एवं राम के प्रति तीव्र गाढ़ानुराग का भावपूर्ण चित्रांकन इसमें हुआ है।

आधुनिक काल के भोलानाथ कृत पान्थदूत का प्रकाशन डा0 जे0 वी0 चौधरी ने कलकत्ता से कराया है। इसकी कथावस्तु श्रीमद्भागवत से सम्बद्ध है। यमुना के किनारे अचानक मूर्च्छित हुयी गोपी

के चेतना प्राप्त करते समय मथुरा जाते हुए एक पथिक दिखाई पड़ता है। बस दूती उसी को दूत बनाकर अपना सन्देश देती है। उसके मूर्च्छित हो जाने पर दूसरी गोपी उसके सन्देश को पूर्ण करती है। इसमें 2 श्लोक बसन्ततिलका के और शेष शार्दूलविक्रीडित छन्द में है। दूत काव्यों से भिन्न रूढ़ियों के अनुरूप मंगलाचरण एवं कृष्ण स्तुति है तथा अन्त में आशीर्वाद या शुभकामना नहीं है। यत्र-तत्र अस्पष्टता इस काव्य में दिखाई देती है।

जोधपुर निवासी आशुकवि श्री नित्यानन्द शास्त्री ने मेघदूत के चतुर्थ चरण को समस्यापूर्ति काव्य बनाकर हनुमत दूत की रचना की है। इसकी कथा वाल्मीकि रामायण से सम्बन्धित है। प्रश्रवण गिरि पर स्थित हनुमान को अभिज्ञान स्वरूप अपनी अँगूठी देकर राम अपना प्रेम सन्देश सुनाते है। इसमें मार्ग का विस्तृत वर्णन है। लंकापुरी में अशोक या मन्दार वृक्ष के नीचे बैठी सीता जी को हनुमान सन्देश सुनाकर चूड़ामणि लेकर वापस लौटते हैं। इसके पूर्व भाग में 68 और उत्तर भाग में 58 श्लोक हैं। समस्यापूर्ति के कारण इसमें मन्दाक्रान्ता छन्द का ही प्रयोग है। मेघदूत की पंक्तियों को विकृत करने का प्रयास कवि ने नहीं किया। तात्पर्य यह है कि मेघदूत भी समस्यापूर्ति काव्य होने के बावजूद यह काव्य सफल रचना है और पाठकों के हृदय पर अपनी विद्वता का प्रभाव डालती है।

धार्मिक सन्देश काव्य – पिछले पृष्ठों में कालिदास एवं उसकी साहित्यिक परम्परा का अनुसरण करने वाले दूत काव्यों का उल्लेख, उनका वैशिष्ट्य एवं एतद् सम्बन्धी कालिदास की कतिपय साहित्यिक विशेषताओं की समीक्षा की है, किन्तु दूत काव्यों की यह साहित्यिक धारा अवरूद्ध नहीं हुई। सन्देश काव्यों में प्राञ्जलता, सरलता, मार्मिकता के कारण धर्मक्षेत्र भी इस परम्परा से अछूता नहीं रहा। डा0 सी0 एम0 नीलकंठन ने लिखा है - "Meghaduta has exercised trumendouse influeince on the literary genre......... There are some message poems represent a differout perspelives and atmosphere. There are instances where this beautiful poetics from in used for religious propagands." ----------1

जैन कवियों ने योगपरायण जीवन की अपेक्षा निवृत्ति परायण जीवन को श्रेयस्कर मानने हेतु इस काव्य विधा का पर्याप्त उपयोग किया है। मेघदूत की पंक्तियों को समस्यापूर्ति के रूप में स्वीकार कर अपने धार्मिक, दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार किया है। यहाँ यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि इस प्रकार सिद्धान्त प्रचार के लिए लिखे गये काव्यों में श्रृंगार रस न होकर शान्त रस आदर्श रूप में उपस्थित किया गया है। इन काव्यों के माध्यम से अपनी तथा संसार की तृष्णाओं का क्षय करना दिखाया गया है। कुछ जैन धर्मावलंम्बियों के सन्देश काव्य इस प्रकार है -

कवि	ग्रन्थ	रचनाकाल
जिनसेन	पार्श्वाभ्युदय	नवीं शताब्दी
विक्रमसेन	नेमिदूत	चौदहवीं शताब्दी
मेरूतुंग	जैन मेघदूत	
चरित्र सुन्दर गणि	शील दूत	
वादिचन्द्र	पवन दूत	
अज्ञात कवि	चेतोदूत	
विनय विजय गणि	इन्दु दूत	
मेघ विजय	मेघदूत समस्या लेख	

जिनसेन की यह रचना राष्ट्रकूट वंश के राजा अमोघ वर्ष प्रथम के शासन काल में लिखी गयी है। ----------2

1- शारिका सन्देश भूमिका - पृ0 3
2- इण्डियन एन्टिक्वेरी - 12, 215

विनयसेन के कहने पर ही इसको लिखा गया है। इसमें जैनाचार्य पार्श्वनाथ का चरित्र चित्रित है। जैन धर्मावलम्बियों की मान्यता है कि पार्श्वनाथ ने अनेक जन्म लेकर भ्रान्तचित्त मानव को शान्ति, अहिंसा का पाठ पढ़ाया है। इस काव्य में उनके अन्तिम भव (जन्म) की कथा है। अनेक जन्मों की कथा के मिश्रण से यह काव्य, कथा की दृष्टि से कुछ जटिल हो गया है। इस काव्य में पार्श्वनाथ का नाम मरूमूर्ति है। जो अपने भाई की दुर्वस्था सुनकर उसके पास जाता है। किन्तु भाई कमठ पूर्व जन्म के वैर का स्मरण कर माया की रचना कर मरूमूर्ति को मारने का प्रयत्न करता है। इस प्रयास में वह मरूमूर्ति को मेघ का रूप देकर उत्तर दिशा की ओर स्वर्गस्थित अल्कापुरी जाने का परामर्श देता है। अंत में कमठ पश्चाताप से प्रेरित होकर क्षमा याचना और सम्यक् ज्ञान की प्रार्थना करता है। सम्पूर्ण काव्य 4 सर्ग 264 श्लोकों में निबद्ध है। इसमें अन्तिम छैः श्लोक मालिनी वृत्त के है। शेष मदाक्रान्ता के हैं। इसका कथानक अत्यन्त जटिल है। दर्शन सिद्धान्तों का पूर्ण परिपाक नहीं हो सका है। इस सम्बन्ध में डा0 रामकुमार आचार्य का मत है कि "मेघदूत के पदों को लेकर समस्या पूर्ति के रूप में लिखे गये काव्यों में यह सर्वप्रथम काव्य है। इसमें प्रायः मेघदूत की प्रत्येक पंक्ति को समस्या मानकर कविता की गयी है। कहीं-कहीं दो पंक्तियाँ मेघदूत की हैं और दो कवि की स्वरचित हैं। इस तरह यह एक चमत्कार पूर्ण रचना है। कहीं-कहीं कालिदास के मूल भावों को कवि ने बड़े सुन्दर ढंग से पल्लवित किया है।"------------1

विक्रम कवि के सम्बन्ध में बहुत कुछ अज्ञात है। कवि ने अपने को सांगणस्यांगजन्मा बताया है। यह चौदहवीं शताब्दी का कवि है। नेमिदूत जैनियों के 22वें तीर्थंकर से सम्बन्धित है। इसमें कवि ने कहा है कि जब भगवान नेमिनाथ की वर यात्रा जा रही थी। तो पशु-पक्षियों की करूणापूर्ण पुकार सुनकर उन्होनें रसोई के लिए वध किये जाने वाले इन पशुओं को मुक्त करा दिया तथा विवाह के लिए किसी एक नारी से सम्बन्ध न जोड़कर समस्त प्राणि मात्र से अपना सम्बन्ध जोड़ने की बात कहते हैं। इस प्रकार उनकी विवाहिता पत्नी राजमती तपस्या रत नेमिनाथ जी से सांसारिक सुखोपभोग के लिए आग्रह करती है और इस प्रसंग में राजमती के आने-जाने के मार्ग का मार्मिक दृश्यांकन कवि ने किया है। काव्य का पर्यावसान शान्त रस में हुआ है। जिसमें राजमती भी मोक्षपुरी के सतत आनन्द को प्राप्त करती है।

उक्त काव्य मेघदूत के अन्तिम चरणों को लेकर समस्या पूर्ति के रूप में लिखा गया है। सम्पूर्ण काव्य 126 श्लाकों में निबद्ध है। शीर्षक से ऐसा प्रतीत होता है कि या तो राजमती ने किसी को

1- संस्कृत के सन्देश काव्य - पृ0 173

दूत बनाकर अपना विरह सन्देश पहुँचाया होगा अथवा नेमिनाथ को ही दौत्यकर्म करना पड़ा होगा। किन्तु यहाँ दोनों ही बातें नहीं है। समग्र काव्य राजमती के हृदयस्थ कोमलतम भावनाओं की विवृत्ति है। समस्या पूर्ति के कारण ही से नेमिदूत कहा गया है। विक्रम कवि ने राजमती के शील और लज्जा की रक्षा करते हुए मुखर रूप में विप्रलम्भ श्रृंगार की भावनाओं की जिस तरह से अभिव्यक्ति की है। उससे कवि के चातुर्य का पता लगता है। इस सम्बन्ध में डा0 रामकुमार आचार्य ने लिखा है - ''समस्या पूर्ति के बन्धन में रहते हुए भी कवि ने अपनी रचना में कहीं पर भी कृत्रिमता नहीं आने दी। हर चतुर्थ पंक्ति ऐसी ही प्रतीत होती है। मानो पद्य का स्वाभाविक अंग हो। काव्य की भाषा प्रसाद गुण युक्त है। काव्य में प्रवाहमयता सर्वत्र दिखायी पड़ती है।'' ------------1

जैन समाज में मेरूतुंग नाम के तीन कवि मिलते हैं। मेघदूत के रचयिता मेरूतुंग अञ्चलगच्छीय महेन्द्र प्रभसूरि के शिष्य हैं। इसका रचनाकाल पन्द्रहवीं शताब्दी है। इन्होनें मेघदूत के अतिरिक्त दर्शन और व्याकरण ग्रन्थों की भी रचना की है। प्रस्तुत काव्य ग्रन्थ में मदुकुल शिरोमणि, नेमिनाथ के बाल्य जीवन से लेकर संन्यस्त जीवन तक की कथा का वर्णन किया गया है। कथा विक्रम के नेमिदूत के समान ही है। जिसमें कुटुम्बियों के आग्रह से विवाह के लिए उद्यत नेमिनाथ पशु वध के चीत्कार से परिवार छोड़ तपस्या हेतु रैवतक पर्वत पर चले जाते हैं। उनकी परिणीता राजमती अपने वियोग को मेघ के माध्यम से प्राणनाथ तक पहुँचाने का प्रयास करती है। इस परिप्रेक्ष्य में इस काव्य ग्रन्थ की यह विशेषता है कि कवि ने नेमिनाथ के बाल और यौवन जीवन की कुछ घटनाओं का वर्णन किया है। मेघ से अपना सन्देश कहने के बाद सखियों से प्रबोधित होकर राजमती शोक का परित्याग कर नेमिनाथ के ही पास जाकर तन्मयत्व भाव दशा को प्राप्त हो जाती है।

कालिदास के मेघदूत के अनुकरण पर लिखा गया यह काव्य दूत काव्यों से इस अर्थ में भिन्न है कि यह स्वतन्त्र काव्य है। समस्या पूर्ति नहीं है। मन्दाक्रान्ता छन्द का उपयोग कर 196 श्लोकों में यह काव्य 4 सर्गो में विभाजित है। कवि का भाषा पर असाधारण अधिकार है। श्लिष्ट पदावली के प्रयोग में कवि को अत्यन्त सफलता मिली है। जैसे - वानस्पत्याः कलकिसलयैः कोशिकाभिः प्रवालैः

तस्या राजन्निव तनुभ्रतो रागलक्ष्मी निवासाः
उद्यन्मोह प्रसव रजसा चाम्बरं पूरयन्तोड
भीकाभीष्टा मलयमरुतः कामवाहाः प्रसस्तुः --------2

1- संस्कृत के संदेश काव्य - पृ0 192

2- मेघदूत - मेरूतुंग - 2/2

चरित्र सुन्दर गणि का शीलदूत 15वीं शताब्दी की रचना है। मूलतः यह काव्य कालिदास के मेघदूत के अन्तिम चरण को लेकर समस्या पूर्ति के रूप में लिखा गया है। इसकी संक्षिप्त कथावस्तु इस प्रकार है - स्थूल भद्र नामक जैन राजकुमार पिता की मृत्यु की सूचना से वैराग्य धारण कर पर्वत में आश्रम बना तपस्या रत हो जाता है। उसकी भेंट भद्रबाहु स्वामी से होती है। वह जैनधर्म दीक्षित होकर गुर्वादेश के कारण पुनः अपनी नगरी लौट आता है। तभी उसकी पत्नी कोशा गृहस्थ धर्म में प्रवृत्त होने का आग्रह करती है और दान, धर्म इत्यादि के लिए वापी कूप निर्माण का आग्रह करती है। किन्तु स्थूलभद्र सांसारिक क्षणभंगुरता एवं जैनधर्म के तत्वज्ञान के कारण संसार से विरक्त होने की बात कहता है। कोशा की सखि चतुरा स्थूलभद्र पर निष्ठुरता का आरोप लगा उसे पत्नी की काम पूर्ति का आग्रह करती है। स्थूलभद्र अपनी पत्नी कोशा से कामवासना नष्ट करने और जैन धर्म में दीक्षित होने का आग्रह करता है। इस प्रकार उसे जैन धर्म में दीक्षित कर स्थूलभद्र सूरीश पद को प्राप्त करता है और उसकी पत्नी अनन्यता से स्वर्ग प्राप्त करती है।

इस काव्य में पूर्व और उत्तर का कोई विभाजन न होने पर भी मेघदूत के चतुर्थ चरण को समस्यापूर्ति के रूप में लिखा गया है। इसमें कुल 131 श्लोक हैं। प्रायः दूत काव्यों में विप्रलम्भ श्रृंगार की प्रधानता होती है। किन्तु यहाँ स्थूलभद्र के वैराग्यमय जीवन की झाँकी और तत्वज्ञान सम्बन्धी श्लोकों में शान्त रस दिखाई देता है। इस प्रकार कवि ने मेघदूत के श्लोकों को शान्त रस में पर्यवसित करने की अद्‌भुत कला दिखाई है। जैसे - नारी यस्मिन्नमृतसदृशी में वभूवाद्ययावद्

रागग्रस्ते मनसि मदन व्याल विध्वस्तसंज्ञे

ध्वस्ते रागे गुरूभिरभवत् क्ष्वेडवत् साऽप्यनिष्ठा

या तत्र स्याद् युवति विषये सृष्टिराद्येव धातुः ----------1

वादिचन्द्र सूरि का पवनदूत 17वीं शताब्दी की स्वतन्त्र रचना है। लेखक दिगम्बर जैन शान्ति नाथ का भक्त है। इसमें उज्जयिनी राजा विजय नरेश और उसकी पत्नी तारा की प्रेमकथा विन्यस्त है। विद्याधर अपनी शक्ति से तारा का अपहरण कर ले जाता है। रानी के वियोग में विरही राजा पवन को दूत बनाकर रानी के पास अपने प्रेम-सन्देश को भेजने का प्रबंध करता है। इसमें नदी, पर्वत, नगर और नर-नारियों के विलासमय चित्र वर्णित हैं। अन्त में पवन के युद्ध हेतु तत्पर होने पर भयभीत विद्याधर अपनी माता के परामर्श पर तारा को पवन के हाथ सौंप देता है।

1- शीलदूत पद्य सं0 - 89

यद्यपि यह काव्य समस्यापूर्ति काव्य नहीं है। कथा भी काल्पनिक ही है। किन्तु मेघदूत के अनुसरण पर ही इस काव्य का प्रणयन किया गया है। इसमें 101 मंदाक्रान्ता छन्दों का प्रयोग है। कवि ने अपनी पत्नी के प्रति गम्भीर प्रेम और उदात्त भावों का वर्णन किया है। एक उदाहरण दृष्टव्य है–

भृंगः पुष्पं जलधरजलं चातकी गां प्रवत्स
आम्रं पक्वं पिक इव वने राजहंसस्तडागम्
चक्रश्चक्रीं तरूकिसलयं नागराजस्तटिन्या
स्तद्वत कान्तां कलितकमला चिन्तयेद्यत्र शून्यः—————1

मेघदूत के पद्यों के अन्तिम चरण को लेकर समस्या पूर्ति को लेकर चेतोदूत नामक दूत काव्य किसी अज्ञात कवि का ग्रन्थ है। ग्रन्थ में कोई अंतरंग साक्ष्य भी ऐसा उपलब्ध नहीं है। जिसमें लेखक के सम्बन्ध में कुछ साक्ष्य उपलब्ध हो सकें।—————2

चेतो दूत में कोई कथा नहीं है। एक शिष्य ने अपने गुरू के श्रीचरणों की कृपा को प्रेयसी मानकर अपने चित्त को दूत बनाकर एत्त सम्बन्धी भावों की व्यञजना की है। गुरू वन्दना के पश्चात् गुरू की प्रसक्ति (कृपादृष्टि) का इच्छुक शिष्य अपने चित्त को गुरू की नगरी जाने का आदेश करता है। जिसका समापन शिष्य के सफल काम्य होने की सूचना से होता है। इस काव्य में 129 मन्दाक्रान्ता छन्द हैं और इसका विषय श्रृंगारिक न होकर धार्मिक है। कवि की विशेषता इस बात में है कि विप्रलम्भ श्रृंगार के सम्बन्ध में कही गयी उक्तियों को कवि ने शान्त रस में बड़ी कुशलता से परिवर्तित किया है। जैसे–मेघदूत में कही गयी प्रेयसी की बंकिम दृष्टि भ्रूविक्षेप (कटाक्षनिक्षेप) का वर्णन कालिदास ने इस प्रकार किया है–

श्यामास्वगं चकित हरिणी प्रेक्षणे दृष्टिपातं।
वक्त्रछायां शशिनि शिखनां बर्हभारेषु केशान्।।
उत्पश्यामि प्रतनुष नदीवीचिषु भ्रूविलासन्।
हन्तैकस्थं क्वचिदपि न ते चण्डि! साद्दश्यमस्ति।।

इस भाव को कवि ने गुरू की प्रसक्ति (कृपादृष्टि) के लिए इस प्रकार व्यक्त किया है–

औदार्यं स्वतरूषु गुरूतां मेरूशैले शुचित्व।
सौन्दर्यं वा शरदिजविधौ शीतलत्वं सुधायाम।।

1– पवनदूत पद्य सं0 – 64

2– संस्कृत के सन्देश काव्य पृ0 – 214

3– मेघदूत – 2/43

उत्प्रेक्षेऽहं जगदनुपमं द्रष्टुकामः स्वरूपम् ।

हन्तैकस्थं क्वचिदपि न ते भीरू सादृश्यमस्ति ।। --------1

18वीं शताब्दी के पूर्वार्ध में इन्दु दूत नाम का सन्देश काव्य लिखा गया। जिसके कवि विनय विजय गणि हैं। इन्होनें संस्कृत, प्राकृत और गुजराती में अनेक ग्रन्थों की रचना की है। इन्दुदूत की कथावस्तु संक्षिप्त रूप में इस प्रकार है - श्री विजय प्रभसूरिश्वर महाराज सूरत में चातुर्मास व्यतीत करते हैं तथा उनकी आज्ञा से विनय विजयगणि जोधपुर नगर आ जाते हैं। भाद्रपद की पूर्णिमा को चन्द्रमा को देखकर लेखक कवि अपने गुरू के पास सम्वत् सरिक अभिनन्दन भेजना चाहते हैं। इस हेतु चन्द्रमा को दूत बनाते हैं। चन्द्रमा का स्वागत उसकी प्रशंसा, जोधपुर से लेकर सूरत तक के मार्ग का वर्णन और मध्य में पड़ने वाले जैन तीर्थंकरों के मन्दिरों का वर्णन किया गया है और अन्त में अपनी विज्ञप्ति ज्ञापित कर गुरू के प्रति अपनी अनन्यता और ध्येयनिष्ठा सम्बन्धी सन्देश भेजता है।

131 मन्दाक्रान्ता छन्द में लिखा हुआ यह दूतकाव्य नवीन विषय होते हुए भी मेघदूत के अनुकरण पर लिखा गया है। इसका अंगीरस शान्त है। कवि ने चन्द्रमा के साथ नदियों, नगरों, जैन मन्दिरों का भाव विहृवल होकर वर्णन किया है। इस काव्य के सम्बन्ध में डा0 राम कुमार आचार्य का कथन है - ''सम्पूर्ण काव्य के अनुशीलन से यह तो स्पष्ट ही है कि मेघदूत से वर्णन शैली और प्रकिया का सहारा लेकर कवि ने नितान्त नवीन विषय पर यह सन्देश काव्य लिखा है। भाषा भी प्रसाद गुण से परिपूर्ण है। काव्य मे सर्वत्र प्रवाह पाया जाता है। कवि की वर्णन शक्ति और उच्च्य विचारों से सन्देश काव्यों की परम्परा में यह काव्य विशिष्ट स्थान रखता है।'' -------------2

व्याकरण, ज्योतिष, धर्मशास्त्र, अध्यात्म इत्यादि के विपश्चित श्री मेघविजय का मेघदूत समस्या लेख 18वीं शताब्दी की रचना है। ये जैन कवि थे। इन्होंनें शान्ति नाथ विजय देव सूरि के जीवन पर महाकाव्य लिखें हैं। मेघदूत की अन्तिम पंक्ति को समस्या मानकर यह काव्य लिखा गया है। इस काव्य में कवि ने देवपत्तन में स्थित अपने गुरू तपगणपति श्रीमान विजय प्रभसूरि के पास मेघ के माध्यम से अपना नम्र सन्देश भेजा है। भाद्रपद के शुक्ल पक्ष के चन्द्रमा को आच्छादित करने वाले मेघों को देखकर कवि ने अपना सन्देश भेजा है।

इस प्रकार औरंगाबाद से देवपत्तन (गुजरात) तक के मार्ग में पड़ने वाले तीर्थंकर मन्दिरों, समुद्र तटवर्ती मन्दिर, पर्वत शिखरों का वर्णन कर इसी पृष्ठभूमि में गुरू के प्रताप, संयम, ब्रह्मचर्य और

1- चेतोदूत श्लोक -114   1- संस्कृत के सन्देश काव्य - पृ0 225

उनके जीवन से सम्बन्धित कुछ घटनाओं का वर्णन किया है। गुरू को सन्देश सुनाने के बाद गुरू से कुछ प्रत्युत्तर लाने का भी मेघ से आग्रह करता है और काव्य के अन्त में कवि गुरू के प्रति सन्देश को सुनकर आह्लादित होता है। इस काव्य में कुल 131 श्लोक हैं। अन्तिम श्लोक अनुष्टुप में है। यह भी मेघदूत की चतुर्थ पंक्ति को समस्या मानकर लिखा गया है। भावों की पकड़ सौशब्द में कवि अत्यन्त प्रवीण हैं। जैसे- धूमः ज्योति सलिल मरूतां के भाव साम्य को कवि ने इस प्रकार प्रकट किया है -

क्वायं प्रायः पवन सलिल ज्योतिषां सन्निकायः ।
क्वार्थश्चायं प्रवणकरणै यो विधेयः समर्थैः ।। --------1

अनेक स्थानों पर श्रंगार रस की पंक्ति को शान्त रस के अनुकूल बनाया गया है। कहीं-कहीं समस्यापूर्ति के लिए कवि को सन्धिक्लेश या अत्यधिक मानसिक परिश्रम करना पड़ा है।

इस काव्य में जैन धर्म का कोई विशेष विवरण तो नहीं मिलता किन्तु जैन प्रतिमाओं और तीर्थंकरों के प्रति श्रद्धा ज्ञापित की गयी है।

सारांश यह है कि जैन धर्मानुसार लिखे गये ये सन्देश काव्य प्रायः मेघदूत की पंक्ति को समस्या मानकर पदपूत्यर्थ श्रृंगार रस से शान्त रस में पर्यवसित किया है। इन जैन कवियों में तप, अहिंसा, अपरिग्रह, तितिक्षा, सात्विकता, दया, करूणा आदि को प्रामुख्य दिया गया है। इस प्रकार भाव विपर्यास के रूप में शान्त रस का प्रयोग कर बीच-बीच में बड़ी कुशलता से श्रृंगारिक भावों की व्यञ्जना की है। इन काव्यों की दूसरी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि प्रायः इनकी भाषा प्रसाद गुण सम्पन्न, सरल और प्रभविष्णु है। इनको पढ़ते समय कालिदास के मेघदूत का स्मरण हो आता है। प्रायः यह सन्देश काव्य गुरू की कृपा प्राप्त करने हेतु, कहीं उनकी जीवन गाथा और कहीं अपने हृदयोद्यद से निष्पन्न भाव तरंगों के रूप में लिखे गये हैं।

इस प्रकार शोधकर्त्री ने यह देखा है कि कालिदास प्रणीत मेघदूत ने अपने मूल विषय वस्तु, छन्द, ललित शब्दावली, प्रवाहमयता और प्राञ्जलता में न जाने कितने कवियों को दूत काव्य लिखने के लिए प्रभावित किया है।

उक्त सन्देश काव्यों के अतिरिक्त डा० राम कुमार आचार्य ने निम्नलिखित सन्देश काव्यों की सूची भी प्रस्तुत की है। जिसमें अनिलदूतम्, अमर सन्देश, इन्दुदूतम्, काकदूतम्, कीरदूतम्, कृष्णदूतम्, कोकिलसन्देश, गरूण सन्देश, घनवृतम्, चकोर सन्देश, चातक सन्देश, चन्द्रदूतम्, तुलसी दूतम्, दार्त्यूसन्देश,

---

1- मेघदूत समस्या लेख पद्य सं० - 5

पद्य दूतम्, पदांकदूतम्, पवनदूतम्, पादपदूतम्, पिकदूतम्, पिक सन्देश, बुद्धि सन्देश, भक्ति दूत, भृंग दूत, भृंगु सन्देश, भ्रमर सन्देश, मधुकर दूतम्, मधुरोष्ठ सन्देश, मनोदूतम, मयूर सन्देश, मयूर दूतम्, मानस सन्देश, मारूत सन्देश, रथांगदूतम्, वकदूतम्, वांगमण्डनगुणदूतम्, विटदूतम्, विप्र सन्देश, शिव दूतम्, शुक सन्देश, श्येनदूतम्, सिद्धदूतम्, सुरभि सन्देश, हनुमत सन्देश, कपिदूतम्, हरिण सन्देश, हंस दूतम्, हंस सन्देश, हृदय दूतम् इत्यादि। --------------1

तात्पर्य यह है कि कालिदास के मेघदूत ने उत्तर से लेकर दक्षिण तक शताधिक कवियों को सन्देश काव्य लिखने का पथ प्रदर्शन किया है। दक्षिण में भी यह परम्परा पल्लवित और पुष्पित हुई है। रामपाणिवाद का शारिका सन्देश इसी परम्परा का परिपालन है। जिसमें गोपी विरहिणी बनकर शारिका के माध्यम से कृष्ण के प्रति अपनी मधुराभाव की अभिव्यञ्जना उपालम्भ दक्षिण में पड़ने वाले मन्दिर में भी विग्रहों के प्रति अपनी विनम्रता ज्ञापित कर कृष्ण को अपना प्रेम सन्देश भेजा है।

काव्य की रागात्मकता के विविध रूपों का अध्ययन करते हुए ऊपर कहा गया है कि गीतिकाव्य में आत्माभिव्यक्ति का प्रकाशन होता है। जिसमें भावाधिक्य के कारण घटना अत्यन्त विरल होती है। संस्कृत में प्राप्त सन्देश या दूतकाव्यों के स्रोत विकास तथा बौद्ध जैनों के द्वारा लिखित आध्यात्मिक दूत काव्यों का विवेचन अत्यन्त संक्षिप्त रूप में किया गया है। इस प्रकार मुक्तक काव्य गीतिकाव्य और सन्देश काव्यों की त्रिवेणी मिलकर जिन लक्षणों की निर्मिति हुयी वह इस प्रकार है। इसे हम सन्देश काव्य के लक्षण या तत्व भी मान सकते है। यह तत्व या लक्षण निम्नवत् है -

1-प्रस्तावना, 2-दूतयोजना, 3-मार्गवर्णन, 4-प्रदेश वर्णन, 5-मन्दिर या मकान का परिज्ञान, 6-प्रिय प्रेमी की दशा, 7-प्रेषती की सम्भावनाएँ, 8-नायक-नायिका की भावनाएँ, 9-सन्देश का प्रारम्भ, 10-सन्देश कथन और समापन, 11- नायक-नायिका का अभिज्ञान, 12-उपसंहार।

सारांश यह है कि सन्देश वे काव्य होते है। जिससे मानव या पक्षी अथवा सूक्ष्म मन को वाहक बनाकर हृदयस्थ अपने विरह की अनुभूतियों का प्रेषण होता है। वाहक के मनोरंजन एवं श्रमपरिहारार्थ आकाशीय या पार्थिव सुन्दर दृश्यों का विवेचन तदुपरान्त प्रिया की पहचान अपने प्रेम की प्रबलता का प्राकट्य और उपसंहार के रूप में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से मिलन की सम्भावनाएँ प्रकट की गई हो।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि भाव सम्प्रेषण की परम्परा अति प्राचीन है।

1- संस्कृत के सन्देश काव्य - पृ0 483-90

जिसमे अनेक काव्य विधाओं का विकास हुआ है। बन्ध आकार की दृष्टि से प्रबन्ध काव्य के अन्तर्गत गीति प्रधान खण्ड काव्यों के लक्षण और उसके तत्वों का उल्लेख करते हुए यह कहा गया है कि गीति प्रधान खण्ड काव्य में भवोच्छलन की विविधता रहती है। कवि या तन्निविष्ट पात्र अपने प्रेमोवेग को व्यक्त करने के लिए मानव अथवा मानवेतर जगत के पात्रों को आधार बनाता है। इन्हें ही हम दूतकाव्य या सन्देश काव्य कहते हैं। जिनमें कालिदास का मेघदूत अप्रतिम स्थान रखता है। उसमें निहित मञ्जीष्ठ राग नायिका, सौन्दर्य, प्रकृति एवं भौगौलिक वानस्पतिक सुषमा के साथ नगरीय सौन्दर्य का जितना सुकुमार रमणीय मसृण रूप में चित्रांकन हुआ है। वह परवर्ती कवियों के लिए ऋक्थ्य रूप में प्राप्त हुआ है। इस मेघदूत को समस्या पादपूर्ति बनाकर सन्देश काव्य लिखे गये है। जिसमें दक्षिण भारत स्थित रामपाणिवाद का शारिका सन्देश अत्यन्त महत्वपूर्ण काव्य ग्रन्थ है। जिनका काव्यशास्त्रीय अध्ययन अगले अध्यायों में प्रस्तुत किया जाएगा।

कालिदास एवं रामपाणिवाद का सामान्य परिचय

(क) - समय

(ख) - व्यक्तित्व

(ग) - कृतित्व

1. काव्य
2. नाटक
3. अन्य

द्वितीय अध्याय
कालिदास एवं रामपाणिवाद का सामान्य परिचय

"पुरा कवीनां गणना प्रसंगे कनिष्ठिकाधिष्ठित कालिदासः"

की सूक्ति में कालिदास को वाल्मीकि और व्यास के बाद ही कवि कहा गया है। क्योंकि रस की स्रोतस्विनी प्रवाहित करने वाले एवं भारतीय सांस्कृतिक आदर्शों की काव्य में प्रतिष्ठा कान्ता सम्मिति के द्वारा करने का श्रेय कालिदास को ही है। भारतवर्ष के ऋषियों क्रान्त द्रष्टा मनीषियों ने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में जो उत्तमोत्तम आदर्श स्थापित किये हैं। कालिदास की रचनाओं में स्वतः स्फूर्ति रूप में वे आदर्श दिखाई पड़ते हैं। दुर्भाग्य यह है कि कालिदास के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता कि वे कब और कहाँ उत्पन्न हुये थे। जगत की समस्त वस्तुओं को हस्तामलकवत् देखने और दिखाने वाले यह कवि चन्द्र स्वयं अंधकार में डूबा है।

पिछले अध्याय में हम लिख चुके हैं कि कालिदास का मेघदूत ऐसा दूत या सन्देश काव्य है। जिसकी पादपूर्ति हेतु अनेक साहित्यिक, साम्प्रदायिक दूतकाव्य लिखे गये हैं। आसेतु हिमालय इस काव्य परम्परा का निदर्शन होता है। दक्षिण में - केरल जैसे सुदूरवर्ती देशों में मेघदूत की रस पेशलता उसकी हृदयावर्जकता एवं कला नैपुण्य का अत्यन्त प्रभाव पड़ा है। जिसका उदाहरण रामपाणिवाद का शारिका सन्देश है। प्रस्तुत अध्याय में हम आलोच्य कवि कालिदास एवं रामपाणिवाद का सामान्य परिचय देकर उनकी कृतियों की रूपरेखा प्रस्तुत करेगें।

कालिदास का समय एवं जन्मस्थान - यह भारतीय परम्परा बहुत दिन तक चलती रही कि कवि अपने विषय में कुछ नहीं लिखता। अतः हमें अन्तः साक्ष्यों और बहिर्साक्ष्यों का सहारा लेना पड़ता है। कालिदास की स्थिति रचनाकाल के सम्बन्ध में देशी और विदेशी विद्वानों में बड़ा मतभेद है और इस मतभेद का कारण कुछ कालिदास के सम्बन्ध में प्रचलित किंवदन्तियाँ हैं एवं इनकी रचनाओं मे प्राप्त वंशावलियाँ या काव्य शैलियाँ हैं। इस प्रकार उनका कार्यकाल ई0 पू0 8वीं शताब्दी से लेकर ईसा की 11वीं शताब्दी तक माना जाता है। यह कार्यकाल या अन्तराल बहुत लम्बा है इसलिए हम इस अध्याय में कुछ प्रमुख विचारकों, अध्येताओं द्वारा निर्धारित समय के सन्दर्भ में उनके मत और उनकी आलोचना प्रस्तुत करेगें।

1- ईसापूर्व आठवीं शताब्दी का मत - इस मत के मानने वाले फ्रेंच विद्वान हिप्पोलाइट फॉस

हैं और इनकी मान्यता का कारण कालिदास प्रणीत रघुवंश के अन्तिम राजा अग्निवर्ण के मृत्योपरान्त पुत्र की चर्चा को लेकर है।

सम्भवतः कालिदास उस अभिषेक के समय रहे होगें और यह समय ईसा पूर्व आठवीं शताब्दी का पड़ता है। इस मत के विरोध में यह कहा गया है कि कालिदास सम्बन्धी किंवदन्ती में यदि कालिदास अग्निवर्ण के आश्रित या समकालिक होतें तो राजा का तीव्र, मांसल, उद्दाम, वैलासिक वर्णन कदापि नहीं करते। अतः हमें कालिदास की पूर्वापर सीमाएँ निर्धारित करने के लिए अन्य तर्कों का आश्रय लेना पड़ेगा।

कालिदास के सम्बन्ध में दो मत विशेष रूप से प्रचलित है। जिनमें कुछ ऐतिहासिकता भी है। यह मत ईसापूर्व द्वितीय शताब्दी के आस-पास का है।

2- ईसापूर्व द्वितीय शताब्दी का मत - इस मत के प्रवर्तकों में प्रो0 सी0 कुन्हन और डा0 रमाशंकर त्रिपाठी हैं। डा0 त्रिपाठी ने लिखा है कि ''मालविकाग्निमित्र नाटक का नायक शुगवंशीय राजा अग्निमित्र है जो मौर्य वंश का उच्छेद कर मगध साम्राज्य को स्वायत्त करने वाले सेनापति पुष्यमित्र का मित्र था। इसका समय ईसा से लगभग 150 वर्ष पूर्व निर्धारित किया गया है।'' --------1

कालिदास का अन्तिम सीमा का भी निर्धारण यहीं पर कर लेना समीचीन प्रतीत होता है। कालिदास के नाम का उल्लेख सम्राट हर्षवर्धन (606-647 ई0) के आश्रित कवि बाणभट्ट प्रणीत हर्षचरित की प्रस्तावना में एवे पुलकेशी द्वितीय (634 ई0) के ऐहोल ग्राम वाले शिलालेख में हुआ है। दोनों उदाहरण इस प्रकार हैं -

निर्गतासु न वा कस्य कालिदास्य सूक्तिषु ।
प्रीतिर्मधुर सान्द्रासु मञ्जरीष्विव कस्य न जायते ।।
स विजयतां रवि कीर्तिः, कवितार्श्रित कालिदास भारवि कीर्तिः

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि कालिदास ईसापूर्व दूसरी शताब्दी से लेकर सातवीं शताब्दी के मध्य रहे होंगें। यहाँ यह स्मरण रखना अत्यन्त आवश्यक है कि किंवदन्ती के रूप में कालिदास किसी विक्रमादित्य के दरबारी कवि थे। यह विक्रमादित्य शकारि के नाम से प्रसिद्ध रहा है। उसके दरबार के नवरत्नों की चर्चा इस प्रकार की गयी है -

धन्वन्तरिक्षपणकामर सिंह शंकुवेताल भट्ट घटकर्पर कालिदासाः ।
ख्यातो वराहमिहिरो नृपतेः सभायां रत्नानि वै वररूचि र्नव विक्रमस्य ।।

1- महाकवि कालिदास - डा0 रमा शंकर तिवारी - पृ0 2

इस श्लोक के आधार पर विलियम जोन्स ने उन्हें ईसापूर्व प्रथम शताब्दी का कवि कहा है। तात्पर्य यह है कि कालिदास के स्थितिकाल के सम्बन्ध में अत्यन्त विवाद है। ई0 पूर्व प्रथम शताब्दी मानने वालों में डा0 पीटरसन भी हैं। जिनका कथन है -

''kaledasa stands near the beginning of the christianera if indeed, he does not over top it........

प्रो0 लेसा ने कालिदास को समुद्रगुप्त की सभा का कवि माना है। उनकी मान्यता है कि रघुवंश में वर्णित रघु दिग्विजय प्रसंग समुद्रगुप्त के दिग्विजय का स्मरण कराता है। इसके विरोध में डा0 मधु सक्सेना ने लिखा है कि ''समुद्रगुप्त प्रशस्ति में वर्णित अवान्तर देशों के नामों का संकेत रघुवंश में नहीं है तथा समुद्रगुप्त का दिग्विजय क्रम रघु के दिग्विजय क्रम से मेल नहीं खाता है।'' -----------1

3- तृतीय शताब्दी का मत - डा0 वी0 केतकर ने रघुवंश के कुछ श्लोकों के आधर पर कालिदास का समय तीसरी शताब्दी या 280 ई0 स्वीकार किया है। इस मत के मूल में ज्योतिष शास्त्र है। उनके अनुसार कालिदास ने दक्षिणायन का आरम्भ अगस्त्य तारे के पास से किया है। ज्योतिष के अनुसार अगस्त्य की दूरी 90̇ की मानी गयी है। अतः कालिदास के समय तक यह 26 ̇तक यह पीछे खिसक गया। वाराहमिहिर (520 ई0) के समय यह अंश अश्विनी के प्रथम चरण से होता था। अतः कालिदास वाराह मिहिर से लगभग 250 वर्ष पूर्व हुए होगें। इस मत का विरोध करते हुए वासुदेव विष्णु मिराशी ------2 ने लिखा है कि ''कालिदास ने अगस्त्य के दक्षिण में रहने की स्थिति अनुश्रुति के आधार परकिया है। ज्योतिष सम्बन्धी काल गणना के आधार पर नहीं।''

4- ईसा की चतुर्थ शताब्दी का मत - इस मत के डा0 कीथ, डा0 मैक्डालन, टी0 जी0 मेन्कर, जैकोबी, वासुदेव शरण अग्रवाल, डा0 भगवत शरण उपाध्याय समर्थक हैं। यह मत गुप्तकालीन मत के नाम से भी प्रचलित है। इस सम्बन्ध में निम्न तर्क दिये जाते हैं -

1- किंवदन्ती कालिदास का सम्बन्ध शकारि विक्रमादित्य से है और यह विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त द्वितीय ही ठहरता है। जिसका कार्यकाल 357-413 ई0 है। इसी ने शकों को नष्ट कर विक्रमादित्य की उपाधि धारण की होगी और अपने नाम से विक्रम सम्वत् चलाया। इस सम्बन्ध में रघुवंश के अनेक श्लोक उद्धृत किये

1- महाकवि कालिदास और अभिज्ञानशाकुन्तल - पृ02

2- कालिदास - पृ0 13

जाते हैं। जैसे - 4/26,42,50,68 श्लोक बहुत महत्वपूर्ण हैं। -----------1

2- कालिदास ने अपने साहित्य में जिस शासन, सुव्यवस्था, समृद्धि, राजनीतिक स्थिरता, कुशलता, समाज की सम्पन्नता और वाणिज्य की समृद्धि का वर्णन किया है। वह गुप्तकाल में ही उपलब्ध होता है। इस सम्बन्ध में अश्वघोष और कालिदास के पूर्वापर रूप में भी चर्चा की जाती है। प्रो0 चट्टोपाध्याय ने कालिदास और अश्वघोष के साहित्य में प्राप्त वाक्यों की समानता पर विशेष बल दिया है। कुछ की मान्यता यह है कि अश्वघोष ने कालिदास की पंक्तियों को उद्धृत किया है। इनमें प्रो0 शारदानन्द राय और चट्टोपाध्याय प्रमुख है। इस विषय में इतना ही कहा जा सकता है कि अश्वघोष का समय कुषाण सम्राट कनिष्क के सभा पण्डित होने कारण 74 ई0 माना जाता है। कालिदास निःसन्देह इनके परवर्ती रहे होगें। -----------2

3- कालिदास ने कुछ ग्रीक शब्दों का प्रयोग किया है। ए0 पी0 कीथ ने जामित्र जिसे जैकोबी डियोमैट्रान ग्रीक का रूपान्तर कहा है और यह समय भारतीय ग्रीकों के सम्बन्ध को निरूपित करता है। जो चतुर्थ शताब्दी के आस-पास का समय है।

4- कालिदास के ग्रन्थों में गुप्त राजाओं के नामों से मिलते-जुलते शब्दों का बहुत प्रयोग है। जैसे- कुमार सम्भव में कुमार शब्द विक्रमोर्वशीयम् में विक्रमादित्य इन्दुमती स्वयंवर में ज्योतिषमती चन्द्रमसैव रात्रिः में चन्द्रगुप्त की ओर संकेत हैं।

5- डा0 चन्दंबली पाण्डेय ने दिलीप को चन्द्रगुप्त, रघु को कुमार गुप्त तथा अज को स्कन्दगुप्त का प्रतीक मानते हैं। चन्द्रगुप्त की पुत्री प्रभावती क विवाह वाकाटक नरेश रूद्रसेन के साथ हुआ था। इसी अवसर पर मालविकाग्निमित्र की रचना की गयी होगी। ---------3

इसी प्रकार कुमार गुप्त के जन्मोत्सव प्रसंग पर कुमार सम्भव का प्रणयन हुआ होगा। यह धारणा भी कुछ विद्वानों ने व्यक्त की है।

6- रघुवंश में रघु के थकेमादे सैनिको का अंगूरी शराब पीना, रघु का दाढ़ी वाले पारसी और कम्बोजों के साथ युद्ध करना, हूण वधुओं के विलाप से स्पष्ट है कि कालिदास को म्लेच्छ हूण आदि जातियों का ज्ञान था और यह समय गुप्तकाल ही था।

1- अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया - वी0 सेण्ट स्मिथ - पृ0 304

2- वी0 वी0 मिराशी कालिदास-पृ0 13, एवं कालिदास का स्थितिकाल प्रो0 चट्टोपाध्याय-पृ053

3- एपिग्राफिक इण्डिया भाग 7 (चन्द्रवली पाण्डेय द्वारा उद्धृत), कालिदास - पृ0 13

7- डा0 राम औतार शर्मा कालिदास की कृतियों में अपाणिनीय शब्दों का प्रयोग जैसे- वपुप्रकर्षात् के आधार पर कालिदास को चतुर्थ शताब्दी का ही कवि कहा है।

8- गुप्तकाल में कालिदास का अस्तित्व सिद्ध करने वाले चन्द्रंबली पाण्डेय ने राजतरंगिणी के आधार पर चन्द्रगुप्त द्वारा कश्मीर का शासक बनाये गये मातृगुप्त को ही कालिदास स्वीकार करते हैं।

9- पाश्चात्य विद्वान विण्डल ने चतुर्थ शताब्दी में सिंहल नरेश धातुसेन, कुमारदास कवि और कालिदास की मित्रता का उल्लेख किया है।

10- दार्शनिक सिद्धान्तों के आधार पर यह कहा जाता है कि कालिदास की रचनाओं में वैशेषिक दर्शन की चर्चा नहीं है। अतः कालिदास सांख्य शास्त्र के ज्ञाता तो रहे हैं। ईश्वर कृष्ण से उनकी मित्रता भी कही गयी है। अतः कालिदास का समय चतुर्थ शताब्दी ही मान्य है।

11- कालिदास ने ईसापूर्व प्रथम शताब्दी के शकराज अमलात के आक्रमण का वर्णन नहीं किया। अतः कालिदास उसके परवर्ती ही रहे होगें।

12- एक बात विशेष उल्लेखनीय है कि भरतमुनि ने अपभ्रंश भाषा का उल्लेख नहीं किया। जबकि कालिदास ने इस भाषा का प्रचुर प्रयोग किया है। अतः कालिदास अपभ्रंश युगीन काल में हुए होगें। तात्पर्य यह है कि कालिदास ने चन्द्रगुप्त द्वितीय के राजाश्रय का प्रतीकात्मक वर्णन विस्तृत रूप में किया है। अतः उनकी स्थितिकाल ईसा की चौथी शताब्दी का उत्तरार्द्ध और पाँचवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध का रहा होगा। ----------1

5-पंचम शताब्दी का मत - अन्य मतों में पंचम शताब्दी का मत भी उल्लेखनीय है। जिसमें के0 वी0 पाठक, मनमोहन चक्रवर्ती, रामकुमार चौबे, कर्नल विल्फोल्ड, एच0 एच0 विल्सन आते हैं। इस धारणा के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि धनञ्जय सूरि के ग्रन्थ शत्रुञ्जय माहात्म्य के आधार पर विक्रमादित्य एवं शिलादित्य की चर्चा की गयी है। शिलादित्य, विक्रमादित्य का पुत्र था। उसकी मृत्यु 580 ई0 में हुई थी। उससे 60 वर्ष पूर्व विक्रमादित्य के शासन काल में वसुवन्धु विद्यमान था। दिङ्नाग और कालिदास की समकालीनता में कालिदास को पंचम शताब्दी का कवि सिद्ध करता है।

मन्दसौर के शिलालेख में कालिदास के कुछ श्लोकों का उल्लेख है इस शिलालेख का समय 473 ई0 है। अतः कालिदास पाँचवी शताब्दी के कवि सिद्ध होते हैं।

1- कालिदास - चन्द्रबली पाण्डेय - पृ0 12-32

6- छठीं शताब्दी का मत - मैक्समूलर ने वैदिक साहित्य और उसके अंगों, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, सूत्र आदि का समय ई0 पू0 1200 से प्रारम्भ कर ई0 सन् के प्रारम्भ तक समाप्त किया है। शेष संस्कृत के कलात्मक साहित्य का प्रादुर्भाव एवं पुनर्जागरण का काल माना है। इस दृष्टि से कालिदास का समय छठीं शताब्दी सिद्ध होता है। इस मत के विरोध में कीथ, मैक्डालन आदि विद्वानों ने अपनी आपत्ति बताते हुए कहा है -

1- कि संस्कृत साहित्य के इतिहास में तथाकथित अंधकार युग कभी नहीं आया। प्रथम शताब्दी में अश्वघोष, द्वितीय शताब्दी में रूद्रदामन के गिरिनार के शिलालेख के अंलकृत गद्य तृतीय शताब्दी में हरिषेण द्वारा रचित समुद्रगुप्त प्रशस्ति उत्कृष्ट संस्कृत गद्य-पद्य के उदाहरण है।

2- षष्ठ शताब्दी में किसी विक्रमादित्य का अस्तित्व नहीं सिद्ध होता है।

3- हूण और शक प्रथक-प्रथक जातियाँ है। कालिदास के आश्रयदाता शकारि थे। -------1

तात्पर्य यह है कि कालिदास के स्थितिकाल के सन्दर्भ में दो मत ही अधिक प्रचलित है -

1- ईसापूर्व प्रथम शताब्दी का मत

2- गुप्तकालीन मत

इन दोनों मतों के पक्ष या विपक्ष में बहुत कुछ कहा गया हैं। जिसका सारांश यह है -

1- कालिदास का सम्बन्ध किसी विक्रमादित्य से था। इतिहास में अब तक चार विक्रमादित्य हो गये हैं। साथ ही विक्रमादित्य एक उपाधि भी है। डा0 राजबली पाण्डेय ने सम्वत् प्रवर्तक सम्राट विक्रमादित्य को ई0 पू0 प्रथम शताब्दी का सम्राट कहा है। कथा सरित्सागर के अनुसार परमार वंशीय राजा महेन्द्रादित्य का पुत्र विक्रमादित्य था। सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् चम्बलघाटी के आस-पास बसे स्वाधीनता प्रेमी मालवगण ई0 पू0 प्रथम शताब्दी में विक्रमादित्य के नेतृत्व में शकों को पराजित किया था। वे ही शकारि कहलाते हैं।

2- अश्वघोष कनिष्क के गुरू थे और कालिदास उनके ऋणी रहें हैं।

3- सूर्यनारायण व्यास ने पौराणिक नाटककार भास की अपेक्षा समसामयिक कालिदास की रचनाओं को ई0 पू0 प्रथम शताब्दी का माना है। कालिदास ने रघुवंश में पाण्डय राजाओं का वर्णन किया है। ये ई0 पू0 प्रथम शताब्दी के राजा थें।

4- डा0 केदार कहते हैं कि विदिशा गुप्तकालीन राजधानी नहीं थी। कालिदास अमान्त मास की चर्चा करते हैं। जबकि गुप्तकाल में पूर्णमान्त मास चलता था।

1- महाकवि कालिदास और अभिज्ञान शाकुन्तल - डा0 मधु सक्सेना - पृ0 11

5- अभिज्ञान शाकुन्तल में गर्भस्थ सन्तति को पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होने का उल्लेख है। यह नियम ई0 पू0 प्रथम शताब्दी में प्रचलित था।

6- कालिदास की प्राकृत मागधी उन्हें ई0 पू0 प्रथम शताब्दी का कवि सिद्ध करती है।

इस प्रकार विभिन्न किंवदन्तियों, बाह्य साक्ष्यों, शिलालेखों, कालिदास प्रयुक्त वाक्य विन्यास, व्याकरण विरूद्ध शब्दों के प्रयोग, अन्तर्साक्ष्य के रूप में प्रतीकात्मक रूप से वर्णित राजाओं के नाम साम्य के आधार पर कालिदास के सम्बन्ध में दो ही मत अधिक प्रामाणिक प्रतीत होतें हैं। चतुर्थ शताब्दी का मत एवं ई0 पू0 प्रथम शताब्दी का मत।

यहाँ शोधकर्त्री किसी एक निश्चित मत का प्रामाणिक उल्लेख इसलिए नहीं करना चाहती कि यह विषय अत्यन्त गम्भीर और स्वतन्त्र शोध का विषय है। अपने शोध प्रबन्ध के तारतम्य हेतु शोधकर्त्री ने एतद्विषयक सामग्री का यत्किंचित उल्लेख संक्षेप रूप में किया है। क्योंकि उक्त दो मतों में से किसी भी मत के पक्ष का समर्थन करने से पूर्व अब तक किये गये शोध कार्यों का अध्ययन, विश्लेषण अपेक्षित है। अतः शोधकर्त्री ने मध्यम मार्ग निकालकर ई0 पू0 प्रथम शताब्दी या चतुर्थ शताब्दी (गुप्तकाल) का विशेष उल्लेख इस सन्दर्भ में किया है। इतना अवश्य ही कहा जा सकता है कि कालिदास के समय भारत का सांस्कृतिक वैभव उच्चशिखर पर था। न्याय और शासन व्यवस्था प्रजा की सुख समृद्धि के द्योतक थे। भाषा की दृष्टि से सुसंस्कृत और प्राकृत का यह युग रहा होगा।

कालिदास का कृतित्व – कालिदास की वाणी से भारतवर्ष का महान उदात्त और शोभनरूप मुखरित हुआ है। उन्होंनें अपनी कृतियों से भारत की अन्तरात्मा को वाणी दी है। नये और पुराने आलोचक उन्हें निश्चित रूप से भारत का श्रेष्ठ कवि मानते है। उनके सात ग्रन्थ प्रामाणिक माने गये हैं। जिनमें तीन नाटक हैं और चार काव्य। तीन नाटकों के नाम हैं – मानविकाग्निमित्र, विक्रमोर्वशीय और अभिज्ञान शााकुन्तल। चार काव्य हैं – ऋतु संहार, मेघदूत, रघुवंश और कुमार संभव। इन नाटकों और काव्यों में कालिदास ने अपनी साधना का निचोड़ रख दिया है। अतः इस विषय में विस्तृत चर्चा करने से पूर्व संक्षेप में उनकी कृतियों का परिचय पा लेना आवश्यक है। कालिदास की उपर्युक्त सात कृतियों का संक्षिप्त विवेचन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। प्रथमतः उनके काव्य ग्रन्थों की मीमांसा की जाएगी।

ऋतु संहार – यह कालिदास की प्रथम रचना कही गयी है। इसे गीतिकाव्य माना गया है। इसमें छः ऋतुओं का सम्मरण किया गया है। यह छोटी सी रचना है। जिसमें छहों ऋतुओं की नैसर्गिक सुषमा को

शब्द ब्रह्म की महिमा से आबद्ध करने का प्रयास है अथवा शब्द शक्ति के द्वारा अंतरिन्द्रिय से उसका आनन्द लेने का प्रयत्न किया गया है। यह ऋतु वर्णन प्रधान प्रथम रचना है। इसमें - ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर एवं बसन्त का क्रमशः वर्णन छह सर्गों में किया गया है।

कालिदास ने ऋतु वर्णन का प्रारम्भ ग्रीष्म वर्णन से किया है। कवि प्रिया को संबोधित करता है कि सूर्य की उद्दाम प्रचण्डता से काम शान्त सा हो गया है। ऐसे समय में प्रेमिकाओं को क्या करना चाहिए।

नितम्ब बिम्बैः सुदुकूल मेखलैः स्तनैः सहारा भरणैः सचन्दनैः ।

शिरोरूहैः स्नान कषायवासितैः स्त्रियो निदाधं शमयन्ति कामिनाय ।।-----1

कवि दृष्टि पशु-पक्षियों, लता, वृक्षों की ओर भी गयी है, जिसमें सूर्य की प्रचण्ड किरणों से झुलसे वन्य-जीव सहज वैर विस्मृत कर एक ही स्थान पर छाया में छिपे हुए हैं।

गज गवय मृगेन्द्रा वहिन संतप्त देहाः सुहद इव समेता द्वन्द्व भावं विहाय -------2

वर्षा का चित्रण राजा के रूप में प्रस्तुत हुआ है। इस ऋतु में मेघ गर्जन, विद्युत नर्तन, हरीतिमा का वर्णन अत्यन्त बारीकी से किया गया है। पृथ्वी नायिका की शोभा द्रष्टव्य है।

प्रभिन्न वैदूर्य निभैस्तृणांकुरैः समाचिता प्रोत्थित कन्दली दलैः ।

विभाति शुक्लेतर रत्न भूषिता वराङ्नेव क्षितिरिन्द्र गोपकैः ।। -----3

निदाध-म्लान प्रकृति को वर्षा का उपहार कितना उपकृत करता है। उसमें स्फूर्तिमय नवोल्लास भर देता है। वानस्पतिक वैभव नव-जीवन प्राप्त करता है। इसका अनुभव कवि को ही नहीं, साधारण मनुष्यों को भी होता है। प्रेमी-प्रेमिकाओं के आहार्य अनुभावों का वर्णन कितना समाचीन है -

शिरसि बकुल मालां मालतीभिः समेतां विकसित नव पुष्पैर्यूथिका कुडमलैश्च ।

विकच नव कदम्बैः कर्णपूरं वधूनां रचयति जलदौधः कान्त वत्काल एषः ।।------4

शरदर्तु रूप रम्या नववधू वेश धारण कर आई है।

काशाशुंका विकच पद्म मनोज्ञ वक्त्रा सोन्माद हंस रव नूपुर नाद रम्या ।

आपक्व शालि रूचिरा नतगातयष्टिः प्राप्ता शरन्नववधूरिव रूपरम्या ।।--------5

1- ऋतु संहार - 1/4
2- ऋतु संहार - 1/27
3- ऋतुसंहार - 2/5
4- ऋतुसंहार - 2/25
5- ऋतुसंहार - 3/1

वर्षाकालिक उन्मत्त स्वैरिणी नदियाँ अब प्रमदा बन गयी है -

चञ्चन्मनोज्ञ शफरी रशना कलापाः पर्यान्ता संस्थित सिताण्डजपङक्ति हाराः ।

नद्यो विशालपुलिनान्त नितम्बा मदं प्रयान्ति समदाः प्रमदा इवाय ।।----------1

इस ऋतु में पशु-पक्षियों, वन्य-सुषमा में जो अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ है, उसका सूक्ष्म किन्तु जीवन्त चित्रांकन किया है। जैसे - हंसों ने कामिनियों की अलस मन्थर गति को, कमलों ने मुख छवि को नील कमलों ने मदभरी आँखों को लघुतरंगों ने भृकुटि-निक्षेप को लज्जित कर दिया है। ---------2

शरद ऋतु रूपरम्या सद्यः विवाहिता वधू के वेश में चित्रित की गयी है -

काशा ----------- रूपरमया

शारदीया-शर्वरी, चंद्रिका-खचित नव बाला के रूप में देख विरही की उद्दाम व्याकुलता का मादक वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है -

असित नयन लक्ष्मी लक्षयित्वोद्रपलेषु क्वणित कनक कांची मत्तहंस स्वनेषु ।

अधर रूचिर शोभां वंधु जीवे प्रियाणां पथिक जन इदानीं रोदिति भ्रान्त चित्तः ।।--3

हेमन्त और शिशिर ऋतु वर्णन अत्यन्त साधारण रूप में वर्णित है। रति-विलास हास, सुरतोपभोग, रति सुख गर्विता वनिता का चित्रण अच्छे नहीं कहे जा सकते।

दंतच्छद प्रियतमेन निपीत सारं दंताग्रभिन्नमव कृष्य निरीक्ष्ते च ।--------4

बसन्त वर्णन के सम्बन्ध में एक बात अवश्य कही जा सकती है कि कवि ने बड़े मनोयोग से इस ऋतु का वर्णन किया है। आम्र मंजरियों के तीक्ष्ण वाणों से युक्त बसंत योद्धा का रूप द्रष्टव्य है-

प्रफुल्ल चूताङ्कुर तीक्ष्ण सायको द्विरेफ माला विलसद्धनुर्गुणः ।

मनांसि भेत्तुं सुरत प्रसंगिनां वसन्त योद्धा समुपागतः प्रिये ।।----------5

कामदेव के उद्दीपक रसायनों की चर्चा कवि ने इस प्रकार की है -

रम्यः प्रदोष समयः स्फुट चन्द्रमासः पुंस्कोकिलस्य विरूतं पवनः सुगन्धिः ।

मत्तालि यूथ विरूतं निसि साधुपानं सर्वं रसायनमिदं कुसुमायुधस्यः ।।--------6

इस प्रकार ऋतुसंहार अनुराग की अग्नि को प्रदीप्त करने वाला काव्य है। पुष्प, लता, वृक्ष, पक्षी, नदी, सरोवर, आकाश सभी युवजनोचित अनुराग को उद्दीप्त और मादक बनाते हैं। कालिदास ने इसमें किसी प्रकार जीवन दर्शन तो नहीं दिया। परन्तु सारा काव्य मादक जीवन रस से परिपूर्ण है।

1- ऋतुसंहार - 3/3
2- ऋतुसंहार - 3/17-18
3- ऋतुसंहार - 3/26
4- ऋतुसंहार - 4/14
5- ऋतुसंहार - 6/1
6- ऋतुसंहार - 6/35

कुमार संभव – अपने अन्यान्य काव्यों और नाटकों में कालिदास ने शिव की महिमा, श्रद्धा विगलित भाषा में उद्घोष किया है। इसमें सत्रह सर्ग हैं किन्तु आठ सर्गों के विषय में यह कहा जाता है कि इनमें विषय की दृष्टि से पूर्ण एकता है। अतः ये कालिदास कृत हैं। शेष के विषय में सन्देह है। इसकी काव्य शैली अत्यन्त रमणीय और चित्ताकर्षक है। इसका कथाबंध नाटकीय है।

अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः ------------1

काव्य के आरम्भ में ही हिमालय का बड़ा ही महनीय रूप उपस्थित किया गया है। उसे "देवात्मा" कहा गया है और समस्त रत्नों और प्रसाधन सामग्रियों की उद्भव भूमि कहा गया है। पार्वती इसी महान हिमालय की कन्या है। हिमालय के एक किनारे पर कैलाश पर्वत है, जहाँ शिव जी समाधि लगाकर बैठे हुए हैं। उधर तारकासुर नामक भयानक दैत्य ने देव नगरी को विध्वस्त कर दिया है। देवता ब्रह्मा की स्तुति करते है और वहीं उन्हें यह जानने को मिलता है कि शिव-पार्वती के समागम से जो पुत्र उत्पन्न होगा। वही इस महान असुर का विनाश कर सकता है। इसका केवल एक ही उपाय है कि आप लोग ऐसा यत्न करें। जिससे शिव जी का चित्त उमा की ओर आकृष्ट हो। इस महान कार्य के लिए कामदेव रति सहित अपने साथी बसंत के हाथ में आम्र मंजरी का बाण देकर बगल में लिए हुए सामने आ खड़े हुए।

अथ स ललितयोषिद्भूलताचारुश्रृंगं ।
रति वलय पदाङ्के कण्ठमासज्य चापे ।।
सहचर मधहस्तन्यस्त चूतांकुरास्त्रः ।
शतमुखमुपतस्थे प्राञ्जलिः पुष्पधन्वा ।।---------2

काम के प्रभाववश शिव के चित्त में भी किंचित विक्षोभ हुआ और पूजन के लिए आई हुई "वसंतपुष्पाभरण धारिणी " पार्वती के मुखमण्डल पर उनकी दृष्टि क्षणभर के लिए जम गई। शिव ने अपने चित्तविक्षोभ को जानने के लिए इस देवता पर दृष्टि डाली। उनके नेत्र से भयानक ज्वाला निकली और कामदेव जलकर राख बन गया।

चैाथे सर्ग में काम की पत्नी रति का बड़ा ही मर्मान्तक विलाप है। वह सती होने को तैयार है। लेकिन उसी समय आकाशवाणी हुई कि तुम्हारा पति थोड़े दिनों में तुम्हें फिर मिल जाएगा।

1- कुमार संभव - 1/1
2- कुमार संभव -

कुमार सम्भव का पॉचवॉ सर्ग सबसे महत्वपूर्ण है। अपने सामने ही कामदेव को इस प्रकार भस्म होते देख पार्वती मन ही मन अपने बाह्य रूप की निन्दा कर उसे सफल बनाने के लिए तपस्या का निश्चय किया।

अवाप्यते वा कथमन्या द्वयं तथाविधं प्रेम पतिश्च तादृशः।--------1

पार्वती ने पिता की आज्ञा से गौरी शिखर नामक पर्वत पर घोर तपस्या की। उनके कठोर तप से सारा आश्रम पवित्र और महनीय हो उठा। कठिन तपस्यानिरत पार्वती की परीक्षा लेने के लिए ब्रह्मचारी वेष में स्वयं शिव उपस्थित हुए।

कालिदास ने इस दृश्य को बड़ी ही जीवन्त भाषा में चित्रित किया है। शिव को देखते ही पार्वती के शरीर में कम्प उत्पन्न हुआ। वे पसीने से भीग गईं और उठते कदम रूक गये, वे न आगे बढ़ सकीं, न पीछें हट सकीं -

तं वीक्ष्य वेपथुमती सरसांगयष्टि र्निक्षेपणाय पदमुद्धृतवहन्ती ।

मार्गाचल व्यतिकराकुलितेव सिन्धुः शैलाधिराजतनया न ययौ न तस्थौ ।।-----2

छठें सर्ग में विवाह की तैयारी है और सातवें में वास्तविक विवाह का प्रसंग आता है। कन्या की विदाई के समय पार्वती की माता मैना की आँखों में आँसू भर आए थे और पार्वती के हाथ में जो कंगन बाँधना था वह कहीं अन्यत्र बाँध गयीं।

आठवें सर्ग में शिव ओर पार्वती की विलास लीला का वर्णन है। जगत के माता-पिता शिव और पार्वती की विलास लीला भक्त जनों को रूचिकर नहीं प्रतीत होती और बहुत सी प्रतियों में सातवें सर्ग के बाद ही काव्य समाप्त हो जाता है। यद्यपि इसके बाद भी इस ग्रन्थ के नौ सर्ग और मिलते हैं। परन्तु वे निःसन्देह प्रक्षिप्त हैं। इस महाकाव्य में त्याग के साथ ऐश्वर्य का और तपस्या के साथ प्रेम का मिलन होने पर ही स्त्री-पुरूष का प्रेम धन्य होता है। यह सन्देश मिलता है। पार्वती का जीवन, तपस्या और प्रेम का सामंजस्य है। शिव का भोग और वैराग्य का सच्चा प्रेम और गहराई में पलता है। इस काव्य की शैली अत्यन्त रमणीय और चिन्ताकर्षक है। इसका काव्य चमत्कार सहृदयों के हृदयों को आकृष्ट किये बिना नहीं रहता।

यह सम्भव है कि इस काव्य में श्रंगार के मोहक चित्रण के कारण कुछ लोग उन्हें घोर श्रृंगारी कवि होने का दोषारोप करने लगे हों पर कवि ने स्पष्ट रूप से घोषणा की है कि देवाधिदेव शिव ने

1- कुमार संभव 2- कुमार संभव - 5/

ही पुरूष और स्त्री के रूप में अपने आपको द्विधा विभक्त कर पुरूष तत्व और स्त्रीतत्व के पारस्परिक आकर्षण उनकी सिसृक्षा का ही विलास है। विशुद्ध प्रेम में जो अद्वैत भावना आती है। वह शिवत्व की ही अनुभूति का एक रूप है।

रघुवंश - रघुवंश में रघुकुल के कई राजाओं का वृत्त है। इस महाकाव्य में 19 सर्ग हैं। भारतीय आलोचक इसको कालिदास की सर्वश्रेष्ठ कृति मानते हैं। आरम्भ में सन्तान के लिए व्याकुल दिलीप और सुदक्षिणा कामधेनु की कन्या नन्दिनी की सेवा करते हैं तथा उससे वरदान प्राप्त कर रघु को पुत्र रूप में प्राप्त करते हैं। रघु के बड़े होने पर उन्हें राज्य भार सौंपकर दिलीप वानप्रस्थ बिताने हेतु वन चले जाते हैं। यहाँ तक तीसरा सर्ग समाप्त हो जाता है।

चौथे सर्ग में रघु के दिग्विजय का वर्णन है। रघु की इस दिग्विजय में विद्वानों ने समुद्रगुप्त के दिग्विजय का आभास पाया है।

पॉचवें सर्ग में वे विश्वजित यज्ञ करतें हैं। फिर गुरू दक्षिणा के लिए आये हुए कौत्स मुनि को कुबेर के भण्डार से द्रव्य दिलाते हैं।

तं भूपतिर्भा सुर हेमराशिं लब्धं कुबेरादभियास्यमानात् ।
विदेश कौत्साण समस्तमेव पादं सुमेरोरिव वज्रभिमम् ।।------1

और उन्हीं कौत्स के आशीर्वाद से अज नामक पुत्र प्राप्त करतें हैं। उन अज का विवाह विदिशा की सुन्दरी राजकुमारी इन्दुमती से होता है। सातवें सर्ग में स्वयंवर के लिए गये राजाओं का वर्णन एवं इन्दुमती के सौन्दर्य का बड़ा ही रोचक वर्णन कवि ने किया है। दीपशिखा की उपाधि इसी सर्ग के निम्न श्लोक के कारण कवि को मिली -

सञ्चारिणी दीपशिखेव रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिंवरा सा ।
नरेन्द्रमार्गाट्ट इव प्रपेदे, विवर्णभावं स स भूमिपालः ।।-------2

सातवें में अज और इन्दुमती का विवाह होता है। स्वयंवर में हारे हुए अपमानित राजा इन्दुमती को बलपूर्वक छीन लेने का प्रयत्न करते हैं और अज उन्हें पराजित करते हैं। इन्दुमती वस्तुतः अप्सरा थी। वायुमण्डल से गिरी हुयी एक पुष्प माला से ही उसकी मृत्यु हो गयी और वह फिर गन्धर्व लोक चली गयी।

1- रघुवंश - 5/
2- रघुवंश - 7/

अभिभूयवि भूतिमार्तवीं मधुगन्धातिशयने वीरूधाम्।

नृपतेरमरस्जगाप सा दयितांके निधनारा सुस्थितिम।..................1

आठवें सर्ग में बड़ी की करूण भाषा में अज के विलाप का वर्णन है भग्नहृदय अज की भी मृत्यु हो जाती है। और उनका विलाप बड़ा ही हृदयद्रावक है–

स्रगियं यदि जीवितापहा हृदये किं निहिता न हन्ति माम।

विषमप्यमृतं कचिद् भवेदमृतं वा विषमीश्वेच्छया।।.....................2

नवम सर्ग दशरथ के आखेट और बसंत कालीन वनबिहार का सर्ग है। ग्यारहवें सर्ग से रामायण की कथा आरम्भ होती है, पन्द्रहवें सर्ग तक चलती है। इन पॉच सर्गों की विशेषता यह है कि इनमें कवि ने एक ऐसे विषय को हाथ में लिया है। जिस बाल्मीकि जैसा महान कवि अपने काव्य का विषय बना चुका था। और बाल्मीकि व्यापक दृष्टि से किसी प्रकार छूट गए थे। कालिदास ने नवीन रूप देकर तेरहवें और चौदहवें सर्ग को अभिनव बना दिया है।

सोलहवें सर्ग से राम के पुत्र कुश की कथा आरम्भ होती है, जिन्होंने कुशावती में अपनी राजधानी स्थापित की थी। रात के समय एक दिन अयोध्या वधूवेश में उनको दर्शन देती है और अपनी महनीय अवस्था की सूचना देती है। कुश विह्वस्त अयोध्या का पुनः संस्कार करवाते है। इसके बाद रघुवंश की कथा उतार पर आती है। रघुवंश का अन्तिम उत्तराधिकारी बहुत ही विलासी चित्रित किया गया है। रघुवंश का अन्तिम उत्तराधिकारी बहुत ही विलासी चित्रित किया गया है। रघुवंश की कथा इसी पतनोन्मुख राजा के विलास चित्रण में समाप्त होती है।

आरम्भ में दिलीप का जो उदान्त और महान रूप चित्रित किया गय है उसका इस प्रकार पर्यवसान बहुत ही करूणाजनक है।

निस्संदेह रघुवंश में कालिदास की कवित्वशक्ति बहु–विचित्र रूप में प्रकट हुई है। इसमें दिलीप, रघु, राम जैसे महान और आदर्श राजाओं का चित्रण है। कालिदास की लेखनी उनके दृप्त चरित्र की प्रशंसा करने में नहीं अघाती परन्तु उसी राजवंश का अन्तिम उत्तराधिकारी बहुत दुर्बल और विलासी चित्रित किया गया है। कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने इस काव्य के बारे में लिखा है–

" 'रघुवंश' में भारत वर्ष के प्राचीन सूर्यवंशी राजाओं का जो चरित्रगान है, उसमें भी कवि की वेदना निहित है। इस बात का प्रमाण दिया जा सकता है। हमारे देश के काव्य में अशुभ अन्त की प्रथा नहीं है। वास्तव में जहाँ श्रीरामचन्द्र के चरित्र में रघु का वंश गौरव के उच्चतम शिखर पर पहुँचता है, वहीं यदि काव्य का अन्त होता तो कवि की भूमिका में की गयी प्रशंसा सार्थक हो जाती।'.........................3

---

(1) रघुवंश – 7 (2) रघुवंश (3) रवीन्द्रनाथ ठाकुर – तपोवन नामक निबन्ध से

''रघुवंश' का आरम्भ है संयम और तपस्या में और उसका उपसंहार है आमोद–प्रमोद में, सुरापान और इन्द्रिय भोग में। इस अन्तिम सर्ग में जो चित्र है उसमें काफी चमक–दमक है। लेकिन जो अग्नि नगर को जलाकर सर्वनाश लाती है वह भी उज्जवल कम नहीं है। एक पत्नी के साथ दिलीप का तपोवन निवास सौम्य और हल्के रंगों में चित्रित है, अनेक नायिकाओं के साथ अग्निवर्ण का आत्मविनाश में प्रवृन्त जीवन अत्यन्त स्पष्ट रूप से विविध रंगों से और ज्वलंत रेखाओं से अंकित किया गया है।

अभिज्ञान शाकुन्तल -

इस रचना में कालिदास की नाट्य कला का चरम परिपाक है। समालोचकों की दृष्टि में यह संस्कृत साहित्य के नाटकों में सर्वश्रेष्ठ है कहा भी गया है –

" काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला"

इस रचना में कवि ने सर्वत्र औचित्य को बनाये रखकर किसी भी वृत्त को उसके मार्मिक भाव को उभारते हुए सहज रूप में प्रस्तुत कर दिया है। जो बिना किसी अन्तराय के सहृदयों के मानसान्तराल में सहसा ही प्रवृष्टि होकर उन्हें रसप्लावित किये बिना नहीं रहता। ————1

शकुन्तला की कथा का मूलस्त्रोत महाभारत के आदिपर्व में 67 से 74 अध्याय तक प्राप्त होती है। वहाँ यह कथा अत्यन्त ही साधारण रूप में प्रस्तुत है। पद्मपुराण में भी इस कथा का निरूपण है। किन्तु भाषा की दृष्टि से पद्मपुराण की रचना कालिदास के बाद हुयी है। ऐसा प्रतीत होता है। अतः महाभारत ही अभिज्ञान शाकुन्तल की कथा का मूल है। महाकवि कालिदास ने अपने नाटक को सरस, रोचक बनाने के लिए यत्र–तत्र परिवर्तन भी किये हैं। जो नाटक के व्यापार में अत्यन्त सहायक हैं।

इसमें प्रधान रूप से शकुन्तला और दुष्यन्त की प्रणय गाथा है। धनुर्बाण से मृगया करते हुए रथ पर राजा दुष्यन्त और सूत हिमालय पर्वत की उपत्यका में किसी मृग के पीछे दौड़ रहे है। राजा मृग पर बाण चलाने ही वाला है कि बीच में तपस्वी आकर रोक देते है कि यह आश्रम मृग है। राजा ने धनुष उतार लिया। तपस्वी ने राजा को आशीर्वाद दिया–

जन्म यस्य पुरोवंशे युक्त रूपमिदं तव।

1– अभिज्ञान शाकुन्तल – डॉ0 हरिदत्त शास्त्री – पृ0 - 20

पुत्रमेवं गुणोपेतं चक्रवर्तिनमाप्नुहि ।।-----------1

तपस्वी ने राजा से कहा कि मालिनी तट पर कण्व का आश्रम है। वहाँ जाकर आतिथ्य ग्रहण करें। राजा के पूछने पर उसने बताया कि आश्रम के कुलपति कण्व आज ही शकुन्तला को अतिथि-सत्कार हेतु नियुक्त करके उसके प्रतिकूल विधि-विधान को शान्त करने के उद्देश्य से सोमतीर्थ चले गये हैं। राजा महर्षि कण्व के प्रति अपनी भक्ति निवेदन कराने हेतु आश्रम चल देते हैं। उनकी धारणा है कि पुण्याश्रम के दर्शन से अपने को पवित्र करूँगा।

रथ छोड़कर राजा धनुर्बाण और राजोचित अंलकार से विरहित होकर विनीत वेश में आश्रम में प्रवेश करता है। सूत वहीं रथ और घोड़े के साथ विश्राम करता है। आश्रम के उपवन में वृक्षों को सींचती हुई मुनि कन्याओं की बातचीत सुनाई पड़ी। जिसे सुनने के लिए राजा वृक्षान्तरित होकर छाया में खड़ा हो गया। शकुन्तला को देखते ही राजा को मुनि के व्यवसाय के प्रति अनास्था हुई। उन्होनें कहा -

इदं किलाव्याजमनोहरं वपुस्तपःक्षमं साधयितुं य इच्छति ।

ध्रुवं सनीलोत्पलपत्रधारया शमीलतां छेत्तुमृषिर्व्यव्स्यति ।।------2

वल्कलधारिणी शकुन्तला राजा को मनोज्ञ लगी। प्रियम्वदा के कहने पर कि वृक्ष के पास खड़ी तुम लता की तरह लग रही हो। तो राजा ने भी इस कथन का समर्थन किया -

अधरः किसलय रागः कोमल विट पानुकारिणौ बाहू ।

कुसुममिव लोभनीयं यौवनमङ्गेषु सन्नद्धम् ।।----------3

उसी समय पानी डालने से एक भौंरा उड़कर शकुन्तला के मुँह के चारों ओर चक्कर काटने लगा। राजा को भौंरे से ईर्ष्या हो आई कि इस सुन्दरी का सामीप्य उसे अनायास ही मिला है। भ्रमर से रक्षा के लिए शकुन्तला ने सखियों को पुकारा तो उन्होंनें कहा कि दुष्यन्त को पुकारो। वही प्रजा का रक्षक है। इसी अवसर पर राजा प्रकट हुआ। राजा को अतिथि रूप में आदर मिला। परिचय पूँछने पर दुष्यन्त ने अपने को धर्माधिकारी बताया और कहा कि आश्रमीय धर्म व्यवस्था देखने हेतु आया हूँ। राजा को वार्तालाप के दौरान शकुन्तला के जन्म का वृत्तान्त ज्ञात हुआ कि शकुन्तला अप्सरा मेनका व विश्वामित्र की कन्या क्षत्रिय वरण योग्य है।

उसी समय नेपथ्य में सुनाई पड़ा कि जंगली हाथी तपोवन में आ घुसा है। राजा को सेना

1- अभिज्ञान शाकुन्तल श्लोक - 1/12

2- अभिज्ञान शाकुन्तल - 1/18

3- अभिज्ञान शसकुप्तल - 1/20

के पास जाना पड़ा। जाते समय तपस्वियों ने कहा कि आज आपका आतिथ्य नहीं हुआ फिर दर्शन दें। राजा का मन शकुन्तला पर आसक्त है। अतः वह भी शीघ्र जाने का इच्छुक नहीं है। इसी आश्रम रक्षा के बहाने वहीं आश्रम के पास रूक जाता है। राजा विदूषक से शकुन्तला विषयक प्रणय की चर्चा करता है। विदूषक भी राजा के मत का समर्थन कर उससे विवाह की सलाह देता है। तभी दो ऋषि कुमार आकर राजा से यज्ञ की राक्षसों से रक्षा के लिए कुछ दिन और ठहरने का निवेदन करते हैं।

राजा ने उन्हें स्वीकृति दे दी है। उसी समय राजधानी से राजमाता के द्वारा भेजा हुआ दूत व्रत के पारण के अवसर पर राजा की अनिवार्य उपस्थिति की सूचना देता है। राजा स्वयं तो वन में रह गया और विदुषक को अपना प्रतिनिधि बनाकर राजधानी में भेज दिया। जाते समय उससे कह दिया कि शकुन्तला की बातें केवल परिहासात्मक थीं।

इधर शकुन्तला दुष्यन्त के विरह में सन्तृप्त थी। उससे मिलने के लिए व्यग्र राजा मालिनी तट के लतामण्डप के समीप दुपहरी में पहुँचा। जहाँ सखियाँ शकुन्तला द्वारा बताये गये शब्दों को प्रेम पत्र में अंकित कर रहीं थीं -

तुज्झ ण आणे हिअअं मम उण कामो दिवावि रतिम्मि ।
निग्धिण तवइ वलीअं तुइ वुत्तमणोरहाइं अंगाइं ।।--------1

उस पत्र को सुनकर राजा वृक्ष की ओट से हटकर सामने पहुँचे और अनुसूया और प्रियंवदा के चिन्ता व्यक्त करने पर कहा -

परिग्रहबहुत्वेऽपि द्वे प्रतिष्ठे कुलस्य मे ।
समुद्ररसना चोर्वी सखी च युवयोरियम् ।।----------2

शकुन्तला और दुष्यन्त का गान्धर्व विवाह हुआ। राजा यज्ञ समाप्त होने पर शकुन्तला को अपनी नाम मुद्रिका देकर और यह कहकर चलता बना कि राजधानी से कोई व्यक्ति भेजकर तुम्हें बुला लूँगा। गर्भवती शकुन्तला आश्रम में रह गयी।

एक दिन दुर्वासा शकुन्तला की कुटी पर आये। शकुन्तला ने उनकी पुकार नहीं सुनीं। दुर्वासा ने शाप दिया - ''जिसके ध्यान में मेरी उपस्थिति का ध्यान तुम्हें नहीं है उसे तुम्हारी सुधि नहीं आएगी।'' प्रियंवदा और अनुसूया पास ही पूजार्थ पुष्प चयन कर रही थीं। प्रियंवदा दुर्वासा को मनाने चलीं और प्रार्थना करने पर दुर्वासा ने शाप की अवधि नियत कर दी है कि अभिज्ञान का आभरण दिखाने पर

1- अभिज्ञान शाकुन्तल - 3/14 2- अभिज्ञान शाकुन्तल - 3/18

शाप समाप्त हो जायेगा। किसी ने यह अनिष्ट बात शकुन्तला को बतायी नहीं।

कण्व तीर्थ करके लौट आये। शकुन्तला की कोई खबर दुष्यन्त ने न ली। अनूसुया ने चिन्तित होकर सोचा कि दुष्यन्त की अंगूठी भेजकर स्मरण दिलाया जाए। तभी प्रियम्वदा ने बताया कि आज शकुन्तला का पति गृह के लिए प्रस्थान होना है। आकाशवाणी से कण्व को ज्ञात हो चुका है कि शकुन्तला का दुष्यन्त से गन्धर्व विवाह हो चुका है। सभी शकुन्तला के प्रस्थान की सज्जा करने लगे। तपस्विनियों ने आशीर्वाद दिये। सखियों ने मंगल श्रृंगार किये। कण्व ने लता–वृक्षों से कुसुम मंगवाये–

क्षौमं केनचिदिन्दु पाण्डुतरुणा मांगल्यमाविष्कृतम्।
निष्ठयूतश्चरणोपभोगसुलभो लाक्षारसः केनचित्।।
अन्येभ्यो वनदेवता करतलैरापर्व भागोत्थितै।
र्दत्तान्याभरणानि तत्किसलयोद्‌भेद प्रतिद्वन्द्विभिः।।...............1

इस नाटक में चतुर्थ अंक सबसे उत्कृष्ट बन पड़ा है। कारण यह है कि इसमें कवि ने गृहस्थ जीवन की मर्मान्तक झाँकी है। विदाई के समय पिता के हृदय की व्यथा का सजीव चित्रण देखते बनता है।

यास्यत्यद्य शकुन्तलेति हृदय संस्पृष्टे मुत्कंठया।
कण्ठःस्तम्भित वाष्पवृत्ति कलुषश्चिन्ता जडं दर्शनम्।।
वैक्लव्यं मम तावदीदृशमिदं स्नेहादरण्यौकसः।
पीडयन्ते गृहणिः कथं नु तनयाविश्लेषर्दुःखै र्नवै।।...............2

जलाशय तक शकुन्तला को ले जाकर मुनि ने राजा को सन्देश दिया कि इसे दारोचित आदरपूर्वक देखें और शकुन्तला को सिखाया–

शुश्रूषस्व गुरुन कुरु प्रियसखीवृतिं सपत्नीजने।
पत्यु र्विप्रकृतापि रोषणतया मास्म प्रतीपं गमः।।
भूयिष्ठं भव दक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी।
यान्त्येवं गृहिणीपदं युवतयो वामाः कुलस्याधयः।।...............3

---

(1) अभिज्ञान शकुन्तला–4/44 (2) अभिज्ञान शकुन्तल 4/6

(3) अभिज्ञान शकुन्तल–4/18

और कण्व ने सारंगराव और शारद्वत नामक शिष्य और गौतमी नामक तपस्विनी के साथ शकुन्तला को हस्तिनापुर भेज दिया।

पंचम अंक में राजा को सूचना मिलती है कि कण्व का सन्देश लेकर स्त्री सहित कुछ तपस्वी आये हैं। राजा ने शकुन्तला को देखा तो वह उन्हें पीले पत्तों के बीच किसलय सी प्रतीत हुई। औपचारिक प्रश्नोत्तर मे पश्चात् शार्ङ्गरव ने कहा -

त्वमर्हतां प्राग्रसरः स्मृतोऽसि नः शकुन्तला मूर्तिमती च सत्क्रिया

स्मानयंस्तुल्यगुणं वधूवरं चिरस्य वाच्यं न गतः प्रजापतिः ------1

राजा ने शकुन्तला से विवाह की बात को अस्वीकार कर दिया। तब शकुन्तला ने कई प्रसंग बताये तथा शार्ंगरव ने राजा को खरी-खोटी सुनाई। शारद्वत ने कहा कि यह आपकी पत्नी है, आपकी है, रखिये या छोड़िये। हम लोग चले। पुरोहित से परामर्श कर राजा ने निर्णय लिया कि शकुन्तला पुरोहित के घर में जब तक रहे। जब तक इसको पुत्र नहीं होता। यदि पुत्र चक्रवर्ती हो तो वह आपका माना जायेगा और यह स्वीकृत होगी। अन्यथा उसे कण्व के पास भेज दिया जायेगा। राजा के यहाँ से अपमानित शकुन्तला ने कहा -

भगवति वसुन्धरे देहि मे विवरम् ---------2

उसी समय एक ज्योति शकुन्तला को उठाकर उड़ा ले गयी।

छठें अंक में किसी मछुये को रक्षियों ने पकड़ा। जब वह राजमुद्रिका बेंच रहा था। उसने बताया कि शक्रावतार में मिली मछली के पेट से यह अगूंठी निकली है। कोतवाल उस अंगूठी को राजा को दिखाने गया। उसे देखते ही शाप विगलित हो जाने पर राजा को शकुन्तला की स्मृति हो आयी। वे उसकी स्मृति में अतिशय सन्तृप्त रहने लगे। मेनका की सखी दुष्यन्त के प्रमदवन में सब स्थिति जानने के लिए अदृश्य रहकर विचरण करने लगी और विरहातुर राजा की स्थिति देखकर शकुन्तला के भाग्य को सराहा।

सातवें अंक में मातलि ने सूचना दी कि आपको इन्द्र ने कालनेमि वंशी दानवों को दण्ड देने के लिए बुलाया है। हमारे साथ ही चलिए। आकाशचारी इन्द्र के रथ में राजा दुष्यन्त उतर रहे हैं। राजा को विजय दिलाने वाले पराक्रम से अतिशय प्रसन्न हो इन्द्र ने उनका विशेष आदर किया था। स्र्वग से उतरते हुए मातलि ने बताया कि अब हेमकूट पर्वत में मारीच ऋषि की तपोभूमि निकट है। राजा मारीच की प्रदक्षिणा करने के लिए वहाँ उतर गये -

---

1- अभिज्ञान शाकुन्तल - 5/15 2- अभिज्ञान शाकुन्तल - 5/

वल्मीकार्धनिमग्नमूर्तिरूरसा सन्दष्टसर्पत्वचा।
कण्ठे जीर्णलता प्रतानवलयेनात्यर्थ सम्पीडित।।
अंसव्यापि शाकुन्तनीडनिचित विभ्रज्जटामण्डल।
यत्र स्थाणुरिवाचलो मुनि रसावर्भ्य बिम्ब स्थित।।————————1

मरीचि व्याख्यान दे रहे थे। राजा अशोक के वृक्ष के नीचे बैठ गये। उसी समय आधा दूध पी लेने वाले सिंह—शावक के साथ खेलने के लिए उसे खींचता हुआ सर्वदमन नामक बालक दिखाई पड़ा। उसे देखते ही राजा का उसके प्रति औरस सा स्नेह बढ़ा। राजा ने देखा कि उसके हाथ पर चक्रवर्ती के चिन्ह हैं।

तपस्विनी द्वारा राजा को मालूम हुआ कि यह ऋषि कुमार नहीं है। यह पुरूवंशी तथा इसकी माता का नाम शकुन्तला है। तभी शकुन्तला ने पुत्र सर्वदमन को गोद में लिए दुष्यन्त को देखा। राजा ने सकरूण शब्दों में शकुन्तला से कहा—

स्मृति भिन्न मोहतमसो दिष्ट्या प्रमुखे स्थितासि में सुमुखि।
उपरागान्ते शशिनः समुपगता रोहिणी योगम्।।——————2

मरीचि ने उन्हें आशीर्वाद दिया—चिरंजीव, पृथिवीं पालय। शकुन्तला को आशीर्वाद दिया—तुम इन्द्राणी के समान बनो। मरीच ने शाप की बात बताई जो दुष्यन्त और शकुन्तला को अविदित थी तथा उसी समय कण्व को आकाश मार्ग से दूत भेजकर समाचार दिया गया कि दुष्यन्त ने शकुन्तला और उसके पुत्र को ग्रहण कर लिया है। भरत वाक्य के साथ नाटक का सुखद अन्त होता है। भरत वाक्य है—

प्रवर्ततां प्रकृति हिताय पार्थिवः सरस्वती श्रुतहतां महीयताम्।
ममापि च क्षपयतु नीललोहितः पुनर्भवं परिगतशक्तिरात्मभूः।।————3

विक्रमोर्वशीय

यह कालिदास का द्वितीय नाटक माना जाता है। इसका कथानक ऋग्वेद, शतपथ ब्राह्मण तथा मत्स्य पुराण हैं। नाटक के प्रारम्भ में भगवान शंकर की पूजा करके उर्वशी कैलाश पर्वत से इन्द्रलोक की ओर लौटती है। मार्ग में केशी नामक दैत्य द्वारा पीड़ित किये जाने पर उसकी सखियाँ करूण कन्दन करती हैं। राजा दानवों से युद्ध करके उर्वशी की रक्षा करता है। उसके अद्वितीय पराक्रम को देखकर उर्वशी राजा के प्रति आकृष्ट हो जाती है।

1— अभिज्ञान शकुन्तल — 7/11

2— अभिज्ञान शकुन्तल — 7/22

3— अभिज्ञान शकुन्तल — 7/35

एषा मनो मे प्रसभं शरीरात् ।
पितुः पदं मध्यममुत्पतन्ती ।।
सुराङ्गना कर्षति खण्डिताग्रात् ।
सूत्रं मृणालादिव राज हंसी ।।-----------1

राजा भी उर्वशी को देखकर मोहित हो जाता है।

द्वितीय अंक में प्रवेशक के द्वारा सूचित किया जाता है कि राजा पुरूरवा उर्वशी की प्रति अनुरक्त हो गया है। राजा अपने अनुराग को विदूषक से बतलाता है। उसी समय छिपी हुई उर्वशी और उसकी सखि चित्रलेखा राजा की बातें सुन लेती है। उर्वशी अपने प्रेम सन्देश को एक पत्ते पर लिखकर राजा की ओर फेंक देती है। राजा को पत्र मिला और उसने पढ़ा -

सामिअ संभाविआ जह अहं तुए अमुणिआ ।
तहं अणुरत्तस्स सुहअ एवमेअ तुह ।।
णवरि अ मे ललिअपारिआअसअणिज्जम्मि ।
होन्ति सुहा णदणवणवाआ विसिहिव्व सरीरे ।।-------2

उसी समय देवी औशीनरी वहाँ आ जाती है। विदूषक की मूर्खता से वह पत्ता उड़कर औशीनरी के पैरों में उलझ जाता है। वह उसे देखकर अत्यन्त क्रुद्ध होती है। परन्तु पुरूरवा अनुनय-विनय कर उसे शान्त कर देता है।

तृतीय अंक मे विष्कम्भक के द्वारा यह सूचित किया जाता है कि उर्वशी ने भरत के द्वारा प्रदर्शित नाटक में लक्ष्मी का अभिनय करते हुए अन्यमनस्क होकर पुरूषोत्तम के स्थान पर पुरूरवा का नाम ले लिया है। जिससे क्रुद्ध होकर महामुनि ने उसे मर्त्यलोक में जाने का शाप दे दिया है। परन्तु इन्द्र के आग्रह पर इस शाप की सीमा निर्धारित कर दी जाती है कि पुरूरवा के पुत्र दर्शन पर्यन्त उर्वशी मर्त्यलोक मे रहेगी। अन्त में उर्वशी राजा के समीप आती है और देवी औशीनरी की स्वीकृति से राजा उससे प्रेम करने लगता है। राजा विदूषक से उर्वशी-वियोग के कारण सन्ताप की चर्चा करते हैं -

नद्या इव प्रवाहो विषमशिलासंकटस्खलित वेगः ।
विघ्नित समागमसुखो मनसिशयस्त्वनुगुणो भवति ।।-------3

1- विक्रमोर्वशीय - 1/20
2- विक्रमोर्वशीय - 2/12
3- विक्रमोर्वशीय - 3/8

उर्वशी राजा को मिल जाती है।

चतुर्थ अंक में प्रवेश के द्वारा यह सूचित किया जाता है कि गन्धमादन वन में जाकर उर्वशी लता के रूप में परिवर्तित हो गयी है। यह घटना इसलिए घटी कि एक दिन मंदाकिनी तट पर किसी विद्याधर कुमारी के प्रति पुरूरवा आकृष्ट हो जाता है। जिससे रूष्ट होकर उर्वशी गन्धमादन वन में चली जाती है। उस वन में स्वामी कार्तिकेय की यह आज्ञा थी कि यदि कोई भी स्त्री इस वन में प्रविष्ट होगी। तो वह लता के रूप में परिणत हो जाएगी। इसे सुनकर पुरूरवा अत्यन्त विलाप करता है।

नीलकण्ठ ममोत्कंठा वनेऽस्मिन् वनिता त्वया ।
दीर्घापाङ्गा सितापाङ्ग दृष्टा दृष्टिक्षमा भवेत् ।।---------1

राजा ने चन्द्रमा के निर्देश से संगमनीय मणि ग्रहण की और उसके प्रभाव से आलिंगन करने पर एक लता उर्वशी रूप में परिणत हो गई। राजा ने उर्वशी से अपना दुःखड़ा रोया -

मोरा परहुअ हंसरहंग अलिगअ पउवअ सरिअ कुरंगं ।
तुज्झह कारणा रण्ण भमन्ते को ण हु पुच्छिअ मइ रोअन्ते ।।------2

और राजधानी में आकर उनका विवाह हो जाता है।

पंचम अंक में वह संगमनीय मणि एक गिद्ध द्वारा चुरा ली जाती है। किन्तु सहसा ही एक बाण गिद्ध को आबिद्ध कर देता है और वह नीचे गिर जाता है। वह बाण जब राजा के पास लाया जाता है। तो उसके पढ़ने पर पता चलता है कि वह बाण पुरूरवा के पुत्र 'आयुष' का है -

उर्वशी-सम्भवस्यायमैलसूनोर्धनुष्मतः ।
कुमास्यायुषो बाणः संहर्ता द्विपदायुषाम् ।।----------3

राजा को कुमार की उत्पत्ति का कुछ भी ज्ञान नहीं था। उसी समय एक तापसी कुमार को लेकर उर्वशी को ढूंढ़ती हुई आई। उससे ज्ञात हुआ कि उर्वशी ने अपने नवजात शिशु को च्यवन के आश्रम में दे दिया था और वह धनुर्विद्यादि में सुशिक्षित है। उसने आज एक गिद्ध को मार दिया है। यह आश्रमोचित आचार नहीं है। अब इसे माता को दे देना है। इसे सुनकर राजा मूर्छित हो गये। उर्वशी उस कुमार को देखते ही सचिन्त हो उठी। उसने कहा कि अब मर्त्यलोक में आपके साथ रहने का मेरा समय समाप्त हो गया। उसकी अवधि आपके पुत्र दर्शन तक ही थी। तापसी से जाते समय कुमार ने कहा -

---

1- विक्रमोर्वशीय - 4/21

2- विक्रमोर्वशीय - 4/70

3- विक्रमोर्वशीय - 5/7

यः सुप्तवान् मदङ्के शिखण्डकण्डूयनोपलब्धसुखः ।

तं मे जात कलापं प्रेषय शितिकण्ठकं शिखिनम् ।।------1

राजा ने वानप्रस्थ लेने का विचार किया। कुमार के अभिषेक की सज्जा होने लगी। उसी समय नारद ने आकर इन्द्र का सन्देश दिया कि सुरासुर संग्राम होने वाला है। आप को युद्ध में उनकी सहायता करनी है। शस्त्र न छोड़ें। उर्वशी आपकी जीवन संगिनी है। नारद ने कुमार का युवराज पद पर अभिषेक करा दिया। यहाँ पर भरत वाक्य के साथ नाटक की परिसमाप्ति हो जाती है।

मालविकाग्निमित्र – इसमें मालविका और अग्निमित्र का प्रणय कथा पाँच अंकों में कही गयी है। नान्दी पाठ में भगवान शिव की वन्दना की जाती है। प्रथम अंक मिश्रविष्कम्भक से प्रारम्भ होता है।

इसमें सर्वप्रथम महादेवी धारिणी को दो दासियाँ यह संकेत देती हैं कि महारानी धारणी मालविका को महाराज अग्निमित्र की दृष्टि से इसलिए छिपा रही है कि कहीं उस सुन्दरी को देखकर महाराज उस पर अनुरक्त न हो जायें। परन्तु राजकुमारी वसुलक्ष्मी से राजा को यह विदित हो जाता है कि महारानी जिसे छिपा रही है। उसका नाम मालविका है। इसके पश्चात् नाट्याचार्य गणदास के प्रवेश करने पर हमें यह ज्ञात हो जाता है कि मालविका की संगीत और नृत्य की शिक्षा गणदास के द्वारा दी जा रही है और मालविका अत्यन्त उत्सुकता के साथ शिक्षा ग्रहण कर रही है। विष्कम्भक के पश्चात् नाटक का प्रारम्भ इस प्रकार होता है - प्रथम अंक में महाराज अग्निमित्र चिन्ता में व्यासक्त दिखाई देते हैं। तदन्तर विदूषक गौतम प्रवेश करते हैं और राजा को बतलाते हैं कि उन्होनें एक उपाय खोज निकाला है। जिससे मालविका को राजा के समीप लाया जा सकता है। इसी बीच गणदास और हरदत्त झगड़ा करते हुए प्रवेश करते हैं। वे दोनों अपनी-अपनी प्रशंसा करते है। उनके लिए कौशिकी नामक सन्यासिनी को न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया जाता है। कौशिकी अपना निर्णय इस प्रकार देती है कि दोनों ही नाट्याचार्यों की कला की परीक्षा के लिए उनके शिष्यों की कला को देखा जाना चाहिए। यद्यपि यह विषय महारानी धारिणी को इष्ट नहीं था क्योंकि इससे मालविका राजा के समक्ष पहुँच जाएगी। परन्तु उसके पास कोई विकल्प भी नहीं था।

द्वितीय अंक में मालविका का नृत्य श्रेष्ठ घोषित किया जाता है। राजा मालविका के सौन्दर्य पर आसक्त है। विदूषक के प्रति राजा का यह कथन है -

सर्वान्तः पुरवनिता व्यापार प्रति निवृत्त हृदयस्य ।

1- विक्रमोर्वशीय - 5/13

सा वामलोचना में स्नेहस्यैकायनीभूता ।।---------1

राजा का मालविका के प्रति अनुराग बढ़ता गया। वह अतिशय काम पीड़ित हो चला था। इसी बीच विदूषक ने बकुलावलिका की सहायता से मालविका से राजा के मिलने की योजना बना ली थी कि झूला झूलने का कार्यक्रम रखा जाये। उसमें महारानी धारिणी के पैरों में मोच आ जाए ताकि उनका चलना-फिरना बन्द हो जाए और राजा और मालविका का मिलन हो जाए।

तृतीय अंक की कथावस्तु अग्निमित्र, विदूषक, मालविका, उसकी सखि बकुलावलिका तथा रानी इरावती एवं दासी निपुणिका युगमत्रय के मिलन को कहती है। वसन्त ऋतु में राज प्रासाद स्थित उद्यान में अशोक के वृक्षों में पुष्प नहीं आये। इसलिए दोहद के रूप में पादाघात के लिए मालविका को नियुक्त किया जाता है और इस प्रकार पूर्वनिश्चय के अनुसार राजा और मालविका परस्पर मिलतें हैं।

उन्हें प्रथम प्रणय की अनुभूति का पता चलता है। किन्तु दुर्भाग्यवश इस प्रेमाभिव्यक्ति को रानी इरावती देख लेती है और वह बिना झूले वसन्तोत्सव से वापस लौट जाती है। मालविका प्रमद वन में आई तो दोहद के लिए, किन्तु वहाँ वह विचित्र परिस्थिति में फँस जाती है। राजा उसके लाक्षारस से आरक्त चरणों को देख अपनी व्यथा इस प्रकार व्यक्त करता है। -

नवकिसलय रागेणाग्रपादेन बाला स्फुरितनखरूचा द्वौ हन्तुर्महत्यनेन ।

अकुसुमितमशोकं दोहदापेक्षया वा प्रणमित शिरसं वा कान्तमार्द्रापरा ।।-------2

चतुर्थ अंक में मालविका तथा बकुलावलिका महारानी के कोप भाजन स्वरूप भूग्रह की गुहा में बन्दी बनाये जाते है। जिससे विदूषक अपने वाग्जल से मुक्त कराता है। रानी इरावती मालविका के प्रति सापत्न्य द्वैष से उसे पातालवास में डाल देती है। विदूषक सर्पदंश का बहाना बनाकर सर्पमुद्रांकितं अंगूठी लेकर मालविका को मुक्त कराता है। ठीक इसी समय पीतवानर की घटना को देखकर वसुलक्ष्मी भयभीत हो जाती है। सभी वहाँ से चले जाते हैं। मूलरूप से चतुर्थ अंक कथा के विकास में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। संभवतः नाट्यशास्त्र की दृष्टि से इसे चरम बिन्दु कहा जा सकता है। वस्तुतः अग्निमित्र मालविका के प्रेम को गुप्त नहीं रख पाता। इसलिए कवि ने पीतवानर की स्वाभाविक कल्पना की है। इसमें राजा के अनुराग की तीव्रासक्ति दिखाई देती है।

यहाँ यह कहना असमाचीन नहीं प्रतीत होगा कि अभिज्ञान शाकुन्तल और मालविकाग्निमित्र के नायक विवाहित हैं और नायिकाएँ मुग्धा, तन्वंगी अतीव।

1- मालविकाग्निमित्रम् - 2/ 2- मालविकाग्निमित्रम् - 3/12

सुन्दरी किन्तु प्रेम के विदग्ध क्रिया व्यापारों से सर्वथा शून्य है। अग्निमित्र और मालविका का मिलन तीसरे अंक में हो चुका था। अतः नाटककार ने चतुर्थ अंक में रंगमहल के षडयन्त्रों का विस्तृत चित्रांकन किया है।

पंचम अंक में अग्निमित्र और मालविका का बाधित प्रणय उनके सविधि परिणय में पर्यवसित होता है। इस अंक में नई सूचनाएँ उपलब्ध होती है। विदर्भ के राजा यज्ञसेन को अग्निमित्र की सेना ने पराजित किया जिसे अग्निमित्र के समक्ष पुष्कलमात्रा में धन के साथ अच्छे कलाकार और दो कलानेत्रियाँ भी भेंट में मिली तो दूसरी ओर मालविका के पादप प्रहार से अशोक में मोहक, आकर्षक पुष्प निकल आए। अतः उसकी पूजा हेतु रानी धारिणी ने राजा को भी निमन्त्रित किया। इसी उल्लास की परिस्थिति में कौशिकी, अग्निमित्र से मालविका के विवाह की योजना बनाती है। तीसरी तरफ विदर्भ नरेश के प्रतिनिधि वीरसेन एवं कलानेत्रियों द्वारा मालविका की पहचान हो जाती है और उसके भाग्य विपर्यय की कथा भगवती कौशिकी द्वारा पूर्ण की जाती है। कि किस प्रकार माधवसेन के मंत्री सुमति एवं माधवसेन के पकड़ जाने पर मालविका सहित विदिशा की ओर आते हुए दस्युदल द्वारा कौशिकी के भाई की मृत्यु और मालविका को दासी रूप में भेजकर कौशिकी सन्यस्त हो जाती है।

प्रस्तुत नाटक विद्वानों द्वारा कालिदास का प्रथम नाटक कहा जाता है। कथा का स्थल राजप्रासाद, अन्तःपुर और प्रमदवन है। अतः इसमें ललित अंगनाओं के कौशेय पटों की सरसराहट आभूषणों की झंकार तथा बेडियों की मादक सुगन्ध का कवि ने नाटकीय दृष्टि से सुन्दर निरुपण किया है।

मेघदूत - यह कालिदास का संदेश काव्य है जिसमें शापवशात रामगिर्याश्रम में रहने वाले यक्ष द्वारा मेघों के माध्यम से अपनी प्रिया को संदेश भेजने की कथा उपन्यस्त हैं। यह शोधकर्त्री का आलोच्य ग्रंथ है। अतः इसकी विस्तृत समीक्षा अगले अध्याय में होगी यहाँ यह कहना आवश्यक प्रतीत होता है कि मूलतः मेघदूत दो भागों मे लिखा गया है। पूर्वमेघ और उत्तरमेघ जिसमें आश्रय का गाढ़ानुराग हृदयस्थ भावनाओं की विवक्षा अत्यन्त रसपेषल और हृदयावर्जक रूप में व्यञ्जित है। कान्ताविश्लेषित यक्ष का मेघ को दूत बनाना साहित्य में एक नयी काव्य विधा को जन्म देता है। जिसमें श्रृंगार रस के साथ अन्य साम्प्रदायिक कवियों को इसी शैली में शान्तरस पर्यावसायी काव्य लिखने की प्रेरणा दे।

सारांश यह कि कालिदास की प्रतिभाएँ भारतीय चिन्तन के चरम रूप से सत्यम, शिवम्, सुन्दरम् को अपने ढंग से परिभाषित किया है। उनका सौन्दर्य पाठक आकण्ठ एवं आप्राण रूप में आस्वादन करता है। सौन्दर्य सागर में आवर्त-विवर्तों के माध्यम से भावक को निमञ्जित कर कालिदास उसे एक अलौकिक भूमि में प्रतिष्ठापित करते हैं। नाटक, महाकाव्य, खण्डकाव्य गीतिकाव्य आदि विभिन्न विधाओं में युगीन जीवन मूल्यों की एवं सांस्कृतिक तत्वों का निरुपण कर कालिदास सचमुच में कनिष्ठिकाधिष्ठित कवि सिद्ध हुए हैं।

शोधकर्त्री कालिदास के साथ रामपाणिवाद के स्थित काल और उनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय देकर यह कहने का प्रयास करेगी कि आलोच्य कवियों में सामयिक अन्तराल होने पर भी सौन्दर्य चेतना हृदय के तीव्र मञ्जिष्ठ राग के अनुभूतियों का समान चित्रांकन दूतकाव्यों में हुआ है। अतः मेघदूत और शारिका संदेश का तुलनात्मक अध्ययन करने के पूर्व रामपाणिवाद का भी संक्षिप्त परिचय जान लेना आवश्यक प्रतीत होता है।

रामपाणिवाद का व्यक्तित्व एवं कृतित्व -

पिछले अध्याय में कहा जा चुका हैं कि कालिदास का मेघदूत असेतु हिमालय तक प्रसारित हुआ। दक्षिण भारत में संस्कृत का जो विकास हुआ है उसमें रामपाणिवाद का कृतित्व निश्चित ही महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यहाँ संक्षेप उनके काल एवं उनकी रचनाओं पर प्रकाश डाला जा है।

कालिदास की तरह रामपाणिवाद के जन्म स्थान सम्बन्धी धारणा में विद्वान एकमत नहीं है। अतः कुछ अन्तःसाक्ष्य एवं कुछ बहिर्साक्ष्य के आधार पर उनके जन्म स्थान समय का निर्णय किया जा सकता है।

श्री सी0 एम0 नीलकंठन ने लिखा है - "As in the case of other poets in Sanskrit the date and life history of Rampanivada could not be establishad with centainty." [1]

ये केरल प्रदेश में अम्पल वासी जाति की नाम्बियार नामक उपजाति में उत्पन्न हुए थे। [2]

इनका राम नाम था और पाणिवाद इनकी उपाधि थी। **डॉ0 रामजी उपाध्याय** का मत है कि पाणिवाद और पाणिघ लोग अभिनय में योग देते थे।[3]

रामपाणिवाद के जन्मकाल के लिए कुछ वाह्य साक्ष्य मिलते हैं।

सी0 एम0 नीलकंठन ने लिखा है - The poet mentions many kings chieftains of Kerata from whom he is believed to have enjoyed patronge one is able to get some idea about his date and life from such seprenes. 4

---

1. शारिका सन्देश भूमिका - 19

2. दि कन्ट्रीव्यूशन ऑफ केरल टु संस्कृत लिटरेचर- डॉ0 के0कु0 राजा - पृ0- 184

3. आधुनिक संस्कृत नाटक भाग-1 पृ0- 405   4. शारिका सन्देश भूमिका पृ0 - 19

पाणिवादों का जातीय व्यवसाय संस्कृत नाट्याभिनय में चाक्यार अभिनेताओं को वाद्य-संगीत द्वारा अभिनय में सहायता करना होता है। पाणिवाद अथवा पाणिघ लोग ''मिलावु'' और ''मुरजवाद्य'' नामक ढोलवादन द्वारा अभिनय में सहायता करते थे।[1] अतः रामपाणिवाद का सम्बन्ध उक्त पाणिवाद परिवार में अवश्य रहा होगा।

रामपाणिवाद मंगल ग्राम में रहते थे। इस मंगल ग्राम की स्थिति पर भी विद्वानों में विभिन्न मतभेद पाये जाते हैं। आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये [2] तथा एल0 ए0 रवि वर्मा के मत में यह ''मंगलग्राम'' दक्षिण मालाबार में वर्तमान रेलवे स्टेशन लेक्किडि के समीप स्थित किल्लिकुरिसि मंगलम् है। [3] और रामपाणिवाद इसी ग्राम के कलकक्तु परिवार से सम्बन्धित थे। के0 रामपिश रोटी के अनुसार यह ग्राम वेटटुतुनाडु में स्थित मंगलग्राम है। इनके ''मदनकेतु चरितम्'' [4] प्रहसन, ''सीताराघवम्'' नाटक तथा ''लीलावती'' वीथी के आमुखसे जो सूत्रधार व नटी के वार्तालाप के रूप में प्रस्तुत है, इतना स्पष्ट हो जाता है कि ये दक्षिण के मंगलग्राम के निवासी थे लेकिन इनके नाटक, वीथी, प्रहसन में यह नहीं बतलाया गया है कि उक्त मंगलग्राम कहाँ पर स्थित है। अतः यह तो निश्चित ही है कि रामपाणिवाद ने अपने जन्म से मंगलग्राम को अलंकृत किया था।

रामपाणिवाद की जन्म तिथि के विषय में भी विद्वानों और शोधछात्रों के बीच मतभेद है। उल्लूर एस0 परमेश्वर ऐय्यर के मतानुसार रामपाणिवाद 1700 ई0 में उत्पन्न हुए होंगे। आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये [5] के मत से रामपाणिवाद का जन्म 1707 ई0 के समीप हुआ। डा0 रामजी उपाध्याय भी आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये के ही मत से सहमत हैं।

---

1. डा0 के0 कुञ्जन्नि राजा, द कन्ट्रीब्यूशन ऑफ केरल टु संस्कृत लिटरेचर, पृ0 सं0 - 184
2. रामपाणिवाद, कंसवहो, सं0 आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये, भूमिका में पृ0 सं0 - 15
3. रामपाणिवाद, उषानिरूद्धम्, सं0 एन0 वी0 वैद्य, भूमिका में, पृ0 सं0 - 3
4. सूत्रधार - मारिष !

   अपि श्रृणोषि मंगलग्रामवास्तव्येन रामपाणिवादेन विरचितं मदनकेतुचरितं नाम प्रहसनमस्मद् वशे वर्तत इति।

   रामपाणिवाद - मदनकेतुचरितम्, पृ0 सं0 - 2
5. रामपाणिवाद - कंसवहो, सं0 आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये, भूमिका में, पृ0 - 15

वे भी मानते हैं कि रामपाणिवाद का जन्म 1707 ई0 में हुआ था।[1] एन0वी0 वैद्य भी इसी मत से सहमत हैं। के0 राघवन पिल्लई ने लिखा कि यह मानना असंगत नहीं होगा कि रामपाणिवाद का जन्म सत्रहवीं शताब्दी के अन्त तथा अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ।

रामपाणिवाद के पिता मध्यवर्ती त्रावणकोर में कुमार नल्लूर नामक स्थान के नम्पुदिरि ब्राह्मण थे तथा वे किल्लिकुरिसि मंगलग्राम के प्रसिद्ध शिव मन्दिर के पुजारी थे।

एन0 वी0 वैद्ये[2] भी आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये[3] के ही मत से सहमत हैं। सर्वप्रथम प्रारम्भिक शिक्षा रामपाणिवाद ने अपने पिता श्री से ही प्राप्त की। तत्पश्चात् ये श्री नारायण भट्ट के चरणारविन्दों में पहुँचे। रामपाणिवाद ने अपने नाटक ''सीताराघवम्'' में सूत्राधार के मुखसे कहलवा कर यह बात स्पष्ट रूप से स्वीकार की है कि वे नारायण भट्ट के शिष्य थे तथा उन्होंने अपने नाटक में मंगलाचरण के पश्चात् अपने गुरू के प्रति स्वाभाविक श्रद्धा व्यक्त की है।[4] रामपाणिवाद ने अपने प्राकृत काव्य ''उषानिरूद्धम'' और ''कंसवहो'' में भी अपने गुरू श्री नारायण भट्ट का श्रद्धापूर्वक ढंग से वर्णन किया है किन्तु इनके गुरू के विषय में भी विद्वानों में मतैक्य नहीं है। कतिपय विद्वानों के विचार में रामपाणिवाद के गुरू मेलपुत्तूर निवासी तथा ''नारयणीय'' काव्य के कर्त्ता नारायणभट्टतिरि हैं परन्तु मेलपुत्तूर निवासी नारायणभट्ट की मृत्यु रामपाणिवाद के जन्म के पूर्व ही सन् 1650 ई0 के पूर्व हो गयी थी। अतः यह मत स्वतः ही खण्डित हो जाता है। उल्लूर एस0 परमेश्वर ऐय्यर रामपाणिवाद के गुरू नारायणभट्ट को किल्लिकुरिसिमंगल के समीप त्रिक्कारमण वंश में उत्पन्न हुए मानते हैं। अन्य विद्वान[5] रामपाणिवाद के गुरू को तेक्केदत्तु वंश के नारायण भट्ट को मानते हैं। जो अम्पलप्पुल के राजा देवनारायण के मन्त्री थे। इनका जीवन कटु अनुभवों से भरा था, जिनका उन्होंने बड़े मनोविनोद पूर्ण ढंग से वर्णन किया है। ऐसा समझा जाता है कि रामपाणिवाद आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करते रहे और इन्होंने विवाह नहीं किया।[6]

---

1. डा0 रामजी उपाध्याय, आधुनिक संस्कृत नाटक (नये तथ्य : नया इतिहास) भाग-1, पृ0 सं0 - 405
2. रामपाणिवाद, उषानिरूद्धम्, सं0 एन0 वी0 वैद्य, भूमिका में, पृ0 सं0 - 3
3. रामपाणिवाद - कंसवहो, सं0 आदिनाथ नेमिनाथ उपाध्ये, भूमिका में, पृ0 - 15
4. सूत्रधार - आये ! श्रीनारायणभट्टपादकरुणा पीयूषगन्डूषणादिष्टां पुष्टिमुपैति यस्य कविताकल्पद्रु बीजांगकुरः
   रामो नाम स पाणिवादकुलजस्तस्य प्रसूतं फलम् सीताराघवनामनाटकमयं सभ्यार्थमभ्यागमत्।
   रामपाणिवाद - सीताराघवम्, पृ0 सं0 - 1
5. डा0 के0 कुञ्जन्नि राजा, द कन्ट्रीब्यूशन ऑफ केरल टु संस्कृत लिटरेचर, पृ0 सं0 - 186
6. रामपाणिवाद, उषानिरूद्धम्, सं0 एन0 वी0 वैद्य, प्रस्तावना में, पृ0 सं0 - 6

महाकवि उल्लूर एस0 परमेश्वर ऐय्यर सहित कुछ विद्वान् [1] यह मानते हैं कि रामपाणिवाद और कोई दूसरे नहीं थे, बल्कि स्वयं कुंचन नामपियार ही थे, जो कि महान मलयालम कवि थे और अपने तुलाल कृति के लिए भली प्रकार से प्रसिद्ध थे। [2] नामपियार की कृतियों के कुछ पुष्पिका में बड़ी जनप्रियता के साथ यह विश्वास किया जाता है कि वे वस्तुतः उन्हीं की हैं, परन्तु उनमें रामपाणिवाद का नाम लेखक के रूप में अंकित है।
''सीताराघवम्'' नाटकी की भूमिका में शूरनाट कुञ्जन पिल्ल ने नम्बियार की कृति से कुछ पंक्तियाँ उद्धृत की गयी हैं। [3] रामपाणिवाद के संस्कृत कृतियों और कुंचन नामपियार के मलयालम कृति में पर्याप्त सादृश्य है। आद्यावधि प्राप्य साक्ष्य निर्णयात्मक नहीं है। चूँकि इस सन्दर्भ में कुछ भी ठोस प्रमाण प्राप्त नहीं है। अतः इदमित्थं रूपेण निर्णय कर पाना असम्भव प्राय-सा है।

कुछ समय पूर्व कलक्कत्तु वंश में ताड़पत्र पर लिखे हुए ''बाल-भारत'' नामक ग्रन्थ की प्राप्ति हुई थी। इस ग्रन्थ पर लिखे हुए कतिपय पद्य रामपाणिवाद के जीवन तथा कृतियों पर प्रकाश डालते हैं। [4] डा0 के0 कुञ्जन्नि राजा ने ''बाल-भारत'' में वर्णित पद्यों को अपने शोध प्रबन्ध में उद्धृत किया है -

''वर्तन्ते कलमांगलाख्यभवने ये नामतो मंगले
देशे श्रीशुकमन्दिरेश्वरकृपाभाजोऽनघाः पाणिधाः
तेषां सम्यगधीतिनां कृतधियां शास्त्रे तथा भारते
ग्रन्थोऽयं भुवि बालभारतमिति प्रख्यातनामा महान।।
दद्युर्नारायणाख्याटधिगतविततव्याकृतो भट्टपादा-
दुद्यद्देवापगाधीश्वरभजनधियः सन्ततं शान्तचिताः
द्योतद्वञ्चिमूमीश्वरगुरुकरुणाभाजनं देशिकास्ते
सद्यः शुद्धिं दधानां हृदि पदरजसा सर्वदा मंगलं नः।।

---

1. एम0 कृष्णमाचारियर् - ''हिस्ट्री ऑफ क्लाशिकल संस्कृत लिटरेचर, पृ0 सं0 - 257
2. रामपाणिवाद : सीताराघवम्, प्रस्तावना में पृ0 सं0 - 1
3. पञ्चतन्त्रं नीतिशास्त्रं भाषया सन्निवेशितम्।
   रामेण पाणिवादेन बालानां वोधहेतवे।
   रामपाणिवाद - सीताराघवम्, सं0 शूरनाट् कुञ्जन् पिल्ल, भूमिका में, पृ0 सं0 - 1
4. डा0 के0 कुञ्जन्नि राजा, द कन्ट्रीब्यूशन ऑफ केरल टु संस्कृत लिटरेचर, पृ0 सं0 - 188

योऽसौ विष्णुविलासनाम कृतवान काव्यं तथा प्राकृतं

काव्यं कंसवधाभिध गुणयुतं तद्राघवीयं तथा।

पश्चात्तद्वदुषानिरूद्धमपरं वीथीद्वयं नाटकं

सीताराघमेव च प्रदिशातान्मह्य गुरुमंगलम्।।''

शेष कुछ पद्य जो कि रामपाणिवाद पर प्रकाश डालने में पूर्ण समर्थ हैं। डा0 रामजी उपाध्याय ने भी उद्धृत किये हैं।[1]

''प्राकृतवृत्तिं तद्वत् श्रीकृष्णविलासकाव्यविवृत्तिं च।

कृतवानन्यानपि यः स जयेच्छ्रीरामपाणिवादः कविः।।

तालप्रस्तारशास्त्रं च सद्वृत्तो च सद्वृत्तो वृत्तवार्त्तिकम्।

तद्वत् प्रहसनं किंचित् कृतवान राममातुलः।।

क्षीणीदेवक्षितीशो निजमिव तनयं देवनारायणाख्यः

बाल्ये यं लालयित्वा विधिवदथ परं शास्त्र मध्यापयित्वा

संरक्षन् यत्कुटुम्बं द्रविणवितरणात् कामितं साधयित्वा

स्नेहे नापालयन्मे दिनमनु स गुरुः श्रेयसे बोभवीतु।।

ये पद्य रामपाणिवाद के भतीजे रामन् नम्बियार ने 1765 ई0 में लिखे हैं।

रामपाणिवाद के मित्र का नाम पुराणमहीसुर वरिष्ठ था किन्तु यह निश्चित नहीं है कि ये पुराणमहीसुर वरिष्ठ कौन थे। रामपाणिवाद के मामा का नाम राघव पाणिघ था उनके छोटे भाई का नाम कृष्ण था। जिनकी मृत्यु 1780 ए0 डी0 में हुई।[2] रामपाणिवाद के भतीजे का नाम राम था।

रामपाणिवाद ने पर्याप्त शिक्षा-दीक्षा प्राप्त की थी, किन्तु साहित्यिक क्षेत्र में प्रगति और ख्याति प्राप्त करने की इच्छा से इन्होंने एक के बाद एक अनेक राजाओं की राजसभा में आश्रय प्राप्त करके अपने अप्रतिम कृतित्व से उनकी राजसभाओं को अलंकृत किया।

ये घर छोड़ने पर सबसे पहले उत्तर मालवा के कोलाटिरि राजा की राजसभा में पहुँचे, किन्तु उस समय वह राजा अपने पड़ोसी राज्य से युद्ध में व्यस्त था अतः रामपाणिवाद को पर्याप्त सम्मान न दे सका,

---

1. डा0 रामजी उपाध्याय, आधुनिक संस्कृत नाटक (नये तथ्य : नया इतिहास) भाग-1, पृ0 सं0 - 405
2. डा0 के0 कुञ्जन्नि राजा, द कन्ट्रीब्यूशन ऑफ केरल टु संस्कृत लिटरेचर, पृ0 सं0 - 188

फलस्वरूप इन्हें अत्यधिक निराशा और वेदना का सामना करना पड़ा। ये वेट्टुनाडु के राजा वीरराज की राजसभा में रहे और यही पर उन्होंने ''चन्द्रिका'' वीथी की रचना की।

इसके उपरान्त रामपाणिवाद ने मुरियन्टूटू नम्बियार के आश्रय में रहकर ''मुकुन्दशतकम्'' और ''शिवशतकम्'' की रचना की।

अम्पल्लपुर के राजा देवनारायण के बचपन से ही रामपाणिवाद का पुत्रवत् पालन-पोषण किया और उनके कुटुम्ब का संरक्षण किया। 1750 ई0 में अम्पल्लपुर ट्रावनकोर में मिला दिया गया और रामपाणिवाद ट्रावनकोर चले गये। रामपाणिवाद के आश्रयदाताओं में से एक ट्रावनकोर के संस्थापक राजा मार्तण्ड वर्मा थे। जिनका कार्यकाल 1729 से 1758 ईसा था। इस राजा ने कुल देवता के प्रीत्यर्थ 'मुरजप' पाठ का उत्सव प्रारम्भ किया, जहाँ मार्त्तण्ड वर्मा राजा था।[1] इस प्रकार रामपाणिवाद राजा वीरमार्त्तण्ड वर्मा के भी आश्रित कवि बन कर रहे थे। ये राजा आधुनिक ट्रावनकोर के संस्थापक माने जाते हैं। इन्होंने 18वीं शताब्दी में चेम्पकशेरदी पर विजय प्राप्त की थी। समय-समय पर आश्रयदाताओं के बदलते रहने पर भी रामपाणिवाद की साहित्यसेवा के मार्ग में किसी प्रकार का व्यवधान नहीं आ सका। अन्तिम आश्रयदाता राजा वीर मार्त्तण्ड वर्मा की छत्रछाया में इन्होंने ''सीताराघवम्'' नाटक लिखा।

इस प्रकार विभिन्न राजाओं की राजसभाओं को अपने साहित्यिक प्रदीप रूपी प्रभा कान्ति से परिपूर्ण करते हुए ये विद्वान सन् 1775 ए0 डी0 में काल में विलीन हो गया। इनकी मृत्यु पागल कुत्ते के काटने से हुई थी।[2]

उक्त तथ्य रामपाणिवाद के नाट्य-साहित्य से उद्धृत है।[3]

रामपाणिवाद का कृतित्व -

रामपाणिवाद की प्रतिभा एवं कृतित्व के सम्बन्ध में **डॉ0 नमिता अग्रवाल ने लिखा है** -'' रामपाणिवाद चतुर्मुखी प्रतिभासम्पन्न मनीषी थे। इन्होनें महाकाव्य, प्रकृतिकाव्य, नाटक, प्रहसन, वीथी,

---

1. डा0 रामजी उपाध्याय, आधुनिक संस्कृत नाटक (नये तथ्य : नया इतिहास) भाग-1, पृ0 सं0 - 406
2. रामपाणिवाद, उषानिरुद्धम्, सं0 एन0 वी0 वैद्य, भूमिका में, पृ0 सं0 - 6
3. रामपाणिवाद का नाट्य साहित्य - डा0 नमिता अग्रवाल।

स्त्रोतकाव्य, चम्पूकाव्य, गीतिकाव्य तथा विभिन्न काव्यों पर टीकायें लिख कर संस्कृत निधि को समृद्ध बनाया है। कवि का संस्कृत, प्राकृत तथा मलयालम तीनों भाषाओं पर समान अधिकार था।'' 1

इनकी रचनाओं का संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जा रहा है -

महाकाव्य - रामपाणिवाद के दो महाकाव्य हैं। 1 - राघवीयम् 2 -विष्णुविलास

1. राघवीयम् - यह महाकाव्य राम काव्य है। इसमें 20 सर्ग हैं। पूर्वार्द्ध में रामावतार से किष्किन्धाकाण्ड तथा उत्तरार्द्ध में सुन्दरकाण्ड तथा युद्धकाण्ड तक की कथा उपनिबद्ध है।

इस कथा के सम्बन्ध में **डॉ0 सी0 एम0 नीलकंठन** ने लिखा है - " The poet acknowledge his in debledness to the Ramayan the purpose is to instruct the students learning sanskrit as is clear from one of the colophons at the end of the worte. 2

कवि ने स्थान दो पर शब्दालंकार तथा अर्थालंकारों का प्रयोग किया है। इसका अंगीरस वीर है। यह उत्कृष्ट महाकाव्य कहा जा सकता है।

2. विष्णु विलास - इस महाकाव्य की कथावस्तु कल्पित न होकर भागवत पर आधारित होने के कारण प्रख्यात है। 3) इसमें आठ सर्ग हैं जिसमें विष्णु के नौ अवतारों का वर्णन है। काव्य का प्रारम्भ जयंतमंगल स्थित नरसिंह स्तुति से हुआ है। सात सर्गो में क्रमशः मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिंह, वामन, परशुराम और श्रीराम का तथा अष्टम् सर्ग में बलराम तथा श्रीकृष्ण के अवतार रूपों की कथा का वर्णन है।

श्री सी0एम0 नीलकंठ ने इसके महत्व को निरूपित करते हुए लिखा है - "The poem is a fine speciman of a Mahakavya. Though all the tima honoured conventious are not scrupeilousey followed the main purpose of the poet is to narrate the puranic story in a literary style so as to oppeal to the devotees and scholars." 4

भागवतचम्पू - कथा का मूल श्रोत श्रीमद्भागवत पुराण है। इसमें मुचकुन्द की कथा का विन्यास है। जो भागवत के दशम स्कन्ध के 52वें अध्याय में है। यह कथा 7 स्तवकों में हैं। गद्यभाग प्राकृत का है।

शारिका सन्देश - श्रीमद्भागवत के उद्धव सन्देश के आधार पर एक गोपी शारिका को अपना सन्देश वाहिका बनाती है। यह शोधार्थी का आलोच्य काव्य है। अतः इसका विस्तृत विश्लेषण अगले अध्यायों में किया जाएगा।

नाट्य साहित्य - रामपाणिवाद के 6 रूपक हैं। सीताराघवम्, मदनकेतु चरितम्, लीलावती वीथी, चन्द्रिकावीथी, पादुकापट्टाभिषेकं, ललितराघव, दौर्भाग्य मंजरी।

1.रामपाणिवाद का नाट्य साहित्य - पृ0 - 6
2. शारिका सन्देश - पृ0 - 35
3. रामपाणिवाद का नाट्य साहित्य - पृ0 - 6
4. शारिका सन्देश - पृ0 - 34

सीताराघवम् - सप्त अंकबद्ध यह नाटक त्रिवेन्द्रम संस्कृत सीरीज संख्या 192 में प्रकाशित है, जिसकी मूलकथा बाल्मीकि रामायण से ली गई है। कवि ने नाटकीयता उत्पन्न करने के लिए कुछ परिवर्तन भी किए हैं। **डॉ0 सी0 एम0 नीलकण्ठन** ने लिखा है - "The dramatist has brought about various chamges in the story mayauasei is a new chavacter mtroduced in the play -- The author shows great skill in creating and nandling situations noted for their theatrical effect. 1

इसमें रामलक्ष्मण के विश्वामित्र के साथ रक्षा के लिए जाने से लेकर राम राज्याभिषेक तक की कथा वर्णित है।

मदनकेतु चरितम् - यह रुपक प्रहसन कोटि का है जिसमें पथभ्रष्ट भिक्षु विष्णु मित्र और राजा मदनकेतु के व्यक्तित्व एवं उसके चरित्र का वर्णन है। मदनकेतु लंका का राजा है, जो कलिंगराज्य को जीतकर अपने भाई मदनवर्मन को वहाँ का राजा नियुक्त करता है। यह रचना भगवान रंगनाथ के यात्रोत्सव में उपस्थित परिषद् के मनोविनोद हेतु अभिनीत की गयी थी। लेखक बोधायन से अत्यधिक प्रभावित है।

इस सम्बन्ध में **डॉ0 सी0 एम0 नीलकंठन** ने लिखा है - " Evidently the poet is enfluenced by the famous force . The bhagavadajjukiya of Badhayana. The idea of the transfer of spirits is obviously barrowed from that so also the ridi culing of the bhiksus and other pious people who lead unri ghteous is the aim of satire in both. 2

लीलावती - यह एक वीथी है। इसका अभिनय महाराज देवनारायण के आश्रित विद्वानों की आज्ञानुसार हुआ है। इसमें कुन्तलेश्वर वीरपाल नायक है तथा लीलावती की प्राप्ति कराने में उसका अभिन्न मित्र विदूषक सहायक है। यह संस्कृत में दुर्लभ कोटि की वीथी है। जैसा कि डॉ0 सी0 एम0 नीलकंठन ने लिखा है - " Though vithi ia one among the ten varieties of sanskrit drama. It has very few examples. The poet has shown his skill in composing such a crare from of sanskrit drama. 3

चन्द्रिका वीथी - चन्द्रिका नाट्य दृष्टि से वीथी है। जिसका अभिनय वीरराय महाराज की आज्ञा से परकोड नामक श्वेतारण्य क्षेत्र में शिव के माघकृष्ण चतुर्दशी के महोत्सव में महाब्राह्मणों की परिषद् में हुआ था। इसमें चन्द्रसेन और विद्याधर की कन्या चन्द्रिका की प्रेमगाथा है। मंच पर राजा और विदूषक संवादों के माध्यम से इस कथा का उपकथन करते हैं। नाटक का अन्त दोनों के विवाह से होता है।

---

1. शारिका सन्देश - पृ0 - 39
2. शारिका सन्देश भू0 - पृ0 - 43
3. शारिका सन्देश भू0 - पृ0 - 40

लीलावती और चन्द्रिका के सन्दर्भ में-

डॉ0 सी0 एम0 नीलकंठन ने कहा है कि - इसमें सुन्दरवर्णन और काव्यात्मक कल्पनाओं का मंजुल संयोग हुआ है। 1

पादुकापट्टाभिषेक - यह रामायण पर आधारित अप्राप्त नाटक है। डॉ0 मंजुला सहदेव इसे रामपाणिवाद कृत ही मानती हैं। 2

ललितराघव - यह रामकथा प्रधान नाटक है जो रामायण पर आधारित है। यह अप्राप्त नाटक है। 3

दौर्भाग्यमंजरी - यह ताड़पत्र में लिखित परिहास प्रधान नाटिका है। संस्कृत तथा मलयालम मिश्रित श्लोक इसमें मिलते हैं। अर्ध्यपण्डित कृति का नायक है तथा दौर्भाग्यमंजरी नायिका है। डॉ0 हीरालाल शुक्ल इसे नाटिका के रूप में तथा एल0ए0 रविवर्मा ने इसे कवि द्वारा मलयालम भाषा में विरचित प्रहसन स्वीकार किया है। यह अप्राप्त कृति है। 4

प्रकृत काव्य - रामपाणिवाद ने तीन प्राकृत काव्य लिखे हैं - उषानिरूद्धम्, कंसवहो, एकशास्त्र प्राकृत वृत्ति।

उषानिरूद्धम् - भागवत के दशमस्कन्द के 62वें - 63वें अध्याय में वर्णित उषा अनिरुद्ध के विवाह पर आधारित एक प्राकृत काव्य है। 5

इसकी कथावस्तु चार सर्गो में विभक्त है। उषा बाण की पुत्री है और अनिरुद्ध श्रीकृष्ण का पोता, प्रद्युम्न का पुत्र है। प्रथम सर्ग में अनिरूद्ध का जन्म उसकी युवावस्था का, उषा के द्वारा अनिरुद्ध को स्वप्न में देखना, सखी चन्द्रलेखा की सहायता से उसे प्राप्त करना, बाण के द्वारा अनिरुद्ध को कैदी बनाना वर्णित है। द्वितीय सर्ग में नारद के मुख से अनिरुद्ध के कैदी होने की सूचना पाकर श्रीकृष्ण का बाण पर आक्रमण करना, कार्तिकेय के बीच युद्ध होना, शिव द्वारा बाण का साथ देना आदि वर्णित है। तृतीय सर्ग में बाण अनिरुद्ध को मुक्त कर देता है। और चतुर्थ सर्ग में उषा-अनिरुद्ध का विवाह हो जाता है। इस प्रकार काव्य की परिसमाप्ति हो जाती है।

कंसवहो - कंसवहो चार सर्गों में प्राकृत काव्य है। 6

इसकी कथा का आधार श्रीमद्भागवत पर आधारित है। इसमें 233 पद्य हैं। अक्रूर द्वारा गोकुल आकर श्रीकृष्ण

---

1. शारिका सन्देश भूमिका, पृ0 - 42
2. वाल्मीकी रामायण एवं संस्कृत नाटकों में राम, पृ0 - 61
3. वाल्मीकी रामायण एवं संस्कृत नाटकों में राम, पृ0 - 61
4. रामपाणिवाद- राघवीयम् एल0ए0 रवि वर्मा भूमिका, पृ0- 19
5. रामपाणिवाद- उषानिरूद्धम् Edited by N.V.Vaidya published in adyar library series no. 42-1943
6. रामपाणिवाद कंसवहो।

से मिलने से लेकर कंसवध तक की कथा वर्णित है। यह काव्य उषानिरुद्धम् के बाद रचित प्रतीत होता है। इसकी संस्कृत छाया कवि ने स्वयं लिखी है। 1

प्राकृत-वृत्ति - वररुचि के प्राकृत प्रकाश के आधार पर निरचित आठ परिच्छेदों में विभक्त प्राकृत की व्याकरण विषय पर आधारित काव्य है। 2

कारिका तथा वृत्ति दो भागों में वर्णित है। हस्तलिखित प्रति मद्रास में है।

व्याख्यायें - चार व्याख्या ग्रन्थ मिलते है - विष्णुप्रिया, बालपथ्या, विलासिनी, विवरण।

विष्णुप्रिया - विष्णु विलास पर विष्णुप्रिया टीका स्वयं कवि द्वारा लिखी गई है। यह टीका छः सर्गों में है। विष्णुप्रिया की रचना सम्भवतः कवि ने अम्पल्लपुल में की है। 3

बालपथ्य - यह राघवीय महाकाव्य पर लिखी अप्रकाशित व्याख्या है। 4

विलासिनी - यह सुकुमार कवि द्वारा रचित श्रीकृष्ण विलास काव्य पर लिखी है। यह अति प्रसिद्ध तथा दस सर्गों तक हस्तलिखित प्रति प्राप्त टीका हैं। 5

विवरण - नारायण भट्टपाद के "धातुकाव्य" पर लिखी गयी अपूर्ण व्याख्या है। 6

स्तोत्रकाव्य - इन्होंने 10 स्तोत्रकाव्य लिखे हैं -

1. मुकुन्द शतक 2. शिवशतकम् 3. अम्बरनदीश स्तोत्र 4. सूर्यशतकम्

5. रामभद्र स्तोत्र 6. पन्चपदी 7. अक्षरमालाष्टक स्तोत्र 8. परशुरामावतार स्तोत्र

9. कल्यवतार 10. जयन्तमंगलाष्टकम्।

1.मुकुन्दशतकम् - यह स्तोत्र काव्य दो भागों में विभाजित है। प्रथम भाग में 10 दशक, 107 परिच्छेद है। इसमें श्रीकृष्ण चरित का सम्पूर्ण आद्यन्त वर्णन है। द्वितीय भाग में भी 10 दशक 101 पद्य श्रीकृष्ण के अवतारों का वर्णन है। कवि ने द्वितीय भाग की रचना रोग बाधा दूर करने के निमित्तार्थ की थी। 7

2. शिवशतकम् - यह काव्य शिवपरक त्रिपुरदाह की कथा पर आधारित दस दशकों में विभक्त कवि की प्रकाशित रचना है। इसमें शिव का सम्पूर्ण वर्णन, शिवनृत्य, त्रिपुरदाह , कथा वर्णन, दक्ष यज्ञ, शिव पार्वती विवाह वर्णन, शिव की निशाकालिक स्तुति, ब्रह्मा और विष्णु का शिव से मिलना आदि का वर्णन है। 8

---

1. रामपाणिवाद- उषानिरूद्धम एन0वी0 वैद्य भूमिका पृ0 - 8
2 रामपाणिवाद- प्राकृत वृत्ति- published in adyar library series no. 54
3. डा0 के0 कुन्जन्नि राजा- द कन्ट्रीव्यूशन ऑफ केरला टू संस्कृत लिटरेचर पृ0 - 191
4. रामपाणिवाद बालपथ्य- Report no. of triennial of sanskrit manuscripts 3414
5. रामपाणिवाद विलासिनी टीका- 1928-30 1. 4160
6. रामपाणिवाद- Vivarana- Report no.
7- डा0 के0 कुन्जन्नि राजा- द कन्ट्रीव्यूशन ऑफ केरला टू संस्कृत लिटरेचर पृ0 - 193
8. रामपाणिवाद - शिवशतकम् स्तोत्र।

3. <u>अम्बरनदीश विष्णु स्तोत्र</u> - इस काव्य ने श्रीकृष्ण स्तुति 112 पद्यों में की है। विष्णु के दश अवतारों का विस्तृत वर्णन है। यह कवि की भक्तिपरक एवं दार्शनिक प्रकाशित कृति है। 1

4. <u>सूर्यशतकम्</u> - आठ पद्यों की सूर्य स्तुतिपरक कृति है। 2

5. <u>रामभद्र स्तोत्र</u> - यह एक दशक है। चौथी पंक्ति में "श्रीरामदेव गुरूदेवं स्मरामि" मिलता है। "केरलिया संस्कृत साहित्य चरितम् में इसका वर्णन मिलता है। 3

6. <u>पन्चपदी</u> - यह अप्राप्त, अप्रकाशित, हस्तलिखित कवि का स्तोत्र है। 4

7. <u>अक्षरमालाष्टक स्तोत्र</u> - अम्पल्लपुला (केरल) मे स्थित भगवान विष्णु के स्तुतिपरक आठ स्तोत्र हैं। इसके सभी पद्य श्री से प्रारम्भ है। 5

8. <u>परशुरामावतार</u> - यह रामपाणिवाद द्वारा रचित श्लोकबद्ध स्तुति में स्तोत्रकाव्य है। 6

9. <u>कल्यवतार</u> - यह भी श्लोकबद्ध स्तुति स्तोत्र काव्य है। 7

<u>नृत्यप्रबन्ध</u> - एक ही कृति लिखी है। गीतरामम्।

<u>गीतरामम्</u> - यह जयदेव में गीतगोविन्द के आधार पर विरचित नृत्यप्रधान गीत है। डॉ0 हीरालाल शुक्ल इसे कवि रामपाणिवाद की ही कृति स्वीकार करते हैं। 8

<u>श्रृंगार विमस्ति</u> - इसमें 20 प्रेम सम्बन्धी पद्यों का संग्रह है। यह एक ज्योतिष काव्य है। 9

<u>देवनारायण प्रशस्ति</u> - अम्पल्लपुड़ा के महाराजा देवनारायण के गुणगान से सम्बन्धित प्रशंसात्मक पद्यों का संग्रह है। यह केरलीय संस्कृत साहित्य चरितम् में प्रकाशित भी हुआ है। 10

10. <u>जयन्तमंगलाष्टकम्</u> - इसमें भगवान नारायण के स्तुतिपरक आठ पद्य है। यह स्तोत्र काव्य है। 11

---

1. रामपाणिवाद- अम्बरनदीश विष्णुस्तोत्र - के0 नारायण पिशरोट्टी के द्वारा "समस्त केरल साहित्य परिषद्" त्रैमासिक पत्रिका में प्रकाशित वाल्यूम - 7 पृ0 सं0- 170-185
2. रामपाणिवाद- सूर्याष्टक (सूर्यशतक) (तदैव) वाल्यूम 7 पृ0सं0 - 185-186
3. रामपाणिवाद- रामभद्रस्तोत्र - इन केरलीय संस्कृत साहित्य चरित्रम् IV पृ0- 121
4. रामपाणिवाद- उषानिरूद्धम्- सं0 एन0 पी0 वैद्य भूमिका में पृ0 सं0 - 7
5. रामपाणिवाद- अक्षरमालाष्टक स्तोत्र- केरलीय संस्कृत साहित्य चरित्रम् IV पृ0- 121
6. डॉ0 हीरालाल शुक्ल- आधुनिक संस्कृत साहित्य, पृ0सं0 - 165
7. डॉ0 हीरालाल शुक्ल- आधुनिक संस्कृत साहित्य, पृ0सं0 - 165
8. डॉ0 हीरालाल शुक्ल- आधुनिक संस्कृत साहित्य, पृ0सं0 - 165
9. रामपाणिवाद -श्रृंगारविमस्ति - वाल्यूम III 3
10. रामपाणिवाद - देवनारायण प्रशस्ति- केरलीय संस्कृत साहित्य चरित्रम् पृ0- 143
11. रामपाणिवाद- जयन्तमंगलाष्टकम्- केरलीय संस्कृत साहित्य चरित्रम् III 352 और IV - 149

पाठकाचार्य क्रम - यह एक व्यंग्यात्मक काव्य है। इसमें केरल के चक्यार अभिनेताओं का मजाक उड़ाया गया है। यह प्रश्नोत्तर रूप में रचित है। चक्यार अभिनेताओं की रंगमंच पर उपस्थिति, वेशभूषा, कथोपकथन, गतिविधियों सभी की आलोचना की गयी है। 1

उपाख्यानम् - यह कवि द्वारा रचित व्यंग्यात्मक कृति है। अर्ध्यपंडित और हंसराट् नामक दो पात्रों के बीच वार्तालाप के रूप में है। ये दोनों पात्र कविकल्पित हैं। केरलीय संस्कृत साहित्य चरितम् में प्रकाशित है। 2

शिवागीति - दक्षिण मलयालम के मुक्कोल क्षेत्र की भगवती की स्तुति छः सर्गों में संगीत तथा भक्तिपरक पद्यों में की गयी है। यह हस्तलिखित प्रति है। 3

रासक्रीडा - यह एक खण्डकाव्य है। यह 4 परिच्छेदों में विभक्त श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध की रासक्रीड़ा पर आधारित है। 4

तालप्रस्तर - यह रामपाणिवाद रचित संगीत शास्त्र विषयक ग्रंथ है। गायन और नृत्य में प्रयुक्त होने वाली विभिन्न तालों का वर्णन है। 5

वृत्तवार्त्तिकम् - यह छन्द शास्त्र विषयक ग्रंथ है। इसमें कवि ने अनेकानेक छन्दों का लक्षण उदाहरण सहित प्रस्तुत किया है। यह कारिका एवं उसकी व्याख्या रूप दो भागों में मिलती है। 6

प्राकृत प्रकाशवृत्ति - यह वररुचि के प्राकृत प्रकाश पर लिखी हुई व्याख्या प्राकृत व्याकरण है। यह आठ परिच्छेदों में विरचित है। तथा प्रकाशित कृति है। 7

कवि ने संस्कृत और प्राकृत के अतिरिक्त मलयालम भाषा में रचनाएँ की है। 8

श्रीकृष्णचरितम्, पञ्चतन्त्रम्, एकादशीमहात्म्यम्, नलचरितम्,
शिवपुराण, दौर्भाग्यमञ्जरी प्रहसन, महाभारतम्, विष्णुगीति,
शम्बरवध, रासक्रीड़ा, आख्यायिका पद्धति, पालाजिमथनम्।

---

1. रामपाणिवाद - शारिका सन्देश- डॉ0 सी0 एम0 नीलकंठन प्रस्तावना में पृ0 - 50
2. रामपाणिवाद - उपाख्यानम् - केरलीय संस्कृत साहित्य चरित्रम् IV पृ0- 145
3. डॉ0 हीरालाल शुक्ल- आधुनिक संस्कृत साहित्य, पृ0सं0 - 165
4. रामपाणिवाद - रासक्रीडा - In the discriptive catalogue of curator office library Trivandrum no. 1517 A. Vol. IX.
5. रामपाणिवाद - तालप्रस्तर - केरलीय संस्कृत साहित्य चरित्रम् वाल्यूम - IV पृ0- 108 - 109
6. रामपाणिवाद - वृत्तवार्तिकम् - त्रिवेन्द्रम् संस्कृत सीरीज नं0 131 से प्रकाशित।
7. रामपाणिवाद - प्राकृत प्रकाश वृत्ति - अड्यार लाइब्रेरी सीरीज नं0 -54, 1945
8. रामपाणिवाद - राघवीयम् सं0 एल0 ए0 रविवर्मा, प्रस्तावना में पृ0सं0 19

निष्कर्ष यह है कि विश्व कवि कालिदास के जन्मस्थान के सम्बन्ध में उतना ही विवाद है जितना उनके काल के समय में है। निश्चय ही कालिदास ऐसे समय में उत्पन्न हुए होगें जिस समय भारत वर्ष में सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक वैभव चरम सीमा पर था। जीवन के प्रति रागात्मक लगाव आम आदमी की प्रवृत्ति रही होगी। उत्तर वैदिक काल में ब्राह्मण धर्म के विरुद्ध जो प्रतिक्रिया प्रारम्भ हो गयी थी जिसका चरम विकास बौद्धकाल में हुआ। कालिदास ने इस प्रवृत्ति के विरुद्ध अपनी रचनाओं में जो श्रृंगारप्रियता, उदात्त जीवन के प्रति जो लालसा व्यक्त की है। वह युग इन दोनों का मध्यकालिका रहा होगा। इस प्रकार कालिदास की रचनाओं तथा बहिर्साक्ष्य के आधार पर उनके कार्यकाल का निरुपण लगभग गुप्तकाल के आस-पास कहा गया है क्योंकि रामायण एक पूर्णनैतिक या सदाचारनिष्ठ सभ्यता का चित्र उपस्थित करता है तो महाभारत निष्काम कर्म की प्रधानता देने वाले आध्यात्मिक अर्थवत्ता से अनुरञ्जित उदात्त एवं कठोर धर्म की प्रतिष्ठा की बात कहता है। कालिदास महाभारत के पश्चात् समाज में व्याप्त वैभव दृप्त अशान्ति और उद्वेगजन्य विलासिता के शमन का कवि रहा है। इस परिप्रेक्ष्य में कालिदास के नाटकों मालविकाग्निमित्रम् विक्रमोर्वशीय और अभिज्ञान शाकुन्तलम्, कुमार संभव, रघुवंश जैसे महाकाव्य ऋतुसंहार जैसे मुक्तक और मेघदूत जैसे गीतिकाव्यों की संक्षिप्त कथावस्तु प्रस्तुत की है।

इसी प्रकार केरलीय निवासी रामपाणिवाद के काल का निर्णय सत्रहवीं शताब्दी के अन्तिम चरण का है। कवि ने संस्कृत, प्राकृत और केरलीय भाषा में अपने साहित्य का सृजन किया है। संस्कृत में लिखा हुआ उनका साहित्य राघवीय, विष्णुविलास महाकाव्य, भागवत चम्पूकाव्य, शारिका सन्देश गीतिकाव्य, सात नाटक, तीन प्राकृत काव्य, दस स्तोत्र काव्य और लगभग दस-बारह रचनाएँ मलयालम भाषा की है। इस प्रकार रामपाणिवाद का कृतित्व बहुआयामी है। उन्हें अनेक राजाओं का आश्रय प्राप्त था। कृष्ण, शिव, राम के चरित्र और महाभारत के स्फुट प्रसंगों को लेकर उनकी रचनाएँ मिलती है। संगीत शास्त्र, छन्दशास्त्र, प्राकृत व्याकरण पर उनका पूर्ण आधिपत्य था।

शोधकर्त्री का मूलविषय मेघदूत एवं रामपाणिवाद का कृतित्व शारिका सन्देश का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करना है। जिसकी पूर्वपीठिका के रूप में गीतिकाव्य उसके लक्षण दौत्यकाव्य की साहित्यिक एवं धार्मिक परम्पराओं का उल्लेख करते हुए शोधकर्त्री ने यह निष्कर्ष निकालने का प्रयास किया है कि मेघदूत अपने काव्य रूप का मौलिक ग्रंथ है, जिसका प्रभाव संस्कृत की साहित्यिक परम्परा के अतिरिक्त जैन साहित्य में पुष्कल मात्रा में लिखे सन्देश काव्यों में मेघदूत की पंक्तियों को पादपूर्ति के रूप में अपनाया गया है। उत्तर से लेकर दक्षिण तक कालिदास का मेघदूत प्रस्थान काव्य है।

आलोच्य काव्य ग्रंथों में वस्तु विश्लेषण

(क) - कथावस्तु

(ख) - स्रोत

(ग) - मौलिक उद्भावना

(घ) - साम्य वैषम्य

तृतीय अध्याय

मेघदूत एवं शारिका सन्देश की कथावस्तु का विश्लेषण -

प्रथम अध्याय में काव्य रूपों का वर्गीकरण करते समय यह कहा जा चुका है कि कथा प्रधान रचनाओं में रागात्मक अनुभूतियाँ अपने उद्दाम रूप में संग्रथित रहती हैं। कथानक उनका मूलाधार है। इस कथानक के अन्तर्गत समस्त घटनाएँ वस्तु वर्णन और सूत्र आ जाते हैं। जिनसे कथाकाव्य की रचना होती है।

आचार्य भरतमुनि ने कथावस्तु को आख्यानात्मक अथवा प्रबन्धात्मक साहित्य विधा का शरीर कहा है। 1

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार कथावस्तु में पात्र प्राणरूप में निवास करते हैं। 2

अरस्तु ने भी कथावस्तु अथवा कार्यव्यापार को मूर्धाभिषिक्ति किया है। 3

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि कथावस्तु का महत्व असाधारण है क्योंकि रस परिपाक और चरित्र-चित्रण का माध्यम कथानक ही होता है। भारतीय काव्यशास्त्र में कथावस्तु की तीन कोटियाँ कही गयी हैं। प्रख्यात् उत्पाद्य, मिश्र प्रख्यात् अथवा प्रसिद्ध कथावस्तु में इतिहास पुराण अथवा दन्तकथाओं का अन्तर्भाव है। उत्पाद्य कथा काल्पनिक होती है और मिश्र दोनों की समाउक्ति है। उत्पाद्य कथावस्तु किसी ऐसे नायक के चरित्र पर आधृत होती है। जो काल्पनिक होती हैं।

वस्तु के महत्व की दृष्टि से आचार्यो ने आधिकारिक एवं प्रासंगिक दो भेद बताये हैं। प्रधान कथावस्तु को आधिकारिक तथा अंगीकृत कथावस्तु को प्रासंगिक कहा जाता है। आधिकारिक कथावस्तु का विश्लेषण करते हुए धनञ्जय की मान्यता है कि फल का स्वामित्व अधिकार कहलाता है और उस फल का स्वामी अधिकारी। उस अधिकारी की फलपर्यन्त चलने वाली आधिकारिक कथा होती है। 4

इस प्रकार सम्पूर्ण कथा का उद्देश्य नायक की फल प्राप्ति में निहित है। प्रासंगिक कथा आधिकारिक कथा की सहायिका बनकर आती है।

पाश्चात्य दृष्टि से कथावस्तु के प्रारम्भ, विकास, चरम सीमा और उपसंहार ऐसे भेद कहे गये हैं। वहाँ घटनाओं में पारस्परिकता या सम्बद्धता विशेष गुण माना गया है। यहाँ हम कालिदास के मेघदूत और रामपाणिवाद प्रणीत कथावस्तु का विश्लेषण प्रस्तुत कर रहे हैं।

---

1. नाट्य शास्त्र - भरतमुनि 19/1
2. साहित्य दर्पण - 3/29
3. अरस्तु का काव्य शास्त्र - डा0 नगेन्द्र पृ0-20
4. दशरुपक 1/12

एक ही कथाफलक अथवा परम्परापरक अंकित दो काव्यों की तुलना में सादृश्य और विभेद मुख्य आधार होता है। सर्वप्रथम मेघदूत की कथा प्रस्तुत करने के बाद शारिका सन्देश की कथावस्तु और उसका साम्य-वैषम्य, घटना व्यापार में अन्विति, आरोह-अवरोह का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा।

<u>मेघदूत की कथावस्तु</u> - कैलाशपर्वत पर स्थित अलका नगरी के स्वामी धनपत कुबेर के यहाँ एक यक्ष सेवाकार्य में नियुक्त था। सेवा में प्रमाद या कर्त्तव्यच्युति के कारण वह एक वर्ष के लिए निर्वासित कर दिया गया। निर्वासन की अवधि भारत के दक्षिणांचल में अवस्थित रामगिरि नामक पर्वत पर व्यतीत करता है। आठ मास का समय व्यतीत हो जाने पर कान्ताविश्लेषित यक्ष का शरीर अत्यन्त कृश एवं शिथिल हो गया है। ऋतु क्रम के अनुसार वर्षा ऋतु के आगमन से उसके प्रेमकातर हृदय अपनी प्रणयदयिता यक्षिणी की स्मृतियों से विह्वल हो उठता है और मेघ को दूत बनाकर अपना प्रणय सन्देश प्रेषित करता है। इस प्रकार यह काव्य पूर्व और उत्तर दो रूपों में विभक्त है। पूर्वमेघ में यक्ष रामगिरि से अपनी प्रिया की नगरी अलका तक के मार्ग का विशद वर्णन करता है।

मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि जिससे कार्य सम्पन्न होना है उसकी प्रशंसा और कुशलता के उपरान्त ही वह अपने कार्य का निवेदन करता है। सन्देश हर की कुलीनता, महत्ता, दयाप्रवणता तथा गन्तव्य स्थान की रमणीयता, पवित्रता का उल्लेख कर उसे तुरन्त प्रस्थान करने वाले शुभशकुनों का संकेत यक्ष करता है। वप्रक्रीड़ा करते हुए हाथियों को देखकर अपनी बल्लभा के साथ आस्वादित केलिक्रीड़ाओं की स्मृतियाँ यक्ष को कातर ही नहीं बनाती अपितु चेतन अचेतन के भेद को भी मिटा देती है। जब वह स्वयं कृशगात हो गया है। तब उसकी क्षीणता, कृशता, उसके हृदय को कातर बना देती है। अतः दयितावलम्वन हेतु कुटज पुष्पों से मेघ की अर्चना कर अपनी अधीरता और उत्कंठा से अभिभूत होने के कारण यक्ष मेघ को अपनी कामातुर दशा का वर्णन उसे साधु, सौम्य, सुभग, आयुष्मान इत्यादि विशेषणों से सम्बोधित करता है। कामशक्ति के प्रतीक ये मेघयक्ष की संवेदनशीलता को भलीप्रकार से समझ सकता है। इसलिए वह मेघ से अलकापुरी के मार्ग का सूक्ष्म वर्णन ही नहीं करता अपितु इस कार्य में मन लगने के अनेक कारण भी बतलाता चलता है।

यक्ष मेघ से कहता है कि रामगिरि से विदा होकर उसे उत्तर की ओर जाना है। ऐसा मार्ग स्नेह की शीतलता और छाया से ओत-प्रोत है। मार्ग में वर्षाऋतु में मानसरोवर के लिए गमनोत्सुक राजहंस उसके सहयात्री होगें। मेघ के गमन में ग्रामों, जनपदों की मुग्धा या भोली वधुएँ उसे सतृष्ण नेत्रों से देखेगीं क्योंकि मेघ ही पशु-पक्षी, लता विरूत धरित्री सभी की तपन बुझाता है। उनके हृदय में नवीन आधार एवं उमंग की सृष्टि करता है। आगे चलकर मेघ को आम्रकूट पर्वत उसे सिर पर धारण करेगा। इससे उसकी शोभा बढ़ जायेगी और वह

भूकामिनी के उन्नत उरोजों के समान प्रतीत होगा।

यहाँ उल्लेखनीय है कि यक्ष अपनी प्राणदयिता की चिन्ता में स्वार्थपरायण नहीं बनता वह उसकी प्रेम कातरता की अनुभूति अन्यों को प्रेमवेदना की अनुभूति में सक्षम बना देती है। मेघ के साथ यक्ष ने भ्रातृत्व सम्बन्ध स्थापित कर उसकी भाभी को प्रणय सन्देश सुनाने में उसे कोई आपत्ति नहीं है। इसके बाद कुछ मार्ग पार करने पर मेघ विन्ध्याचल के चरणों में बलखाती नर्मदा को देखने की चर्चा करता है जिसके पवित्र सुस्वाद जल का पान कर मेघ सचमुच में धन्य हो जायेगा।

वहाँ विचरण करने वाले मेघगर्जन से डरी क्रियाओं का आलिंगन प्राप्त कर प्रेमीजन मेघ को आदर से देखेगे। इस मार्ग में कुटज पुष्पों की गंध से सम्मिलित वायु मेघ का मार्ग अवरुद्ध करने का प्रयत्न करेगी। परन्तु हे मेघ ! तुम्हें इस गन्धलोभ का परित्याग कर आगे दशार्ण देश की ओर बढ़ जाना चाहिए। यहाँ से हंस उसके साथ पुनः चल पड़ेंगें। यदि मेघ को लगता हो कि मैनें मार्ग मे मिलने वाली रसिकता से उसे वंचित कर रखा है तो उसे निश्चिन्त रहना चाहिए क्योंकि दशार्ण की राजधानी विदिशा में उसे कामुकता की इच्छा पूर्ण करने का अवसर मिलेगा। वह वेत्रवती के समीप स्थित छोटे से पर्वत पर विश्राम करेगा। जो मेघ के सम्पर्क में आने के कारण विकसित कदम्ब पुष्पों से पुलकित हो उठेगा।

वहाँ विश्राम करने के उपरान्त वेत्रवती के तट पर स्थित उद्यानों, यूथिका गुच्छों को जलसिक्त करते हुए जब वह आगे बढ़ेगा तो कुछ वक्रमार्ग का अवलम्बन कर उसे उज्जयिनी का दर्शन करना चाहिए क्योंकि यदि मेघ ने वहाँ की जनपद अंगनाओं की मुग्ध दृष्टि का आनन्द नहीं लिया तो उसके नेत्र व्यर्थ ही होगें। उज्जयिनी की ओर जाते हुए रास्ते में मेघ को मार्गस्थ विलासिनी निर्विन्ध्या का रसपान अवश्य करना चाहिए, जिससे ग्रीष्म रूपी ग्रह के कारण उसका शरीर कृश हो गया था। अब मेघ के संसर्ग में आते ही वह क्षीण कलेवरा पुष्टांगी बन जायेगी अब मेघ को अवन्ति देश पहुँच जाना चाहिए जो अपनी समृध्दि के कारण साक्षात स्वर्ग के समान प्रतीत होगा। वहाँ का शिप्रा का शीतल, सुगन्धित जल और पवन प्रमदाओं की ग्लानि को नष्ट करता है। वहाँ के बाजारों में विकीर्ण पुष्कल सम्पदा दर्शकों को हतप्रभ कर देती है। उज्जयिनी के निवासी उसे महाकाल के मन्दिर में सायंकालीन पूजा के दर्शन ही नहीं करायेगें अपितु अपने अतिथि मित्रों को उदयन चरित से सम्बन्ध्द स्थलों को दिखलाकर उनका मनोरंजन करेगें । इस प्रकार मेघ को चमर डुलाती हुयी देववासियों की चितवन, ताण्डव नृत्य के आरम्भ में शिव की भुजाओं में छाकर पार्वती के प्रति अपनी भक्ति भी प्रदर्शित करने का अवसर प्राप्त होगा। उज्जयिनी की कृष्णभिसारिका नायिकाओं का अपनी बिजली के प्रकाश से वह मार्गदर्शन करेगा और इस प्रकार उज्जयिनी में ही रात्रि विश्राम कर दूसरे दिन प्रातः उसे आगे का मार्ग तय करना चाहिए। आगे मार्ग में उसे गम्भीरा नदी

पड़ेगी जिसके स्वच्छ जल में अपना प्रतिबिम्ब देखकर मेघ प्रसन्न हो जाएगा। अपनी अरसिकता से चन्चल गम्भीरा के कटाक्षों को सार्थक कर उसके रस का पान करना और इस प्रकार वह देवगिरि के समीप पहुँचेगा तो वनगूलरों को पकाने वाले स्कन्धस्वामी पर पुष्पवर्षा कर अपना जीवन सार्थक कर लेना चाहिए। साथ ही स्कन्धस्वामी के वाहन मयूरों को अपनी गर्जना से आह्लादित कर देना चाहिए। फिर मेघ उस चर्मण्वती नदी का जलपान हेतु झुककर अपने प्रतिबिम्ब को देख स्वयं मुग्ध हो उठेगा। इस प्रकार यक्ष मेघ को चर्मण्वती को पारकर दशपुरनगर तदन्तर ब्रह्मावर्त जनपद जाने का आग्रह करता है। जहाँ का कुरूक्षेत्र तीर्थ अत्यन्त विख्यात है। सरस्वती नदी के जल का पान कर मेघ पवित्र हृदय होकर कृष्णवर्ण का हो जायेगा और वह कनरवल के समीप हिमालय से उतरती गंगाकर्षण की बात कहता है। कृष्ण वर्ण का मेघ पीतवर्णनाभ गंगाजल में वक्रगति से जब झुकेगा तो उस समय बिना प्रयासके ही उसे संगम जैसा दृश्य दिखाई पड़ेगा। तदुपरान्त गंगा के उद्‌गम हिमाच्छादित धवल शिखर के ऊपर मेघ की शोभा अवर्णनीय हो जाएगी ऐसे घने अरण्य में काष्ठघर्षण से लगी आग को मेघ बुझाकर शान्त करेगा क्योंकि उत्तम व्यक्ति पीड़ितों के कष्ट निवारण के लिए ही जन्म लेते हैं। सर्भों का रास्ता बचाकर जाते हुए यदि वह मेघ पर हमला करे तो मेघ अपनी उपलवृष्टि से उन्हें तितर-बितर कर देगा। इस प्रकार मेघ हिमालय पर्वत पर शिव के चरण न्यास की परिक्रमा करने के बाद कीचकजाति के वेणुवादन किन्नरियों के मधुर आलाप में यदि मुरज सदृश नाद का गर्जन करेगा तो पशुपति का संगीत पूर्ण हो जाएगा।

इस प्रकार हिमालय वन्य प्राकृतिक सुषमा के विविध रूपों को देखता हुआ मेघ क्रौन्चरन्ध्र से वक्र होकर कैलाश पर्वत पर पहुँच जाएगा। जहाँ साक्षात देवाधिदेव शंकर का निवास है। यदि पार्वती पैदल मनतट पर चढ़ना चाहे तो मेघ अपने को बर्फ के रूप में जमाकर सोपान का आकार बनाकर धन्य हो जाएगा और इस प्रकार कैलाशपर्वत में मानस का जल पीकर कल्पद्रुम के किसलयों को हिलाकर उसकी गोद में स्थित उच्च महलों वाली अलकापुरी में पहुँच जाएगा। पूर्वमेघ की यही विरल क्षीण कथावस्तु है।

<u>उत्तरमेघ</u> - पूर्वमेघ में प्रकृति के मोहक, दिव्य, रमणीय चित्रों का अंकन है तो उत्तरमेघ में कवि की मर्मस्पृक भावनाएँ व्यंजित हुयी है। यक्ष ने मेघ को स्वच्छ दर्पणतुल्य कैलाश के उत्संग में बसी हुयी अलका स्थित अपनी यक्षिणी को सन्देश का वर्णन किया है। यक्ष को विश्वास है कि अलका के महल मेघ की समता में कम नहीं सिद्ध होगें क्योंकि बिजली, इन्द्रचाप, गम्भीर गर्जन, रसार्द्रता और अंभ्रभेदी दृष्टि से अलकापुरी की वनितायें मृदंग का मधुरालाप, गगनचुम्बी अट्टालिकायें अन्यत्र दुर्लभ है। प्रिय की मनोकामना यह रहती है कि वह सबसे पहले मृतप्राय क्षीणवदन वाली अपनी प्रेमिका को अपने जीवित होने के साथ उसकी कुशलता का समाचार पूँछे। इसी पृष्ठभूमि में कवि ने अलकापुरी की युवतियों के हाथों में शिरीष और मांगों में (सीमान्त में) कदम्ब फूलों को लगाकर

अपनी सौन्दर्य प्रियता का परिचय दिया है। ऐसे ही श्रृंगार प्रिय, कमलोलुप, अर्थाभाव से सर्वथा जिसका अपरिचय है। ऐसे यक्ष-यक्षणियों के मध्य यक्षिणी का अभिज्ञान उसे सहज ही हो जाएगा क्योंकि उसकी प्रिया छरहरी देहवाली, सद्यः प्राप्त यौवन सम्पन्न, नन्हें-नन्हें दांतों वाली, पके बिम्बाफल के समान रक्तिम अधर ओष्ठ वाली, क्षीणकटि एवं चकित हरिणी की मुग्धता लिए चितवन वाली गम्भीर नाभि विवर्त वाली नितम्ब भार से अलसपद निक्षेप करने वाली तथा स्तनों के भार से ईषत झुकी हुई साक्षात विधाता की प्रथम कृति ही है। ऐसी प्राणप्रिया को उसे पहचानने में विलम्ब भी नहीं होगा क्योंकि उसका प्रासाद यक्षपति कुबेर के प्रतिवेश में है, जिसके पास छोटा मन्दार वृक्ष पुष्प स्तबकों से आच्छादित, मरकत मणियों से निर्मित सुवर्ण कमल संकुल से युक्त, बावड़ियों और इन्द्रनीलमणि से निर्मित शिखर वाला क्रीड़ापर्वत सहज ही उसका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर लेगा। उसकी यक्षप्रिया चक्रवाकी की तरह उसके वियोग में दिन गिन रही होगी और इस प्रकार यक्ष ने यक्षिणी की पहचान कराते हुए कहा है कि विरह पूर्व उसने जिस वेणी को शीघ्रता से बाँधा था वह वेणी न खुलने के कारण खुरदुरी हो गई होगी। बढ़े हुए नखो वाले हाथों से वह अपनी अलकों को सँवारती हुई निराभरणा किस प्रकार अपने सुकुमार शरीर को जीवित रख पा रही होगी? क्योंकि विरहाग्नि के कारण आँखों से निःसृत अश्रुधारा ने उसके नेत्रों की तीक्ष्णता को समाप्त कर दिया होगा।

इस प्रकार उस अपांग दृष्टि के अभाव में चकित होकर मेघ को देखने में भी जिसका वामनेत्र फड़कने लगता है। ऐसी यक्षिणी सर्वप्रथम अपने प्रेमी के जीवित होने की सूचना ही सुनना चाहती होगी। इस परिप्रेक्ष्य में यक्षिणी के विरहजनित अनेक कामदशाओं का कवि ने रसपेशल चित्रांकन किया है। वह प्रिय की प्रतीक्षा हेतु प्रतिदिन द्वार में पुष्प रखकर अवधि गिनने का कार्य करती होगी।

यक्षिणी की दैनन्दिन दिनचर्या का यत्किन्चित निरूपण करते हुए यक्ष ने मेघ को बताया है कि दिन में कार्य करती हुई यक्षिणी को उसका विरह अधिक नहीं सताता होगा किन्तु रात्रि में विनोद के अभाव में उसकी विरह वेदना तीव्रतर हो जाती होगी । अतः मेघ को ऐसे ही उचित समय का ध्यान रखकर मेरा सन्देश देना होगा। हो सकता है कि मेरे विरह के आवेग के कारण अथवा दिन भर श्रमरत रहने के कारण वह अर्दतन्द्रिल अवस्था में हो तो मेघ को अल्पकाल के लिए ठहर कर अर्द्धरात्रि के बाद ही उसको सन्देश सुनाना चाहिए।

यक्ष विरह विधुरा यक्षिणी के प्रति अपना अनन्य और अटूट प्रेम विश्वास प्रकट करता है। वह मेघ से सन्देश देते हुए यह आग्रह करता है कि वह मेरा सन्देश इन शब्दों में व्यक्त करे। हे अबले ! रामगिरि के आश्रमों में रहने वाला तुमसे बिछुड़ा हुआ तुम्हारा साथी जीवित है और तुम्हारी कुशल पूछता है। वह अपने क्षीणतप्त अंगों से तुम्हारे कृश एवं वियोगजनित अग्नि से संतप्त अंगों का संकल्प द्वारा प्रगाढ़ आलिंगन करता है जो सखियों के

सामने अश्रव्य चर्चा थी। उन्हें तुम्हारे मुख के स्पर्श के लोभ से कान में कहने के लिए उत्सुक रहता है। दूरस्थ होने के कारण अपनी बात मेघ के माध्यम से उसे प्रेषित कर रहा है।

मनोवैज्ञानिकों में यह सिद्धान्त बद्धमूल है कि प्रेमी की दृष्टि में उसकी प्रेमिका अद्वितीय सुन्दरी होती है। अतः वियोग के काल में वह प्रकृति के कण-कण में उसकी सत्ता का आभास एवं अनुभव करता है। यक्ष प्रियगुलताओं में उसके तन्वंगों को, हरिणी के नेत्रों में उसके अपांग को चन्द्रमा में उसके मुख की कान्ति को, मयूरपुच्छ में उसकी वेणी को सरिताओं की लोल लहरियों में उसके भूभ्रंग को देखता है किन्तु एक स्थान पर भी यक्षिणी के समान सभी अंगों और सम्भार वाली वस्तु वह नहीं देख पाता। अपनी प्रिय की प्रतिकृति खोजना यक्ष को असम्भव लगता है। अतः अपने विरह कातर क्षणों में वह शिला पर गेरू से प्रणय कलह कुपिता चित्र बनाकर प्रिया को प्रसन्न करने हेतु उसके चरणों में गिरना चाहता है। तभी प्रणयी जनों की प्रवंचना में निपुण अश्रुपात से उसके नेत्र धुंधले ही नहीं होते अपितु चित्र भी विकृत हो जाता है। अतः क्रूर भाग्य को चित्रमिलन भी सह्य नहीं है। इसी प्रकार मनोविज्ञान की यह उप्पत्ति है कि पुरुष स्वप्न में अपनी प्रेमिका का दर्शन तो करता है किन्तु पत्नी का दर्शन काल्पनिक मिलन रूप में नहीं हो पाता है जबकि यक्ष निश्चय भरे शब्दों से आत्मविश्वास व्यक्त करता हुआ अपने प्रेम को व्यक्त करता है कि स्वप्नावस्था में आलिंगन हेतु भुजाओं के फैलाने पर तो वन देवताओं के नेत्रों से उसके वियोग की कातर दशा देखकर अश्रुपात होने लगते हैं और उसकी कामना अपूर्ण रह जाती है। वह हिमगिरि से आने वाले शीतल पवन को अपने वक्ष में यह सोचकर दीर्घ विश्वास लेकर भरता है कि शायद इस पवन में प्रिय स्पर्श की उष्मा निहित हो यक्ष को अपनी प्राणप्रिया की इतनी अधिक चिन्ता है कि वह किसी प्रकार जीवन की डोर को सम्भाले हुए है। इस लिए हे प्रिये ! हे कल्याणी ! सुख-दुःख तो सबके साथ लगे रहते हैं वह कातर न हों। उसका शाप विष्णु के शेष शय्या से उठने पर समाप्त हो जायेगा जिसमें अभी चार माह शेष है।

इसी क्रम में यक्ष सन्देश वाहक की प्रमाणिकता सिद्ध करने के लिए यक्षिणी को पूर्वकृत नितान्त गोप्य कर्म का सन्देश मेघ के माध्यम से प्रेषित करता है क्योंकि यक्षिणी अचानक अपरिचित व्यक्ति से प्रणय संदेश सुनकर विश्वास नहीं करेगी। अतः वह अभिज्ञान हेतु पूर्वकृत घटना का स्मरण करते हुए कहता है कि कभी संयोग काल में बिस्तर में मेरे कण्ठ से लगकर वह सो रही थी कि अचानक जोर से क्रन्दन करती हुई जाग पड़ी। प्रिय यक्ष के द्वारा आश्वासन देकर रौद्र का कारण पूछे जाने पर यक्षिणी ने किञ्चित हास्य से यह सूचित किया था कि धूर्त यक्ष को उसने स्वप्न में अन्य स्त्री के साथ केलिरत (रमण) करते देखा था। हे असित नयने ! यह अभिज्ञान बताने में तुम मुझे सकुशल जान जाओगी और तुम्हें यह दृढ़ विश्वास हो जायेगा कि वियोग में स्नेह घटता नहीं

अपितु उपचय एवं उत्कर्ष को ही पहुँचाता है। इस प्रकार यक्ष ने अपने जीवन व्यवहार, क्रिया-कलाप अपनी पत्नी के प्रति अनन्य प्रेम, उसके सौन्दर्य की अनुशंसा-प्रशंसा कर उसका प्रबोध किया। और वह यह विश्वास दिलाना चाहता है कि प्रिया से प्राप्त कुशल संदेश ही जीवित रख पायेगा। इस प्रकार यक्ष पुनः मेघ की वाचिक अभ्यर्थना, उसकी गुण ग्राहकता की चर्चा कर यह आश्वस्त हो जाता है कि मेघ ने उसके कार्य को अस्वीकार नहीं किया क्योंकि इतने धैर्यपूर्वक उसकी भावनाओं को सुना है और सज्जनों का अभिलषित कार्यो को पूरा करना ही याचकों के लिए उत्तर होता है।

इस प्रकार कालिदास ने मेघदूत में मेघ को दूत बनाकर अलकापुरी तक जाने के मार्ग का वर्णन तो किया है किन्तु मेघ के प्रत्यागमन मार्ग का उल्लेख नहीं किया। सम्भवतः जब तक मेघ उत्तर से हिमालय की उच्च शिलाओं से टकराकर दक्षिण की ओर लौटेगा तब तक उसकी शापावधि समाप्त हो जायेगी। कालिदास ने मेघदूत मे मेघ को सन्देशवाहक बनाकर प्रसाद मधुरा श्रृंगार रसोज्ज्वला सन्देश को ऐसे प्राकृतिक सौन्दर्य के बीच प्रस्तुत किया है कि जो मात्र यक्ष का ही नहीं अपितु वियोगियों का प्रतिनिधित्व करता है।

डॉ0 रमाशंकर तिवारी ने इस सन्दर्भ में लिखा है - ''मेघदूत कालिदास की सोद्गार गिरा का सर्वोत्कृष्ट प्रसाद है। मनुष्य एवं प्रकृति का जो अद्वैत इसमें स्थापित हुआ है वह साहित्य में एकदम निराला है। उस अद्वैत की प्रतिष्ठा का सूत्र 'काम' निरूपित हुआ है जो सृष्टि के यावत् सम्बन्धों को गीला एवं लचीला बना देता है। **'कामरूप'** मेघ और कामुक यक्ष से ये दोनो मिलकर सम्पूर्ण जगत को काम के पावन पीयूष प्रवाह में निमन्जित कर गये है। काम चैतन्य की वृत्ति है और प्रेम उसका प्रकाश है। इस प्रकाश का स्वभाव ही है राशिभूत होना तथा चित्त को द्रवित कर वह अमोघ रासयन प्रस्तुत करना जो चेतन एवं अचेतन की द्वैत भावना को नष्ट कर समस्त विश्व की धमनियों में समरसता का द्रव प्रवाहित कर देता है। **'मेघदूत'** के अमर माधुर्य का रहस्य यही रसायन है।'' 1

सारांश यह है कि हृदयस्थ अनुभूत रागात्मक अनुभूतियाँ द्रवित होकर विभिन्न काव्यरूपों का आकार लेती हैं। भाव, विचार सम्प्रेषण मानव की आदिम प्रवृत्ति है। अपने भावों का प्रिय के पास प्रेषण ही सन्देश काव्य या दूत काव्य कहलाता है, जिसका वाहक मानव या मानवेतर चेतन या अचेतन हो सकता है। कालिदास ने मेघदूत में इसी परम्परा का अनुपालन किया है। मेघदूत उनका प्रथित ग्रथित ऐसा काव्य है, जिसमें शाप के कारण दूरस्थ यक्ष द्वारा मेघ को दूत बनाने की नूतन कल्पना प्रस्तुत की गयी है। कवि ने संदेश वाहक की सज्जनता, उदारता, परदुःखकातरता, कारुणिकता का उल्लेख कर यात्रा हेतु रमणीय मार्ग और मार्गस्थ नदी, मन्दिर, तीर्थस्थान, रमणीय हर्म्ययुक्त नगरियों का वर्णन कर ऐसी कथानक रूढ़ि स्थापित कर दी है जिसका परिपालन परवर्ती कवियों ने

1. महाकवि कालिदास - डॉ॰ रमाशंकर तिवारी पृ०- 125

अनिवार्य रूप से किया है। मार्ग की नैसर्गिक सुषमा, वन्य हरीतिमा, पुष्प सम्भार, विश्राम हेतु स्थलों का उल्लेख कर मेघ के धार्मिक कृत्य सम्पन्न करने का पर्याप्त अवसर कवि ने दिया है।

इस प्रकार अपनी प्रिया की नगरी अलका के वैभव श्री सम्पन्नता, स्वर्णसौध, शिखरों की विशालता, वहाँ के निवासियों की आर्थिक सम्पन्नता तथा उन्मुक्त स्वच्छन्द विहार की व्यापक चर्चा यक्ष के माध्यम से कवि ने की है तथा वियोग विधुरा एकाकी यक्षिणी के आंगिक कान्ति वैवर्ण्य, शारीरिक सौन्दर्य की अनुपम परिकल्पना प्रस्तुत कर मेघ को उसके अभिज्ञान की चर्चा की है और अन्त में अपने सन्देश में अपने जीवित होने के साथ ही अपने प्रेम के गाढ़ानुबन्ध एवं दैनन्दिन क्रिया-कलापों में उसकी प्रगाढ़ता का चित्रांकन कर क्षीण कलेवरा नायिका में बढ़ते प्रेम के शुचिपूत मेद्य और उज्ज्वल रूप में वृद्धिगत दाम्पत्य प्रेम की चर्चा कर मेघ के अभिज्ञान हेतु पूर्वकृत केलिक्रीड़ाओं, रतिज क्रिया-कलापों का उल्लेख कर अपने सन्देश में अपनी अनन्यता व्यंजित की है। इस प्रकार मेघदूत श्रृंगार के उस रूप का वर्ण्य काव्य है जो आगे चलकर कवियों के लिए अनुकरणीय बना। पवनदूत, शुकदूत, भ्रमरदूत, शारिका सन्देश सहित सम्प्रदायिक, जैन कवियों द्वारा लिखित आध्यात्मिक वैराग्यजनित उद्देश्यों का माध्यम ही नहीं बना अपितु मेघदूत की अन्तिम या सभी पंक्तियाँ समस्यापूर्ति के रूप में प्रयुक्त हुई। क्षीण कलेवर होने पर भी मेघदूत ऐश्वर्यमण्डित प्रेम के माधुर्यपूर्ण अभिव्यंजना का ऐसा काव्य है जिसने कालिदास को विश्वविख्यात बना दिया है। इसमें आन्तरिक मनोभावों, नूतन कल्पनाओं, विरह की विभिन्न दशाओं का हृदयावर्जक और रसपेषल वर्णन हुआ है।

इसके उपरान्त आलोच्य काव्य का दूसरा काव्यग्रंथ शारिका सन्देश की कथावस्तु प्रस्तुत कर अन्त में दोनों कथानकों के प्रेरणास्त्रोत एवं आधिकारिक तथा प्रासंगिक घटनाओं की दृष्टि से समीक्षा तथा मौलिक उद्भावनाओं का विश्लेषण किया जाएगा।

शारिका सन्देश की कथावस्तु -- मेघदूत की कथावस्तु प्रस्तुत करते हुए शोधकर्त्री ने यह लिखा है कि भाव विह्वलता या भावोद्रेक की अवस्था में मनुष्य तन्मयी अवस्था को प्राप्त होता है और वह जड़-चेतन में भेद करना भूल जाता है। दूतकाव्य की दूसरी विशेषता यह दिखाई गयी है कि सम्प्रदाय इतर सन्देश काव्यों में प्रेमी या प्रेमिका दौत्यकर्म हेतु माध्यम की प्रशंसा अभ्यर्चना उसके परिश्रम शमन हेतु मार्गस्थ प्रकृति सुरम्य वातावरण की चर्चा के साथ ही पूजा अर्चना जैसे विधानों का भी उल्लेख करता चलता है। शारिका सन्देश ऐसा ही सन्देश काव्य है जिसमें विरहणी गोपी की विरहगाथा प्रणय निवेदन, हृदय की अभिलाषाएँ, विरह की अरंतुद वेदना व्यंजित की गयी है। इसकी संक्षिप्त कथावस्तु इस प्रकार है -

मेघदूत में यक्ष अपनी प्रिया यक्षिणी को मेघ के माध्यम से सन्देश भेजता है किन्तु यहाँ स्त्री अपने

प्रेमी कृष्ण के पास शारिका को माध्यम बना कर सन्देश प्रेषित करती है। मनोवैज्ञानिकों एवं काव्यशास्त्रियों की उपपत्ति रही है कि स्त्रियाँ अपने प्रणय में वैविध्य या उद्दामता के लिए मान का आश्रय लेती हैं। रामपाणिवाद ने इसी तथ्य का अवलम्बन लेकर किसी आभीर जाति की गोपिका को बनावटी कलहन तारिका बनाकर कामपीड़िता सिद्ध करते हुए कुञ्ज में छिपने का उल्लेख किया है क्योंकि उसका प्रेमी कृष्ण उसे ढूँढ़ते हुए जिस प्रेम की वर्षा करेगा उससे वह पूर्णरूपेण आप्लावित हो जाएगी। ऐसा उसका विश्वास था किन्तु दुर्भाग्यवश कृष्ण उस रुष्टा मानवती नायिका के मानभंग हेतु नहीं पहुँचे। तब वह प्रतीक्षारत गोपी गुप्त कुञ्ज से निकल कर कृष्ण को न पाकर उनके विरह में रुदन करती हुयी कहने लगी कि हे गोविन्द ! प्रणय कोपवश छिपी हुयी इस गोपी का परित्याग कर किसी अन्य नायिका के पास चले गये हैं। इस प्रकार वह खण्डिता नायिका अपनी छद्मक्रूरता के प्रति ग्लानि प्रकट करती हुयी भगवान श्रीकृष्ण से क्षमा माँगने लगी। वह विरह विह्वला मध्वरि श्रीकृष्ण को विभिन्न कुन्जों, मार्गों वृंदावन में ढूंढ़ने लगी तभी उसके हृदयके प्रबोधन हेतु सरस, सरल, वैदग्ध वचन रचना चातुरी से परिपूर्ण आकाशवाणी उसे सुनाई पड़ी कि वह मदिराक्षि दुःखी मत हो जगदीश्वर श्रीकृष्ण स्वाभिमान वश क्रुद्ध होकर उसका परित्याग कर केरल में अमरतटिनी नामक श्रेष्ठ पुण्यक्षेत्र स्थित देवालय में निवास कर रहे हैं। इस आभीर गोपी को यह भ्रम हो गया था कि कृष्ण उसके एकमात्र अनन्य प्रेमी हैं। अतः रूपगर्विता इस गोपी के मानभंग हेतु श्रीकृष्ण मन, वाणी से अगम, अगोचर होने के कारण पश्चिमी समुद्र के तट पर अम्बरनदीश क्षेत्र में एकछत्र अनन्त कीर्ति वाले देवनारायण नृपति के देश में श्यामल श्रीकृष्ण उसी मन्दिर में स्थायी रूप से निवास करने लगे हैं। अतः यदि गोपी कोई निपुण संदेश वाहक को ढूंढ सके जो उसके गुप्त ऐकान्तिक प्रेम सन्देश को श्रीकृष्ण तक ले जाये इससे उसका मनोरथ पूर्ण होगा।

इस प्रकार अशरीरी वाणी को विस्तार से सुनकर श्रीकृष्ण गमोत्सुका गोपी ने अपने शोच्य असह्य अकथ्य दशा के लिए शारिका का चयन किया क्योंकि स्त्री जाति ही उसकी गम्भीर वेदना का अनुभव कर सकती है और शारिका मनुष्य सदृश वचनों के कथन में अत्यन्त निपुण है। वह शारिका से निवेदन करती है कि शारिका को उसका प्रणय सन्देश लेकर सुदूर दक्षिण अम्बरनदीश क्षेत्र में जाना होगा। वहाँ पश्चिम समुद्र के किनारे केरल के अम्बलप्पुल देवालय मे उसके मधुर पति श्रीकृष्ण निवास कर रहे हैं।

गोपिका श्रीकृष्ण के वैशिष्ट्य का निरूपण करती हुयी कहती है कि अपने चारो ओर निरन्तर धेनु समूहों से युक्त गोशाला निवासी ब्राह्मणों को अपने दर्शन से इस प्रकार आह्लादित करते हैं जैसे पूर्वकाल में समुद्रमन्थन के समय मोहनी रूप धारण कर देवताओं को तृप्त किया था। ऐसे श्रीकृष्ण की प्रदक्षिणा नारायण मन्त्र का जाप करने वाले कोटि-कोटि महात्मा उन की वहाँ सेवा करते होंगे। ऐसे विनम्र, विनीत भावुक भक्तों की

मनोभिलाषाओं को श्रीकृष्ण पूर्ण करते है। ऐसी सूचना गोपी को आकाशवाणी से प्राप्त हुयी है। अतः मिष्टभाषिणी शारिका अमरतटिनी नदी में स्थित दामोदर नाम से प्रसिद्ध तेजपुन्जधाम है। जहाँ स्थित श्रीकृष्ण के प्रति वह अपना गुप्त मनोभाव शारिका के माध्यम से भेजना चाहती है। यह गोपी शारिका को अपनी सखी बनाकर उसके परोपकार की प्रशंसा करती है। बात यह है कि जब मनुष्य किसी से कोई कार्य सम्पादन करना चाहता है तब सर्वप्रथम वह माध्यम में उस गुण का आरोपण करता है। शारिका की यह विशेषता है कि दूसरे के कहे हुए कथन को अविकल रूप से उच्चरित करना उसकी प्रवृत्ति है। अतः शारिका ही उसके लिए उपयुक्त सन्देश वाहक है। यह गोपी शरर्दतु में प्राकृतिक सौन्दर्य, पके हुए फलों, शस्यश्यामला हरितमयी भूमि के आकर्षण को व्यक्त करती हुये कहती है कि जिस समय शारिका वहाँ पहुँचेगी वह प्रदेश हरित धान्यों से समृद्ध तो होगा ही साथ ही तरुणि शारिकाएँ और शुक समूह वहाँ आ जाते हैं। अतः वह बन्धुरागी अपने स्वपक्ष वालों से मिलकर आह्लादित भी होगी। वहाँ के शुक शारिकायें मन्दिरस्थ नेत्रामृत कलेवर वाले भगवान विष्णु की ऐश्वर्यमयी लीलाओं, कथाओं का वर्णन कर उसके कर्णो को भी आनन्दित करेगें। अर्थविशेष शालिनी शारिका से गोपिका निवेदन करती है कि अनिर्वचनीय उस देववाणी ने उस क्षेत्र की विशेषताओं का हस्तामलकवत् वर्णन किया है जो इस प्रकार है -

उस क्षेत्र में पूर्वाभिमुख भगवान विष्णु के अग्रभाग में स्थित वृत्ताकार, स्वच्छ, पंकरहित, निर्मल सरोवर सुशाभित हैं वहाँ स्थित सेवक उद्यानों में स्वर्णमण्डित ढालें एवं स्वर्णनिर्मित तलवारें लेकर उस तालाब की रक्षा करते हैं। भगवान विष्णु के मन्दिर के पश्चभाग में स्वर्णसौध शिखरों की चमक दूर से ही दर्शकों के मन को आकृष्ट करती है। जिनके चतुर्दिक पूगी (सुपारी) फल, कदली और नारिकेल के वृक्ष तथा दक्षिण मं नृत्यागार एवं राजकीय महल है। उत्तर की ओर भव्य भोजनालय है। जहाँ सदैव याचकगण सदैव भोजन से तृप्त होते रहते हैं। उस मन्दिर में बने हुए गरुण स्तम्भ में ध्वज लगा हुआ है। जिसके पीछे दीप स्थान है। उस मन्दिर में त्रिबार संध्या उपासना करने वाले वलि उत्सव में विष्णु की प्रतिमा को हस्तिपाद आरूढ़ कराकर भक्तगण कीर्तन करते हुए प्रदक्षिणा करते हैं। ऐसे वेदशास्त्र पारंगत काव्यनाटक वेदान्तशास्त्र में निपुण अग्निष्टोम जैसे यज्ञ सम्पादित होते रहते हैं। वहाँ के ब्राह्मण स्वभाव से गहन शेषावतार पातन्जलि के वाङमय समुद्र का कुशलतापूर्वक अवगाहन कर, कणादप्रणीत वैशेषिक दर्शन में कुशल विप्रगण उस क्षेत्र को पवित्र करते रहते हैं। ऐसा आकृष्ट पच्या भूमि में उत्पन्न धान्य ताम्बूल लताओं वाला यह प्रदेश शारिका को प्रसन्न कर देगा। शारिका से गोपी उस क्षेत्र की समृद्धि का बहुविध वर्णन करती हुयी कहती है कि सुख समृद्धि और लक्ष्मी ऐश्वर्य विभव से युक्त चम्पक श्रेणि राज्य का पालन करते हुए देवनारायण नामक नृपति प्रजा का प्रत्येक प्रकार से पालन करते हैं। वहाँ के निवासी चातक पशु-पक्षी सहित गोपाल श्रीकृष्ण की मूर्ति की स्तुति सुवर्णों से करते हैं। इस प्रकार शारिका उड़कर सुदूर दक्षिण

देश में जाने के लिए आकाश मार्ग का अवलम्बन लेकर शीघ्र ही पहुँच जाएगी। यह अधीरा गोपी वहाँ की समृद्धि का ऐसा वर्णन करती है जिसे सुनकर शारिका के मन में भी ऐसे सुरम्य प्रदेश को देखने की उत्सुकता जाग्रत होगी और वह बिना विश्रान्ति का अनुभव किए हुए शीघ्र ही वहाँ पहुँच जाएगी। यद्यपि इस कार्य में शारिका को अपने प्रियबन्धु आत्मीय पति शुक से दूर रहने के कारण विरह का अनुभव होगा। अतः उसकी प्रार्थना है कि वह गोपी से ईर्ष्या न कर एक दिन में ही यह सम्पूर्ण मार्ग पारकर उस विष्णुधाम में पहुँच कर पीपल वृक्ष में विश्राम कर लेगी। यह पीपल का वृक्ष गगनचुम्बी शाखाओं वाला ब्रह्मा, विष्णु, महेश का आवास समस्त कामनाओं को देने वाला कल्पवृक्ष के समान है। उसके मधुरपाक फलों को खाकर सरोवर के स्वादिष्ट शीतल पय पानकर भक्तों के दर्शन कर अपनी भक्ति को बढ़ाती हुई दोपहर तक पीपल के वृक्ष में विश्राम करेगी। तदुपरान्त अपरान्ह श्रीबलि महोत्सवोपरान्त शारिका किसी मकान में प्रविष्ट हो जाएगी। अपने पंखो से मंदगति से उड़ती हुयी कमलनाभ वाले भगवान विष्णु को नमस्कार करना जिस कृष्ण के सिरपर मणिमय मुकुट कमल पत्र से स्पर्धा करने वाले युगलनेत्र हैं। कानों में मणिनिर्मित कुण्डल धारण करने वाले कृष्ण के दर्शन को कर शारिका परम सन्तोष को प्राप्त करेगी।

शारिका के अभिज्ञान हेतु यह विप्रियुक्ता गोपी कृष्ण के रूप सौन्दर्य का वर्णन करती हुयी कहती है कि शारिका की चोंच से स्पर्धा करने वाली उनकी नासिका, चन्द्रकान्ति को तिरस्कृत करने वाला उनका मुख विम्बाधरोष्ठ, कम्बुग्रीव हस्त में शंख और चाबुक धारण करने वाले श्रीकृष्ण का श्यामल शरीर, मेघ के समान कान्तिवाला है। जिनके वक्षस्थल पर मुक्ताहार स्वर्णाभूषण, कमर में किंकिण और पीताम्बर धारण किए हुए है। स्वर्णनूपुरों से युक्त उनके चरण सम्पूर्ण जगत के नेत्रों को आह्लादित करने वाले हैं, ऐसे मनोभाव विजयी श्रीकृष्ण के सौन्दर्य को देख शारिका अपने नेत्रों को ही सफल नहीं करेगी अपितु उसका जीवन भी धन्य हो जायेगा। करुणार्द भगवान विष्णु को नमस्कार कर शारिका गोपी के वियोग का शमन करने वाली मनुष्य सदृश वाणी को सार्थक करती हुयी उन्हें संदेश देगी।

रामपाणिवाद ने इस सन्देश को अत्यन्त भाव विह्वल गलदश्रु रूप में लिखा है - हे लक्ष्मीनाथ ! त्रिदशतटिनी नाथ ! विश्वनाथ ! इन शब्दों से शारिका भगवान विष्णु की स्तुति कर उन्हें प्रसन्न करेगी। शारिका उनसे निवेदन करेगी कि उनकी वियोगाग्नि में शलभ की भाँति जलती हुयी, मान के कारण अज्ञान में किए गए अपने निन्दनीय कर्म के प्रति पश्चाताप करती हुई कोई आभीर गोपी अपने विरह विधुर वृतान्त को उसके माध्यम से कह रही है कि श्रीकृष्ण को प्राणों से अधिक प्रिय मानने वाली गोपी ने वृन्दावन से उसे भेजा है। उस मृगनयनी मेरी सखी के यह वचन अत्यन्त दीनता से भरे हैं। उसकी प्रणय याचना को मैं इस प्रकार व्यक्त कर रही हूँ। शारिका गोपी के अज्ञान में किए गये कार्यो के प्रति पश्चाताप, खेद व्यक्त करती हुयी कहती है कि

कामाविभूति यह रूपगर्विता मानिनी नायिका का वह दुस्साहस ही था । अब वह वियोगाग्नि में जलती हुयी उच्चस्वर में विलाप करती हुयी मूर्च्छित हो गयी थी। सर्पदंश के समान असह्य, तीव्रवेदना से पीड़ित यह नायिका ये नहीं जान पाती कि वह जाग्रत अवस्था में है अथवा मुमूर्ष अवस्था में, अहोरात्र का निर्णय नहीं कर पाती। कामाग्नि में जलकर उन्माद अवस्था को प्राप्त गोपी सर्वत्र श्रीकृष्ण को ही देखती है। पर्वतों, वृक्ष, लताओं, मृगों, नदियों से श्रीकृष्ण का पता पूँछती हुयी कल्पना प्रोद्यूत कृष्ण के सूक्ष्म शरीर का आलिंगन करती रहती है। यह गोपी श्रीकृष्ण प्रणीतकृत बांसुरीवादन, गोचारण, गोवर्धन पर्वत धारण आदि बिम्बों की कल्पना कर भ्रम और उन्माद के कारण अभी भी उनका चाक्षुष प्रत्यक्षीकरण करती है। कामविनिन्दक सौन्दर्य वाले अतिशीगुच्छ के समान देहकान्ति वाले श्रीकृष्ण सौन्दर्य को वह प्रणाम करती है। काम श्रीकृष्ण से पराभूत हो गया था। अतः वह अपनी खीझ और क्रोध का प्रतिकार इसी गोपी से कर रहा है। यद्यपि श्रीकृष्ण विष्णु रूपधारी लक्ष्मीपति हैं किन्तु वे इस गोपी के एकमात्र रमणपति हैं। उसके शरीर के हृदय और अन्तरात्मा है। उसका अस्तित्व श्रीकृष्ण से ही है। गोपी और श्रीकृष्ण के ऐक्य में श्रीकृष्ण की ही शक्ति है। वे कृष्ण संसार में रजोगुण से सृष्टि करते हैं। सत्वगुण प्रधान व्यापार से संसार का पालन करते हैं। सृष्टि, उत्पत्ति, स्थिति, पालन और संहारक वे ही पुरातन पुरुष हैं। वे निर्विकारी, निरवयव, त्रिकालबाधित सत्य है। योगी ध्यानयोग से जिसका दर्शन करते हैं। पूर्वकाल में उन्होनें ही मत्स्य कूर्मादि अवतारों को धारण किया है। समुद्रमंथन के समय कूर्मावतार, हिरण्याक्षापहृत पृथ्वी का उद्धार वाराहावतार लेकर एवं भक्त रक्षा हेतु हिरण्यकश्यपु विनाश के लिए नृसिंहावतार लिया है। इस प्रकार भगवान श्रीकृष्ण ने वामन रूप धारण कर तीनों लोकों को आच्छादित कर लिया था। सहस्त्रबाहु का बध करने हेतु परशुराम एवं रावण वध के लिए रामरूप में वे ही अवतरित हुए हैं। अब वे चन्द्रधवल कान्तियुक्त, अद्वितीय वीर, हल धारण करने वाले बल राम के अनुज श्रीकृष्ण रूप में अवतरित हुए हैं। देवकी के गर्भ से उत्पन्न होकर युगधर्म की स्थापना हेतु ये दशावतार पुराण प्रसिद्ध हुए हैं। ऐसा गोपी ने सुन रखा था।

इन अवतारों में कृष्णावतार सर्वश्रेष्ठ कहा गया है।

''एतेचाङसकलापुरूषाय भगवान कृष्णस्तु'' भगवान स्वयं परबद्धमूल भाव रखने वाली यह गोपी शारिका के माध्यम से सन्देश भेजती है। माता-पिता देवकी-वासुदेव को पूर्वजन्म का वृतान्त बताकर शिशु रूप में उत्पन्न होकर वासुदेव से यशोदा के पास भेजने का आग्रह किया था। जहाँ उन्होनें पूतना नामक राक्षसी का वध ा कर नवनीत तथा गव्यादि चुराकर अपनी क्रीड़ाओं से गोप वनिताओं को आकृष्ट किया था। श्रीकृष्ण अपने बिम्बाधरोष्ठ सदृश अधरों पर मुरली रखकर वंशीनाद से हम गोपियों को अपने पास बुलाते थे। हमारे कामज्वर के शमन हेतु जिस महारास का आयोजन उन्होनें किया था वह न भूतो न भविष्यत था। इस महारास में ही प्रत्येक

गोपी को यह आभास हुआ था कि श्रीकृष्ण एकमात्र उनके ही है और इसी भ्रम के कारण श्रीकृष्ण उससे बिछड़ गये हैं। इस प्रकार समस्त गोपियाँ विरह की दावाग्नि में विदग्ध होकर पर्वतों, वनों, नदी तटों पर या वृन्दावन निकुञ्ज में श्रीकृष्ण को ही पुकारती रहती है। कुछ मानभाव के कारण गोपियाँ श्रीकृष्ण से वियुक्त हो गयी थी कि हे गजेन्द्र ! मोक्षकारक ! उनका प्रणयकोप अभिमान विनष्ट हो गया है। उनके इस वियोग में यह कामदेव गोपियों के शरीर को इसलिए भस्म नहीं कर पा रहा है कि अश्रुप्रपात से यह अग्नि मन्द सी रहती है। साथ ही कुवलदयल के समान स्निग्ध और शीतल मुग्ध श्रीकृष्ण के कटाक्षों के दर्शनाभिलाषा से हम जीवित मात्र ही है। श्रीकृष्ण सौन्दर्य के अनेक उपमानों को स्मरण दिलाने की बात शारिका से कहती है। इसप्रकार निरहंकारी गोपी के सन्देश को शारिका के माध्यम से सुनकर पार्थ सारथी दीनदयाल कृष्ण अत्यन्त हर्षित हुए और उन्होंने शारिका से प्रत्युत्तर देते हुए कहा कि भद्रे शारिका ! तुम अपनी प्रिय सखी गोपिका से कहना कि उसके सन्देश को सुनकर कृष्ण अत्यन्त हर्षित हैं और वे शीघ्र ही वहाँ पहुँच रहे हैं। इस प्रकार उस शारिका ने आकाश मार्ग से वापस आकर गोपिका से कृष्णोक्त सन्देश को कहा। रामपाणिवाद इस सन्देश काव्य का समापन इस व्यञ्जना से करते हैं कि उस कौतूहलीय शारिका ने वृन्दावन में यमुना के तट में बने निकुञ्जों में वासुदेव के साथ क्रीड़ा करती हुयी उस गोपी को देखा। इस प्रकार भगवान श्री कृष्ण के साथ आलिंगन परिरम्भण के कारण वह गोपी आप्तकामा (पूर्णकामा) बन गयी।

अन्त में कवि ने आत्म परिचय देते हुए कहा है कि अमरतटिनी निवासी पद्यनाभ का सेवक रामपाणिवाद ने आचार्य की कृपा से इस सन्देश काव्य की रचना की है जिसे सम्पत्त बाहुल्य युक्त चम्पकशेरि राज्य के सुप्रसिद्ध नरपति ब्राह्मण देवनारायण ने कवि को इस रचना के लिए पुष्कल मात्र में पारितोषिक दिया था। साथ ही ब्राह्मणों में अग्रगण्य विद्यापारंगत मधुरनारायण गुरू से आशीर्वाद प्राप्त करने की आकांक्षा कवि ने व्यक्त की है। अतः कवि ने उसकी मंगलकामना से इसका उपसंहार किया है।

कथावस्तु की समीक्षा – अध्याय के प्रारम्भ में यह कहा जा चुका है कि सन्देशकाव्य मूलतः गीतिकाव्य होते हैं जिसमें आत्माभिव्यञ्जना के लिए कम स्थान रहता है, जबकि भावाभिव्यंजना सर्वत्र मिलती है। आलोच्य दोनों काव्य में एक समानता यह दिखाई पड़ती है कि दोनों में कथावस्तु की विरलता है। इनका कथानक अत्यन्त सूक्ष्म यद्यपि खण्डकाव्य के लिए उपयुक्त कथावस्तु का इनमें अभाव है। क्षीण कथावस्तु के होने पर पदों में पूर्वापर सापेक्ष बना हुआ है। दूसरी समानता यह भी दिखाई पड़ती है कि आलोच्य दोनों काव्य विरह प्रधान है। यद्यपि मेघदूत में सन्देशवक्ता पुरुष है जबकि शारिका सन्देश में मानिनी नायिका गोपी है। इस वैभिन्न के मूल में कारण केरलीय साहित्य में मधुराभक्ति का आधिक्य होना है। कालिदास का मेघदूत मानव के सहज, स्वाभाविक, कामानुभूतियों तज्जन्य विवृतियों का काव्य है। रामपाणिवाद का शारिका सन्देश विरह विदग्धा गोपी का मधुर रस शिरोमणि कृष्ण

के प्रति माधुर्य भाव का द्योतक है।

मेघदूत में विरह का कारण अज्ञात है। यक्ष को कर्त्तव्यप्रमाद के कारण मिले शाप वश सद्यः विवाहिता नववधू से अलग रहना पड़ता है जबकि शारिका सन्देश में विरह का कारण गोपी का मान अहंकार, कृष्ण पर एकाधिकार रखने की भावना के कारण कृष्ण का अन्यत्र चला जाना वर्णित है। आलोच्य दोनों काव्यों में एक समानता और भी दिखाई पड़ती है कि दोनों काव्यों में कथानक रूढ़ि के अनुसार गन्तव्य स्थल तक का मार्ग, उसमें पड़ने वाले प्राकृतिक सुषमावेष्टित भौगोलिक स्थल, श्रेष्ठ धार्मिक स्थलों का उल्लेख समान रूप से हुआ है।

गन्तव्य स्थल का वैभवपूर्ण चित्रांकन वहाँ के सांस्कृतिक परिवेश का उल्लेख दोनों कवियों ने किया है। कथावस्तु की दृष्टि से छोटी आधिकारिक कथा के साथ कालिदास ने कुछ प्रसंगों की सूचना देकर गौण घटनाओं का उल्लेख किया है। इसीप्रकार रामपाणिवाद ने दशावतार वर्णन के रूप में प्रासंगिक घटना का वर्णन किया है। इस कथावस्तु का प्रारम्भ वाहक की प्रशंसा उससे अपने तादात्म्य सन्देश प्रेषण के साथ ही उसके मनोरंजन हेतु उसके स्वजनों की चर्चा समान रूप से की गयी है।

तो भी आलोच्य दोनों काव्यो में कुछ विषमताएँ हैं जिन्हें इस प्रकार रेखांकित किया जा सकता है।

1. दोनों के आश्रय भिन्न लिंग वाले है।

कालिदास के मेघदूत में प्रेमी और प्रेमिका के विरह का समान रूप से वर्णन है जबकि शारिका सन्देश में विरह विधुरा गोपी के ऐकान्तिक विरह ज्वर का वर्णन है।

कालिदास का मेघदूत पूर्व और उत्तर दो भागों में बँटा है। रामपाणिवाद में इस प्रकार का विभाजन नहीं किया गया है।

कालिदास के मेघदूत का समापन मेघ के अलकापुरी पहुँचने और सन्देश देने की सूचना से ही हो जाता है। इसके विपरीत शारिका सन्देश में शारिका गोपी का सन्देश कृष्ण को सुनाती ही नहीं है अपितु कृष्ण सन्देश को लेकर वापस गोपिका के पास आ सुनाती है और शारिका एक दिन उस गोपी को कृष्ण के साथ यमुना तट के निकुन्ज में प्रेमक्रीडारत भी देखती है। इसका मूल कारण रसगत वैभिन्न है। कथावस्तु में कुछ वैषम्य के साथ आलोच्य काव्यों में रसगत वैभिन्न है। कालिदास का मेघदूत प्रवासजन्य विप्रलम्भ श्रृंगार है। मानव मन की निगूढ़ रतिभावना का आत्यन्तिक मनोवैज्ञानिक और उसके उभयपक्षीय प्रेम के उदात्त एवं मांसल रूप का वर्णन है जबकि शारिका सन्देश रूप गोस्वामी एवं सनातन गोस्वामी प्रवर्तित मधुरा भक्ति रस का काव्य है। इसे हम नारदोक्त भक्ति सूत्र या भागवतोक्त प्रेमाभक्ति भी कह सकते हैं। जिसे शाण्डिल्य ने सापरानुरक्तिरेश्वरा कहा है। वह वैधी या लक्षण भक्ति न होकर प्रेम भक्ति है जिसके उज्ज्वल नीलरस भक्ति तरंगिणी आकर ग्रन्थ है। इसमें कान्ता या मधुराभक्ति को रसरूप में प्रतिष्ठित कर मधुर पति कृष्ण को आलम्बन और गोपियों को आश्रय कहा गया है।

हरिभक्ति रसामृतसिन्धु ने भी इसका विवेचन कर दक्षिण के आलवार सन्तों से लेकर उत्तर भारत के मध्यकालिक कृष्णभक्ति एवं रामभक्ति काव्यों में रसिक भावना के सूत्रपात का वर्णन किया गया है। इसलिए इस गोपी के विरह वर्णन में जो आह्वान, ऐकान्तिक विरह वेदना, कृष्णमिलन की तीव्र आकांक्षा और उनसे रति की भी आकांक्षा की गयी है। वह कालिदास के मेघदूत से नितान्त भिन्न है।

कालिदास के मेघदूत और शारिका सन्देश के इस साम्य-वैषम्य के साथ ही यह आवश्यक हो जाता है कि आलोच्य काव्यों के स्त्रोत का भी संक्षिप्त विवेचन किया जाए। यद्यपि कवि स्वयंभू क्रान्तद्रष्टा प्रजापति होता है। अपनी कल्पना के उन्मेष से नये विषयों का चयन तो करता ही है किन्तु अपनी काव्यशक्ति और निपुणता के कारण वह पारम्परित या ऋक्थ्य रूप में प्राप्त कथावस्तु को स्त्रोत रूप में स्वीकार कर अपनी कल्पना के सहारे उसे मौलिक रूप प्रदान करता है।

मेघदूत के प्रेरणा स्रोत एवं मौलिकता - यहाँ यह कहना नितान्त अप्रासंगिक होगा कि कवि कालिदास कनिष्ठिकाधिष्ठित कवि हैं। उनमें नवनवोन्मेष शालिनी प्रतिभा और कल्पना अपने चरम रूप में दिखाई पड़ती है। अभिज्ञान शाकुन्तलम, कुमार संभवम्, रघुवंश उनके ऐसे काव्य हैं जिनकी कथाएँ इतिहास या पुराणों में प्रथित-ग्रथित हैं। मेघदूत और ऋतुसंहार उनकी मौलिक कल्पना के काव्य हैं। यद्यपि प्रेरणा स्त्रोत के रूप में कालिदास ने स्वयं ही वाल्मीकि रामायण के कुछ अंशों का उल्लेख किया है। इसकी चर्चा हम बाद में करेगें। पहले ब्रह्मवैवर्त पुराण में उल्लिखित उस घटना का वर्णन करेगें जिसमें यक्ष के शाप के मूलरूप घटना का विशेष उल्लेख हुआ है जो इस प्रकार है - अलकाऽधिपतिर्नाम्ना कुबेरः शिवपूजकः

तस्यासीत् पुष्पबटुको हेममालीति नामतः
तस्य पत्नी सुरूपाऽऽसीद्विशालाक्षीति नामतः
स तस्या स्नेहसंयुक्तः काम पाश वंशगतः
मानसात्पुष्पनिचयमानीय स्वगृहे स्थितः
पत्नी प्रेम समायुक्तो न कुबेरालयं गतः
कुबरो देवसदने करोति शिवपूजनम्
मध्यान्हसमये राजन्पुष्पाणि प्रसमीक्षते
हेममाली स्वभवने रमते कान्तया सह
यक्षराट् प्रत्युवाचाऽथ कालातिक्रमकोपितः
कस्मान्नायाति भो यक्षाः हेममाली दुरात्मवान्
निश्चयः क्रियतामस्य प्रत्युवाच पुनः पुनः

यक्षा ऊचुः - वनिता कामुको गेहे रमते स्वेच्छया नृप

तेषां वाक्यं समाकर्ण्य कुबेरः कोपपूरितः

आह्वयामास तं तूर्ण बटुकं हेममालिनम्

ज्ञात्वा कालाऽऽत्ययं सोऽपि भयव्याकुल लोचनः

आजगाम नमस्कृत्य कुबेरस्याऽग्रतः स्थितः

तं दृष्टवा धनदः क्रुद्धः कोप संरक्त लोचनः

प्रत्युवाच रूषाविष्टः कोपाद्विस्फुरिताऽधरः

धनद उवाच - रे पाप ! दुष्ट ! दुर्वत्त कृतवान्देवहेलनम्

अतो भव श्वित्रयुक्तो वियुक्तः कान्तया सह

अस्मात्स्थानादवपध्वस्तो गच्छ स्थानमथाऽधमम्

इत्युक्ते वचने तेन तस्मात्स्थानात्पपात सः। 1

इस प्रकार उक्त उदाहरणों से यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि उक्त कथा मेघदूत की पूर्व की कथा हो यद्यपि ब्रह्मावैवर्त पुराण का रचनाकाल पुराण विद्वानों ने कालिदास से परवर्ती सिद्ध किया है।

इसी प्रकार **कालिदास** ने स्वयं -

यक्षश्चक्रे जनकतनया स्नान पुण्योदकेषु

स्निग्धच्छाया तरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु

लिखकर स्त्रोत के रूप में वाल्मीकि रामायण को स्मरण किया है क्योंकि वाल्मीकि रामायण के किष्किन्धा काण्ड में सुग्रीव द्वारा लंका की खोज में यात्रामार्ग का वर्णन एवं राम द्वारा कार्यकुशल हनुमान को अभिज्ञान हेतु स्वनामांकित मुद्रिका देने का उल्लेख हुआ है, जो इस प्रकार है -

ददौ तस्य ततः प्रीतः स्वनामांकोपशोभितम्

अंगुलीयमभिज्ञानम् राजपुत्र्या परतंपः।

अतिबल बलमाश्रितस्तवाहं।

हरिवर विक्रम विक्रमैरनल्पैः।।

पवनसुत यथाधिगम्यते सा।

जनकसुता हनुमंस्तथा कुरुष्व।। 2

---

1. मेघदूतम् - पृ0 41

2. वाल्मीकी रामायण किष्किन्धा काण्ड 4/44/12-17

और हनुमान भी कहते हैं -

अहं रामस्य संदेशाद् देवि दूतस्तवागतः

वैदहि कुशली रामः स त्वां कौशलम ब्रवीत्। 1

इस प्रकार वाल्मीकि रामायण में दूत द्वारा सन्देश प्रेषण, मार्गदर्शन, अभिज्ञान स्वरूप किसी वस्तु का देना या घटना का उल्लेख करना सन्देश काव्य के प्रेरणा श्रोत हो सकते हैं। प्राचीन टीकाकारों में से दक्षिणावर्त और मल्लिनाथ ने भी परम्परानुसार मेघदूत का प्रेरणा स्रोत रामायण को कहा है। श्लोक इस प्रकार है -

1. इह खलु कविः सीतां प्रति हनुमतां हारितं सन्देश

हृदयेन समुद्वहन् तत्स्थानीयनायकाद्युत्पादेन सन्देशं करोति। 2

2. सीतां प्रति हनुमत्सन्देशं मनसि निधाय मेघ संदेशं कविः कृतवानित्याहुः। 3

<u>**शारिका सन्देश की कथावस्तु का स्रोत**</u> :- दक्षिण भारत में संस्कृत साहित्य की विशाल एवं समृद्ध परम्परा मिलती है। रामपाणिवाद ने मेघदूत के अनुरुप मन्दाक्रान्ता छन्द के अनुरुप कुछ भाव एवं कुछ समसामयिक काव्यों से प्रेरणा ग्रहण की है जिसमें श्रीमद्भागतवत का रास पंचाध्यायी और उद्धव आगमन के साथ भ्रमरगीत प्रसंग मुख्य है। यद्यपि शारिका सन्देश में महारास का या रासक्रीड़ा का वर्णन नहीं है किन्तु इसके अन्तिम श्लोकों में यह ध्वनित होता है कि कोई गोपी इसी रासलीला में ही मान के कारण कृष्ण से वियुक्त हो गयी थी।

भागवत चम्पू और विष्णु विलास के अनुसार गोपी शारिका को अपना माध्यम बनाकर कृष्ण के पास सन्देश भेजती है। यही बात शारिका सन्देश के आठवें श्लोक में इस प्रकार कही गयी है।

मानुष्योक्त्या मनुजमनसो हारिके शारिकेत्वा

माशापाश ग्रथित हृदया किञ्चिदभ्यर्थयेऽहम्

आशासाना पुनरपि हरेस्संगमं त्वामवाची

आशान्तावद् गमयितुमितः प्रारभे दूरदीर्घाम्। 4

श्रीमद् भागवत के दशम स्कन्ध के तीसवें अध्याय में कृष्ण गोपियों के महारास का अत्यन्त मोहक चित्रण हुआ है। उस समय गोपी को यह अभिमान हो जाता है कि कृष्ण एक मात्र उनके ही हैं। उनके इस अभिमान के कारण कृष्ण अर्न्तध्यान हो जाते हैं और यथार्थ का पता चलते ही गोपियाँ समूहबद्ध होकर विलाप करने लगती हैं।

---

1. वाल्मीकि रामायण सुन्दर काण्ड - 24/2
2. मेघदूतम् विजयेन्द्र शर्मा पृ0 - 46
3. मेघदूतम् विजयेन्द्र शर्मा पृ0 - 40
4. शारिका सन्देश श्लोक - 8

अन्तर्हिते भगवति सहसैव व्रजांगनाः

अतप्यंस्तमचक्षाणाः करिल्यइव यूथपम्। 1

गत्यानुरागस्मित विभ्रमेक्षितै र्मनोरमालापविहार विभ्रमैः

आक्षिप्त चिन्ताः प्रमदः रमापतेस्तास्ताविचेष्टा जगृहुस्तदात्मिकाः। 2

इसी प्रसंग में भ्रमरगीत की चर्चा करना भी आवश्यक प्रतीत होता है इसके अन्तर्गत गोपियाँ भ्रमर के माध्यम से कृष्ण की निष्ठुरता और अपनी विरह वेदना का वर्णन करती हैं। ऐसा लगता है कि रासलीला और भ्रमरगीत में गोपियों के सन्देश को मिलाकर रामपाणिवाद ने शारिका सन्देश की उद्भावना की हो।

डॉ० सी०एम० नीलकंठन ने लिखा है -

Thoug There is an incident of sending a be as messenger by the cow-herds in the Bhagavata' it is not in the context of Rasakreda the auther of the Peom has shown his sense of Propriety in shifting that incident to the Propen context This agrees with the concept of Pranayakalaha famous in sanskrit literature as the cause for separation. 3

इस पृष्ठभूमि में यह ध्यातव्य है कि शंकराचार्य के अद्वैत वेदान्त एवं मायावाद के विरुद्ध जिस भक्ति का प्रादुर्भाव दक्षिण में हुआ उसमें प्रस्थान चतुष्ट्य के अन्तर्गत श्रीमद्भागवत को ही आकर ग्रन्थ स्वीकार किया गया है। बात यह है कि शंकराचार्य ने अद्वैत वेदान्त की प्रतिष्ठा हेतु प्रस्थानत्रयी के रुप में उपनिषद्, गीता एवं ब्रह्मसूत्रों पर अपने भाष्य लिखे थे अतः भक्तिमार्ग के प्रतिवादन हेतु प्रस्थान चतुष्ट्य ग्रन्थ के आधार पर उज्ज्वल रस या मधुर रस की परिकल्पना षट्गोस्वामियों ने की जिसमें रूप गोस्वामी, जीव गोस्वामी, और सनातन गोस्वामी का मधुर रस की प्रतिष्ठा में महत्वपूर्ण योगदान है।

यहाँ संक्षेप में यह कहना अनिवार्य लगता है कि ब्रह्म या ईश्वर के प्रति नित्य के कर्म के साथ उससे अपना दाम्पत्य या कान्ताभाव स्थापित करना मधुर रस की मूल अवधारणा है। केरलीय संस्कृत साहित्य में इस प्रकार की रचनाओं का बाहुल्य है जिनके मूल में आलवार सन्त हैं। इन सन्त कवियों ने अपने को स्त्री मान कर ब्रह्म को अपना प्रेमी या पति कहा है और कान्ताभाव की उपासना परक गीत गायें हैं। रामपाणिवाद ने ऐसे ही श्रीमद् भागवत आलवार सन्तों से प्रभावित होकर मधुर रस के साहित्यिक रूप की प्रतिष्ठा करने हेतु शारिका

---

1. 2. श्रीमद् भागवत - 10/ 30/ 1-2

3. शारिका सन्देश भू०पृ० - 75

सन्देश का प्रणयन किया है।

मौलिक उद्भावना :- उपर्युक्त पंक्तियों में प्रेरणा स्रोत के रूप में वाल्मीकि रामायण, भागवत आदि ग्रन्थों की चर्चा करते हुए आलोच्य काव्य ग्रन्थों के प्रेरणा स्रोतों की झलक प्रस्तुत की गयी है। प्रातिभ कवि अपनी मौलिक कल्पनाओं से प्रथित-ग्रथित कथा को इस रूप में सजाता और संवारता है कि वह मौलिक जैसा प्रतीत हो कालिदास ने अपने प्रेम की उद्दाम व्यञ्जनाओं, विरह के सात्विक अनुभावों का ऐसा बिम्बात्मक चित्रण किया है कि पाठक आकण्ठ मग्न हो जाता है। मेघमार्ग का ऐसा चाक्षुष प्रत्यक्षीकरण रूप में चित्रांकन किया है कि जिसमें नगर, नदियाँ, ऊँचे पर्वत, मन्दिरों में पूजन-अर्चन के विविध क्रिया-कलाप, मेघों को देख तृषित प्यासे पशु-पक्षियों की सतृष्ण दृष्टि अथवा सन्देश वाहक के प्रियजनों से मिलन कराकर अग्रिम मार्ग के लिए उत्साह उत्पन्न करने हेतु मनोवैज्ञानिक आधार प्रस्तुत किया है। यदि मेघदूत में अलकापुरी, वहाँ स्थित यक्षिणी के वस्तुनिष्ठ मूल्यपरक सौन्दर्य का मांसल, उद्दीपक, मोहक और हृदयावर्जक चित्रण किया है, तो रामपाणिवाद ने मार्ग में पड़ने वाले तीर्थो, मन्दिरों, पुरियों के साथ कृष्ण को ब्रह्म रूप या अंशी रूप में सिद्ध करने हेतु दशावतार का वर्णन किया है। काम पिपासा की शान्ति हेतु श्रीकृष्ण के रूप लावण्य काम विनिन्दित आंगिक शोभा, सौकुमार्य दुष्ट दलन की सामर्थ्य का ऐसा चित्रांकन रामपाणिवाद ने किया है जिसमें गोपी की तीव्र मनोभिलाषा, मिलन आतुरता, काम का तीव्रोद्वेग और गोपी की विरह विदग्धक्षीणावस्था का मौलिक चित्रांकन हुआ है।

निष्कर्ष यह है कि कालिदास का मेघदूत अपनी अभिव्यंजना, रसपेशलता और भावप्रवणता के कारण मौलिक काव्य ही नहीं सिद्ध हुआ बल्कि परवर्ती साहित्यिक और साम्प्रदायिक कवियों के लिए प्रेरक के रूप में भी मान्य हुआ है। आलोच्य दोनों काव्यों में कथावस्तु क्षीण होते हुए भी श्लोकों में पूर्वापर सम्बर निरन्तर बना हुआ है। भौगोलिक स्थलों का सजीव चित्रांकन है। कालिदास ने ग्रामीण परिवेश के साथ वन्य, नगरीय और सांस्कृतिक परिवेश को समाहित करने का प्रयास किया है तो रामपाणिवाद ने धार्मिक, आध्यात्मिक, लौकिक जीवन के चित्रांकन में सफलता पायी है। दोनों काव्य क्षीण कथावस्तु होने पर भी प्रभावान्विति की दृष्टि से प्रभविष्णु बन पड़े हैं। क्रिया-व्यापार दोनों काव्यों में कम हैं किन्तु कालिदास के मेघदूत का समापन सन्देश प्रेषण तक सीमित इसलिए रखा गया है क्योंकि वर्षान्त में उसकी शापावधि समाप्त हो जाएगी और फिर दम्पत्ति का पुनर्मिलन होगा जिसमें मध्यस्थ की आवश्यकता ही नहीं है, इसलिए इसका सुखद अन्त ध्वनि प्रधान है जबकि शारिका सन्देश का सुखान्त समापन अभिधेय रूप में ही हुआ है।

मेघदूत एवं शारिका सन्देश : में भाव एवं रस विवेचन

(क) - रस सिद्धान्त

स्वरुप विश्लेषण

(ख) - आलोच्य काव्य

ग्रन्थों में अंगीरस

(ग) - आलोच्य काव्य

ग्रन्थों में अन्यरस

(क) - भावसन्धि एवं भाव शबलता

(ख) - विभाव, अनुभाव एवं संचारी भाव

(ग) - काम, प्रेम एवं सौन्दर्य विवेचन

(घ) - साम्य-वैषम्य

अध्याय चतुर्थ

मेघदूत एवं शारिका सन्देश में भाव एवं रस विवेचन - रस सिद्धान्त एवं स्वरूप विश्लेषण

भारतीय आचार्यो ने काव्य के बाह्य एवं आन्तरिक सौन्दर्य के परिशंसन हेतु अनेक मापदण्डों की खोज की है। पाठक कथा प्रधान काव्यों में कथा का आरोह-अवरोह, घटना विन्यास उसमें प्राप्त कौतूहल एवं तन्यविष्ट पात्रगत चरित्र स्वरुप को सहज ही समझकर आनन्दित होता है किन्तु कोई भावनावान कवि ही इन दोनों तत्वों से आगे बढ़कर काव्यात्मक सौन्दर्य को रस रूप में प्रस्तुत करता है। वस्तुतः काव्य में भावात्मक या शब्दार्थ सौन्दर्य के स्वाद या आनन्द का नाम ही रस है। यद्यपि भामह, वामन आदि आचार्यों ने शब्दार्थों सहितौ काव्यम् या रमणीयार्थ प्रतिपादक शब्द काव्यम् अथवा रीतिरात्मा काव्यस्य कहकर काव्य के कलापक्ष या वाह्य तत्व को अधिक महत्ता दी है जबकि काव्य का सांवेगिक तत्व या आस्वादपरक तत्व रस है इसलिए वाक्यं रसात्मकं काव्यं की मान्यता अधिक प्रचलित हुई है।

रसनात् रस है या रस्यते असौइति रसः कहकर काव्य में आन्तरिक उपभुज्यमान रस की महत्ता स्थापित की गयी है। इसी प्रकार पाश्चात्य काव्यशास्त्र में काव्य की सांवेगिकता या अहन्जन्म व्यक्ति सीमाओं से मुक्त सार्वजनीनता या प्राकारान्तर से साधारणीकरण को ही काव्य का ध्येय घोषित किया गया है।

आस्वाद्य होने के कारण रस सहृदय संवेद्य है। इसलिए रसानुभूति के लिए कोई एक तत्व या कारक महत्वपूर्ण नहीं होता। रसानुभूति एकान्ततः व्यापार नहीं, काव्यकृति के सन्निकर्ष से ही स्थायीभाव, विभाव, अनुभाव और संचारी भावों से ही सहृदय के अन्तर में रसानुभूति होती है। इसलिए सबसे पहले हमें आलोच्य काव्यों की रसगत समीक्षा करने के पूर्व रस सामग्री का संक्षिप्त विहगावलोकन अनिवार्य प्रतीत होता है। भारतीय आचार्यों ने सहृदय की चित्तवृत्तियों में अनन्तरूप से संस्कारगत सुप्त रहने वाले भाव ही रसरूप में परिणत होते हैं, ऐसी मान्यता स्थापित की है। ये उक्त मानवीय संस्कार ही अनुकूल परिस्थितियों में प्रबुद्ध होकर आनन्द रुप में अभिव्यक्त होते हैं। इन मनोविकारों को विभाव कहा गया है, जिसकी अभिव्यक्ति अनुभाव से अभिहित की गयी है। कोई भी कवि विभाव, अनुभाव, संचारी भावों की स्थापना हठात् या बलात् नहीं करता अपितु इस सम्पूर्ण उपचार के पीछे कवि का गहन सौन्दर्य बोध उसकी काव्यात्मक अनुभूति का ऐसा अकुण्ठित तथा स्वाभाविक स्रोत प्रवाहित होता रहता है जो एक साथ सहस्र हृदयों को अपनी भावनाओं में भाव निमग्न करा सकता है।

तृतीय अध्याय में शोधकर्त्री ने मेघदूत और शारिका सन्देश की कथावस्तु का विश्लेषण करते हुए यह देखा है कि मेघदूत में विरही यक्ष अपनी प्रेयसी को मेघ के माध्यम से हृदयस्थ मंजीष्ठरागोद्भव अनुभूतियों को संप्रेषित करता है तो शारिका सन्देश में प्रणय कुपिता, रुपगर्विता गोपी, श्रीकृष्ण से बिछुड़ जाने के कारण

हृदयस्थ कोमल, हृदयावर्जक, भावोद्दीपक अनुभूतियों का सम्प्रेषण सखि शारिका से करती है। ऐसी कथा में स्वभावतः इसका अगाध सागर लहराता हुआ दिखाई पड़ता है। आचार्य मम्मट ने सम्भवतः ऐसे ही काव्यों के विषय में नियति विरचित नियमों से स्वतन्त्र आल्हाद कारक काव्य को श्रेष्ठ कहा है। कालिदास उस वैभवशाली युग के कवि थे जहाँ जातीय आत्मा अभूतपूर्व विजिगीषु भाव लेकर आनन्दोदधि में मग्न हो रही थी। रस एवं उल्लास का सर्वत्र प्रसार था।

डा० रमाशंकर तिवारी ने लिखा है कि - ''कालिदास इन्द्रियों ऐन्द्रिय भावानुभूति तथा रसात्मक सौन्दर्य के महान कवि हैं उनकी प्रधान एवं महीयसी उपलब्धि यह है कि उन्होंने प्रत्येक काव्यात्मक तत्व को और सम्पूर्ण महत्वमय काव्य रुपों को ग्रहण किया है। उन्हें इन्द्रिय सुलभ सौन्दर्य की शरण में लाकर कलात्मक पूर्णता की समरसता के अनुशासन द्वारा नियन्त्रित तथा संयमित किया है। कल्पना के द्वारा किसी वस्तु का मानसिक साक्षात्कार कर लेने की क्षमता जिसका आस्वाद बड़े से बड़े कवि अपने श्रेष्ठतम् अन्तःप्रेरित क्षणों में ही किया करते हैं। कालिदास के साथ उनके स्थायी अमोघ शक्ति के रुप में वर्तमान रहती है। इस अन्तर्दर्शन का परिणाम होता है - सजीव, संश्लिष्ट चित्रण और यह चित्रांकन रुप सौन्दर्य एवं वर्ण सौन्दर्य की अत्यन्त सुकुमार एवं सशक्त भावना के द्रव में सन कर उनके काव्यों में प्रतिफलित हुआ है'' 1

महाकवि रामपाणिवाद ने भी अपनी कथा का चयन नैसर्गिक सुषमा मानवीय भावानुभूति को कल्पना के सहारे समरस बनाया है। मधुरा भक्ति का जो प्रतिपादन शारिका सन्देश में किया गया है वे भावनाएँ असाधारण है, सहज संवेद्य है। नारीगत सुलभ उद्दाम आकांक्षाओं का प्रतिफलन है जिसमें अहं का, स्व का विगलन प्रिय के प्रति अनन्य आसक्ति उसके सौन्दर्य का बहुविध वर्णन प्रिय के रुप का उद्दामतीकरण कर कन्दर्प दर्प दलन तक ही नहीं सीमित रखा अपितु समस्त पृथिवी के उद्भव पालन संहार सक्षम निरुपित कर अपनी रुपासक्ति अनन्यता शरणागणि, दैन्य और आत्मनिवेदन का रुप दिया है।

कालिदास का मेघदूत विप्रलम्भ श्रृंगार की कथा है। अतः उस कथा और उससे व्यंजित रस का सैद्धान्तिक विश्लेषण अनिवार्य प्रतीत होता है। मनोविश्लेषणकर्ताओं ने राग और द्वेष दो मूलावृत्तियों को जीवमात्र में अन्तर्निहित माना है जिसमें राग का महत्वपूर्ण स्थान है। यह आसक्ति का मूल कारण है। इसी राग से विश्वपरिचालित होता है। काव्याचार्यों ने इसी राग को श्रृंगार रस रुप में वर्णित कर इसके स्थायी भाव को रति कहा है। श्रृंगार रस का सीमित और व्यापक अर्थ काव्यशास्त्र में उल्लिखित है। आचार्य भरत ने रति स्थायी भाव से उत्पन्न श्रृंगार रस को उज्ज्वल वेश युक्त कहा है और उसके संयोग तथा वियोग (विप्रलम्भ) दो भेदों का उल्लेख

---

1. महाकवि कालिदास पृ0 - 335 - 336

किया है उनकी कारिका इस प्रकार है -

तत्र श्रृंगारो नाम स्थायिभावप्रभवः। उज्ज्वलवेषात्मकः यत्किचिंल्लोके शुचि मेध्यमुज्ज्वलं दर्शनीयं वा तच्छृंगारेणोपमीयते। यस्तावदुज्ज्वलवेषः स श्रृंगार वानित्युच्यते। यथा च गोत्रकुलाचारोत्पन्ना याप्तोपदेश सिद्धानि पुंसां नामानि भवन्ति तथैवैषां रसानां भवानां च नाट्याश्रितानां चार्थानामाचारोत्पन्नान्यप्तोपदेश सिद्धानि नामानि। एव मेष आचार सिद्धो हृद्योज्ज्वल वेषात्मकत्वाच्छृंगारो रसः। स च स्त्री पुरुष हेतुक उत्तमयुव प्रकृतिः।

तस्य द्वे अधिष्ठाने सम्भोगो विप्रलम्भश्च। तत्र सम्भोस्तावत् ऋतुमाल्यानुलेपनालंकारेष्टजन विषय वर भवनोपभोगोपवन-गमनानुभवन श्रवण। दर्शन क्रीडालीलादिर्भिविभावैरुत्पद्यते।

तस्य द्वयनचातुर्य भ्रूक्षेप कटाक्ष संचार ललित मधुरा गहार वाक्यादिभिरनुभावैरभिनयः प्रयोक्तव्यः व्यभिचारिणश्चास्यालस्यौग्रयजुगुप्सावर्ज्याः विप्रलम्भकृतस्तु निर्वेदग्लानिशंका सूयाश्रम चिन्तौस्युक्य निद्रा स्वप्नविबोधव्याध्युन्मादापस्मार जाड्य मरणादिभिर नुभावैरभिनेतव्यः। 1

अर्थात स्थायी भाव रति यौवन समृद्ध नायक नायिका भाव को रसकोटि तक पहुंचाने में सहायक गुण दर्शन स्पर्श अनुभाव और स्थायी भाव को पुष्ट करने वाले संचारी भाव समन्वित श्रृंगार रस कहलाता है। रति की मनोनुकूल वस्तु में सुख प्राप्ति का ज्ञान इस प्रकार अर्थ लेने पर उसका विस्तृत अर्थ लिया गया है जबकि काव्यशास्त्र में भरतोक्त दाम्पत्य रति का अर्थ ही स्वीकृत हुआ है। भामह इस रति को रसवद् अलंकार मानते हैं। रुद्रट पुरुष और नारी के रक्त सम्बन्धी रति व्यवहार को श्रृंगार कहते है जिसके दो भेद सम्भोग और विप्रलम्भ बताया है।

व्यवहारः पुनार्योरन्योरन्यं रक्तयो रति प्रकृतिः
श्रृंगार स द्वेधा प्रच्छन्नश्च प्रकाशश्च।। 2

मम्मट, हेमचन्द्र [3] **शारदातनय** [4] सभी आचार्यों ने श्रृंगार रस के मूल में स्त्री पुरुष के प्रेम और उसके दो भेदों की चर्चा की है।

श्रृंगार शब्द की अगर व्युत्पत्ति की जाए तो श्रृंग् + आर बनेगा जिसका यौगिक अर्थ है काम की प्राप्ति।

इस प्रकार आलंकारिकों से लेकर ध्वन्याचार्यों तक सभी काव्यशास्त्रियों ने नायक नायिका के परस्पर आकर्षक, प्रीति, सम्भोग यारति और उनके मध्य दूरी को विप्रलम्भ। इस प्रकार संयोग एवं वियोग श्रृंगार के भेदों का उल्लेख किया है। जैसा कि रुद्रट ने लिखा है कि संगत पुरुष और नारी के रति व्यवहार को संभोग और वियुक्त पुरुष और नारी के रति व्यवहार को विप्रलम्भ कहते हैं।

1.नाट्यशास्त्र - भरत - 6/46 2. काव्यालंकार रुद्रट - 12/5

3. काव्यानुशासन हेमचन्द्र पृ0 - 111 4. भाव प्रकाश - शारदातनय पृ0 - 77

सम्भोगः संगतयोर्वियुक्तयोर्यश्च विप्रलम्भोऽसौ। 1

विप्रलम्भ श्रृंगार - संयोग श्रृंगार में ऐन्द्रिय लौल्य, शारीरिक सुख, स्वार्थ या वासना का भाव रहता है जबकि विरहाग्नि में तप्त होकर प्रेम स्वर्ण खरा दिखाई देता है। जैसा कि कहा गया है -

न बिना विप्रलम्भे न श्रृंगार पुष्टिमश्नुते।

रुद्रट भी वियुक्त पुरुष और नारी व्यवहार को विप्रलम्भ श्रृंगार कहते हैं।

व्यवहारः पुंनार्योरन्योन्यं रक्तयोरति प्रकृतिः

श्रृंगारः स द्वेधा संभोगो विप्रलम्भश्च

संभोग संगत्योर्वियुक्तयोर्यश्च विप्रलम्भोऽसौ। 2

जबकि ***भोज*** ने विप्रलम्भ रस का लक्षण इससे भिन्न दिया है उनके मतानुसार रति नामक भाव जब प्रकर्ष को प्राप्त होकर भी अपने अभीष्ट तक नहीं पहुंचता तब विप्रलम्भ श्रृंगार होता है।

भावो यदा रतिर्नाम प्रकर्षमधिगच्छतिः

चाधिगच्छति चाभीष्टं विप्रलम्भरतदोच्यते। 3

शारदातनय ने विप्रलम्भ का लक्षण न करके अयोग और वियोग का उल्लेख किया है। साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ की विप्रलम्भ सम्बन्धी अभिलाषा इस प्रकार की है। वह लिखते हैं अनुराग के अत्यन्त उत्कट होने पर भी जब प्रिय समागम नहीं होता तो उसे विप्रलम्भ कहते हैं।

यत्रतु रतिःप्रकष्टानभीष्टमुपैति विप्रलम्भोऽसौ। 4

रस गंगाधर कार ***जगन्नाथ*** ने विप्रलम्भ के एक दूसरे मौलिक तथा सूक्ष्म अर्थ को समझा है। उनके अनुसार वियोग का अर्थ अलग रहना नहीं होता यह एक प्रकार की चित्तवृत्ति है जिसमें यह भाव है कि मिला हुआ हूँ और बिछड़ा हुआ हूँ। यह ज्ञान ही विप्रलम्भ श्रृंगार है।

तत्र श्रृंगारो द्विविधः संयोगो विप्रलम्भश्च। रतेः संयोगकाला वच्छिन्नत्वे प्रथमः। वियोग काला वच्छिन्नत्वे द्वितीयः। संयोगश्च न दाम्पत्योः सामानाधिकरण्यम्। एकतल्पशयनेऽपीर्ष्यादिसद्भावे विप्रलम्भस्यैव वर्णनात्। एवं वियोगोऽपि न वैयधिकरण्यम् दोषस्योक्त्वात्। तस्माद्द्वाविमौ संयोग वियोगाख्याबन्तः करणवृत्ति विशेषौ। यत्संयुक्तोवियुक्श्चास्मीति धीः। 5

---

1. काव्यालंकार रुद्रट - 12/6 2. काव्यालंकार रुद्रट - 12/5

3. सरस्वती कण्ठाभरण - 5/45 4. साहित्यदर्पण तृतीय परिच्छेद

5. रस गंगाधर - जगन्नाथ - पृ0सं0 - 40

विप्रलम्भ श्रंगार के भेद - विप्रलम्भ श्रृंगार के भेद प्रभेदों का कोई वर्गीकरण भरत ने नहीं किया केवल करुण विप्रलम्भ और करुण रस का अन्तर निरुपित किया है। विप्रलम्भ का भेद करने का श्रेय रुद्रट को प्राप्त है उन्होंने अनुराग, मान, प्रवास और करुण चार भेदों का उल्लेख इस प्रकार किया है -

अथ विप्रलम्भ नामाश्रृंगारोऽयं चतुर्विधो भवति

प्रथमानुराग मानप्रवास करुणात्मकत्वेन। 1

इसी वर्गीकरण को स्वीकार करके आचार्यों ने कुछ उपभेदों की भी चर्चा की है। जैसे- भोज ने प्रथमानुराग को प्रति श्रुत्यादान या पूर्वानुराग, हेमचन्द्र ने पूर्वानुराग अथवा अभिलाष विप्रलम्भ को दैव जन्य एवं परवशताजन्य शारदातनय ने पूर्वानुराग को अयोग कहा है। साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ ने पूर्वानुराग का विशद विवेचन किया है जिसमें सौन्दर्यादि गुणों के श्रवण परस्पर अनुरक्त नायक नायिका की समागम से पूर्व की दशा को पूर्वाराग कहा है। अभिलाषा चिन्ता आदि दस काम दशाएँ इसमें होती है।

1. श्रवणाद्दर्शनाद्वापि मिथः संरुढ़रागयोः
   दशाविशेषो योऽप्राप्तौ पूर्वरागः स उच्यते।
2. श्रवणं तु भवेत्तत्र दूतबन्दी सखीमुखात्
   इन्द्रजाले च चित्रे च साक्षात्स्वप्ने च दर्शनम्।
3. अभिलाषश्चिन्ता स्मृति गुण कथनोद्वेग संप्रलापाश्च।
   उन्मादोऽथ व्याधिर्जडता मृतिरिति दशात्र कामदशाः। 2

मान में ईर्ष्या से युक्त नायिका या नायक में विकार प्राप्त होता है। इसके भी अनेक भेद काव्यशास्त्र में कहे गये है जिसका विश्लेषण कालिदास के प्रसंग में अपेक्षित नहीं है।

प्रवास :- प्रवास विप्रलम्भ श्रृंगार का सबसे मुख्य भेद है। पूर्वराग तो मिलने की अभिलाषा मात्र है उसमें विरह की व्याकुलता तो है किन्तु प्रवासजन्य जैसी उद्दामता नहीं। रुद्रट ने प्रवास की परिभाषा करते हुए कहा है कि नायक विदेश जाएगा, जा रहा है या चला गया है, ये सब प्रवास कहलाते हैं। ऋतु विवक्षा के अनुसार ये तीन अभिलाषाएँ भी प्रवास कहलाती हैं। आएगा मानो आता है अथवा आया हुआ है।

यास्यति याति गतो यत्परदेशं नायकः प्रवासोऽसौ।

एष्यत्येत्यायातो यथर्त्ववस्थोऽन्यथा च गृहान्। 3

---

1. काव्यालंकार रुद्रट - 14/1 2. साहित्यदर्पण - 3/188 - 190

3. काव्यालंकार रुद्रट - 14/36

भोज ने प्रवास की परिभाषा इस प्रकार की है- ''युवक युवतियों के नये अथवा प्रौढ अनुराग में एक के देशान्तर आदि के जाने के कारण जो चिरकाल तक व्यवधान पड़ जाता है उसे प्रवास कहते हैं।''

देशान्तरा दिभियूनौर्व्यवधानं चिरायत्
न वेऽनुरागे प्रौढ़े वा प्रवासः सोऽभिधीयते। 1

हेमचन्द्र ने भिन्न देशत्व को प्रवास कहा है और उसके तीन कारण बताये हैं। प्रिय व्यक्ति के कार्यवश, शापवश अथवा सम्भ्रम चले जाने से प्रवास होता है।

प्रवासो भिन्नदेशत्वम् कार्यशापसंभ्रमैः प्रवासः। 2

साहित्यदर्पण में भी इसी बात की पुष्टि करते हुए आश्रय के अनुभावों का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि कार्यवश, शापवश अथवा सम्भ्रम (भय) वश नायक के अन्य देश में चले जाने को प्रवास कहते हैं। उसमें नायिका के शरीर और वस्त्रों में मलीनता, सिर में एक वेणी एवं निःश्वास, उच्छवास, रोदन और भूमिपतन आदि का वर्णन किया जाता है। अंगों में असौष्ठव, संताप, पाण्डुता और दुर्बलता, अरुचि और अधीरता आदि इसके लक्षण हैं।

प्रवासो भिन्नदेशित्वं कार्याच्छापाच्चं सम्भ्रमात्
तत्रांगाचेलमालिन्यमेकवेणीधरम् शिरः
निःश्वासोच्छवास रुदितभूमि पातादिजायते
अंगेष्वसौष्ठवं तापः पांडुता कृशताऽरुचि। 3

सारतः ये कहा जा सकता है कि प्रवास वह विप्रलम्भ श्रृंगार है जिसमें कार्यवश, शापवश अथवा सम्भ्रम नायक या नायिका के देशान्तर चले जाने से परस्पर दुःखी होते हैं। विप्रलम्भ श्रृंगार का अन्तिम भेद करुण विप्रलम्भ कहलाता है।

कामदशाएँ :- वियोग श्रृंगार में इसकी अभिव्यंजना हेतु भरत ने अभिलाषा, चिन्तन, स्मृति, गुणकीर्तन, उदवेग, विलाप, उन्माद, व्याधि, जड़ता और मरण दश दशाओं का उल्लेख किया है।

दशवस्थागतं कामं नानाभावैः प्रकाशयेत्
प्रथमेत्वभिलाषः स्यात् द्वितीये चिन्तनं भवेत्
अनुस्मृतिस्तृतीय तु चतुर्थे गुणकीर्तनम्

---

1. सरस्वती कण्ठाभरण - 5/49 2. भावप्रकाश - चतुर्थ अध्याय

3. साहित्यदर्पण - 3/204 - 205

उद्वेगः पंचमे प्रोक्तो विलापः षष्ठ उच्यते

उन्मादः सप्तमे ज्ञेयो भवेद् व्याधिस्तथाष्टमे

नवमे जड़ता प्रोक्ता दशमे मरण भवेत्

स्त्रीपुंसयोरपि विधिर्लक्षणां च निवोधत्। 1

इन्हीं काम दशाओं का उल्लेख विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में किया है। 2

कहना नहीं होगा कि कालिदास का मेघदूत विप्रलम्भ श्रृंगार का काव्य है जिसका विश्लेषण रस तत्व की दृष्टि से अपेक्षित है। सर्वप्रथम आलम्वन, आश्रय, उद्दीपन विभाव, अनुभाव एवं संचारी भावों की दृष्टि से मेघदूत की समीक्षा प्रस्तुत की जा रही है।

मेघदूत में अंगीरस – आचार्यो ने अंगीरस के रूप में वीर, श्रृंगार और शान्त रस को प्रामुख्य दिया है। बात यह है कि काव्य के मूल उद्देश्य के अनुरुप प्रधानरस की परिकल्पना की गयी है। अतः अंगीरस से शेष अन्य सभी रसों का परिपाक गौण रूप में अन्तर्भुक्त माना है। यह रस प्रधान स्थायी और शेष संचारी कहे गये हैं। *ध्वन्यालोककार आनन्द वर्धन ने लिखा है –*

प्रसिद्धेऽपि प्रबन्धानां नाना रस निवन्धने

एको रसोंऽगी कर्त्तव्यः तेषामुत्कर्षमिच्छता

बहूनां समवेतानां रूपं यस्यभवेदबहुः

स मंतव्यो रसः स्थायी शेषाः संचारिणो मतः।

प्रबन्धेषु प्रथमतरं प्रस्तुतः सन् पुनः पुनरनुसंधीयमान लेन स्थायी यो समस्तस्य सकल बंध व्यापिनो रसातरैरन्तरालवतिभिः समावेशो यः स नांगतामुपहंति।। 3

यहाँ हम अंगीरस के रूप में विप्रलम्भ श्रृंगार के विभाव, अनुभाव और व्यभिचारी भावों का वर्णन कर रहे हैं।

मेघदूत में विभाव वर्णन :- लोक में प्रचलित हेतु कारण अथवा निमित्त के लिए रस शास्त्र में विभाव की चर्चा की गयी है। शास्त्र में वाचिक, आंगिक एवं सात्विक अभिनय के सहारे चित्तवृत्तियों का विशेष रूप से विभावन अथवा ज्ञापन कराने वाले हेतु या निमित्त को विभाव कहते हैं। विभाव वस्तुतः वासना रूप में अत्यन्त सूक्ष्म रूप से अवस्थित रति आदि स्थायी भावों को आस्वाद्य योग्य बनाते हैं। इनके दो भेद कहे गये हैं। आलम्बन एवं उद्दीपन। आलम्बन के साथ आश्रय की स्थिति भी स्वीकार की गयी है।

---

1. नाट्यशास्त्र - भरत 22/169 - 172 2. साहित्यदर्पण 3/187-192 3. ध्वन्यावलोक पृ0सं0 - 322

मेघदूत में कालिदास ने उभयनिष्ठ प्रेम का वर्णन किया है। कहीं यक्ष तो कहीं यक्षिणी या अन्य स्त्रियाँ आलम्बन और आश्रय के रूप में वर्णित हैं। शाप के कारण आश्रय यक्ष स्तम्भित होकर मेघ को देर तक देखता रहा जिसके हाथ से कंकण गिर पड़ा है। ऐसे आश्रय का वर्णन *कालिदास* ने इस प्रकार किया है -

तस्मिन्नद्रौ कतिचिदबला विप्रयुक्तः स कामी
नीत्वामासान् कनक वलयभ्रंशरिक्त प्रकोष्ठः
आषाढ़स्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानुं
वप्रक्रीड़ा परिणत गजप्रक्षणीयं ददर्श। 1

तस्यस्थित्वा कथमपि पुरः कौतुकाधान हेतोः
अन्तर्वाष्पश्चिरमनुचरो रजराजस्य दध्यौ
मेघालोके भवति सुखिनोऽप्यन्यथावृत्ति चेतः
कण्ठा श्लेषप्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे। 2

इस यक्ष की यक्षिणी आलम्बन है। कालिदास ने उत्तरमेघ में यक्षिणी को भी आश्रय बनाकर यक्ष को आलम्बन बनाया है -

उत्संगे वा मलिनवसने सौम्य निक्षिप्य वीणां
मदगोत्रांकः विरचितपदं गेयमुद्गातुकामा
तन्त्री मार्दा नयन सलिलैः सारयित्वा कथञ्चिद्
भूयोभूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती। 3

उद्दीपन विभाव :- इसके अन्तर्गत मानव या मानवेतर वस्तुएँ आती है जो वस्तुएँ हृदयस्थ भावों को उद्दीप्त करती हैं। उन्हें उद्दीपन विभाव कहते हैं। जैसे - आषाढ़ के प्रथम बादलों को देखकर आश्रय यक्ष का मन विहवल हो उठता है -

आषाढ़स्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानुं
वप्रक्रीड़ा परिणत गजप्रक्षणीयं ददर्श। 4

पूर्वमेघ में प्रकृति का संश्लिष्ट एवं उद्दीपन विभाव के रूप में वर्णन कवि ने अनेक बार किया है। अनेक स्थानों पर नायिका के अंगसाम्य की चर्चा कर यक्ष के हृदयस्थ राग को तीव्रतर बनाया है।

---

1. पूर्व मेघदूत - 2
2. पूर्व मेघदूत - 3
3. उत्तरमेघ - 26
4. पूर्व मेघदूत - 2

छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रै

स्त्वय्यारूढ़े शिखरमचलः स्निग्धवेणी सवर्णे

नूनं यास्यत्यमर मिथुन प्रेक्षणीयामवस्थां

मध्ये श्यामः स्तन इव भुवः शेष विस्तार पाण्डुः। 1

<u>अनुभाव विधान</u> :- आचार्य भरत ने लिखा है -

अथानुभावा इति कस्मादुच्यते यदयमनुभावयति नानार्थाभिनिष्पन्नो वागंग सत्वैः कृतोभिनय इति। 2

भाव जाग्रति के पश्चात होने वाले अंगविकारो को अनुभाव कहते हैं। अनु पश्चाद् भावः उत्पत्तिः येषां अथवा अनुपश्चाद् भावो यस्य सो अनुभावः ऐसी व्युत्पत्ति की जा सकती है।

आचार्य धनञ्जय ने लिखा है - वाणी, अंग तथा सत्व द्वारा सम्पादित नाना अर्थों से निष्पन्न भाव को अनुभाव कहा जाता है।

वागंगाभिनयेनेह यतस्त्वर्थोऽनुभावयते

वांगंगोपांग संयुक्त स्त्वनुभावस्ततः स्मृतः। 3

अनुभाव चार प्रकार के कहे गये हैं। कायिक, सात्विक, वाचिक, आहार्य। मेघदूत के प्रारम्भ में ही यक्ष द्वारा कुटजपुष्प को तोड़कर मेघ को समर्पित करना और उससे प्रणय भरे वचनों का कथन कायिक और वाचिक अनुभाव के रूप में वर्णित है।

स प्रत्यग्रैः कुटज कुसुमैः कल्पितार्धायतस्मै

प्रीतः प्रीतिप्रमुख वचनं स्वागतं व्याजहार। 4

इसी प्रकार उत्तरमेघ में प्रकृति में रस का आरोप कर अनेक कायिक अनुभावों की चर्चा कालिदास ने की है। वस्तुतः कालिदास ने श्रृंगार के कायिक अनुभावों का मानव व्यापार की अपेक्षा प्राकृतिक व्यापार पर अधिक भरोसा किया है क्योंकि इससे जहाँ मानवीय प्रेम के गाढ़ानुबन्ध को मर्यादित रखने में सफलता पाई है वहीं दूसरी ओर प्रकृति में ऐसी क्रियाओं का आरोप कर अनुभावों का चित्रण करने में सफलता मिली है। यहाँ नीबी बंधन सैथिल्य, अंगरागनिक्षेप आदि कायिक चेष्टाओं का कवि ने श्रृंगारपरक रूप में किया है।

नीवीवन्धोच्छवसित शिथिलं यत्र बिम्वाधराणां

क्षौमं रागाद निभृत करेष्वाक्षिपत्सु प्रियेषु

---

1. पूर्व मेघदूत - 18

2. नाट्यशास्त्र - 7/5

3. दशरुपक - 4/3

4. पूर्वमेघ - 4

अर्चिस्तुंगानविमुखमपि प्राप्य रत्न प्रदीपान्

ह्रीमूढानां भवति विफल प्रेरणा चूर्ण मुष्टिः। 1

सात्विक अनुभाव :- आश्रय के अकृत्रिम अंगविकार को सात्विक अनुभाव कहते है। इसके स्तम्भ, स्वेद, रोमांच, स्वरभंग, कम्प, वैवर्ण्य, अश्रु, प्रलय (मूर्च्छा) इत्यादि भेद कहे गये हैं।

तस्य स्थित्वा कथमपि पुरः कौतुकाधानहेतौः। 2

शंकाष्पृष्टा इव जलमुचस्त्वादृशाः जालमार्गे

धूमोद्गारानुकृगित निपुणाजर्जरा निष्पतन्ति। 3

नूनं तस्याः प्रबलरुदितोच्छून नेत्रं प्रियाया

निःश्वासानामशिशिरतया भिन्नवर्णाधरोष्ठम्

हस्तन्यस्तं मुखमसकल व्यक्ति लम्बालकत्वा

दिन्देोर्दैन्य त्वदनुसरणक्लिष्टकान्तेर्विभर्ति। 4

उक्त उदाहरणों में स्तम्भ, वैवर्ण्य के सफल उदाहरण दिये गये हैं। इसी प्रकार अंगस्फुरण, अश्रु, औत्सुक्य रोमांच के उदाहरण द्रष्टव्य है - सम्भोगान्ते मम समुचितो हस्त संवाहनानां

यास्यत्यूरुः सरसकदली स्तम्भ गौरश्चलत्वम्। 5

अस्त्रैस्तावन्मुहु रुपचितैर्दृष्टि रालुप्यते मे

क्रूरस्तस्मिन्नपि सहते सङ्गम नौ कृतान्तः। 6

संचारी भाव :- इन्हें व्यभिचारी भाव कहा जाता है। वि+अभि+चर् धातु से यह शब्द निष्पन्न हुआ अतएव वाक्य अंग सत्वादि द्वारा विविध प्रकार के रसानुकूल संचरण करने वाले भावों को व्यभिचारी भाव कहा जाता है। स्थायी भाव के साथ इनका सम्बन्ध समुद्र और लहरों जैसा ही है। मम्मट ने इन्हें स्थायी भाव का सहकारी कहा है। इनकी संख्या 33 कही गयी है। मेघदूत के विप्रलम्भ श्रृंगार वर्णन में इन व्यभिचारी भावों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। यहाँ कुछ उदाहरण स्वरुप संचारी भाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

1. ग्लानि :- रत्याद्यायासतृट्क्षुद्भिग्लानिर्निष्प्राणतेहच

वैवर्ण्यकम्पानुत्साहक्षामाङ्गवचनक्रियाः।

श्रम आदि से उत्पन्न मानसिक खिन्नता।

यत्र स्त्रीणां हरति सुखग्लानिमंगानूकूलः। 7

---

1. उत्तरमेघ - 7 2. पूर्वमेघ - 3 3. उत्तरमेघ - 8

4. उत्तरमेघ - 24 5. उत्तरमेघ - 36 6. उत्तरमेघ - 45 7. पूर्वमेघ - 32

2. शंका :- अनर्थ प्रतिभा शंका परक्रौर्यात्स्वदुर्नयात्

कम्प शोषभि वीक्षादिरत्र वर्णस्वरान्यता।

इष्ट हानि की आशंका ही शंका है।

अद्रैः श्रृंगं हरति पवनः किंस्विदित्युन्मुर्खीभिः। 1

3. असूया :- परोत्कर्षाक्षमाऽसूया गर्वदौर्जन्यमन्युजा

दोषोक्त्यवज्ञेभ्रुकुटिमन्थुक्रोधेंगितानिच।

दूसरे के उत्कर्ष को देख मन में दुःखात्मक विचार या ईर्ष्या।

तस्मिन काले नयन सलिलं योषितां खण्डितानां

शान्ति नेयं प्रणयिभिरतो वर्त्म भानोस्त्यजाशु

प्रालेयास्त्रं कमल वदनात् सोऽपि हर्तु नलिन्याः

प्रत्यावृत्तस्त्वयि कररुधि स्यादनल्पाभ्यसूयः। 2

4. श्रम :- श्रमः खेदोऽध्वरत्यादेः स्वेदोऽस्मिन्मर्दनादयः।

परिश्रम के बाद आयी हुई थकावट को श्रम कहते हैं।

यत्र स्त्रीणां प्रियतमं भुजालिंगनोच्छ्वासितानां

मंगलानिं सुरत जनितां तन्तु जालावलम्बा

त्वत्संरोधापगम विशदैश्चन्द्र पादै निशीथे

व्यालुम्पन्ति स्फुटजललवस्यन्दिनश्चन्द्रकान्ताः। 3

5. मद :- हर्षोत्कर्षो मदः पानात्स्खलदंगवचोगतिः

निद्राहासोऽत्र रुदितं ज्येष्ठ मध्याधमादिषु।

धन, रुप, यौवन या मदिरा पान से उत्पन्न घमण्ड का भाव। कालिदास ने निर्विन्ध्या में मदमाती चाल वर्णन में मद की व्यञ्जना की है -

विचिक्षोभस्तनित विहाग श्रेणि काञ्ची गुणायाः

संसर्पन्त्याः स्खलित सुभगं दर्शितावर्तनाभेः। 4

6. धृति :- सन्तोषो ज्ञानशक्त्यादेर्धृतिरव्यग्रभोगकृत्।

संकट में धैर्य धारण करने की क्षमता।

---

1. पूर्वमेघ - 14　　2. पूर्वमेघ - 42

3. उत्तरमेघ - 9　　4. पूर्वमेघ - 29

नन्वात्मानं बहु विगणयन्नात्मनेवावलम्बे। 1

7. <u>चिन्ता</u> :- ध्यानं चिन्तेहितानाप्तेः शून्यताश्वासतापकृत।

इष्ट वस्तु या व्यक्ति के न मिलने पर दुःखात्मक विचार।

प्रत्यासन्ने नभसि दयिताजीवितालम्बनार्थी

जीमूतेन स्वकुशलमयी हारयिष्यन् प्रवृत्तिम्। 2

8. <u>स्वप्न</u> :- सुप्तं निद्रोद्भवं तत्र श्वासोच्छ्वास क्रियापरम्।

निद्रावस्था में किसी का दर्शन।

मामाकाश प्रणिहित भुजं निर्दयाश्लेषहेतो

र्लस्धायास्ते कथमपि मया स्वप्नसंदर्शनेषु। 3

9. <u>स्मृति</u> :- सदृशज्ञान चिन्ताद्यैः संस्कारात्स्मृतिरत्र च

ज्ञातत्वेनार्थभासिन्यां भ्रूसमुन्नयनादयः।

विस्मृत वस्तु या व्यक्ति का पुनर्ज्ञान।

मदगोहिन्याः प्रिय इति सखे ! चेत सा कातरेण

प्रेक्ष्योपान्तस्फुरिततडितं त्वां तमेव स्मरामि। 4

10. <u>उत्सुकता</u> :- कालक्षमत्वमौत्सुक्यं रम्येच्छारतिसम्भ्रमैः

तत्रोच्छ्वासत्वराश्वास हृत्तापस्वेद विभ्रमाः।

अभीष्ट पूव्यर्थ इच्छा।

इत्याख्याते पवनतनयं मैथिलीवोन्मुखीसा

त्वामुत्कण्ठोच्छ्वसित हृदया वीक्ष्य सम्भाव्य चैव

श्रोष्यत्यस्मात् परमविहिता सौम्य सीमन्तिनीनाम्

कान्तोदन्तः सुहृदुपनतः संगमात् किञ्चिदूनः। 5

11. <u>दीनता</u> :- किसी दुःख के कारण नम्रतामयी दुर्दशा।

दैर्गत्याद्यैरनौजस्यं दैन्यं काष्र्यामृजादिमत्।

सन्तप्तानां त्वमसि शरणं तत्पयोद प्रियायाः

सन्देशं मे हर धनपति क्रोध विश्लेषितस्य। 6

12. <u>हर्ष</u> :- प्रसत्तिरुत्सवादिभ्यो हर्षोऽश्रुस्वेदगद्गदाः।

---

1. उत्तरमेघ - 49　　2.पूर्वमेघ - 4　　3. उत्तरमेघ - 46

4. उत्तरमेघ - 17　　5. उत्तरमेघ - 40　　6. पूर्वमेघ - 7

चित्त की आनन्दमयी दशा या स्थिति।

आनन्दोत्तथं नयन्सलिलं यत्र नान्यैनिमित्तै। 1

13. <u>व्रीडा</u> :- दुराचारादिभिर्व्रीडा धाष्ट्र्याभावस्तमुन्नयेत्

साचीकृतांगावरणवैवर्ण्याधोमुखादिभिः।

मानसिक संकोच।

अर्चिस्तुगङानविमुखमपि प्राप्य रत्न प्रदीपान्

ह्री मूढ़ानां भवति विफल प्रेरणा चूर्णमुष्टिः। 2

14. <u>उग्रता</u> :- दुष्टेऽपराधदौर्मुख्यक्रौर्यैश्चंडत्वमुग्रता

तत्र स्वेद शिरः कम्पतर्जनाताडनादयः।

जहाँ कहीं उग्र या क्रोध का प्रदर्शन किया जाय।

क्रीडालीलाः श्रवणपरुषैर्गजितैर्भाययोस्ताः। 3

15. <u>व्याधि</u> :- व्याधयः सन्निपाताद्यास्तेषामन्यत्र विस्तर।

शारीरिक या मानसिक कष्ट।

आधिक्षामां विरहशयने सन्निषण्णैक पार्श्वा

प्राचीमूले तनुमिव कलामात्रशेषां हिमांशोः

नीता रात्रिः क्षण इव मया सार्धमिच्छारतैर्या

तामेवोष्णैविरह महती मश्रुभिर्यापयन्तीम्। 4

16. <u>उन्माद</u> :- अप्रेक्षाकारितोन्मादः सन्निपातग्रहादिभिः

अस्मिन्नवस्था रुदित गीत हासासितादयः।

भ्रान्त चित्त का आचरण।

कामार्ता हि प्रकृति कृपणाश्चेतना चेतनेषु। 5

17. <u>जड़ता</u> :- अप्रतिपत्तिर्जडता स्यादिष्टानिष्टदर्शन श्रुतिभिः

अनिमिष नयन निरीक्षण तूष्णीं भावादयस्तत्र।

शरीर या उसके किसी अंग का निश्चल हो जाना।

प्रत्याश्वस्तां सममभिवैर्जालकैर्मालतीनाम्

विधुद्गर्भः स्तिमित नयनां त्वत्सनाथे गवाक्षे। 6

---

1. उत्तरमेघ - 4 2. उत्तरमेघ - 7 3. पूर्वमेघ - 64

4. उत्तरमेघ - 29 5. पूर्वमेघ - 5 6. उत्तरमेघ - 38

18. वितर्क :- तर्को विचारः सन्देहाद् भ्रू शिरोङ्गुलिनर्तकः।

सन्देह निवारणार्थ विचार-विमर्श।

नन्वात्मानं बहु विगणयन्नात्मनैवावलम्वे

तत्कल्याणि ! त्वमपि नितरां मा गमः कातरत्वम्। 1

19. त्रास :- गर्जितादेर्मनः क्षोभस्त्रासोऽत्रोत्कम्पितादयः।

अनिष्ट या आशंकाजनित अल्प (लघु) भय।

उत्पश्यामि द्रुतमपि सखे मत्प्रियार्थं यियासोः

कालक्षेपं ककुभसुरभौ पर्वते पर्वते ते। 2

संचारी भावों के समस्त लक्षण दशरूपक से उद्धृत हैं। 3

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि महाकवि कालिदास का प्रतिभा विलास खण्डकाव्य या सन्देश काव्य मेघदूत में विप्रलम्भ श्रृंगार की पूर्ण सामग्री एकत्रित की गयी है उसका नायक प्रवासित यक्ष है जो प्रमाद के कारण कुबेर द्वारा प्रिया से दूर जाने के लिए अभिशप्त होता है। विप्रलम्भ श्रृंगार का सैद्धान्तिक विवेचन करते हुए हमने इसके पूर्वराग, मान, प्रवास और करुण तथा अनेक काम दशाओं का उल्लेख किया है। मेघदूत में शापज प्रवाह का ही विस्तृत वर्णन है। प्रिया के चतुर कटाक्षों में नवोढ़ा के अंग-संग अभिलाषा में निमग्न रहने वाला यक्ष मिलन की अत्युग्रता रहते हुए भी प्रिया समागम दुर्लभ हो जाता है। विरह के कुछ मास व्यतीत करते ही आषाढ़ के प्रथम दिन पर्वत सानु (चोटी) से मेघ को आष्लेष देख उसकी वेदना उद्दीप्त हो उठती है और वह अपना शुभ सन्देश भेजने के लिए व्याकुल हो उठता है। बादलों को देखकर सुखी व्यक्ति का हृदय भी प्रिय मिलन के लिए उद्विग्न हो उठता है फिर विरही का तो क्या कहना सुदूर प्रदेश में यक्ष प्रिया के आलिंगन को तरस रहा है।

मेघालोके भवति सुखिनोऽप्यन्यथावृत्ति चेतः

कण्ठाश्लेष प्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे। 4

पावस ऋतु श्रृंगार भावों की चरम उद्दीप्ति का प्रतीक बनकर आती है। विरही यक्ष भावना के आधिक्य के कारण जड़ को भी चेतन समझ बैठा है। अपनी प्रियतमा की जीवन रक्षा के लिए उसे कुशल समाचार भेजने हेतु आनन्दातिरेक से सद्यः विकसित कुटजपुष्पों से उसका स्वागत कर यक्ष ने अपनी चतुराई प्रकट की है।

प्रत्यासन्ने नभसि दयिता जीवितालम्बनार्थी

जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन्प्रवृत्तिम्

---

1. उत्तरमेघ - 49 2. पूर्वमेघ - 23 3. दशरूपक चतुर्थ प्रकाश - धनञ्जय

4. पूर्वमेघ - 3

स प्रत्यग्रैः कुटजकुसुमैः कल्पितार्धाय तस्मै

प्रीतः प्रीतिप्रमुखवचनं स्वागतं व्याजहार। 1

मेघ ने अपनी विवशता बताते हुए कहा कि वायुमण्डल में उसे बहता देख कर पथिकों की स्त्रियाँ प्रिय मिलन की कामना से अभिभूत हो उठेंगी क्योंकि यक्ष विरह पीड़ितों का रक्षक है। उस जैसा पराधीन के अतिरिक्त कौन हतभाग्य होगा जो प्रिया की उपेक्षा करेगा।

संतप्तानां त्वमसि शरणं तत्पयोद ! प्रियायाः

संदेशं मेहर धनपति क्रोधविश्लेषितस्य।

त्वामारूढ़ं पवनपदवी मुद्गृहीतालकान्ताः

प्रेक्षिष्यन्ते पथिक वनिताः प्रत्ययादावश्व सत्यः

कः सन्नद्धे विरह विधुरां त्वय्युपेक्षेत जायां

न स्यादन्योऽप्यहमिव जनोः यः पराधीनवृत्तिः। 2

मेघदूत में उभयपक्षीय प्रेम की मार्मिक व्यञ्जना हुयी है। यक्ष को विश्वास है कि उसकी पत्नी यक्षिणी उसके विरह में वस्त्राभूषण का त्याग कर मलिन वस्त्र वाली, एक वेणी धारण किये होगी। विषयों के प्रति उसका अनुराग समाप्तप्राय हो गया होगा क्योंकि उसका प्रेमी यक्ष प्रवासी हो गया है। उसका दर्शन भी दुर्लभ है। अत्यधिक विरह वेदना के कारण तुषारआहत कमलिनी के समान उसकी कान्ति विवर्ण हो गयी होगी। विप्रलम्भ के भुक्तभोगी यक्ष ने शिशिर मथिता पद्मिनी के रुप में यक्षिणी के रुप सौन्दर्य का जो चित्रांकन किया है, वह अत्यन्त भावप्रद है और यक्षिणी के शोक, विषाद, चिन्ता आदि व्यभिचारियों की व्यञ्जना की है। सर्वप्रथम पहचान हेतु उसके सौन्दर्य का वर्णन इस प्रकार करता है।

तन्वी श्यामा शिखरिदशना पक्व बिम्बाधरोष्ठी

मध्ये क्षामा चकित हरिणी प्रेक्षणा निम्ननाभिः

श्रोणीभारादलस गमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां

या तत्र स्याद्युवति विषय सृष्टि राद्येव धातुः। 3

अब उसका रुप क्षीण कान्ति वाला हो गया होगा -

आधिक्षामां विरहशयने सन्निषण्णैक पार्श्वा

प्राचीमूले तनुमिव कलामात्रशेषां हिमांशोः

नीता रात्रिः क्षण इव मया सार्धमिच्छारतैर्या

तामेवोष्णैविरह महती मश्रुभिर्यापयन्तीम्। 4

---

1. पूर्वमेघ - 4
2. पूर्वमेघ - 7, 8
3. उत्तरमेघ - 22
4. उत्तरमेघ - 29

वह शारिका के साथ सम्भाषण करती हुई प्रिय का ही स्मरण करती है। इस सम्भाषण के माध्यम से यक्षिणी की उत्कंठा की सुन्दर अभिव्यञ्जना हो रही है। पूर्वमेघ में यक्ष की विरह की चिन्ता, अभिलाषा, कथन आदि का ही वर्णन है किन्तु उत्तरमेघ में यक्षिणी की विरह दशाओं का सूक्ष्म चित्रांकन भाव प्रवण कालिदास ने किया है। बात यह है कि साहित्य में पुरुषों के वियोग का वर्णन रुढ़ि मात्र पालन या उभय पक्षीय प्रेम के प्रदर्शन के लिए होता है जबकि स्त्रियों के प्रेम के विरह के अत्यन्त उद्दीपक, मादक, हृदयद्रावक चित्र अंकित करने में कवियों को पूर्ण सफलता प्राप्त हुयी है। नारी का सौकुमार्य, हृदय की तरलता, भावों का आधिक्य इन सबके चित्रांकन में कवियों का मन बहुत लगा है। इससे उसकी अनन्यता, एक पतिव्रत रहने की निष्ठा उसकी गुणासक्ति का ही परिचय उनके विरह वर्णन में मिलता है।

मल्लिनाथ ने इस विरह वर्णन में अनेक काम दशाओं का वर्णन किया है जिसमें नयन संग, मनः संग, संकल्प, जागर, कृशता, अरति, लज्जा, त्याग, उन्माद, मूर्च्छा आदि का उल्लेख किया गया है। इसमें नयन संग पहले ही हो चुका है। मनःसंग का चित्रांकन कालिदास ने इस प्रकार किया है कि वह यक्षिणी मलिन वसन गोद में वीणा रखकर उसके नाम वाले गीतों का स्मरण करती होगी।

उत्संगे वा मलिनवसने सौम्य निक्षिप्य वीणां
मदगोत्रांकः विरचितपदं गेयमुद्गातुकामा
तन्त्री मार्दा नयन सलिलैः सारयित्वा कथञ्चिद्
भूयोभूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती। 1

इस प्रकार यक्षिणी ने उसके विरह के प्रथम दिन से द्वार पर एक-एक फूल रखकर उसकी अवधि गिनती है या संकल्प अवस्था में पूर्वकृत रतिसुख का मन ही मन आनन्द लेती है। इसी प्रकार उसके विरह के दिन कटते होगें मल्लिनाथ ने उसकी जागर अवस्था का वर्णन निम्न श्लोक में माना है।

सत्यापारा महनि न तथा पीडियेद्वि प्रयोगः
शंके रात्रौ गुरुतर शुचं निर्विनोदां सखी ते
मत्संदेशैः सुखयितुमलं पश्य साध्वी निशीथे
तामुन्निद्रामवनिशयनां सौधवातायनस्थः। 2

---

1. उत्तरमेघ - 26
2. उत्तरमेघ - 28

यक्ष को पूर्ण विश्वास है कि दिन में कार्य व्यस्तता के कारण भले ही उसे यक्ष का विरह पीड़ित न करता हो किन्तु रात्रि में एकाकी रहने और मनोविनोद के अभाव में वह अर्धरात्रि तक जागती होगी इस समय में रति सुख के आनन्द की कल्पना कर विरह की सुदीर्घ रातों को व्यतीत करती होगी। लगातार अश्रुपात से वह चन्द्रमा की एक कला मात्र ही शेष रह गयी होगी।

आधिक्षामां विरहशयने सन्निषष्णैक पार्श्वा

प्राचीमूले तनुमिव कलामात्रशेषां हिमांशोः। 1

इस विरह वर्णन में जहाँ यह व्यञ्जित हुआ है कि नायिका इतनी क्षीण हो गयी है कि एक कला शेष चन्द्रमा के समान है और प्रातःकाल होते वह कला भी नष्ट हो जाती है। उसी प्रकार यदि यक्षिणी को मेघ का सन्देश नहीं मिला तो शायद वह जीवित नहीं रहेगी। यक्ष का ऐसा दृढ़ विश्वास उसके अपने प्रेम की भी अनन्यता का द्योतक है। अरति दशा का वर्णन करते हुए कालिदास ने कहा है कि गवाक्ष मार्ग से प्रवेश करने वाले अमृत तुल्य चन्द्र किरणें उसके हृदय को और अधिक दाहक प्रतीत होगीं एवं अत्यन्त दुःख के कारण पक्ष्म बन्द किये हुए मेघाच्छादित, अविकसित स्थल कमलिनी की तरह न जागती न सोती हुयी -

पादानिन्दोरमृत शिशिराञ्जालमार्ग प्रविष्टा

न्पूर्वप्रीत्मा गतमभिमुखं संनिवृत्तं तथैव

चक्षु खेदात्सलिल गुरुभिः पक्ष्मभिश्छादयन्ती

साभ्रेऽहीव स्थलकमलिनी न प्रबुद्धां न सुप्ताम्। 2

यक्ष विरहिणी के चित्त विभ्रम को भी मेघ से बताता है कि यक्षिणी ने विरह के प्रथम दिन से ही कुसुम माला को त्याग कर एक वेणी धारण कर लिया होगा जो शापान्त के पश्चात् उसके द्वारा ही खोली जाएगी। इस प्रकार स्पर्श में क्लेषदायक कठोर, उलझे हुए बालों तथा बिना कटे नाखूनों वाले हाथों से उसकी प्रिया मेघ को दिखाई देगी -

आद्येबद्धा विरह दिवसे या शिखा दामहित्वा

शापस्यान्ते विगलित शुचा तां मयो द्वेष्टनीयाम्

स्पर्श क्लिष्टामय मितन खेना सकृत्सारयन्तीं

गण्डा भोगात्कठिनविषमामक वेणीं करेण। 3

---

1. उत्तरमेघ - 29　　2. उत्तरमेघ - 30　　3. उत्तरमेघ - 32

काव्यशास्त्र में विरह की अन्तिम दशा के रूप में मूर्च्छावस्था का उल्लेख किया जाता है। यद्यपि मरण की भी चर्चा इस प्रसंग में हुयी है। अतः यहाँ यह लिखना समीचीन प्रतीत होता है कि यदि अनिष्ट की प्राप्ति हो गयी या प्रेमी-प्रेमिका में से किसी एक की मृत्यु हो गयी तो वह विप्रलम्भ श्रृंगार न होकर करूण रस में पर्यवसित हो जाएगा। भला यक्ष जैसा प्रेमी प्रिया की मृत्यु का वर्णन कैसे कर सकता है। उसे तो विश्वास है कि अत्यधिक विरह वेदना के कारण आभूषण विहीना वह सुकुमारी नायिका शय्या में बिना हिले-डुले कुछ मूर्च्छित सी अवस्था में पड़ी होगी। ऐसी अवस्था को देखकर निश्चय ही दयालु प्रवृत्ति वाले लोग दुःखी हो जाते हैं।

इस प्रकार कालिदास ने यक्ष यक्षिणी को आश्रय आलम्बन बनाकर उनकी विरह की अरन्तुद वेदना का हृदयद्रावक रूप में चित्रण किया है। उत्तरमेघ में कवि कालिदास ने प्रिया विरह की आकुलता, मार्मिकता, हृदयद्रावकता का चित्रण किया है। वह सब अनुभाव की कोटि में आता है। इसमें शकुन, मलिनता अंगस्फुरण तथा नखक्षत के चिन्हों का उल्लेख मेघ से करता है। आश्रय यक्षिणी की विरह व्याकुलता का पुष्कल वर्णन उत्तरमेघ में किया गया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है -

वामश्चास्याः कररूह पदैर्मुच्यमानोमदीयै
मुंक्ता जालं चिरपरिचितं त्याजितो दैवगत्या
सम्भोगान्ते मम समुचितो हस्त संवाहनानां
यास्यत्युरुः सरस कदली स्तम्भ गौरश्चलत्वम्
तस्मिन्काले जलद यदि सा लब्ध निद्रासुखास्या
दन्वास्यैनां स्तनित विमुखो याममात्रं सहस्व
मा भूदस्याः प्रणयिनि मयि स्वप्नलब्धे कथञ्चि
त्सद्यः कण्ठच्युत भुजलता ग्रन्थि गाढोपगूढ़म्। 1

विरह काल में चित्त बहलाने के कुछ उपायों की चर्चा रूढ़ियों के अन्तर्गत की गयी है जिसमें सादृश्य दर्शन, चित्रदर्शन, प्रियांग, स्पृष्टदर्शन इत्यादि कालिदास का मेघदूत विप्रलम्भ श्रृंगार का ऐसा अगाध रत्नाकर है जिसमें पाठक सहृदय आकंठ निमग्न होकर अनेक रत्नों को प्राप्त कर सकता है। सहृदय रसिकों को यह हृदयावर्जक तो लगता ही है, प्रेमियों के लिए भी मनोरंजन हेतु निम्न उपायों का संकेतन भी करता है।

---

1. उत्तरमेघ - 36-37

1. **सादृश्य वर्णन** - प्रिय को यह विश्वास है कि उसकी प्रियतमा अलौकिक, अपरूप सुन्दरी है। प्रकृति के विभिन्न तत्वों में उसके अंगों का सादृश्य दिखाई पड़ता है। यक्ष भी मेघ से कुछ ऐसा ही कहता है कि वह प्रियगुंलताओं में उसके तन्वंगी रूप को भयभीत हरिणियों में उसके अपांग, मयूर पुच्छों में केश और तरंगों में भ्रूविलासों की समरूपता तो देखता है किन्तु यह दुष्ट विधाता इतना अरसिक हो गया है कि उसकी प्रिया के समक्ष ऐसी कोई वस्तु नहीं बनाई जिसे वह एक साथ प्रिया का दर्शन कर सके -

श्यामास्वंग चकित हरिणी प्रेक्षणे दृष्टिपातं

वक्त्रच्छायां शशिनि शिखिनां वर्हभारेषु केशान्

उत्पश्यामि प्रतनुषु नदी वीचिषु भ्रूविलासान्

हन्तैकस्मिन् क्वचिदपि न ते चण्डि सादृश्यमस्ति। 1

2. **चित्रदर्शन** - यक्ष विरह काठिन्य के दुधर्ष काल को व्यतीत करने हेतु अपनी प्रिया का प्रणयकुपिता रूप में उट्टंकण करना चाहता है तथा अपने को उसके चरणों में गिराकर अपनी भाव विह्वलता व्यक्त करना चाहता है किन्तु भावावेग निःसृत अश्रुओं से चित्र धुल जाता है। उस पर दुर्भाग्य यह है कि दैव को दोनों का समागम सह्य ही नहीं है -

त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलाया

मात्मानं ते चरण पतितं यावदिच्छामि कर्तुम्

अस्रैस्तावन्मुहुरुपचितै र्दृष्टिरालुप्यते मे

क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते संगमंनौ कृतान्तः। 2

3. **स्वप्नदर्शन** - विरहाधिक्य के कारण निद्रा से प्रेमी का 36 का जैसा वैर हो जाता है फिर भी यदि किसी कारणवश नींद आ भी गयी तो मनोवैज्ञानिकों के अनुसार अचेतन मन में अधिकार जमाये प्रिया का चित्र स्वप्न में दिखाई देता है। यक्ष ऐसे स्वप्न दर्शन में प्रिया आलिंगन हेतु जब भुजाएँ ऊपर फैलाता है तब उसके इस विरहाधिक्य पर प्रकृति भी द्रवित हो जाती है।

मामाकाश प्रणिहित भुजं निर्दयाश्लेषहेतो

र्लब्धायास्ते कथमपि मया स्वप्न संदर्शनेषु

पश्यन्तीनां न खलु बहुशो न स्थली देवतानां

---

1. उत्तरमेघ - 44

2. उत्तरमेघ - 45

मुक्ता स्थूलास्तरु किसलयेष्वश्रुलेशाः पतन्ति। 1

प्रियांगस्पृष्ट स्पर्शन दर्शन - प्रेमी की यह विशेषता होती है कि वह सर्वत्र मनुष्य या मनुष्येतर से शेष सृष्टि में प्रिय के रूप में गंध, शब्द आदि का इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त कर लेना चाहता है। यक्ष कहता है कि देवदारू के कोपलों से सृवित दक्षिण पवन का वह इसलिए आलिंगन करता है क्योंकि इसमें प्रिया की गंध मिली हुई है -

भित्वा सद्यः किसलयपुटान् देवदारु द्रुमाणां
ये तत्क्षीरस्नुति सुरभयो दक्षिणेन प्रवृत्ताः
आलिङ्ग्यन्ते गुणवति मया ते तुषारार्द्रवाताः
पूर्वं स्पृष्टं यदि किल भवेदंगमे भिस्त्वेति। 2

इसके साथ ही कालिदास ने गुणकथन, चिन्ता, अभिलाषा, उद्वेग, प्रलाप आदि विरह दशाओं का ऐसा वर्णन किया है कि आगे आने वाले कवियों की उक्तियाँ मेघदूत की उच्छिष्ट सी प्रतीत होती है। मेघदूत के इस अंगीरस की एक अन्य विशेषता ये भी है कि इसमें यक्ष स्वयं अधीर होकर भी पत्नी को धैर्य धारण करने का आश्वासन मेघ के माध्यम से देता है। सच ही कहा गया है कि संयोग और वियोग चक्र के समान है -

नन्वात्मानं बहु विगणयन्नात्मनैवावलम्बे
तत्कल्याणि ! त्वमपि नितरां मा गमः कातरत्वम्
कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दुःखमकान्ततो वा
नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण। 3

संयोग काल की सुखद स्थितियाँ रूपगर्विता नायिका के उस समय दिए गये उपालम्भ भी यद्यपि उस संयोग काल में हास्य मिश्रित प्रेम की व्यञ्जना करते थे। तथापि आज वे स्मृति रूप में आकर कितने त्रासद बन गये हैं। यह भुक्तभोगी ही जान सकता है। गाढ़ालिंगन में बंधी यक्षिणी सोते-सोते स्वप्न में रूदन करने लगी और पूँछने पर जिस दुष्टता से मुस्कुराकर यक्ष को शठनायक की उपाधि से विभूषित किया था आज यह उपालम्भ अत्यन्त कष्टकर प्रतीत होने लगा है -

भूयश्चाह त्वमपि शयने कण्ठलग्नापुरा मे
निद्रां गत्वा किमपि रूदती सस्वनं विप्रबुद्धा
सान्तं र्हासं कथिमसकृत्पृच्छतश्च त्वया मे

---

1. उत्तरमेघ - 46
2. उत्तरमेघ - 47
3. उत्तरमेघ - 49

दृष्टः स्वप्ने कितव ! रमयन्कामपि त्वं मयेति। 1

अन्त में यक्ष अपनी प्रिया को आश्वासन देता हुआ चातुर्मास व्यतीत होने पर शरर्दतु की चाँदनी में विहार करने की अभिलाषा व्यक्त करता है -

शापान्तो मे भुजगशयनादुत्थिते शांगपाणौ

शेषान्मासान्गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा

पश्चादावांविरह गणितं तं तमात्माभिलाषं

निर्वेक्ष्यावः परिणतशरच्चन्द्रिकासु क्षपासु। 2

सारांश यह है कि मेघदूत विप्रलब्ध यक्ष एवं यक्षिणी की विरह व्याकुलता, कातरता के अभिराम चित्र प्रस्तुत करता है। अंगी रसरूप विप्रलम्भ श्रृंगार के यक्ष-यक्षिणी परस्पर आश्रय आलम्बन बने। दोनों के अनुभावों का अधिकांशतः वर्णन है। मेघों का प्रथमोत्थान दर्शन उद्दीपन विभाव है। नायिका द्वारा श्वासोच्छ्वास, शैय्या पर करवटें बदलना, गीत-गायन, सारिका से नायक के प्रति सम्भाषण करना, आभूषणों का परित्याग करना, भूमि पतन अनुभाव है तथा आश्रय बने यक्ष द्वारा आलिंगन के लिए हाथ उठाना चित्र बनाकर चरणों में गिरना, प्रिय के रूप सौन्दर्य का स्मरण, संयोगकालीन क्रीडाओं का स्मरण, मेघ से प्रार्थना करना आदि अनुभावों का उल्लेख किया है। विषाद, दैन्य, चिन्ता, औत्सुक्य, मोह, चिन्ता, वितर्क, क्रीडा, व्याधि, त्रास, उन्माद आदि व्यभिचारी भावों की सुन्दर व्यञ्जना स्थान-स्थान पर मिलती है।

शारिका सन्देश का अंगी रस -

पूर्व पृष्ठों में मेघदूत के अंगी रस का शास्त्रीय विवेचन विप्रलम्भ श्रृंगार के रूप में करके यक्ष-यक्षिणी के विरह की शास्त्रीय दशाओं के साथ तज्जन्य वैशिष्ट्य का वर्णन किया है जिसमें कहा गया हे कि मेघदूत के नायक और नायिका साधारण मानव हैं। अतः इनके विरह वर्णन में श्रृंगार रस के स्थायी भाव का विवेचन किया गया है।

शारिका सन्देश में शारिका सन्देश एक भिन्न धरातल पर प्रस्तुत की गयी रचना है जिसमें श्रीकृष्ण अनुरागिनी कोई गोपी आश्रय और रसिक शिरोमणि श्रीकृष्ण इसके आलम्बन है, अतः यहाँ श्रृंगार रस का वर्णन न होकर मधुर रस का वर्णन मानना चाहिए। यद्यपि आदिकालिक प्राक्तन आचार्यों ने मुख्य रूप से चार और विस्तार के रूप में आठ तथा परवर्ती आचार्यो ने शान्त रस को जोड़कर नौ रस को ही मान्यता प्रदान की है। भक्ति रस की स्थापना होने पर इसका शास्त्रीय विवेचन संस्कृत के पुराण एवं भक्ति ग्रन्थों में मिलता है। मधुर

---

1. उत्तरमेघ - 51 2. उत्तरमेघ - 50

रस की निगूढ़ व्यञ्जना हुई है, अतः अति संक्षेप में मधुर रस के शास्त्रीय विवेचन की यहाँ आवश्यकता प्रतीत होती है।

विभिन्न युगों में विविध धर्म साधना मार्गो के साहित्य में मधुर रस का जैसा वैविध्यपूर्ण स्वरूप वर्णित किया गया है वैसा अन्य रसों का वर्णन दुर्लभ है। साधकों, सन्तों, भक्तों ने अपनी अभिव्यक्तियों में प्रकृति और पुरुष की प्रणयलीला, जीवात्मा और परमात्मा के आध्यात्मिक परिणय प्रेमोल्लास तथा भक्त भामिनी और भगवान के षडैश्वर्य सम्पन्न शाश्वंत आन्नद केलि विलास की जैसी मार्मिक अभिव्यञ्जना की है। दिव्य मनोराग की शतशः उद्‌भावनाएँ की हो उसे श्रृंगार विषयक रति या देव विषयक रतिजन्य भाव मानना समीचीन प्रतीत नहीं होता। वस्तुतः मधुर रस मानव मन की सहज वृत्ति की सर्वोत्तम परिणति है। यह भक्त और भगवान, ब्रह्म और उसकी शक्तियों के पारस्परिक मधुर भाव बन्धन की उत्कृष्टतम अभिव्यक्ति है। इस रसराट् की प्राप्ति हेतु अनुरागी मन की आतुरता उसके निस्सीम आनन्दोदधि में निमग्न होकर सतत् रसास्वादन करने की आकांक्षा सगुण ईश्वर की ऐश्वर्य माधुरी के साथ उसकी लीला माधुरी का कोमल, कमनीय, कल्पना करना मधुर रस ही कहलाता है।

भक्तिकालीन शास्त्रीय ग्रन्थों में भक्ति की जब महत्ता प्रतिपादित हुई तो इसे ज्ञान, कर्म और योग से श्रेष्ठ कहा गया।

नारद भक्ति सूत्र में लिखा है- सा तु कर्म ज्ञान योगेथ्याऽधिकतरा। (नारद भक्ति सूत्र, 25)

इस भक्ति के उद्रेक हेतु विषय त्याग, सत्संग, हरिगुणादि कीर्तन, संतकृपा, निष्कामता, समदर्शिता, सदाचरण, कामनावांक्षाविकार रहित, विमलमानस में यह भक्ति आती है। इस भक्ति को मुख्य और गौण वैधी और रसानुगा, साधन और साध्य, नवधा भक्ति एवं एकादश आसक्तियों के रूप में वर्णित किया गया है। भक्ति रसामृत सिन्धु में भक्ति के सामान्य और उत्तमा एवं उत्तमा के अंतर्गत साधन, भाव और प्रेमभक्ति को सर्वोपरि स्थान दिया गया है।

आद्या सामान्य भक्त्याद्‌या द्वितीया साधनांकिता

भावाश्रिता तृतीयात्र तुर्य्या प्रेमनिरूपिका

सा भक्तिः साधनं भावः प्रेमोचेति त्रिधोदिता। 1

साधन भक्ति प्राथमिक अवस्था है। इससे ही भाव-भक्ति विकसित होती है। इस साधन भक्ति के वैधी भक्ति और रागानुगा भेद कर स्वामी सेवक भाव, विधि निषेध का विचार षोडशोपचार नवधाभक्ति का समावेश वैधी भक्ति में किया है। रागानुगा भक्ति के बाद ही मधुर भाव का प्रादुर्भाव होता है और यही भक्ति कृष्ण के क्षेत्र में उज्ज्वल

---

1. हरिभक्ति रसामृत सिन्धु - पूर्वलहरी - 1/7

रस के रूप में वर्णित है।

वैष्णव रस साधन के अन्तर्गत वैष्णव आचार्यो ने मधुरा रति को प्रधान रस मानकर राधाकृष्ण व्रजबल्लभाएँ वृंदावन आदि विभावादिकों से आलम्बन और स्थायी भाव मधुरारति है।

वक्ष्यमाणैर्विभावाद्यैः स्वाद्यतां मधुरारतिः

नीता भक्तिरसः प्रोक्तौ मधुराख्यो मनीषिभिः। 1

स्थायी भावोऽत्र श्रृंगारे कथ्यते मधुरारति। 2

इसमें श्रीकृष्ण के गुण, चेष्टा, अंग सौरभ, वंशी स्वरादि उद्दीपन विभाव है। स्मित, नृत्य गीतादि अनुभाव है। स्तम्भ, रोमांच आदि सात्विक अनुभाव है। इस प्रकार युक्त विभावों अनुभावों और संचर्यादिकों द्वारा जब सहजात शुद्ध स्नेह धारानुकारिणी भक्ति महाबोधजा सात्विक रति रूप भाव या वृत्ति भगवान के माहात्म्य बोध के साथ नाना भूमिकाओं में विकसित होकर जब भक्त जनों के हृदय में रसास्वादन की स्थिति तक पहुँचते हैं। इसे ही मधुर रस की संज्ञा दी गयी है। इस मधुरारति में स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग, भाव और महाभाव की दशाओं का मार्मिक रूप मधुराभक्ति उपासकों में मिलती है। इस रस को उज्ज्वल रस भी कहा गया है। उज्ज्वल नीलमणि ग्रन्थ में इसके काव्यशास्त्रीय एवं भक्तिशास्त्रीय रूपों की विस्तृत चर्चा है। रूप गोस्वामी ने हरिभक्ति रसामृत सिन्धु में भी इसी भक्ति का प्रतिपादन किया है जिसमें कृष्ण रति स्थायी भाव है। इसके स्वार्था और परार्था दो भेद कर तत्पश्चात् इन दोनों के अनेक रूपभेद कहे गये हैं। यह मधुर रस अत्यन्त उज्ज्वल मेद्य एवं पवित्र हैं। श्रृंगार रस से इसका मूलभूत अन्तर है। मानव जगत में परस्पर आकर्षण-विकर्षण, शारीरिक, प्राणिक, मानसिक और आन्तरात्मिक चार स्तरों पर होता है। श्रृंगार बहिर्मुख प्राणिक आवेग है जबकि मधुर रस अलौकिक तथा इसकी साधना अत्यन्त दुरुह कही गयी है। मधुर रस के अधिकारी के रूप में प्रीतिमार्गी, प्रतीतिमार्गी और प्रीतिमार्गी क्रमशः उत्तरोत्तर विकसित अवस्था कही गयी है। निखिल रसानन्दमूर्ति परब्रह्म उनके विग्रह एवं चिन्मयी शक्तियाँ या बल्लभाएँ इस मधुर रस के विभाव है।

मधुर रति के भेद - स्थायी भाव मधुरारति के अनेक भेद एतद्विषयक ग्रन्थों में कहे गये हैं। अभियोग, विषय, सम्बन्ध, अभिमान, तदीय विशेष उपमा और स्वभाव की दृष्टि से इसके सप्त भेद कहे गये हैं जिसकी चरमसीमा महाभाव की दशा प्राप्त करना है।

1. उज्ज्वलनील मणि पृ0 - 5
2. उज्ज्वलनील मणि पृ0 - 388

यह महाभाव सम्भोग विलास की अत्यन्त चमत्कारी उर्मियों से प्रादुर्भूत होता है।

सर्वाद्भुत विलासोर्मि चमत्कार करश्रिय

संभोगेच्छा विशेषोऽस्या रतेर्जातु न भिद्यते। 1

वस्तुतः मधुरारति के उपासक अन्तर्मन में कृष्णपरक लीलाओं का स्मरण करते हुए एक दिव्य, सूक्ष्म, अलौकिक, महाभावोचेत, गोपी शरीर की परिकल्पना करते हैं जिसके माध्यम से कृष्ण लीलाओं का आनन्द अन्दर ही अन्दर लेते रहते हैं। महाभाव के रुढ़ और अधिरुढ़ दो भेद कहे गये हैं।

मुकुन्द महिषीवृन्दैरप्य सावतिदुर्लभः।

व्रजदेव्येक संवेद्यो महाभावारव्ययोच्यते।।

वरामृत स्वरूप श्रीः स्वं स्वरूपं मनो नयेत्।

स रुढ़श्चाधि रुढ़श्चेत्युच्यते द्विविधो बुधैः।। 2

अधिरुढ़ महाभाव मोदन और मादन दो रूपों में विभक्त है। इसी प्रकार कृष्णलीला में सम्मिलित होने वाली कान्ताओं के स्वकीया और परकीया दो भेद तथा लक्ष्मीगण, महिषीगण और व्रजांगनागण इन भक्ति ग्रन्थों में उल्लिखित है। वस्तुतः परकीयाभाव मधुर रस का चरम भाव है। वैष्णव रस साधना का यही परमादर्श है इसी को आधार लेकर आत्माएँ अपने आपको सर्वभावेन कृष्ण को समर्पित करती रही है।

उपर्युक्त पंक्तियों में भक्ति शास्त्रोक्त दृष्टि से मधुर रस के आलम्बन, उद्दीपन, अनुभाव, विभाव आदि की यत्किञ्चित चर्चा कर उपासक ने महाभाव या दिव्य देह की प्राप्ति को चरम लक्ष्य माना गया है। यहाँ संक्षेप में इस भाव की उपासना का क्रमिक विकास प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे यह सिद्ध हो सके कि शारिका सन्देश का मुख्य अंगीरस उपर्युक्त मधुरारति ही है। साध्य-साधक के महामिलन को प्रियतम प्रिया के मधुर मिलन द्वारा व्यक्त करने की पद्धति अत्यन्त प्राक्तन काल से चली आ रही है। वैदिक काल से ही जीवात्मा-परमात्मा के मधुर भाव की अभिव्यञ्जना यज्ञ कर्मो के लिए प्रयुक्त प्रतीकों के माध्यम से की जाती रही है। स्त्री, अग्नि, पुरुष समिधा, गुप्तांग ज्वाला, आकर्षण धूम, आनन्द चिनगारी और रेत आहुति है।

शक्ति और शक्तिमान का मिलन तंत्रवाद का मूलाधार है। शक्ति सहित देवता की उपासना, मंत्र साधना, भगवान की रति लीलाओं का ध्यान कृष्ण और रामभक्ति की उपासना में इसी मधुर भाव की अभिव्यञ्जना आगम शास्त्रों में पुराणों में अवतारी शक्तियों की दाम्पत्य परक व्याख्या इसी के निदर्शन है। तंत्रशास्त्र में स्त्री-पुरुष

1. उज्ज्वलनील मणि पृ0 - 413

2. उज्ज्वलनील मणि पृ0 - 462 - 63

के सहवास को कमल कुलिश साधना प्रज्ञा और उपासक अद्वैत महामुद्रा साधना महासुखवाद और पंचमकार मे इसी रस के दर्शन होते हैं। नाथ सम्प्रदाय एवं उससे विकसित अन्य साधना पद्धतियों में शिवशक्ति सामंजस्य वज्रोली, सहजोली मुद्राओं की साधना, चन्द्र सूर्य संगम तथा कापालिकों की साधना में इसी मधुरारति को मूलाधार माना गया है। दक्षिण के आलवार सन्तों आलमन्दार संहिता, वृहत सदाशिव संहिता, हरवंश पुराण में हल्लीशक कथाएँ एवं भागवतोक्त युगुलोपासना, गीतगोविन्द में वर्णित राधा-कृष्ण की प्रणय लीलाओं का गायन रसास्वादन कर इन भक्तों ने मधुरारति को सर्वश्रेष्ठ रस रूप में निरूपित किया है। गोदा अन्दाल तथा दक्षिण के अनेक सन्तों ने अपने काव्य ग्रंथों में रसिक भाव से श्रीकृष्ण की उपासना कर इस महाभाव का प्रवर्तन किया है। जिस प्रकार उत्तर भारत में वल्लभाचार्य चैतन्य स्वामी राधा वल्लभीय एवं हरदासी सम्प्रदाय के भक्तों ने राधाकृष्ण के या गोपी कृष्ण के मधुर गीतों की अभिव्यञ्जना कर मधुर रस का दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक और सैद्धान्तिक आधार प्रस्तुत किया है, उसी प्रकार केरल, कर्नाटक में कृष्णलीला सम्बन्धी रसिक भाव की उपासना का प्रचार दसवीं शताब्दी से लेकर अत्यन्त परवर्ती काल तक बहुविध रूपों में रहा है। शारिका सन्देश भी इसी श्रेणी का एक सन्देश काव्य है, जिसमें किञ्चितरूप गर्विता गोपी के कुपित प्रणयाभिमान से कृष्ण उसका परित्याग कर सुदूर दक्षिण में जा बसते हैं तथा गोपी को जब कृष्ण प्रवास का ज्ञान होता है तो उसका हृदय द्राक्षारस की भाँति द्रवित होकर पुनः कृष्ण समागम की आकांक्षा हेतु शारिका के द्वारा अपने हृदयस्थ अन्तर्ज्वाला की अभिव्यञ्जना सन्देश रूप में करती है। अतः वैष्णव रस साधना से प्रभावित उसे परम्परा रूप में प्राप्त कर रामपाणिवाद ने शारिका सन्देश में जिस गोपी महाभाव की अभिलाषा सन्देश प्रेषण और पुनः कृष्ण की प्राप्ति का उल्लेख किया है, उसकी मनोवैज्ञानिक,दार्शनिक और काव्यशास्त्रीय रूप का निदर्शन पूर्व पंक्तियों में पर्याप्त रूप में कहा जा चुका है। यहाँ काव्यशास्त्र की दृष्टि से अंगी रस के रूप में मधुरारति को स्वीकार कर उसी का व्यावहारिक विश्लेषण किया जा रहा है।

<u>शारिका सन्देश में आलम्बन विभाव</u> - पहले कहा जा चुका है कि परब्रह्म श्रीकृष्ण दिव्य गुणों से युक्त पुरुषोत्तम इसके आलम्बन है। इस हेतु रामपाणिवाद ने गोपी को आश्रय बनाकर कृष्ण सौन्दर्य का चित्रांकन अत्यन्त भव्य एवं कामशास्त्रोक्त उपमानों के उपयोग से किया है।

मौलौ तावन्मणिमय किरीटाञ्चितं कुञ्चिताग्र
भ्रूवल्लीकं कुवलयदलस्पर्धि नेत्रद्वयीकम्
कर्णोद्‌धूर्णन्मकरमणिमत्कुण्डलं गण्डलम्बि
स्वर्णाम्भोजप्रघटित शिरश्शेखर स्रङमनोज्ञम्।

त्वत्तुण्डश्री तुलनाविलसद् घोणमेणाङविम्ब
च्छायास्तेयं प्रवण वदनं पक्व बिम्वधरोष्ठम्
कम्बुग्रीवं कर धृत कशाकम्बु कम्राम्वदालि
श्यामश्री मत्तरल तुलसी दाम दोरन्तरालम्
मुक्ताहारोन्मिलितवन मालाब्जमाला कलापम्
तप्त स्वर्णाभरण किरण श्रेणि शोण प्रकाशम्
पञ्चत्काञ्ची पटलघटनो सङ क्वणत्किंकणीक
श्रेणी बिम्ब प्रचुर रुचिर स्फीत पीताम्बराढ्यम्।
मञ्जीरालङ्करण चरणाम्भोरुहं भूसुराणाम्
अम्भोजादि प्रसवा निकरैरर्चितं श्री पादाग्रम्
नेत्रानन्दन्निखिल जगतां गात्रमापादचूडं
पश्यन्तीतत्सफलय दृशौपार्थ सूतस्यविष्णोः। 1

तात्पर्य यह है कि योगी या ज्ञानी ब्रह्म स्वरूप की मीमांसा चाहे जिस रूप में करें किन्तु गोपी भक्ति भावापन्न उपासक भगवान की इसी रूप माधुरी, प्रेममाधुरी के अमृतरस का मधुपान करना चाहती है, जिनके सिर मोरमुकुट, देह कान्ति नीरज माला सदृश, पीताम्बर वेष्टित शरीर, अधर विम्बाफल के समान अरूण राग रञ्जित और मुख पूर्णेन्दु के समान प्रोद्भासित हो रहा है जिनके चरण कमलों से सारा संसार आप्यायित है। ऐसे रूप माधुरी वाले आलम्बन श्रीकृष्ण को छोड़कर गोपियाँ अपनी कुलकानि (लज्जा) के परित्याग में विलम्ब नहीं करती हैं।

शारिका सन्देश की आश्रय गोपी है जो कान्ता भेद से व्रजागंनागण कृष्ण वल्लभा की दृष्टि से परकीया है। वस्तुतः यह गोपी जिसे अपने रूप का अभिमान हो गया था। कृष्ण को अपना अनन्य दास समझ कर काम पीड़ित होते हुए भी थोड़ी देर के लिए कुन्ज में छिप जाती है। काव्यशास्त्र की दृष्टि से इस भाव को कुट्टमित भाव कहा जा सकता है। सामान्यतः यह केलिकलह में झूठे रोष का प्रदर्शन होता है। रामपाणिवाद ने इसी आश्रय गोपी के मनोभावों को इस रूप में व्यक्त किया है।

काचिद् गोपी कलित कलह प्रक्रमा चक्रपाणौ
कामार्ताऽपि क्वचन यमुनाकूल कुञ्जे निलीना

1. शारिका सन्देश - 39, 40, 41, 42

कञ्चित्कालं कथमपि विनीयाक्षमा निस्सरन्ती

नैवापश्यन्नलिननयनं देवमेनं मुकुन्दम्। 1

<u>मधुर रस के भेद</u> - वैष्णव रस साधना में मधुरारति को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। विपर्यस्तप्रतिफलन के कारण जड़ जगत में जिस मधुर रस को निम्नस्थ कहा गया है। चिज्जगत में वही सर्वश्रेष्ठ, सर्वराट् की उपाधि से विभूषित किया गया है। इस मधुर रस के अनेक उपभेद वैष्णाचार्यो ने किया है। रूप गोस्वामी ने उज्ज्वल नीलमणि में श्रृंगार भेद प्रकरण के अन्तर्गत संभोग और विप्रलम्भ के उपभेदों का विस्तृत विवेचन किया है। संभोग श्रृंगार के अन्तर्गत जाग्रदावस्था, स्वप्नावस्था, संक्षिप्त संकीर्ण समृद्धवान, सम्पन्न तथा विप्रलम्भ के अन्तर्गत पूर्वराग- प्रौढ़, सामंजस्य, साधारण, मान- सहेतुक, अहेतुक, प्रेम वैचित्र्य, प्रवास- अदूर और सुदूर रूपों की चर्चा की है।

1. <u>संयोग मधुरारति</u> - शारिका सन्देश में संयोग मधुरारति के एक दो उदाहरण उद्धृत है, जिन्हें हम संक्षिप्त और संकीर्ण रूप में कह सकते है। शारिका से सन्देश सुनकर श्रीकृष्ण वृन्दावन आकर उस गोपी के विरह ताप को परिरम्भण, आलिंगनादि से दूर किया ऐसा स्वयं शारिका ने देखा है। रामपाणिवाद ने लिखा है कि कृष्ण और गोपी परस्पर आश्रय, आलम्बन वृन्दावन के निभृत कुञ्ज, यमुना की लहरें, शीतल मन्द सुगन्धित वायु, उद्दीपन सात्विक अनुभाव- परिरम्भण और आलिंगनादि कायिक तथा आवेग, हर्ष संचारियों से इस संक्षिप्त श्रृंगार की व्यञ्जना की है।

तत्रापश्यन्तदनु यमुना वीचिवातावधूत

प्रौढ़ामोद प्रसर विकसत्पुष्प पुञ्जे निकुञ्जे

व्रीडासंग प्रणमित मुखीं वासुदेवेन साकं

क्रीडन्तीं सा सकुतुकमना हन्त ! तामेव गोपीम्। 2

इत्थंतस्या विरह दहनं शीतवाणी सुधाभिः

नीत्वा शान्ति निविऽपरिरम्भादि सम्भोगलम्भी

चितानन्दं समुपजनयन् देववाहिन्यधीशः

स्वस्थानं द्राक् पुनरूपगतः पातु वो वासुदेवः। 3

---

1. शारिका सन्देश श्लोक - 1

2. शारिका सन्देश श्लोक - 117

1. शारिका सन्देश श्लोक - 118

2. <u>विप्रलम्भ मधुरारति</u> - रूप गोस्वामी ने विप्रलम्भ के चार भेद माने हैं। पूर्वराग, मान, प्रेमवैचित्र्य और प्रवास पूर्वराग के विभाग प्रौढ़ सामञ्जस्य और साधारण भेद किए हैं। शारिका सन्देश में अहैतुक मानजन्य मधुरारति के साथ सुदूर प्रवासजन्य विप्रलम्भ श्रृंगार का चित्रांकन किया है।

रामपाणिवाद ने लिखा है कि गोपी शारिका से स्वयं यह कहती है कि अज्ञानवश बनावटी प्रणय कोप के कारण वासुदेव हरि पश्चिम समुद्र के किनारे केरल में अम्बल्पुल देवालय में प्रवास कर रहे हैं।

अज्ञानान्मां प्रणयकलहे वर्तमानां समानां
त्यक्त्वा सद्यः स रवलु गतवान् वल्लभे वासुदेवः
पाश्चात्यम्भोनिलय निकटे केरले देव वाहि
न्याख्ये मुख्ये निवसति किल श्रीपतिः श्री निकेते। 1

<u>उद्दीपन विभाव</u> - मधुर रस के उद्दीपन विभाव के रूप में आलम्बन के गुण, नाम, चरित्र, रूप, लावण्य, मार्दन तथा प्रकृति को भी सम्मिलित किया गया है। तात्पर्य यह है कि कायिक गुण उद्दीपन, चरित्र उद्दीपन, मण्डन उद्दीपन और तटस्थ उद्दीपन की चर्चा हरिभक्ति रसामृत सिन्धु एवं उज्ज्वल नीलमणि में की गयी है। 2-3

शारिका सन्देश में एक-दो उदाहरण द्रष्टव्य है -

1. <u>तटस्थ उद्दीपन विभाव</u> - इसके अन्तर्गत नायिका-नायक से असम्बद्ध प्राकृतिक वस्तुएँ आदि आती है। जैसे-

गोपस्त्रीणा मनुकमनु कालिन्दि केली वनान्ते
चूताशोक प्रसव सर सामोदकान्ते वसन्ते
सा संक्रीडन्मधुकर वधू भाजि संक्रीडमानं
नानारूपं नलिननयनन्नौमि नारायणं त्वाम्। 4

कायिक उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत रामपाणिवाद ने कृष्ण के उन क्रिया-कलापों का उल्लेख किया है, जिसमें उन्होनें विभिन्न राक्षसों का वध एवं कालिय दमन किया था। आश्रय गोपिका इन्हीं गुणों का स्मरण कर अपने हृदय को आश्वस्त करती है कि ऐसे कृष्ण निश्चय ही उसकी उद्दीप्त काम लालसा को पूरा कर आप्यायित करेगें।

---

1. शारिका सन्देश श्लोक - 9
2. हरिभक्ति रसामृत सिन्धु, दक्षिणविभाग, पृ0 - 205
3. उज्ज्वलनील मणि पृ0 - 5
4. शारिका सन्देश श्लोक - 81

आगस्कारानघव कतृणावर्त्त मुख्यान मित्रान्

मायाचुञ्चूनपि हितरसा मारयन्तं भवन्तम्

मायामर्त्यं कमपि निजया मायया मोहयिष्यन्

वत्सस्तेयं व्याधित विधि रित्येत देवाद्भुतं मे।

काकोलाग्नि ग्लापित यमुनापाथ सः कालिया

हे! रङधिक्षेपप्रवणित फणाशृंग रंग स्थलेषु

प्रारब्धास्त्वं प्रचटुल तुला कोटि-कोटि प्रधर्षे

स्फारोद्दीप्रस्फुटत राशिरोरत्न दीपेषु नृत्तम्। 1

वाचिक उद्दीपन विभाव - इसके अन्तर्गत रामपाणिवाद ने लिखा है कि शारिका से विरह सन्देश सुनकर कृष्ण ने उनकी कामना की पूर्ति का आश्वासन देकर अपने आने की बात कही है, जिसे सुनकर निश्चय ही वह गोपी अत्यन्त आह्लादित हो गयी होगी -

भद्रे! गच्छ! प्रिय सखितमां गोपिकामेत्य दिष्ट्या

वर्धस्वेति प्रवंद ! वयमप्याग मिष्यामि एव

इत्यादिष्टा संजल कशा धारिणा शारिका सा

प्रत्यावृत्ता गगन गमना गोपिका माससाद। 2

मधुर रस के अनुभाव विधान - वाणी तथा अंग संचालन की जिन चेष्टाओं एवं क्रियाओं से आलम्बन तथा उद्दीपन आदि के कारण आश्रय के हृदय में जाग्रत भावों का साक्षात्कार होता है, उन्हें अनुभाव कहते हैं। विश्वनाथ ने लिखा है - उद्बुद्धं कारणैः स्वैः स्वैरबहिर्भाव प्रकाशयन्। 3

काव्यशास्त्र में अनुभावों की संख्या अनेक हैं। सामान्यतः इन्हें कायिक, मानसिक, वाचिक, सात्विक, आहार्य आदि रूपों में विभक्त किया जाता है। कृष्ण के चले जाने पर विरह विधुरा गोपी विभिन्न मार्गो में कृष्ण को ढूँढती हुयी घूमती फिरती है। यहाँ हम उसके कायिक अनुभाव की अभिव्यक्ति मान सकते हैं।

इत्थंङकारं विलपनपरां तत्र वृन्दावनान्ते

सम्भ्राम्यन्तीं मधु विजयिनों मार्गणामाचरन्तीम्

आभीरीं तामधिक विधुरां काचिदाकाशवाणी

---

1. शारिका सन्देश श्लोक - 76-77
2. शारिका सन्देश श्लोक - 116
3. साहित्यदर्पण - 3/132

साभिप्राया सपदि सरसं सान्त्वयामासगूढ़म्। 1

<u>वाचिक</u> - इसके अन्तर्गत आश्रय की वाचिक क्रियाओं का वर्णन किया जाता है। कृष्ण से विछुड़ी आर्तनाद करती हुयी यह गोपी कहती है -

निर्गच्छन्ती व्रततिवलयात्तीव्र विश्लेषतापा

नापश्यं त्वामखिल जगदानन्द ! वृदांवनान्ते

हा! हा! मोहं बत ! गतवती रोरुदर्त्यार्त्तनादम्

किं किं नाम व्यसनमसहं नन्वहं नान्वभूवम्। 2

<u>सात्विक</u> - भरतमुनि ने अनुभावों को सात्विक इस लिए कहा है कि इनका अनुभव विशेष मनोवेग से ही सम्भव है। साहित्यदर्पण के अनुसार सत्व स्वात्मविश्राम अर्थात रस को प्रकाशित करने वाला आन्तर्धर्म से सम्बद्ध रहने के कारण इन्हें सात्विक अनुभावों की संज्ञा दी गयी है।

नाट्यशास्त्र में हर्ष, भय, विस्मय, विषाद, लज्जा आदि को सात्विक भाव कहा गया है। इन्हें क्रमशः स्तम्भ, स्वेद, रोमान्च, स्वरमंग, वेपथु, वैवर्ण्य, अश्रु और प्रलय रूप में चित्रित किया गया है -

स्तम्भः स्वेदोऽथ रोमाञ्चः स्वरभंगोऽथ वेपथुः

वैवर्ण्यमश्रु प्रलय इत्यष्टौ सात्विकाः स्मृता। 3

शारिका सन्देश से कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है -

<u>स्वरभंग</u> - जहाँ भय, क्रोध, हर्ष, मद वृद्धावस्था रोगादि के कारण स्वर गद्गद हो जाता है, वहाँ स्वरभंग नामक सात्विक अनुभाव कहा जाता है। विश्वनाथ ने लिखा है -

मदसंमद पीडाद्यैवैस्र्यं गद्गदं विदुः। 4

गोपी आर्तनाद करती हुयी कृष्ण वृतान्त की चर्चा करती है -

हा! हा! कष्टं रुदिहि रुदिहीत्यारुदन्नार्त्तनादं

त्वद्वृतान्तं वनतरुलताः पृच्छ पृच्छेत्यपृच्छन्। 5

<u>अश्रु</u> - आनन्द, अमर्ष अथवा निर्निमेष दृष्टि देखने से आँखों से आँसुओं के बहने को अश्रु नामक सात्विक भाव कहा गया है।

---

1. शारिका सन्देश श्लोक - 3
2. शारिका सन्देश श्लोक - 49
3. साहित्यदर्पण कारिका सं0 - 135
4. साहित्यदर्पण - 138
5. शारिका सन्देश श्लोक - 92

अश्रु नेत्रोद्भवं वारि क्रोध दुःख प्रहर्षजम्। 1

शारिका सन्देश का निम्न श्लोक -

सायं प्रातस्सतत गगलितैरश्रु वारिप्रवाहैः

स्नाता वातातपहिम पयो वर्ष बाधास्सहन्त्यः। 2

<u>**प्रलय**</u> - जहाँ श्रम, मूर्च्छा, हर्ष, अभिघात और मोह से उत्पन्न निष्चेष्टता, निष्कंपता हो यह प्रलय की सात्विक अवस्था है।

प्रलयः सुख दुःखाभ्यां चेष्टाज्ञान निराकृतिः। 3

शारिका सन्देश से - किं जागर्मि स्वपिमि किमहं किं मुहुर्मोमुहीमि

क्वाहं वर्ते क इव समयः किं दिवा किं निशा वा।

अद्राक्षं त्वामभिदिशमहं यद्यपि भ्रान्ति हेतोः

अप्राक्षं च क्व नु स गतवानित्य गान्वामृगान्वा। 4

वैष्णव रस साधना में इन आठ सात्विक भावों स्निग्ध, दग्ध, रुक्ष तीन वर्गो में विभाजित किया गया है। स्निग्ध के मुख्य और गौण तथा शेष दोनों रूपों के धूमागित, ज्वलित, दीप्त और उद्दीप्त नामक चार भेद निर्धारित किए गए हैं। 5

<u>**मधुर रस के संचारीभाव एवं शारिका सन्देश**</u> - भरत के अनुसार रस के सम्बन्ध में जो अन्य वस्तुओं की ओर संचरण करे उसे ही संचारी भाव कहा जाता है। इसी आधार पर धनञ्जय ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि जो भाव विशेष रूप से स्थायी भाव की परिपुष्टि करते हैं और जो समुद्र की लहरों के समान स्थायी भाव के अन्तर्गत उदित और पर्यवसित होते रहते हैं उन्हें संचारी या व्यभिचारी भाव की संज्ञा दी गयी है -

विशेषादाभिमुख्येन चरन्तोव्यभिचारिणः।

स्थायिन्युन्मग्न निर्मग्नाः कल्लोला इव वारिधौ।। 6

इसी प्रकार साहित्यदर्पणकार ने व्यभिचारी भाव को इस प्रकार परिभाषित किया है -

विशेषादाभिमुख्येन चरणा द्वयभिचारिणः

---

1. साहित्यदर्पण - 139
2. शारिका सन्देश - 95
3. साहित्यदर्पण - 139
4. शारिका सन्देश - 51-52
5. हरिभक्ति रसामृत सिन्धु - दक्षिण विभाग- 3/1-2
6. दशरूपक चतुर्थ प्रकाश 7 कारिका

स्थायिन्युन्मग्न निर्मग्नास्त्रयस्त्रिशञ्च तद्विदाः। 1

1. **आवेग** - वस्तुतः सम्भ्रम या घबराहट को आवेग कहते हैं। इसका लक्षण देते हुए **विश्वनाथ** ने लिखा है -

आवेगः संभ्रमस्तत्र हर्षजे पिण्डितांगता। 2

संकल्पोपागमित रमणीयांगमालिंगषं

मत्युद्गादं तदपि विरहिण्यस्मि विस्मेयतत्। 3

2. **दैन्य** - दुर्गति आदि से उत्पन्न ओजस्विता के अभाव को दैन्य कहते हैं। **विश्वनाथ जी** ने लिखा है -

दौर्गत्याद्यैरनौजस्यं दैन्यं मलिनतादिकृत्। 4

चिन्तेनाहं चिरमविभरं कृष्ण! किं किन्नदैन्यम्। 5

3. **मद** - बेहोशी और आनन्द का मिश्रण मद कहलाता है। रूप, विद्या आदि के कारण भी आनन्द के भाव को मद कहा जा सकता है। **विश्वनाथ जी** ने लिखा है -

संमोहानन्द संभेदो मदो मद्योपयोगजः। 6

मामेवासौ रमयति दिवारात्रमित्यङगनानां

सर्वासामप्यभिमतिकृते कृष्णः तस्मै नमस्ते

भूयस्ताभ्यस्सुबहु सभगम्मन्यतां प्रापिताभ्यः

स्वेनैवान्तर्दधिथ तरसा कृष्ण ! तस्मै नमस्ते। 7

4. **मोह** - भय, दुःख, घबराहट, चिन्ता आदि के कारण चित्त की विकलता को मोह कहते हैं।

विश्वनाथ ने लिखा है -

मोहो विचित्तता भीति दुःखावेगानुचिन्तनैः। 8

कामिन्योऽन्याः प्रकृति रमणीयांगभंगया मनोज्ञाः

कामं सन्तु प्रणयिनितमाश्शार्ग पाणेस्सहस्रम्। 9

---

1. साहित्यदर्पण - 140
2. साहित्यदर्पण - 143
3. शारिका सन्देश - 52
4. साहित्यदर्पण - 146
5. साहित्यदर्पण - 146
6. साहित्यदर्पण - 146
7. शारिका सन्देश - 87-90
8. साहित्यदर्पण - 150
9. शारिका सन्देश - 87

5. <u>अपस्मार</u> - चित्त के विक्षेप को अपस्मार कहते हैं। इसमें कम्पन, मूर्च्छा, कातर विलाप का वर्णन किया जाता है। **विश्वनाथ जी** ने लिखा है -

मनः क्षेपस्त्वपस्मारो ग्रहाद्यावेशनादिजः

भूपात कम्प प्रस्वेद फेनलालादिकारकः। 1

निर्गच्छन्ती व्रततिवलयान्तीव्र विश्लेषतापा

नापश्यं त्वामखिल जगदानन्दा वृदांवनान्ते

हा! हा! मोहं बत ! गतवती रोरुंदत्यार्तनादम्

किं किं नाम व्यसनमसहं नन्वहं नान्वभूवम्। 2

6. <u>गर्व</u> - ऐश्वर्य, विद्या, कौलीन्य आदि के कारण उत्पन्न अहंकार का नाम गर्व है। साहित्य दर्पणकार ने लिखा है -

गर्वो मदः प्रभाव श्री विद्या स्तकुलतादिजः। 3

काचिद् गोपी कलित कलह प्रक्रमा चक्रपाणौ

कामार्ताऽपि क्वचन यमुना कूल कुञ्जे निलीना। 4

7. <u>मरण</u> - प्राणत्याग या तत्तुल्य कष्ट मरण कहलाता है।

शराद्यैर्मरणं जीवत्यागोऽंग पतनादिकृत्। 5

कष्टावस्था मम खलु तदा किन्नु दष्टास्मि सर्पैः

प्लुष्टा किन्नु स्मर शर कुकूलाग्निना दारुणेन

कृष्टा वाहं मुहुरसिवने नारके कालदूतैः। 6

8. <u>अवहित्था</u> - भय, गौरव हर्षादि के कारण आकार को छिपाया जाये उसे अवहित्था कहते है।

भय गौरव लज्जा देर्हर्षाद्याकार गुप्तिरवहित्था

व्यापारान्तर सक्त्यन्यथावभाषण विलोकनादिकरी। 7

तं मे मन्तुं मदनचपलस्त्रैण शीलोप दिष्टं

मन्तु मायामनुज ! महनीयानुभाव ! प्रसीद। 8

1.साहित्य दपर्ण - 153
2. शारिका सन्देश - 49
3 साहित्यदर्पण - 154
4. शारिका सन्देश - 1
5. साहित्यदर्पण - 155
6. शारिका सन्देश - 50
7. साहित्यदर्पण - 158
8. शारिका सन्देश - 109

9. **<u>औत्सुक्य</u>** - जहाँ अभीष्ट की प्राप्ति में विलम्ब असह्य हो चित्त चंचल हो वहाँ औत्सुक्य होता है।

इष्टानवाप्तेरौत्सुक्यं कालक्षेपासहिष्णुता

चित्तताप त्वरा स्वेद दीर्घ निश्वसितादिकृत्। 1

तीव्रोत्सुक्य प्रसर विवशाः शीघ्रमव्राजिषुर्य

सर्वा एव व्रजयुवतयो नाथ ! तस्मै नमस्ते। 2

10. **<u>उन्माद</u>** - काम, शोक, भयादि से चित्त के व्यामोह को उन्माद कहते हैं।

चित्त संमोह उन्मादः कामशोक भयादिभिः

अस्थान हास रुदित गीत प्रलपनादिकृत्। 3

किं जागर्मि स्वपिमि किमहं किं मुहुर्मोमुहीमि। 4

11. **<u>स्मृति</u>** - समान वस्तु के अवलोकन, चिन्तन आदि से पूर्वानुभूत वस्तु के स्मरण को स्मृति कहते हैं -

सदृशज्ञान चिन्ताद्यैर्भ्रूसमुन्नयनादिकृत्

स्मृतिः पूर्वानुभूतार्थ विषयज्ञानमुच्यते। 5

स्मारं रूपं तृणमिव गुणीभूतमातन्वतस्ते

स्मारं स्मारं सतत मतसी गुच्छवत्स्वच्छशोभम्। 6

12. **<u>व्याधि</u>** - शारीरिक रोगों को व्याधि कहते हैं। इसमें शरीर के भस्म होने कम्प, भूमिपतन आदि का वर्णन किया जाता है -

व्याधि र्ज्वरादिर्वाताद्यै भूमीच्छोत्कम्पनादि कृत्। 7

कालानेतानपि हि भवतो विप्रयोगानलेन

व्याविद्धं में सदपि हृदयंनस्म भस्माधुनास्ति

जाल्मस्तादृग् दृढ़तरमिदं मन्मथस्त्वन्मतोऽपि

प्रत्याहन्तुं प्रभवति कथं दुर्बलैः पुष्पबाणैः। 8

13. **<u>हर्ष</u>** - इष्ट प्राप्ति से अथवा उसके प्राप्त होने के अवसर पर मन की प्रसन्नता का नाम हर्ष है।

हर्षस्त्विष्टावाप्तेर्मनः प्रसादोऽश्रुगदगदादि करः। 9

---

1. साहित्यदर्पण - 159
2. शारिका सन्देश - 83
3. साहित्यदर्पण - 160
4. शारिका सन्देश - 51
5. साहित्यदर्पण - 162
6. शारिका सन्देश - 54
7. साहित्यदर्पण - 164
8. शारिका सन्देश - 102
9. साहित्य दर्पण - 165

स्फारं केरक्रमुकनि करालम्वताम्बुलिकाभिः

केषामेतन्न भवतितरां तुष्टये कुट्टराष्ट्रम्। 1

14. <u>असूया</u> - दूसरे की गुण समृद्धि को सहन न करने वाले भाव को असूया कहते हैं।

असूयान्यगुणर्धी नामौद्वत्याद सहिष्णुता

दोषोद्घोष भ्रूविभेदावज्ञा क्रोधेगिंतादिकृत्। 2

अन्यासक्तस्त्वमिति किमपि कौर्य्यमज्ञानहेतो। 3

15. <u>विषाद</u> - अपनी असहाय अवस्था के कारण मन के शोक को विषाद कहते हैं।

उपायाभावजन्मा तु विषादः सत्वसंक्षयः। 4

तच्छण्वत्या मम सखि मनः प्रीयते दूयते च

स्वास्थ्यान्तत्र त्रिभुवन पतेर्दुलभस्त्वाच्च तस्य। 5

16. <u>चपलता</u> - राग द्वैषादि के कारण अनवस्था का नाम चपलता है।

मात्सर्य द्वैष रागादेश्चापल्यं त्वनवस्थितिः

तत्र भर्त्सनपारुष्यस्वच्छन्दाचरणादयः। 6

पश्चाद्भागे निभृतमुपगम्याक्षिणी मे कराभ्या

मावृण्वानो नियमित निजश्वास समासिष्यसेत्वम्। 7

17. <u>ग्लानि</u> - आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है कि रति, परिश्रम, मनस्ताप, क्षुत्पिपासा से निष्पन्न निर्बलता को ग्लानि कहते है।

ख्याद्यासमनस्तापक्षुत्पिपासादि संभवा। 8

त्वद्विश्लेष ज्वलनशलभी भूयमापत्स्यमाना

मानोपज्ञन्नि जमपि कृतं कर्म नेनिन्द्यमाना। 9

18. <u>वितर्क</u> - सन्देह के कारण उत्पन्न विचार का नाम वितर्क है।

---

1. शारिका सन्देश - 25
2. साहित्य दर्पण - 166
3. शारिका सन्देश - 2
4. साहित्य दर्पण - 167
5. शारिका सन्देश - 31
6. साहित्य दर्पण - 169
7. शारिका सन्देश - 110
8. साहित्य दर्पण - 170
9. शारिका सन्देश - 45

तर्को विचारः संदेहाद्भ्रूशिरोंगुलिनर्तकः। 1

क्वासौ कामः कुसुम विशिखो वज्रवत्कर्कशंमे

क्वेदंचेतस्तव हि विरहे क्षिप्रमेवा प्रदीर्ष्णम्

यद्वा कामः क्व नु खलु ! खलः कालजित्फालनेत्र

दग्धस्तस्य ध्रुवमिह पदे तेऽभिषिक्ताः कटाक्षाः।

अन्य रस – आलोच्य काव्यों का अंगीरस का विवेचन करते समय यह कहा गया है कि मेघदूत विप्रलम्भ श्रृंगार एवं शारिका संदेश माधुर्यपरक भक्ति रस प्रधान काव्य है। शेष रस गौण रूप में आये हुए हैं। यहाँ आलोच्य काव्यों में प्राप्त अन्य रसो का संक्षिप्त विश्लेषण प्रस्तुत किया जा रहा है।

हास्य रस – जहाँ विकृत वेश-भूषा, रूप, वाणी, अंग-भंगी आदि देखने-सुनने से हास्य का स्थायी भाव परिपुष्ट हो वहाँ यह रस होता है। विचित्र वेश-भूषा, व्यंग्य भरे वचन, उपहासास्पद व्यक्ति की मूर्खता भरी चेष्टा, व्यक्ति विशेष के बोलने-चालने का अनुकरण हास्योद्पादक वस्तुएँ, क्षिद्रान्वेषण, निर्लज्जता आदि वस्तुएँ आलम्बन हास्यवर्धक चेष्टाएँ, अंग स्फुरण, अनुभाव, अश्रु, कम्प, हर्ष, चपलता, असूया आदि संचारी भाव होते हैं। 2

यहाँ यह स्मरणीय है कि भारतीय वाङमय में शुद्ध हास्य रस का उदाहरण कम मिलते हैं दशरूपककार ने इसे दो रूपों में विभक्त किया है। आत्मस्थ और परस्थ। जब कोई पात्र स्वयं हँसता है वहाँ आत्मस्थ और दूसरे को जहाँ हँसाता है वहाँ परस्थ हास्य होता है।

विकृताकृति वाग्वेषैरात्मनोऽथ परस्य वा,। 3

इसी प्रकार साहित्य दर्पण में भी परस्थ हास्य का लक्षण निरूपित करते हुए कहा है –

वागादि वैकृतेश्चेतो विकासो हास इष्यते। 4

तात्पर्य यह है कि हास्य में कहीं कटूक्ति, कहीं वक्रोक्ति, कहीं प्रत्युत्पन्नमतित्व और कहीं विनोद आते हैं। नाटकों में भाण और प्रहसन में इनकी अवस्थिति कही गयी है। मेघदूत के कुछ श्लोकों में शुद्ध हास्य की अपेक्षा मिश्रित हास्य व्यंग्य या प्रकृति पर मानवीकरण का आरोप कर व्यंग्योक्ति से हास्य रस की निष्पत्ति की गयी है – उदाहरण स्वरूप कुछ उदाहरण उद्धृत हैं –

प्रत्यासन्ने नभसि दयिता जीवितालम्वनार्थी

जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन् प्रवृत्तिम् .

---

1. साहित्य दर्पण- 171
2. काव्यदर्पण – रामदहिन मिश्र पृ0 – 212
3. दशरूपक – 4-75
4. साहित्य दर्पण – 3/176

स प्रत्यग्रैः कुटजकुसुमैः कल्पितार्धाय तस्मै
प्रीतः प्रीति प्रमुख वचनं स्वागतं व्याजहार। 1

तस्मिन काले नयन सलिलं योषितां खण्डितानां
शान्ति नेयं प्रणयिभिरतो वर्त्म भानोस्त्यजाशु
प्रालेयास्त्रं कमल वदनात् सोऽपि हर्तुं नलिन्याः
प्रत्यावृत्तस्त्वयि कररुधि स्यादनल्पाभ्यसूयः।

ये संरम्भोत्पतनभसाः स्वांगभङगाय तस्मिन्
मुक्ताध्वानं सपदि शरभा लङधयेयुर्भवन्तम्
तान कुर्वीथास्तुमुलकरका वृष्टि पातवकीर्णन
के वा न स्युः परिभवपदं निष्फलारम्भयत्नाः।

तत्रावश्यं वलयकुलिशोद्ध ट्टनोद् गीर्णतोयं
नेष्यन्ति त्वां सुरयुवतयो यन्त्रधारा गृहत्वम्
ताभ्योमोक्षस्त्वं यदि सरवे धर्म लब्धस्य न स्यात्
क्रीडालोलाः श्रवण परुषै गर्जितै भार्ययेस्ताः।

नेत्राः नीताः सतत गतिना यद्विमानाग्रभूमि
रालेख्यानां सलिल कणिका दोषमुत्पाद्य सद्यः
शङ्काष्पृष्टा इव जलमुचस्त्वादृशाः जालमार्गैः
धूमोद्गारानुकृगत निपुणाः जर्जरा निष्पतन्ति। 2

तात्पर्य यह है कि प्रथम श्लोक में आत्मस्थ हास्य की व्यञ्जना है क्योंकि यक्ष द्वारा कुटज पुष्पों से अर्ध्य तैयार कर प्रीति मुख वचन स्वागत व्याजहार में किञ्चित हास्य या प्रसन्नता की झलक मिलती

---

1. मेघदूत - 4, 42, 57, 64
2. मेघदूत - उत्तरमेघ - 8

है जबकि दूसरे श्लोक में प्रकृति पर मानवीयकरण करके परस्थ हास्य दिखाई पड़ता है जिसमें प्रेमी खण्डिता नायिका के आँसुओं को पोंछकर अपने कुकृत्य के लिए क्षमा मांगने का नाटक करता है। तृतीय श्लोक में परस्थ हास्य है क्योंकि मेघ हिमालय पर ओलों की वर्षा कर उसे 'मुक्ताध्वानं सपदि शरभा लङ्घयेयुर्भवन्तम्' में व्यंग्योक्ति जिसे अंग्रेजी में विट कहा जाता है, दिखाई पड़ती है। इसी प्रकार चतुर्थ श्लोक में मेघ के मार्ग में अवरोध स्वरूप आयी हुई देवांगनाओं के कार्यो का वर्णन कर उन्हें गर्जन से डराने का अनुरोध यक्ष करता है। निश्चय ही इसमें आत्मस्थ हास्य दिखाई पड़ता है क्योंकि सुन्दरी स्त्रियों के अवरोध को या उनके आमन्त्रणों को अस्वीकार करना पुरुष के लिए कठिन ही होता है और यह यक्ष भली-भाँति जानता है कि मेघ अपने गर्जन से देवांगनाओं को भयभीत कर उनके बन्धनों से मुक्त हो जाएगा। 'ताभ्योमोक्षस्तव यदि सखे धर्मलब्धस्य न स्यात्' में जो व्यंग्य या मिश्रित हास्य व्यञ्जित हो रहा है, इसी से ही यहाँ हास्य रस की व्यञ्जना की गई है। इसी प्रकार अन्तिम श्लोक में मेघ की चाक्षुष क्रियाओं के माध्यम से हास्य की सृष्टि की गयी है। जहाँ अन्तिम पंक्ति में कहा गया है कि धुयें के निकलने का अनुकरण करने में निपुण तुम्हारे जैसे मेघ छिन्न-भिन्न होकर खिड़कियों से निकल जाते हैं। यह एक प्रकार का परस्थ हास्य है। जैसे कोई जार पुरुष प्रेमिका के पति के आने पर शीघ्रता से खिड़की इत्यादि गुप्तमार्ग से कूदकर बाहर निकल जाता है। उसकी वह चेष्टा दर्शकों के लिए हास्य का विषय बन जाती है।

शारिका सन्देश में शुद्ध हास्य के कोई स्थल नहीं हैं। यत्र-तत्र कटूक्तियों या उपालम्भ में अपनी विरह की चर्चा करते हुए कृष्ण के कार्यो में जो परिहास प्रियता वर्णित है उसमें उपालम्भ या वचन विदग्धता के साथ हास्य दिखाई पड़ता है। जैसे - गोपी अपने विरहाधिक्य का वर्णन करती हुयी कटूक्तियों द्वारा (आयरिनी) हास्य की सृष्टि करती है।

मन्येऽहं ते कुवलयदल स्निग्धमुग्धाः कटाक्षाः
साक्षाद् भूता स्म खलु पुरा त्वत्समीप स्थितायाः
तादृक्च्छैत्या अपि बत त एवाधुना तत्पतप्ताः
सप्तार्चिर्वन्मदन विशिखीभूय मामुद्धमन्ति। 1

यहाँ परिस्थितिगत विडम्बना से हास्य स्पष्ट हो रहा है। कवि ने गोपी के माध्यम से दो विषम विभिन्न परिस्थितयों की परिकल्पना कर व्यंग्यजन्य मिश्रित हास्य की सृष्टि इस प्रकार की है -

---

1. शारिका सन्देश - 102,

ते तावन्मां स्मृतिमुपगता दन्दहत्यम्बुजाक्ष

स्पृष्टा एव ग्लपयितुमलं हव्यवाहस्फुलिंगाः

प्रत्यक्षा ये तुहिन कणिका शीतलास्ते परोक्षा

रूक्षास्सन्तीत्यजित ! भवतो दुर्विभाव्या अपांगाः। 1

शान्त रस - यद्यपि भरतमुनि ने अभिनेय दृष्टि के कारण शान्त रस की गणना नहीं की है किन्तु परवर्ती आचार्यों ने काव्य में इसकी अवस्थिति मानी है। इसके स्थायी भाव के रूप में तृष्णा क्षय निर्वेद कहा गया है किन्तु निर्वेद को संचारियों के अन्तर्गत परिगणित करने के कारण शान्त रस का स्थायी भाव शम माना है। जैसा कि **विश्वनाथ** का मन्तव्य है -

शमोनिरीहावस्थया स्वात्म विश्रामजं सुखम्। 2

किंवदन्ती कालिदास के आराध्य देव शिव कहे गये हैं। अतः हिमालय वर्णन के या देवालयों के प्रसंग में शान्त रस की अभिव्यक्ति मानी जा सकती है -

क- सन्तप्तानां त्वमसि शरणं तत्पयोद प्रियायाः

सन्देशं मे हर धनपति क्रोध विश्लेषितस्य

ख- आपृच्छस्व प्रियसखममुं तुंगमलिङगयशैलं

वन्द्यैः पुसां रघुपतिपदैरकिंत मेखलासु

ग- भर्तुः कण्ठच्छविरिति गणैः सादरं वीक्ष्यमाणः

पुण्यं यायास्त्रिभुवन गुरोर्धाम चण्डीश्वरस्य

घ- अप्यन्य स्मिञ्जलधर महाकालमासाद्यकाले

स्थातव्यं ते नयन विषयं यावदत्येति भानुः

कुर्वन संध्यावलिपटहतां शूलिनः श्लाघनीया

मामन्द्राणां फलमविकलं लप्स्यसे गर्जितानाम्

च- धौतापांग हरशणिरुचा पावकेस्तन्मयूरं

पश्चाददिग्रहण गुरुभि र्गजितैर्नर्तयेथाः। 3

---

1. शारिका सन्देश - 104
2. साहित्य दर्पण - 180
3. मेघदूत - 7, 12, 36, 37, 47

छ -   तत्र व्यक्तं दृषदि चरण न्यासमर्धेन्दु मौलेः

शश्वत्सिद्धै रुपचित वलिं भक्तिनम्रः परीयाः

यस्मिन् दृष्टे करण विगमादूर्ध्वमुद्धूतपापाः

संकल्पन्ते स्थिरगणपद प्राप्तये श्रद्दधानाः

ज -   निर्ह्रादस्ते मुरज इव चेत् कन्दरेषु ध्वनि स्यात्

संगीतार्थो ननु पशुपतेस्तत्र भावी समग्रः। 1

तात्पर्य यह कि शान्त रस का स्थायी भाव शम, आराध्य देव आलम्बन, आराध्य के प्रति भक्ति तपोवन सेवन रमणीय तीर्थ उद्दीपन विभाव निर्वेद, हर्ष, मति, दया आदि इसके संचारी भाव कहे गये है। कवि ने शिव, सीताराम आदि की चर्चा कर मेघ द्वारा इनके पूजन अर्चन या घोषवादन में सहायता अथवा पार्वती के लिए मणियों के सोपान बनाने के आग्रह, एक प्रकार से शान्त रस के निदर्शन है यद्यपि निम्न पंक्तियों में परिपक्व नहीं हुआ क्योंकि यक्ष जड़ मेघ से आराध्या पार्वती के प्रति अपनी भक्ति भावना इस प्रकार व्यक्त करता है।

भंगी भक्त्या विरचित वपुः स्तम्भितान्तर्जलौघः

सोपान त्वं कुरु मणित टारोहणायाग्रयायी। 2

यद्यपि भक्ति रस की परिकल्पना परवर्ती काल में हुई है किन्तु पूर्वमेघ में यक्ष मेघ से कहता है कि सिद्धों द्वारा पूजित, अर्जित शिव के चरण चिन्हों को भक्ति भावापन्न होकर नमन एव प्रदक्षिणा मेघ को करना चाहिए क्योंकि इन चरण-चिन्हों के दर्शन से श्रद्धालु या भक्त शिवलोक को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार कवि ने नारदोक्त सापरानुरक्तिरेश्वरे का उदाहरण प्रस्तुत किया है क्योंकि इसमें आलम्बन शंकर के चरण चिन्ह, आश्रय यक्ष, प्रदक्षिणा या श्रद्धा से सिर झुकाना कायिक अनुभाव, विवेक मतिबोध आादि संचारी भावों से यह शान्त रस की अपेक्षा भक्ति रस के अधिक नज़दीक है। शेष उदाहरणों में पवित्र स्थलों की चर्चा उद्दीपन विभाव के रूप में की गयी है।

शारिका सन्देश में चौदहवीं-पन्द्रहवीं शताब्दी में प्रचलित भक्ति के रस-रूप का वर्णन है जिसे सैद्धान्तिक रूप में हम मधुरा या कान्ता भक्ति निरूपित कर चुके हैं और इसके उपांगों में शान्त, वत्सल, अद्भुत, भावोपेत् रसों का समन्वय स्वतः हो जाता है फिर भी यत्र-तत्र इसमें शान्त रस के साथ गौण रूप मे अन्य रसों की अभिव्यञ्जना हुई है। किसी गोपी के अज्ञानवश प्रच्छन्न प्रणयकोप के कारण कृष्ण उसे छोड़कर चले गये हैं।

1. मेघदूत - 58   2. मेघदूत - 63

जब गोपी को इसका बोध होता है तो उसमें विवोध जाग्रत होता है -

अज्ञानान्मां प्रणयकलहे वर्तमानां समानां

त्यक्त्वा सद्यः स खलु गतवान् वल्लभेवासुदेवः। 1

शारिका सन्देश में कृष्ण की ऐश्वर्यपरक लीलाओं के गायन में मूलरस तो भक्ति है किन्तु व्यञ्जना रूप में कुछ अन्य रसों की विवृत्ति स्वतः हो जाती है। विशेष रूप से उनके अवतार रूप में शान्त भक्ति वात्सल्य, अद्भुत और वीर रसों के उदाहरण प्रस्तुत है। वैसे सम्पूर्ण काव्य कान्ता भक्ति या रसिक भक्ति का परिणाम है -

शान्त भक्ति -

क्षैरेयाणां यदिदममृतं यत्प्रसादेन लब्धम्

यत्पादाब्जस्मरणशरणी भावुकानां जनानाम्।

मन्ये शारि ! प्रभवति विषं देवशेषं तदेव

हयाद्यूनानाम् शिवमन सामश्नतां स्तैन्यवृत्या।

राजस्या यस्स्वयमिह सरीसर्ष्टि सर्वप्रपञ्चं

बहीयस्तत्पुनरथ बरीभर्ति सत्वैकवृत्या

तामस्याथो तदपि सकलं सञ्जरी हत्तिमर्त्या

सोयं कश्चित्प्रतन पुरुषों वासुदेव ! त्वमेव। 2

वीर रस - इसका स्थायी भाव उत्साह कहा गया है। विश्वनाथ ने लिखा है -

उत्तम प्रकृतिर्वीर उत्साह स्थायिभावकः

महेन्द्र दैवतो हेमवर्णोऽयं समुदाहृतः। 3

यहाँ दुष्टों का संहार कर पृथ्वी की रक्षा करने वाले कृष्णावतार आलम्बन है। भक्त आश्रय है। गुण समूहों का कथन उद्दीपन विभाव है -

आगस्कारानधब कृतणार्क्त मुख्यान मित्रान्

मायाचुञ्चूनापि हि तरसा मारयन्तं भवन्तम्

मायामर्त्यं कमपि निजया मायया मोहयिष्यन्

वत्सस्तेयं व्यधित विधि रित्येतदेवाद्भुतं मे। 4

---

1. शारिका सन्देश - 9
2. शारिका सन्देश - 27, 59
3. साहित्य दर्पण - 232
4. शारिका सन्देश - 76

अद्‌भुत रस - आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है कि इसका स्थायी भाव विस्मय है। अलौकिक वस्तु आलम्बन है गुणों का वर्णन उद्दीपन है। स्तम्भ, स्वेद, रोमाञ्च, आवेग इत्यादि व्यभिचारी भाव होते हैं।

अद्‌भुतो विस्मय स्थायिभावो गन्धर्व दैवतः

पीतवर्णो वस्तु लोकाति गमालम्बनं मतम्

गुणानां तस्य महिमा भवेद्‌द्दीपनं पुनः

स्तम्भः स्वेदोऽथ रोमाञ्च गद्‌गद स्वर संभ्रमाः

तथा नेत्र विकासाद्या अनुभावा प्रकीर्तिता। 1

शारिका सन्देश में दो स्थलों पर अद्‌भुत रस की व्यञ्जना है। कालिय सर्प के फणों पर नृत्य करते हुए कृष्ण अथवा रासलीला करते हुए प्रत्येक गोपी के साथ नृत्य करने वाले कृष्ण आलम्बन है। नर्तन उद्दीपन विभाव है। मोह, विवेक, हर्ष संचारी भाव दोनों श्लोकों में दिखाई पड़ता है -

काकोलाग्नि ग्लपित यमुना पाथसः कालिया हे!

रंगघ्रिक्षेप प्रवणित फणाशृंगरंग स्थलेषु

प्रारब्धास्त्वं प्रचटुल तुला कोटि-कोटि प्रघर्षे

स्फारोद्दीप्रस्फुटत रशिरोत्नदीपेषु नृत्तम्। 2

यावत्यः स्युः पशुपसुदृशस्तावतीरेवमूर्त्ती

रार्तिध्वसिन् ! अखिल हृदयानन्दिनीस्संदधानः

मासद्वन्द मधुहर ! मधुं माधवञ्चेतियस्त्वं

रासक्रीडामहमकुंरुथा नाथ ! तस्मै नमस्ते। 3

निष्कर्ष यह है कि अंगीरस की दृष्टि से मेघदूत विप्रलम्भ श्रृंगार एवं शारिका सन्देश माधुर्य भक्ति परक वियोग भक्ति का काव्य है। मेघदूत का आश्रय पुरुष यक्ष है तो शारिका सन्देश का आश्रय स्त्री गोपी है अतः स्वाभाविक है कि पुरुष के प्रणय निवेदन विरह व्यञ्जना में उतना समर्पण उतनी गलदश्रुता या उतनी ऐकान्तिक प्रेम उद्दामता नहीं है जितनी अरन्तुद वेदना स्त्री होने के कारण गोपी में है। दोनों के सन्देश वाहक मानवेतर सृष्टि से भिन्न पात्र है। मेघ में अभिव्यञ्जना की क्षमता नगण्य है जबकि किवंदन्ती यह है कि शारिका मानवोच्चरित शब्दों का अनुकरण कर अविकल रूप से सन्देश कह सकती है। इतना अवश्य है कि दोनों के सन्देश में प्रिय की निश्छलता, समर्पण, अनन्यता, प्रियपात्र के प्रति अतीव अनुराग, गाढ़ासक्ति है जिसे दोनों कवियों ने

---

1. साहित्य दर्पण - 242
2. शारिका सन्देश - 76
3. शारिका सन्देश - 86

अत्यन्त मार्मिक, दीन, ग्लानिदैन्य भावोपेत शब्दों से व्यञ्जित किया है। यक्ष कार्य में असावधान होने के कारण शापवश विरही हुआ है तो गोपी रूपगर्विता एवं प्रच्छन्न मान के कारण कृष्ण वियुक्ता बनी है। कालिदास ने यह व्यञ्जना की है कि जब तक मेघ लौटेगा तब तक वर्षान्त के कारण शापावधि समाप्त हो जाएगी और दयितालम्बन यक्ष अपनी प्राणवल्लभा से पुनः मिल सकेगा। इसकी अपेक्षा शारिका सन्देश का समापन शुद्ध, सात्विक, माधुर्यपरक संयोग श्रृंगार में हुआ है जिसमें गोपी से एकान्त में श्रृंगारिक क्रीडायें करते हुए कृष्ण दिखाई देते हैं। मेघदूत में मिलन सम्भवजन्य व्यंग्य रूप में वर्णित है तो शारिका संदेश में यह प्रकट रूप में कृष्ण की माधुर्यपरक लीलाओं में पर्यवसित है। मेघदूत का श्रृंगार प्रवासजन्य शापज है तो शारिका सन्देश का वियोग मानजन्य है। दोनों कवियों ने हृदय की रागात्मक तीव्र अनुभूतियों का मार्मिक चित्रांकन किया है। यक्ष ने अपनी प्राणवल्लभा को अपने जीवित होने का सन्देश देकर अपनी वियोग दशाओं का वर्णन किया है तो शारिका सन्देश में विष्णु रूपधारी कृष्ण की दशावतार लीलाओं का संक्षेप में गुणगान कर उनके काम विनिन्दक सौन्दर्य एवं लीलाओं का बहुविध रूपों में चित्रांकन किया है। इस वियोग में कोमलता, मार्दव, ऋजुता है तो शास्त्रीय दशाओं में चिन्ता, अभिलाषा, उद्वेग, गुणकथन, आधि-व्याधि, मूर्च्छा, प्रलय, आदि का सात्विक रूप से चित्रांकन हुआ है। दोनों कवियों के काव्यों में दूरस्थ प्रिय के समीप जाने का मार्ग और उसमें पड़ने वाले प्रमुख स्थान, तीर्थ, नदियों, चैत्य मन्दिरों आदि का भी वर्णन किया गया है। कालिदास के मार्ग निरूपण में प्रकृति के प्रति सूक्ष्म निरीक्षण विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है जबकि शारिका सन्देश में प्रिय के गुणकथन उसके ऐश्वर्यपरक लीलाओं का गायन प्रमुख है।

शान्त और हास्य का किञ्चित आभास मेघदूत में मिलता है तो शारिका सन्देश में दशावतार वर्णन के कारण संयोग श्रृंगार के साथ वीर, हास्य, अद्भुत रसों का सफल सन्निवेश हुआ है।

आलोच्य दूतकाव्यों में प्रकृति एवं अन्य वस्तु वर्णन

(क) - मानव एवं प्रकृति

(ख) - प्रकृति वर्णन के रूप

1. आलम्बन एवं संश्लिष्ट रूप

2. उद्दीपन रूप

(ग) - अन्यरूप वर्णन

अन्य वस्तु वर्णन, नदी, समुद्र, गिरि,

नगर, स्थलमार्ग, संस्कार, अवतारवाद।

पंचम अध्याय

आलोच्य दूतकाव्यों में प्रकृति एवं अन्य वस्तु वर्णन

जिस प्रकार मनुष्य समाज में रहकर अपना जीवन यापन करता है। उसके जीवन यापन में अनेक क्षेत्र आते हैं। वह विभिन्न परिस्थितयों के बीच सम्बन्ध अथवा विरोध करता हुआ अपना मार्ग निर्धारित करता है। प्रकृति के विविध क्षेत्रों, दृश्यों, ऋतुओं के अनुसार अपना सामंजस्य बिठाता है। उसी प्रकार कथा प्रधान काव्यों में नायक या पुरुष प्राकृतिक दृश्यों, स्थलों या भौतिक पदार्थो में से अपना मार्ग निकालता हुआ जीवनपथ पर अग्रसर होता है। काव्य में इसी को प्रकृति चित्रण और वस्तु वर्णन कहते है जैसा कि डॉ0 श्याम सुन्दर दास ने लिखा है - ''कि प्रकृति की ओर मनुष्य निसर्गतः आकृष्ट होता रहता है क्योंकि उससे उसकी वासनाओं की तृप्ति होती है। इस नैसर्गिक आकर्षण का परिणाम यह होता है कि मनुष्य प्रकृति के उन चित्रों को अपने दुःख के रस से सिक्त कर अभिव्यञ्जित करता है और वे भिन्न कलाओं के रूप में प्रकट हो मानव हृदय को रसान्वित करते हैं।'' 1

तात्पर्य यह है कि प्रकृति मानव जीवन की आदिम सहचरी और धात्री है उसकी गोद में वह पला बढ़ा है। फलद् वृक्षों से बुभुक्षा शान्त की है। नदियों, सरोवरों ने उसकी तृषा बुझाई है। आकाश के टिमटिमाते तारों ने उसे अपनी ओर आकृष्ट किया है। पक्षियों का मधुर कलरव, शीतल, मन्द सुगन्धित बयार ने उसके मन में आनन्द की सृष्टि की है तो विद्युत नर्तन और मेघ गर्जन ने उसके मन में जिज्ञासा उत्पन्न की है इसलिए मानव हृदय की रागात्मक अनुभूतियों का सम्बन्ध अनादिकाल से प्रकृति से ही जुड़ा रहा है। भारतीय आचार्यों ने महाकाव्यों के लक्षण निरूपित करते समय यह कहा है कि उसमें प्राकृतिक दृश्यों का चित्रांकन -समुद्र, पर्वत, नगर, शैल, चन्द्रोदय, सूर्योदय उद्यानादि का यथा अवसर होना चाहिए। जैसा कि दण्डी ने लिखा है -

नगरार्णव शैलस्तु चन्द्रार्कोदयवर्णनैः
उद्यान सलिल क्रीड़ा मधुपानरतोत्सवैः। 2

रुद्रट ने भी इन वस्तु वर्णनों की महत्ता स्वीकार की है तथा उन्हें व्यापक फलक में प्रस्तुत करने का संकेत किया है - अट्वी कानन सरसीमरुजलीघ द्वीप भुवनानि

स्कन्धावारनिवशं क्रीड़ा यूनां यथायथं तेषु
रव्यस्तमयं संध्यां संतमसमथोदयं राशिनः

---

1. साहित्यलोचन पृष्ठ सं0 - 7

2. काव्यादर्श - 1/16

प्रकृति काव्य है। विरही यक्ष प्रकृति के उपकरण मेघ से अपनी प्रिया के पास सन्देश ले जाने का आग्रह करता है। इसी प्रकार शारिका सन्देश में गोपी कृष्ण से विरही होकर सुदूर दक्षिण में शारिका से कृष्ण को सन्देश भेजती है अतः यह स्वाभाविक ही है कि दोनों कवियों में आकाशीय प्राकृतिक तत्वों के साथ धरित्री से सम्बन्धित प्राकृतिक उपादानों का ऐसा मधुर हृदयवर्जक वर्णन किया है। जिसे देख पाठक इसके प्रति अभिभूत हुए बिना नहीं रह सकता। दोनों कवियों ने प्राकृतिक सौन्दर्य का आश्रय लेकर कल्पना प्रसूत मुद्राओं के माध्यम से प्रकृति का ऐसा तथ्यान्वेषण एवं उसकी विभूति का भावात्मक सौन्दर्य निरूपित किया है कि पाठक कालिदास के मेघदूत को प्रकृति का काव्य कह उठता है। यहाँ हम पहले आलोच्य काव्यों मेघदूत एवं शारिका सन्देश में प्राप्त प्रकृति के विविध रूपों के उदाहरण देकर अन्त में दोनों के एतद्विषयक साम्य-वैषम्य की चर्चा करेगें।

प्रकृति का आलम्बन रूप - आलम्बन रूप से हमारा तात्पर्य यह है कि प्राकृतिक दृश्यों का स्वतन्त्र रूप से चित्रांकन किया जाए। इसके अन्तर्गत कवि प्रायः या तो नाम परिगणन प्रणाली का आश्रय लेते हैं जिसके अन्तर्गत अंचल विशेष में प्राप्त होने वाले पारथीय वस्तुओं, वृक्षों, लताओं, पुष्पों का उल्लेख मात्र करते हैं। जैसा कि शारिका संदेश के निम्न श्लोक में दृष्टव्य है -

पश्चाद् विष्णोरलधुवलभीरम्य हर्म्याट्ट पंक्तिः
कासारश्च क्रमुक कदली केरत्तीरभागः
नृत्तागारं नृपति वसतिर्दक्षिणेनोन्तरेण
द्राघीयस्यो विहित विविधा भक्तयो भुक्तिशालाः। 1

वस्तुतः ऐसे चित्रण कवि के तथ्यान्वेषणीय प्रतिभा के परिचायक होते हैं। शुद्ध आलम्बन की कोटि में आने वाले प्रकृति चित्रण संश्लिष्ट रूप में प्रयुक्त होते हैं। आलोच्य दोनों काव्यों में प्रकृति के संश्लिष्ट चित्र बहुविध रूपों में मिलते हैं। कालिदास के पूर्वमेघ में ऐसे चित्रों की भरमार है जिसमें यक्ष और मेघ के बीच सख्य सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। इस बहाने कवि ने प्रकृति के अनेक संश्लिष्ट चित्रों का प्रयोग किया है। कवि ने लिखा है कि 'मन्दवायु के सहारे उड़ने वाले मेघ के समीप पपीहा और आनन्द के कारण पंक्तिबद्ध बलाका पंक्ति उसके सौन्दर्य में अभिवृद्धि ही करेंगी -

मन्दं मन्दं नुदति पवनश्चानुकूलो यथा त्वां
वामश्चायं नदति मधुरं चातकस्ते सगन्धः

---

1. शारिका सन्देश - 20

गर्भाधानक्षण परिचयान्नूमाबद्ध मालाः

सेविष्यन्ते नयन सुभगं खे भवन्तं बलाका। 1

इन काले नीले मेघों के साथ सह भ्रमण करते हुए कमल के अग्रभाग का भोजन करने वाले श्वेतराजहंस कितनी शोभा उत्पन्न करते होगें ऐसा चित्र कोई भावुक कल्पक कवि ही खींच सकता है। इसमें दूरयात्री मेघ के साथ यात्रा में विराम देने के लिए सह यात्री के रूप में हंसों का वर्णन तो है ही साथ में कवि ने बादल और हंसों की सूक्ष्म विशेषताओं का चित्रांकन किया है -

कर्तुयच्च प्रभवति महीमुच्छिलीन्ध्रामवन्ध्यां

तच्छ्रुत्वा ते श्रवण सुभगं गजितं मानसोत्काः

आकैलासा द्विसकिसलयच्छेद पाथेयवन्तः

सम्पत्स्यन्ते नभसि भवतो राजहंसा सहायाः। 2

कालिदास ने शैल श्रेणियों से ऊपर होते मेघ उन पर पड़ती सुनहरी किरणों के कारण जो सौन्दर्य बिम्व उभरता है उसका उपमान नारी अंग से किस प्रकार दिया है। निम्न पंक्तियों में द्रष्टव्य है -

छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रै

स्त्वय्यारूढ़े शिखरमचलः स्निग्धवेणी सवर्णे

नूनं यास्यत्यमर मिथुन प्रेक्षणीयामवस्थां

मध्ये श्यामः स्तन इव भुवः शेष विस्तार पाण्डुः। 3

वर्षा ऋतु में जलवृष्टि करने वाले मेघ जब जल से शून्य हो जाएगें तो कहीं हवा के कारण मार्ग से विचलित न हो सके इस हेतु कवि ने केसर और पीले कदम्ब तथा हरिणों के द्वारा मेघ के मार्ग को इंगित कराया है। ऐसा वर्णन पढ़कर किसका मन अभिभूत नहीं हो उठेगा -

नीपं दृष्ट्वा हरित कपिशं केसरैरर्धरूढ़ै

राविर्भूत प्रथम मुकुलाः कन्दलीश्चानुकच्छम्

जग्ध्वारण्येष्वधिक्र सुरभिं गन्धमाघ्राय चोर्व्याः

सारंगास्ते जललवमुचः सूचयिष्यन्ति मार्गम्। 4

---

1. पूर्वमेघ - 10
2. पूर्वमेघ - 11
3. पूर्वमेघ - 18
4. पूर्वमेघ - 21

ऊपर के उदाहरण में कदम्ब के रेशे और केसर की गन्ध का संयोग कवि ने यूँ ही नहीं किया है। बात यह है कि कालिदास प्रकृति के उन चितेरों में से है जिनकी दृष्टि धरित्री और पार्थिव उपादानों के संयोग से बिम्ब उपस्थित करने में पूर्ण समर्थ है। इसी प्रकार दशार्ण देश में विकसित केतकी पुष्पों की पीली कान्ति, पक्षियों के घोसलें, आम जामुन के फलों से युक्त विविध रंग विरंगी प्रकृति कैसी आकर्षक बन पड़ी है कि मेघों के संयोग से उसका रूप ही बदल जाता है।

पाण्डुच्छायोपवन वृत्तयः केतकैः सूचिभिन्नैः
नीडारम्भैर्गृह बलिभुजा माकुल ग्राम चैत्याः
त्वय्यासन्ने परिणत फल श्याम जम्बू वनान्ताः
सम्पत्स्यन्ते कतिपयदिन स्थायि हंसाः दशार्णा। 1

मेघदूत में निश्चय ही वर्षारम्भ से प्रारम्भ होने वाले उपकरणों का चित्रांकन दो या तीन मास के भीतर का है। इस मध्य प्राकृतिक वैभव को समेटने का कवि का प्रयास अत्यन्त सराहनीय है क्योंकि उपवनों की जूही की कलियों को नये जल की बूंदों से सींचते हुए इस दृश्य की तुलना कपोलों पर पसीने को हटाने से उत्पन्न म्लान कमल अवतंसो के साथ कर कवि ने मेघ को क्षण भर के लिए सौन्दर्य प्रेमी रसिक बना दिया है -

विश्रान्तः सन् व्रज वन नदी तीर जातानि सिञ्च
न्नुद्यानानां नवजल कणै यूथिकाजालकानि
गण्डस्वेदापनयनरुजा क्लान्त कर्णोत्पलानां
छायादानात् क्षणपरिचितः पुष्पलावीमुखानाम्। 2

कहना नहीं होगा कि कालिदास ने अपने मेघदूत में रामगिरि आश्रम से लेकर अलकापुरी में पड़ने वाले विभिन्न ग्राम, जनपद, तीर्थ, मन्दिर, देवालय, नदी, नद, सरोवर, वृक्ष, लताओं, पुष्पों के रंगों, आकृतियों, क्रिया व्यापारों और मेघ के साथ उनका संश्लेषण कर प्रकृति के आलम्बन रूप का ऐसा भव्य चित्र अंकित किया है जिसमें कवि की कल्पना, तथ्यान्वेषणीय सूक्ष्म निरीक्षिका वृत्ति का पता चलता है। विभिन्न वस्तुओं के रंगों के संयोजन से जो नये इन्द्रधनुषी रंगों का निर्माण हुआ है। ऐसे संश्लिष्ट चित्रों में कवि का मन बहुत रमा है।

इसके साथ ही शारिका सन्देश में भी प्रकृति के कुछ आलम्बन चित्र मिलते हैं। यद्यपि आलोच्य दोनों काव्यों का मार्ग अत्यन्त विस्तृत है फिर भी कालिदास ने मार्गस्थ वस्तुओं का अनेक रूपों में चित्रांकन किया है। रामपाणिवाद ने शारिका के उड़ने वाले मार्ग में आकाशीय वस्तुओं का कम उपयोग किया है क्योंकि कवि की दृष्टि

---

1. पूर्वमेघ - 24 2. पूर्वमेघ - 27

सन्देश प्रेषण की क्षिप्रता में है विलम्ब वहाँ असह्य है अतः आलम्बन के चित्र कम ही दिखाई पड़ते हैं फिर भी शरदकालिक अम्बरनदीश क्षेत्र के परिसर में विद्यमान कृषि भूमि उसके लता समूह प्राप्त पके हुए फलों का रंग और धान्यों से मनोहरा धरित्री का आलम्बन चित्र नेत्रों में सहज ही उतर आता है।

क - एषा तावच्छरदुपगता सर्वसस्योत्कराणां
मत्युत्कृष्टां फलफरिणर्ति सर्वदा कुर्वतीया
अस्मिन् काले ह्यमरतटिनी मन्दिरोपान्तभागे
क्षेत्राणि स्युः परिणतफल ब्रीहि रम्यान्तराणि। 1

ख - शालिक्षेत्रैरविकल रुचीशालिनस्तान् प्रदेशा
नागच्छन्ति प्रिय सखि ! शुकाश्शारिकाभिस्समेता।

इसी प्रकार वृत्ताकार कीचड़ रहित सरोवर और उसकी रक्षा करने वाले सैनिकों का स्वतन्त्र चित्रण इस प्रकार हुआ है -

तत्र क्षेत्रे किल भगवतः प्राङमुखस्याग्रभागे
वृत्ताकारो विलसतितरां वीतपङ्कस्तटाकः।
यत्रोद्यावे कनक फलकाः खगिंन काण्डपृष्ठाः
विष्वद्रयञ्चो विदधति विगाह्याद्भुत क्रीडितानि। 2

रामपाणिवाद ने शारिका सन्देश में एक दिन का ही समय वर्णित किया है अतः कवि के सामने प्रकृति चित्रण का बहुत अधिक अवसर नहीं था। कवि को कृष्ण के लीलापरक ऐश्वर्य, कामविनिन्दक सौन्दर्य और गोपी की उत्कट अभिलाषा का चित्रांकन करना ही उद्देश्य रहा है। कवि ने अम्बरनदीश क्षेत्र की विशाल वेदिका, गगनचुम्बी आवास, समस्त फलप्रद पीपल का वर्णन इस रूप में किया है -

अश्वत्थोऽसौ जयति परितो निःसृतैर्मूलजालै
श्चित्राकारामति हिबृहतीं वेदिका मादधानः
उच्छ्रायेणच्छुरित गगनश्शाश्वत श्शर्वविष्णु
व्रहनावासस्सकल फलदस्तत्पुरे कल्पशाखी। 3

---

1. शारिका सन्देश - 15-16
2. शारिका सन्देश - 19
3. शारिका सन्देश - 35

प्रकृति का उद्दीपन रूप - कवि प्रकृति का निरपेक्ष रूप नाम परिगणन और संश्लिष्ट रूप में करता है साथ ही साहचर्य के कारण प्रकृति उसके सुख-दुःखों को उद्दीप्त करती है। ऐसा चित्रांकन करना ही प्रकृति का उद्दीपन विभाव कहलाता है। इस दृष्टि से मेघ उद्दीपन विभाव कहलाता है।अतः मेघदूत उद्दीपन विभाव का ही काव्य है।

'आषाढ़स्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टं सानुं वप्रक्रीडा' करते हुए मेघों को देखकर यक्ष का विरह उद्दीप्त हो जाता है। कवि ने लिखा है -

आषाढ़स्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टं सानुं
वप्रक्रीडा परिणत गजप्रेक्षणीयं ददर्श। 1

मेघ दर्शन होने पर प्रिया की स्मृति तज्जन्य अश्रु और यक्ष की बलात् धैर्य धारण करने की कामना कितनी निस्सार हो जाती है। यह कालिदास के शब्दों में देखिए -

मेघोलोके भवति सुखिनोऽप्यन्यथावृत्ति चेतः
कण्ठाश्लेष प्रणयिनि जने किं पुनर्दूर संस्थे। 2

यक्ष को विश्वास है कि उमड़ते-घुमड़ते मेघों को देख विरह विधुरा कौन स्त्री उसकी उपेक्षा कर सकती है -

त्वामारूढ़ं पवनपदवी मुद्गृहीतालकान्ताः
प्रेक्षिष्यन्ते पथिक वनिताः प्रत्ययादावश्व सत्यः
कः सन्नद्धे विरह विधुरां त्वय्युपेक्षेत जायां
न स्यादन्योऽप्यहमिव जनोः यः पराधीनवृत्ति। 3

कालिदास के विषय में यह अनुश्रुति उचित ही प्रतीत होती है कि कवि श्रृंगार- संयोग और वियोग का अन्यतम कवि है। यह प्रकृति जहाँ वियोग के समय दुःखों को और बढ़ाती है। हार्दिक ताप में अभिवृद्धि करती है। वहीं संयोग काल में ऐन्द्रिक संवेदना को और अधिक उद्दीप्त करती है। स्वभाव से भीरु प्रिया स्त्रियाँ मेघ गर्जन सुन काँपती हुईं अपने प्रिय से गाढ़ालिंगन कर लेती है। भला ऐसे पुरूषों के लिए मेघ सुखकारी एवं उपकारी क्यों नहीं होगा --

अम्भोबिन्दु ग्रहण चतुरांश्चातकान् वीक्षमाणाः
श्रेणीभूताः परिगणनया निर्दिश्यन्तो बलाकाः
त्वामासाद्य स्तनित समये मानयिष्यन्ति सिद्धाः

---

1. पूर्वमेघ - 2
2. पूर्वमेघ - 3
3. पूर्वमेघ - 8

सोत्कम्पानि प्रिय सहचरी सम्भ्रमालिंगितानि। 1

यक्ष ने मेघ को मानव के सुख दुःखों का उद्दीपन कारक ही नहीं बनाया अपितु वह प्रकृति में निहित तत्वों को भी इसी श्रेणी में लाकर कहता है कि मेघ क्षीण सिन्धु नदी को अपनी अति वृष्टि से सौभाग्य शालिनी बनाये -

वेणीभूत प्रतनुसलिला तामतीतस्य सिन्धुः

पाण्डुच्छाया तटरुह तरु भ्रंशिभिजीर्ण पर्णैः

सौभाग्यं ते सुभग विरहावस्थया व्यञ्जयन्ती

कार्श्यं येन व्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्यः। 2

कालिदास की कल्पना है कि मेघ अपनी जलवृष्टि से सिन्धु नदी को ही आप्यायित नहीं करता अपितु प्रातः कालिक सारस मिथुन के मदकल कूजन को भी बढ़ाकर उसके मधुर काम आह्वान को उद्दीप्त करता है -

दीर्घीकुर्वन् पटुमदकलं कूजितं सारसानम्

प्रत्यूषेषु स्फुटित कमलामोद मैत्री कषायः। 3

उज्जयिनी निवासी वेश्यायें विलास पूर्वक झुलाती हुयी करधनी अथवा कदम न्यास से क्वणित एवं नखक्षतों से आहत मेघ के प्रथम बूँदों से ही संतृप्ति का अनुभव करेंगी। ऐसा यक्ष की उपपत्ति है -

पादन्यासः क्वणित रशनास्तत्रलीलावधूतं

रत्नच्छाया खचित विलिभिश्चामरैः क्लान्तहस्ताः

वेश्यास्त्वतो नखपद सुखान् प्राप्य वर्षा ग्रविन्दू

नामोक्ष्यन्ते त्वयि मधुकर श्रेणि दीर्घान् कटाक्षान्। 4

श्रृंगार रस के साथ ही साथ कवि ने भक्ति रस के लिए उद्दीपन विभाव के रूप में मेघ गर्जना का उपयोग किया है। शिव पूजन के समय बजाये जाने वाले नगाड़ों के साथ मेघगर्जन मिलकर भवनों में शिव के प्रति भक्ति की अभिवृद्धि करते हैं। ऐसा कालिदास ने मेघदूत में लिखा है। उत्तरमेघ में कालिदास ने कवि रूढ़ियों का प्रयोग करते हुए प्रकृति के उद्दीपक रूप का चित्रांकन किया है। जिसमें परम्परित रूप से प्रचलित है कि दोहद के ब्याज से पद्मिनी, नायिका के पादप प्रहार से अशोक पुष्पित होता है। यहाँ पर कवि ने प्रकृति के उद्दीपन रूप का चित्रण तो किया ही है साथ ही काव्य रूढ़ियों का भी अनुपालन किया है।

---

1. पूर्वमेघ - 22
2. पूर्वमेघ - 30
3. पूर्वमेघ - 32
4. पूर्वमेघ - 38

रक्ताशोकश्चल किसलयः केसरश्चात्र कान्तः

प्रत्यासन्नौ कुवरकुवृतेः माधवीमण्डपस्य

एकः सख्यास्तव सह मया वामपादाभिलाषी

कांङ्क्षन्त्यन्यो वदनमदिरां दोहदच्छद्मनाऽस्याः। 1

शारिका सन्देश में उद्दीपन विभाव के रूप में प्रकृति का चित्रांकन अत्यल्प है क्योंकि मधुर रस में संयोग कालिक वस्तुएँ सुखदायी होती हैं तो वियोग कालिक वस्तुओं का दुःखद वर्णन स्वतन्त्र रूप में न कर आलम्बन के सौन्दर्यगत उपमानों के रूप में किया जाता है फिर भी अम्बरनदीश क्षेत्र की अकृष्टपच्या भूमि धान की वालियाँ एवं उसकी हरीतिमा देख कौन प्रसन्न नहीं होगा ? रामपाणिवाद ने लिखा है -

यत्कारुण्यादुपहित महापुष्टितोऽकृष्टपच्य

व्रैहेयत्वादुपचित फलैः शालिभिः श्लाघनीयम्

स्फारं केरक्रमुक निकरालम्बताम्बूलिकाभिः

केषामेतन्न भवति तरां तुष्टये कुट्टराष्ट्रम्। 2

शारिका सन्देश में यह प्रतिपादित किया गया है कि संयोग कालिक जीवन में जो वस्तुएँ हृदय को आकृष्ट करती हैं, सुखोद्दीपक होती हैं, वही तत्व वियोग काल में हृदयदाहक बन जाते हैं। रामपाणिवाद ने एक ही श्लोक में प्रकृति के सुखात्मक एवं दुःखात्मक रूप का चित्रांकन अत्यन्त मनोहारी रूप में किया है जो कुवलय सुखकारी या कृष्ण की मुग्ध दृष्टि गोपियों को आह्लादकारक प्रतीत होती थी वही अब विरह व्यथिता गोपियों के लिए काम वाण का कार्य करती हैं।

मन्येऽहं ते कुवलयदल स्निग्ध मुग्धाः कटाक्षाः

साक्षाद् भूता मम खलु पुरा त्वत्समीप स्थितायाः

तादृक्च्छैत्या अपि बत त एवाधुना तप्ततप्ताः

सप्तार्चिर्वन्मदन विशिखीभूय मामुद्धमन्ति। 3

मुग्धा गोपी को यह विश्वास ही नहीं हो रहा है कि पुरुषों को आकृष्ट करने का स्त्रियोचित लज्जा पुरुष को उत्तेजित करने वाला मनोविज्ञान का परिणाम इतना कष्टकर और हृदयदाहक होगा। प्रकृति के विषम रूप का चित्रण मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर कवि ने इस प्रकार किया है -

---

1. उत्तरमेघ - 18
2. शारिका सन्देश - 25
3. शारिका सन्देश - 102

तस्याभावादयमपि जनस्त्वद्वियोगाग्निदाहं

दैवेनैवं प्रकृति विषमारम्भिणा लम्भितोऽभूत्

तं मे मन्तुं मदन चपलस्त्रैण शीलोपदिष्टं

मन्तुं मायामनुज ! महनीयनुभाव ! प्रसीद। 1

शारिका सन्देश का समापन सुखान्त रूप में है। जहाँ आश्रय गोपी आलम्बन कृष्ण वृंदावन का एकान्त स्थल यमुना की लहरों की सुशीतल वायु गोपी के संयोग को उद्दीप्त कर उसके शरीर को आनन्दातिरेक के कारण कम्पित कर रखा है, ऐसा वर्णन रामपाणिवाद ने किया है -

तत्रापश्यन्तदनु यमुना वीचिवातावधूत

प्रौढ़ामोद प्रसर विकसत्पुष्प पुञ्जे निकुञ्जे

क्रीडासंग प्रणमित मुखीं वासुदेवेन साकं

क्रीडन्तीं सा सकुतुकमना हन्त ! तामेव गोपीम्। 2

सारांश यह है कि मेघदूत की कथा सुखान्त की ध्वनि पर आधारित है क्योंकि यक्ष और यक्षिणी का यह वियोग एक वर्ष के लिए था अतः उसमें संयोगजनित सुखकारक उद्दीपन विभावों का वर्णन प्रत्यक्ष रूप में न कर स्मृतिजन्य संचारी भावों के माध्यम से हुआ है जबकि शारिका सन्देश की कथा सुखान्त है अतः उसमें प्रकृति के सुखात्मक रूप का भी चित्रांकन प्रत्यक्ष रूप से हुआ है। प्रकृति के दुःखात्मक रूप का जितना मार्मिक हृदयद्रावक चित्रांकन मेघदूत में हुआ है वह अत्यन्त प्रभविष्णु, स्वाभाविक और हृदय की अरन्तुद वेदना का स्वाभाविक चित्रण है। विरही यक्ष पल-पल परिवर्तित प्रकृति के विभिन्न रूपों उसके कोमल सुखदायी या भयंकर रूपों में स्वयं तो दुःखी होता ही है उसका यह दुःख यह स्मरण कर और भी द्विगुणित हो उठता है कि उसकी भीरु प्रिया सुकुमारी पत्नी मेघों के इस भीषण गर्जन, बसन्त के मादक उद्दीपन या शिशिर के हृत्कम्पायमान रूपों को किस प्रकार सहन करती होगी। इस दृष्टि से हम कालिदास के मेघदूत को विप्रलम्भ श्रृंगार का अक्षयकोश कह सकते हैं क्योंकि इस वियोग को उद्दीप्त करने वाले प्रकृति के नाना रूपों का चित्रांकन कवि ने किया है। इसकी अपेक्षा शारिका सन्देश में विरह का समय अत्यल्प है। कवि की दृष्टि प्रकृति की ओर उतनी नहीं रही जितनी आलम्बन रूप में कृष्ण के काम विनिन्दक सौन्दर्य, तीक्ष्ण कटाक्षों, केलि चातुर्य के स्मरण से गोपी की वियोगाग्नि चित्रण में रही है।

---

1. शारिका सन्देश - 109

2. शारिका सन्देश - 117

अलंकार योजना के लिए किया गया प्रकृति चित्रण - पहले कहा जा चुका है कि मानव और प्रकृति का सम्बन्ध अभिन्न है और कवियों का वर्ण्य विषय मूलतः मानव ही रहा है अतः प्रकृति के साथ रागात्मक सम्बन्ध निरूपण हेतु कवियों ने वर्ण्य विषय की समानता हेतु उपमान रूप में प्रकृति का पुष्कल प्रयोग किया है। इसे ही हम प्रकृति का आलंकारिक रूप मे वर्णन या चित्रण कहते हैं। मानवीय भावों संयोग या वियोग के अवसर पर मानव अंगों का विशेष रूप से नायिकाओं के नख-शिख वर्णन, पार्थिव, जलीय, आकाशीय, तैजस आदि तत्वों को उपमान रूप में ग्रहण करते हैं। यह चित्रांकन उपमा, रूपक जैसे साधर्म्यमूलक अथवा विरोधाभास आदि वैधर्म्यमूलक अलंकारों के प्रयोग में किया जाता रहा है।

कालिदास प्रकृति के सूक्ष्म निरीक्षक और तत्वान्वेषी कवि है। मेघदूत में रामगिरि से लेकर अलकापुरी तक पड़ने वाले प्रदेशों में प्राप्त वनस्पतियों को मानवीय सौन्दर्य निरूपण हेतु नियुक्त किया है। मेघ की अनेक छवियों का इन्द्रधनुषी चित्रांकन कवि ने अलंकृत रूप में करते हुए उसे विष्णु सदृश कहा है -

रत्नच्छायाव्यतिकर इव प्रेक्ष्यमेतत्पुरस्तात्
वाल्मीकाग्रात प्रभवति धनुः खण्डमाखण्डलस्य
येन श्यामं वपुरतितरां कान्ति मापत्स्यते ते
वर्हेणेव स्फुरितरुचिना गोपवेषस्य विष्णोः। 1

यहाँ द्रष्टव्य है कि कवि ने उपमा और प्रतीप के संकर से प्रकृति का वर्णन करते हुए विष्णु सौन्दर्य से उसकी तुलना की है। इसी प्रकार मेघ के आम्रवन में पहुँचते समय उसकी काली छाया पके हुए आमों के पीतभाग की शोभा स्त्रियों के स्तनों से देकर कवि ने अपनी सूक्ष्म निरीक्षण प्रवृत्ति का परिचय ही नहीं दिया अपितु स्तनों का रंग बिम्ब अलंकृत रूप में प्रस्तुत किया है।

छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रैः
स्त्वय्यारुढे शिखरमचलः स्निग्ध वेणीसवर्णे
नूनं यास्यत्यमर मिथुन प्रेक्षणीयामवस्थां
मध्ये श्यामः स्तन इव भुवः शेषविस्तार पाण्डुः। 2

श्रृंगार प्रिय कवि कालिदास को मुग्धा या ज्ञात यौवना नायिकाओं का उनकी देहयष्टि, मुष्टिमेय कटि, विस्तीर्ण श्रोणि भाग में क्वणित करने वाली रसना आदि के चित्रांकन में अत्यन्त कुशलता प्राप्त है। निर्विन्ध्या नदी

---

1. पूर्वमेघ - 15

2. पूर्वमेघ - 18

का ज्ञात यौवना नायिका के रूप में चित्रांकन कितना मनोनिवेषकारी है, द्रष्टव्य है -

विचिक्षोभस्तनित विहागश्रेणि काञ्चीगुणायाः

संसर्पन्त्याः स्खलित सुभगं दर्शितावर्तनाभेः

निर्विन्ध्याया पथि भव रसाभ्यन्तर तंनिपत्य

स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु। 1

इसी प्रकार कृष्णाभिसारिका नायिकाओं के लिए पथ प्रदर्शन हेतु विद्युत नर्तन कसौटी जैसे काले पत्थर में शुद्ध सोने की खिंची हुई रेखा रूप में चित्रांकन समर्थ कवि ही कर सकता है।

गच्छन्तीनां रमण वसतिं योषितां तत्र नक्तं

रुद्धालोके नरपति पथे सूचिभेद्यैस्तमोभिः

सौदामिन्या कनकनिकष स्निग्धया दर्शयोर्वी

तोयोत्सर्गस्तनित मुखरो मास्म भर्विक्लवास्ताः। 2

मेघदूत में पार्थिव और जलीय उपमानों का प्रचुर प्रयोग हुआ है। विशेष रूप से वृक्ष, कोमल पुष्प, पंखुड़ियां, श्वेत कुन्द पुष्प, भ्रमर, कमल प्रायः प्रयुक्त हैं। स्त्रियों के सौन्दर्य उपकरण के लिए कुरबक, शिरीष, लोध्र उपमान रूप में कालिदास ने उनकी नैसर्गिक सुषमा का चित्रांकन किया है -

तस्मिन्नद्रौ कतिचिदबला विप्रयुक्तः स कामी

नीत्वा मासान् कनक वलय भ्रंशरिक्त प्रकोष्ठः

आषाढ़स्य प्रथम दिवसे मेघमाश्लिष्टं सानुं

वप्रक्रीडा परिणत गज प्रेक्षणीयं ददर्श। 3

मेघदूत में कवि कालिदास ने काम केलि के विविध चित्रों का वर्णन किया है जिसमें नायिकाओं के सौन्दर्य, लज्जा विभूति क्रियाओं का चित्रण अंलकृत रूप में इस प्रकार किया है। बिम्बा फल के समान अधरोष्ठों का वर्णन कामशास्त्र में प्रायशः हुआ है किन्तु कवि ने नीवी बन्धन के परिप्रेक्ष्य में इसे अलंकृत रूप में प्रस्तुत किया है -

नीवीवन्धोच्छवसित शिथिलं यत्र बिम्वाधराणां

क्षौमं रागाद निभृत करेष्वाक्षिपत्सु प्रियेषु

अर्चिस्तुंगानविमुखमपि प्रात्य रत्न प्रदीपान्

ह्रीमूढानां भवति विफल प्रेरणा चूर्ण मुष्टि। 4

---

1. पूर्वमेघ - 29

2. पूर्वमेघ - 40

3. पूर्वमेघ - 2

4. उत्तरमेघ - 7

इस प्रकार कालिदास ने न केवन उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के लिए ही प्रकृति का उपयोग किया है अपितु मानवीय सौन्दर्य के समक्ष अप्रस्तुत उपमानों की व्यर्थता प्रकट करने के लिए प्रतीप, व्यतिरेक, विरोधाभास जैसे अलंकारों का भी प्रयोग साम्य नियोजन के लिए किया है। कहना नहीं होगा कि अलंकृत रूप में प्राकृतिक उममानों का उपयोग परम्परित रूप में वर्णित काम शास्त्रीय ग्रन्थों के अनुकरण पर हुआ है। इतना अवश्य है कि प्रयोगगत वैचित्र्य तथा नूतनता कालिदास की अपनी विशेषता है क्योंकि कामशास्त्र में नख-शिख परम्परा में वेणी (चोटी) के लिए नागिन से लेकर चर्मतल तक के लिए कमल दल प्राक्तन काल से ही प्रयुक्त होते रहे हैं।

शारिका सन्देश में अलंकार के रूप में प्रकृति का प्रयोग कम ही स्थलों में हुआ है यदि कालिदास ने प्रकृति के लिए मानव और मानव सौन्दर्य के लिए प्रकृति को उपमान बनाकर द्विविध रूप में प्रकृति के इस रूप को प्रस्तुत किया है तो रामपाणिवाद ने कृष्ण और गोपी सौन्दर्य निरूपण हेतु उपमान रूप में प्रकृति को ग्रहण किया है। कृष्ण की आंगिक श्यामलता लवजलधर और शोभा की तुलना अलसी के पुष्प से की है -

तस्तिन्नास्ते तरुण जलद श्यामधामाभिरामः । 1

इसी प्रकार कमलपत्रों से स्पर्धा करने वाले नेत्रों का वर्णन प्रतीप अलंकार के रूप में रामपाणिवाद ने इस प्रकार किया है - भ्रूवल्लीकं कुवलदयल स्पर्धिनेत्रद्वयीकम्। 2

कृष्ण सौन्दर्य के चित्रांकन हेतु प्रतीप अलंकार के माध्यम से विष्णु या कृष्ण सौन्दर्य का वर्णन रामपाणिवाद ने अत्यन्त भावुक होकर इस रूप में किया है -

त्वत्तुण्डश्री तुलनाविलसद् घोणमेणांकबिम्ब
च्छायास्तेयं प्रवण वदनं पक्व बिम्वधरोष्ठम्
कम्बुग्रीवं कर धृत कशाकम्बु कम्राम्बुदालि
श्यामश्री मत्तरल तुलसी दाम दोरन्तरालम्। 3
मुक्ताहारोन्मिलितवन मालाब्जमाला कलापम्
तप्त स्वर्णाभरण किरण श्रेणि शोण प्रकाशम्
पञ्चत्काञ्ची पटलघटना सङ क्वणत्किंकणीक
श्रोणी बिम्ब प्रचुर रुचिर स्फीत पीताम्बराढ्यम्। 4

---

1. शारिका सन्देश - 6
2. शारिका सन्देश - 29
3. शारिका सन्देश - 40
4. शारिका सन्देश - 41

इस प्रकार रामपाणिवाद ने पुरुष रूप में कृष्ण को आलम्बन बनाकर उनके समानुपातिक आंगिक विस्तार देहकान्ति आदि के लिए प्रकृति के विभिन्न तत्वों का अलंकृत रूप में चित्रांकन किया है। नेत्रों के लिए, कमल, मुख के लिए, पूर्णचन्द्र, अधरों की लालिमा हेतु वन्धूकपुष्प या सायंकालिक सूर्य की किरणें जैसे उपमानों का सार्थक प्रयोग किया है --

क - राजीवाक्षं तव वपुरये राजगोपाल विष्णो। 1

ख - कान्ति कामप्य विरलकलायालिलालित्य वन्धूम्

वन्धूक श्रीहरण निपुणां दन्त वासोद्युतिं च। 2

तात्पर्य यह है कि अलंकृत रूप में प्रकृति का प्रयोग कालिदास ने अत्यन्त विस्तृत रूप में किया है। पहले कहा जा चुका है मेघ, विद्युत, चन्द्र, सूर्य की किरणें, नक्षत्र जैसे आकाशीय उपमान कमल, कुन्द, भ्रमर, वन्धूक जैसे जलीय या पार्थिव उपमानों का क्षेत्र अत्यन्त विस्तीर्ण है। इस दृष्टि से कवि की दृष्टि का विस्तार बहु आयामी है जबकि शारिका सन्देश में मात्र कृष्ण की आंगिक शोभा के लिए ही उपमानों का प्रयोग किया गया है। अतः संख्या और क्षेत्र की दृष्टि से शारिका सन्देश के उपमान सीमित हैं।

प्रकृति का मानवीकरण - कवि को प्रजापति स्वायंभू कहा गया है। अपने काव्य संसार में मानव और सृष्टि का साथ वह रागात्मक सम्बन्ध रूप में निरूपित करता है। उसमें प्रकृति भी उसके सुख-दुःखों की सहचरी है। प्रकृति में मानवीकरण (मानवी भावों को आरोपित) कर मानव समाज के साथ उसकी सहानुभूति प्रदर्शित कर दोनों का तादात्म्य स्थापित किया गया है। आधुनिक समीक्षा पद्धति में प्रकृति का यह रूप पाश्चात्य साहित्य की देन है किन्तु संस्कृत के विशाल वाङमय में प्रकृति को मानव के समान कार्य करते हुए वाल्मीकि ने अनेक स्थानों पर चित्रांकित किया है। कालिदास ने भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रकृति के ऐसे रूपों का उल्लेख किया है। जैसे - रामगिरि पर्वत पर विदाई लेता हुआ यक्ष मेघ से कहता है -

लाक्षारागं चरण कमलन्यासयोग्यं च यस्या

मेकः सूते सकलमबला मण्डनं कल्पवृक्षः। 3

तात्पर्य यह है कि प्रेमीजन जब चिरकाल से मिलते हैं तो प्रेमाश्रु स्वाभाविक रूप से निःसृत होते हैं। इस प्रकार ग्रीष्म निदाघ से उत्तप्त रामगिरि के प्रेमाश्रु मानव के समान प्रतीत होते हैं। इसी प्रकार दशार्ण प्रदेश की राजधानी विदिशा स्थित वेत्रवती को मेघ कामुकजनों की तरह प्राप्त करता हुआ वर्णित है।

---

1. शारिका सन्देश - 105
2. शारिका सन्देश - 106
3. पूर्वमेघ - 12

तेषां दिक्षु प्रथित विदिशालक्षणां राजधानीं

गत्वा सद्यः फलम विकलं कामुकत्वस्य लब्धा

तीरोपान्त स्तनित सुभगं पास्यसि स्वादु यस्मात्

सभ्रूभंगमुखमिव पयो वेत्रवत्याश्चलोर्मि। 1

कालिदास ने पूर्वमेघ में स्थान विशेष परिस्थिति भौगोलिक स्थलीय दृष्टि और ऋतु के संयोग से मेघ सौन्दर्य का मोहक और अद्वितीय वर्णन किया है जिसमें मेघ को मानव सदृश क्रिया-कलाप करने के पीछे कवि की दृष्टि यह रही है कि इसमें मेघ का मनोरंजन तो होगा ही यात्रा श्रम परिहार भी होता रहेगा। इसलिए प्रायः मेघ में मानवी क्रिया-कलाप का आरोपण किया है। सन्देश काव्य की पृष्ठभूमि भी यही है कि अग्नि, वाष्प, धूम से निर्मित जड़ मेघ भला मनुष्य की अनिर्वचनीय दशा का वर्णन कैसे कर सकता है। इसीलिए कवि कालिदास ने मेघ में क्रियाओं ,भावों का आरोप कर अपनी नवीन दृष्टि का परिचय दिया है अनेक जगह यह मेघ कवि से सहानुभूति रखता हुआ चित्रित किया गया है जैसे स्वप्न देखता हुआ पुरुष प्रगाढ़ आलिंगन के लिए नायिका की ओर अपनी भुजाएँ फैलाता है और उसकी निष्फलता पर वन-देवियाँ सहानुभूतिपूर्वक ओस के माध्यम से मोतियों के समान मोटे-मोटे अश्रु विन्दुओं को बहाती वर्णित हुईं हैं -

मामाकाश प्रणिहित भुजं निर्दयाश्लेषहेतो

र्लस्धायास्ते कथमपि मया स्वप्नसंदर्शनेषु

पश्यन्तीनां न खलु बहुशो न स्थली देवतानां

मुक्ता स्थूलास्तरु किसलयेष्वश्रुलेशाः पतन्ति। 2

तात्पर्य यह है कि कालिदास ने प्रकृति के इस चित्रांकन में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की है। यह स्वाभाविक ही है कि पेड़ों की पत्तियों से ओस बूंदें टपकती है जिसका चित्रांकन कवि ने अपनी नवनवोन्मेषशालिनी कल्पना के द्वारा प्रकृति में आरोपित किया है। विरही यक्ष द्वारा स्वप्न में देखी गयी प्रिया के गाढ़ आलिंगन हेतु बढ़ायी गयी निष्फल भुजाओं में उसकी वियोग की तीव्रता प्रेम में कातरता और विवशता तो चित्रित ही है। इस विवशता को देख सहानुभूतिपूर्वक वन देवियाँ ओस के माध्यम से आँसू बहाती है।

शारिका सन्देश में मुख्यतया कवि परम्परा में इस रूढ़ि का प्रयोग किया गया है कि शारिका मानवीय भाषा का अनुकरण करने में समर्थ है। रामपाणिवाद ने इसी रूढ़ि का उपयोग कर विरहिणी

---

1. पूर्वमेघ - 25

2. उत्तरमेघ - 46

गोपी के सन्देश को शारिका द्वारा इन शब्दों में प्रकट किया गया है -

सन्दिश्यैवं कमपि कमलानाथ ! गाथा प्रबन्धं

स्वाभिप्राय प्रथन फलकं त्वत्प्रिया काऽपिगोपी

त्यादिक्षत्वद्विरह निरहंकारिका शारिका मा

मित्थं तस्मै शुकवधु ! मधुध्वंसिने शंससर्वम्। 1

<u>प्रकृति का उपदेशात्मक रूप</u> - पहले कहा जा चुका है कि अनन्य सम्बन्धों के कारण प्रकृति मानव की उपदेशिका भी रही है। मानव ने अनेक भाव, गुण, क्रिया-व्यापार प्रकृति से ही सीखा है। अतः यह स्वाभाविक है कि काव्य में वह प्रकृति के नीतिपरक उपदेशात्मक रूप का भी चित्रांकन करे वैदिक वाङमय में विशेष रूप से ऋग्वेद में ऐसे सूक्त भरे पड़े हैं जहाँ प्रकृति मानव को शिक्षा देती हुई प्रतीत होती है। पृथ्वी और उषा सूक्त में ऐसे ही स्थल हैं जहाँ प्रकृति के काव्यात्मक अलंकृत और उपदेशात्मक रूप चित्रित है। कालिदास ने मेघदूत में ऐसे ही कुछ उपदेशों का वर्णन प्रकृति के माध्यम से किया है। जैसे - आम्रकूट पर्वत पर मूसलाधार वर्षा से दावाग्नि को शान्त करने वाले मेघ को मार्ग की थकान से व्याप्त पर्वत सिर पर धारण करेगा क्योंकि मित्र के आश्रय पर आने पर कोई भी व्यक्ति उससे विमुख नहीं हो सकता है -

त्वामासार प्रशमित वनोपप्लवं साधु मूर्ध्ना

वक्ष्यत्यध्वश्रम परिगतं सानुमानाम्रकूटः

न क्षुद्रोऽपि प्रथम सुकृतापेक्षया संश्रयाय

प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः किं पुनर्यस्तथोच्चैः। 2

नीतिशास्त्र में कहा गया है कि समान सुख-दुःख वाले व्यक्तियों में मित्रता स्वाभाविक रूप से प्रगाढ़ हो जाती है। कान्ता विश्लेषित यक्ष जिस विरहाग्नि में जल रहा है उसकी दृष्टि में हिमालय में लगा हुआ दावानल को मेघ उसी प्रकार शान्त कर देगा जैसे श्रेष्ठ त्यागी, परोपकारीजन अपनी सम्पत्ति से दुःखी लोगों के कष्ट हरण करने में समर्थ होते हैं --

तं चेद वायौ सरति सरल स्कन्ध संघट्टजन्मा

वाधेतोल्काक्षपित चमरी वालभारोदवाग्निः

अर्हस्येनं शमयितुमलं वारिधारा सहस्त्रैः

---

1. शारिका सन्देश - 114 2. पूर्वमेघ - 17

रापन्नार्ति प्रशमनफलाः सम्पदोह्युन्तामानाम्। 1

कालिदास की यह उपपत्ति यक्ष के माध्यम से प्रकट हुई है कि सुख-दुःख एक ही सिक्के के दो पहलू हैं उनका बड़ा ही प्रसिद्ध पद चक्रनेमिक्रमेण इसी सिद्धान्त की पुष्टि करता है -

कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा

नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण। 2

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि कालिदास का प्रकृति निरीक्षण अत्यन्त सूक्ष्म है। प्राकृतिक जीवन के विशिष्ट, ललित और उल्लसित जीवन का चित्रांकन करने में उनकी मेधा व कल्पना अद्वितीय है। प्रकृति के कोमल मसृण, सुकुमार, स्वाभाविक इन्द्रधनुषी रूपों में प्रकृति का चित्रांकन रसानुभूति में सहायक बन पड़ा है। संश्लिष्ट और आलम्बन चित्रों की अपेक्षा वे प्रकृति के समग्र चित्रांकन में अधिक दत्तचित हुए हैं। कुसुमों की कमनीयता उनके सौरभ से अभिभूत कालिदास प्रकृति के ऐसे ही चित्रों के अंकन में अत्यन्त समर्थ हुए हैं जबकि रामपाणिवाद के शारिका सन्देश में क्षेत्र विस्तार तो अवश्य है किन्तु वर्णन विहगावलोकन की दृष्टि से हुआ है। इन वर्णनों में तत्परता अधिक है। निरीक्षण की दृष्टि रसानुभूति तक नहीं पहुँच पाती। कालिदास का मेघदूत मानव विरह का ही काव्य नहीं प्रकृति के अनन्यभूत, अदृश्य, अकल्पनीय चित्रों का भी जीवन्त काव्य है।

जैसा कि **के0 एस0 रामशास्त्री स्वामी** ने अपने प्रसिद्ध पाश्चात्य आलोचक रायहर की एतद्विषयक fVIi.kh mn~/kr dhgS "कम ही ऐसे व्यक्ति ने चरणक्षेप किया होगा जिसने जीवित प्रकृति के रूपों का इतना सूक्ष्म निरीक्षण किया हो जितना कालिदास, यद्यपि उनका निरीक्षण कवि का था। वैज्ञानिक का नहीं कालिदास के काव्य का पूर्ण आस्वाद लेने के लिए पाठक को ऐसे वनों और पर्वतों में अवश्य कुछ सप्ताह व्यतीत करना चाहिए जहाँ मानव की पहुँच नहीं हुई हो। कालिदास का प्रकृति ज्ञान केवल सहानुभूतिमूलक ही नहीं अपितु वह सूक्ष्मतया सटीक है। हिमालय की हिमराशि तथा पवन संगीत और पवित्र गंगा की शक्तिशालिनी धारा ही केवल उनके अधिकार की वस्तुएँ ही नहीं छोटी-छोटी सरिताएँ विटप तथा छोटे से छोटा पुष्प भी सृष्टिव्यापिनी उसकी दृष्टि से बाहर नहीं जा सके।" 3

अन्य वस्तु वर्णन -- कवि निर्मित संसार में मानव एवं मानवेतर सृष्टि का अत्यन्त विस्तृत एवं पुष्कल वर्णन मिलता है। काव्यशास्त्रीय आचार्यों ने मानवेतर सृष्टि के अन्तर्गत आने-वाले विविध रूपा प्रकृति का वर्णन तो किया ही है। साथ ही कवि के सूक्ष्म निरीक्षण और उसकी बहुज्ञता हेतु अन्य वस्तु वर्णन का भी उल्लेख करते

1. पूर्वमेघ - 56
2. उत्तरमेघ - 49
3. कालिदास - के0 एस0 रामस्वामी भाग -2, पृ0सं0- 158 उद्धृत महाकवि कालिदास पृ0 सं0 - 305

हैं। बात यह है कि प्रकृति के संश्लिष्ट या अन्य रूपों के ऐसे क्रिया-व्यापार रह जाते हैं जिनका उल्लेख कोई नवनवोन्मेष शालिनी प्रतिभा कवि ही कर पाता है। दण्डी, रुद्रट और विश्वनाथ इत्यादि आचार्यों ने इस अन्य वस्तु वर्णन को प्रकृति के अन्दर ही समाहित करने का प्रयास किया है किन्तु लक्षणानुधावन से विपरीत कवि इन अन्य वस्तु वर्णनों के प्रति जो गम्भीर वर्णनानुराग प्रदर्शित करता है उससे उसका सूक्ष्म निरीक्षण वस्तु के प्रति अनुरक्ति प्रकट होती है।

कालिदास प्रकृति का सुकुमार और अन्यतम कवि है। मेघदूत उनका ऐसा गीतिकाव्य है जिसमें रामगिरि आश्रम से लेकर अलकापुरी तक की यात्रा मेघ द्वारा कराई गई है जिसमें स्थलीय, जलीय एवं आकाशीय अनेक वस्तुओं का मनमोहक चित्र अंकित किया गया है। इसी प्रकार शारिका सन्देश में उत्तर या मथुरा वृन्दावन से दक्षिण तक की यात्रा शारिका से कराई गई है और यह शारिका तीन दिन में ही यात्रा पूर्ण करती है। अतः कवि को अन्यवस्तु वर्णन के अन्तर्गत कम विषय ही समावेशित करने का समय मिला है जबकि मेघदूत में मन्दगति से चलने वाले मेघो की दृष्टि में पड़ने वाले समस्त प्रदेशों, नदियों, जलाशय, वन, मन्दिर, स्त्रियों के विविध अनुरञ्जनकारी रूप, नगर निवासियों की प्रवृत्तियाँ आदि का स्वाभाविक एवं जीवन्त चित्रण हुआ है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है -

पर्वत - मेघदूत में रामगिरि, अलका, आम्रकूट जैसे पर्वतों का वर्णन है। जहाँ सघन छायादार वृक्ष तथा अतिवृष्टि को सज्जनों की भाँति सहन करने की सामर्थ्य का उल्लेख कवि ने किया है। वर्णनों में प्रकृति और मानव की कोमल भावनाओं की अनुभूतियों का संश्लिष्ट चित्रण मिलता है -

रामगिरि - स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु। 1

आम्रकूट - त्वामासार प्रशमित वनोपप्लवं साधु मूर्ध्ना
वक्ष्यत्यध्वश्रम परिगतं सानुमानाम्रकूटः
न क्षुद्रोऽपि प्रथम सुकृतापेक्षया संश्रयाय
प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः किं पुनर्यस्तथोच्चैः। 2

छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रैः
स्त्वय्यारुढ़े शिखरमचलः स्निग्ध वेणीसवर्णे
नूनं यास्यत्यमर मिथुन प्रेक्षणीयामवस्थां

---

1. पूर्वमेघ - 1
2. पूर्वमेघ - 17

मध्ये श्यामः स्तन इव भुवः शेषविस्तार पाण्डुः। 1

यहाँ यह द्रष्टव्य है कि उपमेय बड़ा विस्तीर्ण और उपमान नारी के स्तनों से उपमित कर कवि ने अपने रंग वैभव का चित्रांकन ही नहीं किया अपितु सुकुमार अंगों के दर्शनजन्य आनन्द से मेघ के आप्यायित होने की भावना भी अत्यन्त कोमल रूप में वर्णित है। इसी प्रकार विदिशा में नीचैः पर्वत का ऐसा संश्लिष्ट रूप वर्णित है जिसमें वरांगनाओं की रतिक्रीड़ा सम्बन्धी सुगन्ध का उद्दीपक वर्णन है।

नीचैराख्यं गिरिमधिवसेस्तत्र विश्राम हेतो

स्त्वत्संपर्कात पुलकितमिव प्रौढ़पुष्पैः कदम्बैः

यः पुण्यस्त्रीरति परिमलोद्गार रभिर्नागराणा

मुद्दामानि प्रथयति शिलावेश्मभिः यौवनानि। 2

हिमालय – यह उत्तर भारत का प्रसिद्ध भौगोलिक और आध्यात्मिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पर्वतमाला है हिमालय वर्णन कालिदास को अत्यन्त प्रिय है क्योंकि उनके आराध्य देव शिव का यह निवास स्थान है। हिमालय स्थित कैलाश विभिन्न शिखरों वाले इस पर्वत का वर्णन मेघदूत में कवि ने इसप्रकार किया है कि जैसे शिव का अट्टहास राशिभूत हो उठा हो। बात यह है कि हास्य का रंग श्वेत धवल माना गया है। हिमाच्छादित चोटियों के लिए शिव के अट्टहास की कल्पना अथवा विकीर्ण श्रृंखला माला के लिए दशानन की भुजाओं का उल्लेख करना कालिदास जैसे समर्थ सूक्ष्मान्वेषी कवि की कल्पना हो सकती है –

ये संरम्भोत्पतनरभसाः स्वांगभंगाय तस्मिन्

मुक्ताध्वानं सपदि शरभा लंघयेयुर्भवन्तम्। 3

तत्र व्यक्तं दृषदि चरणन्यासमर्धेन्दु मौलेः

शश्वत्सिद्धैरुपचित बलिं भक्तिनम्रः परीयाः। 4

क्रौञ्च – प्रालेयाद्रेरुपतट मतिक्रम्य तांस्तान्विशेषान्

हंसद्वारं भृगुपतियशोवर्त्म यत्क्रौञ्चरन्ध्रम्। 5

इसी प्रकार कैलाश पर्वत का वर्णन द्रष्टव्य है –

---

1. पूर्वमेघ – 18
2. पूर्वमेघ – 26
3. पूर्वमेघ – 57,
4. पूर्वमेघ – 58
5. पूर्वमेघ – 60

कैलाश -

गत्वाचोर्ध्व दशमुखभुजोच्छ्वासित प्रस्थसन्धेः

कैलासस्य त्रिदश वनिता दर्पणस्या तिथिः स्याः

श्रृंगोच्छायैः कुमुदविशदैर्योवितत्य स्थितः खं

राशीभूतः प्रतिदिनमिव त्र्यम्बकस्याट्टहासः। 1

नदियाँ - मेघदूत में नर्मदा, गंगा, सिन्धु, चर्मण्वती, गम्भीरा, यमुना आदि नदियाँ चित्रांकित है जिसके चित्त के समान निर्मल जल वेणी के समान क्षीणधारा तथा उस जल में पड़ने वाले मेघों के प्रतिबिम्ब से इन्द्रनील मणि की भाँति शोभा का उल्लेख कवि ने किया है -

निर्विन्ध्या - यह विन्ध्य पर्वत से निकलने वाली एक नदी है। पहाड़ों के मध्य अनुरणन की ध्वनि से कवि ने इसे मदमाती रमणी के क्षीण कटि में बँधी रशना (करधनी) के रूप में चित्रित किया है -

विचिक्षोभस्तनित विहाग श्रेणि काञ्ची गुणायाः

संसर्पन्त्याः स्खलित सुभगं दर्शितावर्तनाभेः

निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्निपत्य

स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु। 2

---

1. पूर्वमेघ - 61, 60

2. पूर्वमेघ - 29

गंगा-

पर्वतराज हिमालय से उतरकर सागर पुत्रों के लिए स्वर्ग सोपान बनाने वाली गंगा का संश्लिष्ट, कोमल, श्रृंगारपरक चित्रण कवि ने इस प्रकार किया है।

तस्माद्गच्छेरनुकनखलं शैलराजावतीर्णां
जह्नोः कन्यां सगरतनयस्वर्ग सोपान पंक्तिम्
गौरीवक्त्र भृकुटि रचनां या विहस्येव फेनैः
शम्भोः केशग्रहण मकरोदिन्दु लग्नोर्मि हस्त। 1
मन्दाकिन्याः सलिल शिशिरैः सेव्यमाना मरूद्भि
र्मन्दाराणामनुतटरूहां छायया वारितोष्णाः। 2

सरस्वती - कवि ने लक्षणा द्वारा सरस्वती की पावनता का उल्लेख कर मेघ को श्यामल शरीर किन्तु निर्मल मन वाला बताया है -

कृत्वा तासामधिगममपां सौम्य सारस्वतीना
मन्तः शुद्धस्त्वमपि भविता वर्णमात्रेण कृष्णः। 3

रेवा - विन्ध्यपर्वत से ही निकलने वाली रेवा को कुछ लोग नर्मदा भी कहते है जो मेघ को इतनी पतली दिखाई देती है जैसे हाथी के शरीर पर चित्रकारी के लिए बनाई गई रेखाएँ हो -

रेवां द्रक्ष्यस्युपल विषमे विन्ध्यपादे विशीर्णा
भक्तिच्छेदैरिन विरचितां भूतिमंगे गजस्य। 4

वेत्रवती - दशार्ण देश की राजधानी विदिशा के समीप वेत्रवती का चित्रांकन कवि ने इस प्रकार किया है जैसे कोई कामुक पुरूष लीला विलास से युक्त किसी सुन्दरी को प्राप्त कर ले।

तेषां दिक्षु प्रथित विदिशालक्षणां राजधानी
गत्वा सद्यः फलम विकलं कामुकत्वस्य लब्धा
तीरोपान्त स्वनित सुभगं पास्यसि स्वादु यस्मात्
सभ्रूभंगमुखमिव पयो वेत्रवत्याश्चलोर्मि। 5

1- पूर्वमेघ- 53, 3- पूर्वमेघ- 52, 5- पूर्वमेघ- 25
2- पूर्वमेघ- 6, 4- पूर्वमेघ- 19,

शिप्रा - उज्जयिनी से होकर मालवा क्षेत्र में बहने वाली शिप्रा नदी का वर्णन कवि ने श्रृंगार की दृष्टि से किया है जिसके किनारे प्रातःकाल सारसों का कल कूज, विकसित कमलों की सुगन्ध एवं शिप्रा जल से स्पर्श कर शीतल वायु है। तात्पर्य यह कि सुखान्त के बाद प्रेमी प्रिया की चाटुकारिता करता हुआ मधुरालाप करता है। उसी प्रकार शिप्रा का पवन प्रेमियों के समान रमणियों के रतिश्रम को दूर करता चित्रित हुआ है -

दीर्घीकुर्वन्पटु मदकलं कूजितं सारसानां
प्रत्यूषेषु स्फुटित कमलामोद मैत्री कषायः
यत्र स्त्रीणां हरित सुरतग्लानि मङ्गानुकूलः
शिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः। 1

यमुना -

गंगा के साथ यमुना का अभिन्न सम्बन्ध निरूपण कवि को अभिप्रेत है शुद्ध, स्वच्छ स्फटिक जल में पड़ती हुई मेघ की परछाईं से गंगा ही यमुना रूप में परिवर्तित होकर संगम जैसा दृश्य उपस्थित करती है। कालिदास की कल्पना एक नये प्रयाग की सृष्टि ही नहीं करती अपितु सितासित रूप में मानसिक, चाक्षुष प्रत्यक्षीकरण कर नूतन संगम की सृष्टि करती है।

संसर्पन्त्या सपदि भवतः स्त्रोतसिच्छायया ऽसौ
स्यादस्थानोपगत यमुना संगमेवाऽभिरामा। 2

गम्भीरा -

गम्भीरायाः पयसि सरितेश्चेतसीव प्रसन्ने
छायात्माऽपि प्रकृति सुभगो लप्स्यते ते प्रवेशम्
तस्यमादस्याः कुमुदविशदान्यर्हसि त्वं न धैर्या
न्मोधी कर्तुं चटुल शफरोद्वर्तन प्रेक्षितानि। 3

चर्मण्वती -

त्वय्यादातुं जलमवनते शार्ङ्गिणो वर्णचौरे
तस्याः सिन्धोः पृथुमपि तनुं दूरभावात्प्रवाहम्
प्रेक्षिष्यन्ते गगनगतयो नूनमावर्ज्य दृष्टि
रेकं मुक्तागुणमिव भुवः स्थूलमध्येन्द्रनीलम्। 4

---

1. पूर्वमेघ- 32
2. पूर्वमेघ- 54
3. पूर्वमेघ- 43
4. पूर्वमेघ- 49

सिन्धु -

वेणीभूत प्रतनुसलिला तामतीतरय सिन्धुः

पाण्डुच्छाया तटरुह तरु भ्रंशिभिर्जीर्ण पर्णैः

सौभाग्यं ते सुभग विरहावस्थया व्यञ्जयन्ती

कार्श्यं येन व्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्यः। 1

शारिका सन्देश में अम्बर नदीश क्षेत्र स्थित अमर तटिनी नदी का वर्णन उपलब्ध है-

तत्वं तस्मिन्नभरतटिनी धाम्नि यत्सन्निधत्ते

तत्वं किन्चित्परममलं धाम दामोदराख्यम्। 2

सरोवर - पार्थिव या जलीय में सरोवर महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं क्योंकि इसके आस-पास मन्दिर या देवालय स्थित होते हैं। कवि ने मानसरोवर का उल्लेख इस प्रकार किया है -

तच्छ्रुत्वा ते श्रवणसुभगं गर्जितं मानसोत्काः। 3

कैलाश पर्वत में स्थित इस मानसरोवर में स्वर्णिम कमल है जो ऐरावत हाथी को भी आनन्दित करने वाले हैं। सम्भवतः स्वर्णकमल कहने के पीछे कवि की दूरारूढ़ कल्पना प्रतीत होती है। उषाकाल की सुनहरी किरणों से कमल स्वर्ण कमल में परिवर्तित हो जाते है। ऐसी कुछ कल्पना कवि प्रस्तुत करता है -

हेमाम्भोज प्रसविसलिलं मानसस्याददानः

कुर्वन्कामं क्षणमुखपटप्रीति भैरावतस्य

धुन्वन्कल्पद्रुम किसलयान्यंशुकानीव वातै

र्नानाचेष्टैर्जलद ललितैर्निर्विशेस्तं नगेन्द्रम्। 4

शारिका सन्देश में रुष्ट होकर कृष्ण के अम्बरनदीश क्षेत्र में जाने का वर्णन है। जिस देवालय में श्रीकृष्ण विष्णुविग्रह में विराजमान है उसमें स्थित सरोवर का वर्णन कवि ने किया है। जिसके किनारे सुपाड़ी, केला और नारियल के वृक्ष से सुशोभित है -

तत्र क्षेत्रे किल भगवतः प्राङ्मुखस्याग्रभागे

वृत्ताकारो विलसतितरां वीतपङ्कस्तटाकः। 5

कासारश्च क्रमुक कदलीकेरवत्तीरभागः

---

1. पूर्वमेघ- 30
2. शारिका सन्देश - 13
3. पूर्वमेघ - 11
4. पूर्वमेघ - 65
5. शारिका सन्देश - 19, 20

नगर - कालिदास ने अलका, उज्जयिनी, कनखल तथा शारिका सन्देश में चम्पकशेरि नगर का वर्णन किया है। अलकापुरी में यक्ष प्रिया का निवास है, जिसके महल का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है -

गन्तव्या ते वसतिरलका नाम यक्षेश्वराणां
वाह्योद्यान स्थित हरशिरश्चन्द्रिका धौतहर्म्या। 1

इसी अलकापुरी का बहुविधवर्णन कवि ने मेघदूत में किया है। वहाँ के हर्म्य अट्टालिकाएँ, प्रवाहित होने वाले वायु, मेघों द्वारा स्रवित जलकणों के टपकने से उत्पन्न श्वेत झालर, भवनों के अन्दर अपार निधि, अप्सराएँ और कुबेर के यश को उच्च स्वर में गाने वाले किन्नर और वैभ्राज नामक उद्यान का वर्णन इस प्रकार किया गया है -

नेत्राः नीताः सतत गतिना यद्विमानाग्रभूमि
रालेख्यानां सलिल कणिका दोषमुत्पाद्य सद्यः
शङ्काष्पृष्टा इव जलमुचस्त्वादृशा जालमार्गे
धूमोद्गारानुकृगतनिपुणाः जर्जरा निष्पतन्ति।
यत्र स्त्रीणां प्रियतम भुजोच्छ्व सितालिंगिंताना
मंगग्लानिं सुरतजनितां तन्तु जालावलम्बाः
त्वत्संरोधापगम विशदैश्चन्द्रपादैर्निशीथे
व्यालुम्पन्ति स्फुटजललवस्यन्दिनश्चन्द्रकान्ताः
अक्षय्यान्तर्भवन निधयःप्रत्यहं रक्त कण्ठै
रुद्रायदिर्धनपतियशः किन्नरैर्यत्र सार्धम्
वैभ्राजाख्यं विबुधवनितावार मुख्या सहाया
बद्धालापा बहिरुपवनं कामिनो निर्विशन्ति। 2

इसी अलकापुरी में स्थित कल्पवृक्ष नाना रंगावेष्टित वस्त्र आभूषण, भ्रूविलास तथा लाक्षाराग का सूक्ष्म चित्रांकन कवि ने इस प्रकार किया है -

वासश्चित्रं मधु नयनयोर्विभ्रमादेशदक्षं
पुष्पोद्भेदं सह किसलयैर्भूषणानां विकल्पम्

---

1. पूर्वमेघ - 7 2. उत्तरमेघ - 8, 9, 10

लाक्षारागं चरण कमलन्या सयोग्यं च यस्या

मेकः सूते सकलमबलामण्डनं कल्पवृक्षः। 1

इसी अलकापुरी में सुन्दर स्त्रियाँ गगनचुम्बी शिखरों से युक्त भवन, लीला कमल धारण करने वाली स्त्रियों का भी वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है -

विद्युत्वन्तं ललित वनिताः सेन्द्रचापं सचित्राः

संगीताय प्रहतमुरजाः स्निग्ध गम्भीर घोषम्

हस्तेलीला कमलमल के बालकुन्दानुविद्धं

नीतालोध्र प्रसवरजसा पाण्डुतामानने श्रीः

यत्रोन्मन्तभ्रमरमुखराः पादपा नित्यपुष्पाः

हंस श्रेणीरचितरशना नित्यपद्याः नलिन्यः

केकोत्कण्ठाः भवनशिखिनो नित्यभास्वत्कलापाः

नित्यज्योत्स्नाः प्रतिहतमोवृत्तिरम्याः प्रदोषाः। 2

विदिशा - यह दशार्ण प्रदेश की राजधानी है इसकी सुन्दरता का वर्णन कालिदास ने इसप्रकार किया है।

तेषां दिक्षु विदिशा लक्षणां राजधानीं

गत्वा सद्यः फलमविकलं कामुकत्वस्य लब्धा। 3

उज्जयिनी - कवि को उज्जयिनी नगर अत्यन्त प्रिय है। सम्भवतः कवि की जन्मभूमि न हो तो कर्मभूमि अवश्य रही होगी। यहाँ का महाकालीश्वर विश्व विश्रुत है। जलवायु विशेषज्ञों की धारणा है कि वर्षाऋतु में उत्तर दिशा की ओर प्रवाहित मार्ग में उज्जयिनी हट करके है इसलिए कालिदास ने भी मेघ को वक्रमार्ग से जाकर उज्जयिनी की शोभा देखने का अनुरोध किया है -

वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां

सौधोत्संगप्रणय विमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः

विद्युद्दामस्फुरितचकितैस्तत्र पौरांगनानां

लीलापांगैर्यदि न रमसे लोचनैर्वञ्चितोऽसि। 4.

---

1. उत्तरमेघ- 12
2. पूर्वमेघ - 1, 2, 3
3. पूर्वमेघ - 25
4. पूर्वमेघ - 28

ब्रह्मावर्त - कुरुक्षेत्र के आस-पास का प्रदेश ब्रह्मावर्त कहलाता है। कवि ने इसी परिप्रेक्ष्य में कुरुक्षेत्र का भी उल्लेख किया है -

ब्रह्मावर्त जनपदमथच्छायया गाहमानः

क्षेत्रं क्षत्र प्रधनपिशुनं कौरवं तद्भजेथाः। 1

शारिका सन्देश में यमुनातट, वृन्दावन, अमरतटिनी और चम्पकशेरि स्थान विशेष का वर्णन किया है। इसी परिप्रेक्ष्य में पश्चिमी समुद्र और अम्बरनदीश क्षेत्र का भी उल्लेख है -

हित्वा गच्छन्नमरतटिनी नामयत् केरलेषु

क्षेत्रं पुण्यं जयति तदिदं भूषयन्जोषमास्ते। 2

पारे वाचामपि च मनसां पश्चिमस्याम्बुराशे

स्तीरे तीर्थं किमपि कमनीयांगि तत्क्षेत्रमाहुः। 3

सम्पत्प्राज्ये चम्पकश्रेणिराज्ये, सम्पन्न श्रीः सम्प्रतीत प्रभावः

देवप्रख्यो देवनारायणाख्यो, देदीपीति क्षोणिदेव क्षितीशः। 4

महल देवालय आदि - आलोच्य दोनों कवियों ने नगरवर्णन के परिप्रेक्ष्य में महल, मन्दिर, देवालय, गोशाला, नृत्यागार, ध्वज आदि का वर्णन कर अपनी सूक्ष्मतत्वदृष्टिनी कल्पना का परिचय दिया है। उज्जयिनी के महलों को सुन्दरियों के चरणों के लाक्षाराग से चिन्हित शोभा का वर्णन कालिदास ने इसप्रकार किया है -

हर्म्येष्वस्याः कुसुमसुरभिध्वरवेदं नयेथाः

लक्ष्मीं पश्यंल्ललित वनिता पादरागांकितेषु। 5

शारिका सन्देश में पश्चिम समुद्र के किनारे केरल स्थित अम्लप्पुल देवालय और वहाँ की गोशाला का आलंकारिक वर्णन किया गया है।

पाश्चात्यभोनिलय निकटे केरले देववाहिन्याख्ये

मुख्ये निवसति किल श्रीपतिः श्री निकेते। 6

गोशालस्थस्सततमभितो गोगणेनोपपन्नः

---

1. पूर्वमेघ - 51
2. शारिका सन्देश - 4
3.4. शारिका सन्देश- 5, 120
5. पूर्वमेघ - 35
6. शारिका सन्देश - 9

श्रीगोपालो निजभजनतो भासुरान् भूसुरादीन। 1

तत्वं तस्मिनन्मरतटिनी धाम्नि यत्सन्निधत्ते

तत्वं किञ्चित्परममलं धाम दामोदराख्यम्। 2

इसी प्रकार मन्दिर के पीछे दो मंजिल भवनों की पंक्तियों की शोभा तथा नृत्यागार का वर्णन रामपाणिवाद ने इस प्रकार किया है -

पश्चाद् विष्णोरलघुदलभीरम्य हर्म्याट्ट पंक्तिः

कासारश्च क्रमुकं कदलीकेरवत्तीर भागः

नृत्तागारं नृपति वसतिर्दक्षिणेनोत्तरेण

द्राघीयस्यो विहित विविध भक्तयो भुक्तिशालाः। 3

इस देवालय के ऊपर गरुणचिन्हयुक्त ध्वज दण्ड और सुगठित पत्थरों से निर्मित कूप और गायों के पीने योग्य स्थान का वर्णन भी कवि ने इस प्रकार किया है -

केतुस्तम्भ स्फुरति पुरतः पत्रिकेतोरुदग्रो

दीपस्तम्भो विलसति तथा पृष्ठतः पुष्टशोभः

तस्योपान्ते घटितसुदृषिन्निर्मलापश्च कूपः

सत्सोपानं सुविहित गवोधाम्बुपानं विपानम्। 4

यह समस्त प्रदेश अकृष्टपच्या पूगीफल के वृक्षों से आच्छादित ताम्बूल लताओं से परिवेष्टित सभी के मन को प्रसन्न करने वाला है -

यत्कारूष्यादुपहित महापुष्टितो उत्कृष्टपच्य

द्रैहेयत्वादुपचितफलैः शालिभिः श्लाघनीयम्

स्फारं केरक्रमुक निकरालम्बताम्बूलिकाभिः

केषमेतन्न भवतितरां तुष्टये कुट्टराष्ट्रम्। 5

पूजा, अर्चन और बलिकर्म इत्यादि - कालिदास ने अलकापुरी के वर्णन के सन्दर्भ में शंकर की पूजा उसमें बजने वाले वाद्ययन्त्रों की तुलना मेघ गर्जन से की है। हिमालय स्थित सिद्धों द्वारा निरन्तर शिवपूजा का उल्लेख तथा पशुपति स्तव में बजने वाले मुरज की तुलना मेघगर्जन से इस प्रकार की है -

---

1. शारिका सन्देश - 10
2. शारिका सन्देश - 13
3. शारिका सन्देश - 20
4. शारिका सन्देश - 21
5. शारिका सन्देश - 25

तत्र व्यक्तं दृषदि चरणन्यास मर्धेन्दुमौलेः

शश्वत्सिद्धैरूपचितबलिं भक्तिनम्रः परीयाः। 1

निर्ह्रदन्ते मुरज इव चेत्कन्दरेषु ध्वनिः स्यात्

संगीतार्थो ननु पशुपतेस्तत्र भावी समग्रः। 2

शारिका सन्देश में विष्णु विग्रह की शोभायात्रा और वध उत्सव का वर्णन इस प्रकार किया है -

सन्तस्सन्ध्या त्रिकबलिमहे शुम्भितं कुम्भिराजे

विष्णोर्बिम्ब क्वचन समये लक्षितं पक्षिराजे

भूयिष्ठं वा पुनरधिशिरो भासुरं भूसुराणां

संसेवन्ते सदनमभितस्सञ्चरन्तं स्फुरन्तम्। 3

निष्कर्ष यह है कि कालिदास और रामपाणिवाद ने जहाँ प्रकृति चित्रण के लिए वर्णनात्मक, चित्रात्मक, बिम्बात्मक शैली का उपयोग किया है। वहीं मानव और प्रकृति के अन्योन्याश्रित सम्बन्ध स्थापित करने के लिए अन्य वस्तु वर्णनों में अपना वैदुष्य दिखाया है। दोनों कवियों का क्षेत्र पर्याप्त लम्बा है और यात्रा भी मेघ, शारिका द्वारा सम्पन्न की गई है। किन्तु वर्णनगत वैषम्य अधिक दिखाई देता है। मेघदूत में सूर्योदय, मध्यान्ह, सन्ध्या रात्रि, पर्वत, नदी, नगर इनके सौन्दर्य का वर्णन कही संश्लिष्ट रूप में तो कहीं अलंकृत रूप में किया है। आकाश स्थित मेघों में पड़ने वाले सूर्य के प्रकाश से इन्द्रधनुषी प्रतिविम्बित वस्तुओं का चित्रांकन कवि कालिदास ने मुक्तकंठ और हृदय से किया है। मोर, वप्रक्रीड़ा करने वाले बादल, नगरवासियों का वैभव, प्रेमी-प्रेमिकाओं का सौन्दर्य, आलिंगन, समागम के मांसल वर्णन कालिदास ने प्रस्तुत किये हैं। उनका सूक्ष्म निरीक्षण अत्यन्त व्यापक और विशद है। प्रकृति के बहुविध व्यापारों में मानवीय व्यापारों की सूचना देकर कवि ने अपने प्रकृति प्रेम और बहुज्ञता प्रदर्शित की है इसलिए हम उन्हें प्रकृति के सुकुमार कवि कहते है। रामपाणिवाद के शारिका सन्देश में अत्यल्प समय का उल्लेख है क्योंकि भावातुरा गोपी श्रीकृष्ण के समीप अपना सन्देश शीघ्र ही प्रेषित करना चाहती थी इसलिए शारिका को प्रकृति निरीक्षणजन्य आनन्द से वंचित रखा है। कवि का लक्ष्य माधुर्य भाव की व्यञ्जना प्रमुख है। गलिद्राक्षा रस की भाँति मधुराभक्ति के वियोग पक्ष वर्णन में आवेग के कारण अन्य वस्तु वर्णन गौण सिद्ध हुए हैं फिर भी कवि

---

1. पूर्वमेघ- 58

2. शारिका सन्देश - 22

3. पूर्वमेघ - 59

ने क्षेत्र, समुद्र, नगर, महल उनके वैभव, पूजा, देवालय के साथ अवतार वर्णन के रूप में दशावतार की चर्चा विस्तृत रूप में की है।

निष्कर्षतः ये सहज ही कहा जा सकता है कि आलोच्य दोनों काव्यों में प्रकृति के तो बहुविध रूप निरूपित हुए है। साथ ही साहचर्य, सहानुभूति, संवेदना भी घनिष्ठ रूप में वर्णित है। साथ में जीवन के विविध ा क्षेत्रों से अन्य वस्तुओं को ग्रहण कर उनका मार्मिक मोहक, मृदुल चित्रांकन कालिदास ने किया है। रामपाणिवाद ने भावोच्छलन के कारण अन्य वस्तुओं के वर्णन में अरुचि दिखाई है। क्योंकि विरह विधुरा गोपी शीघ्र ही प्रियतम का मिलन चाहती थी इसलिए रामपाणिवाद ने भावप्रवणता को प्रमुखता दी और प्रकृति वर्णन के साथ अन्य वस्तु वर्णनों में उतनी अभिरुचि नहीं दर्शायी है।

आलोच्य दूत काव्यों में भाषा-सौन्दर्य

(क) - शब्द-विधान

(ख) - शब्द शक्तियाँ

(ग) - व्यास समास शैली

(घ) - छन्द एवं भाषा

(ङ) - भावानुकूल भाषा

साम्य-वैषम्य

षष्ठ अध्याय

आलोच्य दूत काव्यों में भाषा सौन्दर्य

काव्यशास्त्र विवेचन में **'शब्दार्थौ सहितौ काव्यं'** की बड़ी महत्ता है। बात यह है कि काव्य भाव प्रधान होता है। भावावेग के समय कवि किसी अतीन्द्रिय लोक का प्राणी बनकर अर्थ विस्तार के लिए जिस माध्यम को अपनाता है वे शब्द ही होते हैं। यदि भाव काव्य के प्राण हैं तो भाषा उसका शरीर है। बिना भाषा के अनुभूतियाँ अनभिव्यक्त होकर रह जाएंगी। इसीलिए साहित्य में भाषा का विशेष महत्व है। कवि को समाज से परम्परित रूप में शब्द मिलते हैं। इन शाब्दिक प्रतिमानों को अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त शैलियाँ भिन्न-भिन्न होती है। रागात्मक अनुभूतियों के भावोच्छलन शब्दायिक होकर ही अभिव्यंजना का रूप धारण करता है। यह भाषा विधान भावों का बाह्यान्तर रूप है। अतः कवि की कविता या उसके काव्य को समझने के लिए उसकी भाषा शैली और साधनों का अध्ययन नितान्त आवश्यक माना गया है। शब्द ही तो पद या वाक्य का रूप धारण कर नयी अर्थछवियों को प्रकट करता है। प्रस्तुत अध्याय में हमें न तो मेघदूत और शारिका सन्देश में प्रयुक्त शब्दों का व्याकरणिक अध्ययन अपेक्षित है। जिसमें प्रकृति, प्रत्यय, सन्धि, समास, उपसर्ग आदि रूक्ष कारक तत्वों का विश्लेषण अपेक्षित है, न ही अत्याधुनिक विकसित, नवीन, भाषिक प्रतिमान शैली विज्ञानजन्य अध्ययन करना है, जिसमें वर्ण, शब्द, पद के आगम, लोक विपर्यय, क्रमागत दुरुक्तिजन्य प्रयोगों का अध्ययन है। वस्तुतः हमें तो अर्थ गाम्भीर्य की विवृत्ति के लिए कवि द्वारा प्रयुक्त कुछ शब्द विधान तदजन्य चमत्कार एवं अर्थ छवियों को प्रकट करने के लिए वाक्य, विलासजन्य कोमल, ललित शैलियों तथा भावानुरूप पात्रानुकूल भाषा प्रयोग वैशिष्ट्य एवं इस भाषा प्रवाह को किस प्रकार छन्दबद्ध किया गया है। इस वैशिष्ट्य का अध्ययन अपेक्षित है।

शब्द विधान -

शब्द ही भावों के वाहक होते हैं। अतः निष्णात कुशल प्रतिभासम्पन्न कवि समाज में प्रचलित शब्द-विधान को ही स्वीकार कर उसमें नयी अर्थ छटा भरता है। और यह कार्य अभ्यास और व्युत्पत्ति से ही सम्भव है। कालिदास एवं रामपाणिवाद का साहित्य बहुआयामी है। दोनों कवियों ने महाकाव्य, नाटक, खण्डकाव्य का प्रणयन किया है। निश्चित रूप से उनका शब्दकोश अत्यन्त विशाल हैं। यहाँ कुछ विशिष्ट शब्दों के प्रयोग से अर्थ सौरस्यजन्य चमत्कार उत्पन्न होता है। उसके कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं। मेघदूत में लिखा है -

क- कश्चित्कान्ता विरह गुरुणा स्वाधिकारात् प्रमत्तः। 1

ख- काचित् गोपी कलित कलह प्रक्रमा चक्रपाणौ। 2

1.पूर्वमेघ - 1 2. शारिका सन्देश - 1

में कान्ता शब्द जहाँ पत्नी अर्थ की व्यञ्जना करता है वहीं दूसरी ओर काम को वशीभूत करने की भी अभिव्यञ्जना कर रहा है। कान्ता की जगह पत्नी शब्द रख देने से छन्दगत कोई दोष तरे नहीं होगा किन्तु वह चमत्कार और अर्थ की छवि नहीं उत्पन्न करेगा। इसी प्रकार 'कलह प्रक्रमा' शब्द के माध्यम से रामपाणिवाद ने रुपगर्विता नायिका का उल्लेख किया है, जिसका एक उपभेद कलहान्तरिता नायिका भी है। इसी प्रकार व्याकरण से निर्मित शताधिक शब्द मेघदूत में प्रयुक्त है। कालिदास ने अपनी व्युत्पत्ति के माध्यम से ऐसी सूक्तियों का प्रयोग किया है, जिनके शब्द विधान माधुर्य एवं सान्द्रगुणों से युक्त है। विशिष्ट शब्दों के प्रयोग से बनी ये सूक्तियाँ जहाँ कवि की बहुज्ञता का सूचक है, वहीं ये कोमलकान्त पदावली, सुकुमार शब्द विन्यास, भावप्रवण शब्दों का प्रयोग एवं भाषा की मसृणता से युक्त है। दोनों कवियों के एतद्विषयक कुछ उदाहरण द्रष्ट्व्य है -

क - कामार्ता हि प्रकृति कृपणाश्चेतना चेतनेषु । 1

ख - याञ्चा मोधा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा। 2

ग - कः सन्नद्धे विरह विधुरां त्वय्युपेक्षेत जायाम्। 3

घ - आशाबन्धः कुसुम सदृशं प्रायशो ह्यंगनानां
सद्यः पाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रुणद्धि। 4

ङ - रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः पूर्णता गौरवाय। 5

च - स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु। 6

छ - मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थ कृत्या। 7

उपर्युक्त सूक्तियों का शब्द विधान की दृष्टि से विश्लेषण करें तो इनमें नादात्मकता और लयात्मकता दिखाई पड़ती है। चेतनाश्चेतनेषु, नाधमेलब्धकामा, विप्रयोगेरुणद्धि आदि शब्दों के माध्यम से कालिदास ने दर्शन, सौन्दर्य या प्रेम विषयक भावनाओं की अभिव्यञ्जना की है। इन सूक्तियों में मनोवेगों की स्थिति संवेगों की प्रतिक्रिया, साहचर्य का प्रभाव स्वतः व्यञ्जित है। शारिका सन्देश में अर्थान्तरन्यास या द्रष्टान्त को व्यक्त करने वाली सूक्तियाँ तो नहीं है फिर भी यत्र-तत्र प्राप्त सूक्तियाँ कवि की वैदग्ध्य भंगी भणिति के उदाहरण निर्भान्त रूप से कहे जा सकते हैं।

प्राचीनं यत् किमपि कलुषं कर्म तद् धार्मिकैर
व्यस्मिञ्जन्मन्यशुभ फलकं प्राणिभिर्नापहेयम्
तच्चाप्येष क्षपयति हरिस्स्वर्धुनीवर्धनोयः
तत्तादृक्षं क्वचिदपि परं दैवतं नैव भूमौ। 8

---

1. मेघदूत - 5, 6, 8, 9, 20, 29, 41 2. शारिका सन्देश - 29

बीजावापो यदि सुविहितस्तर्हि दुर्मेधसोपि

प्रायेणोक्तिः कृषिरिव भवेदप्रहीणा फलेन। 1

रन्ध्रान्वेषी स खलु कितवो हिंसितुं दासिकान्ते

सन्नद्धो मां प्रहरति शरैर्येन स त्वज्जयी स्यात्। 2

व्यापन्ना अप्यरविपदं साधवो ह्याधुनन्ति

सौन्दर्यन्नो भवति कमितुर्योषिति प्रीति हेतु। 3

स्तस्यामुष्यां रचयति रतिं किन्तु सौशील्यमेव। 4

रामपाणिवाद की इन सूक्तियों में जहाँ एक ओर मनोवैज्ञानिकता है वहीं दूसरी ओर सामाजिक कल्याण या आचरण प्रधान की श्रेष्ठता का वर्णन है। मनोविज्ञान में यह धारणा प्रचलित है कि यदि मन से वासनाएँ नहीं हटाई गयी अथवा उनका बलात् दमन किया गया तो वे अन्य किसी माध्यम से बाहर निकलने का प्रयास करती हैं। शारिका सन्देश में प्रयुक्त सूक्तियों में गोपी का प्रेम, अनुरोध, विरह कातरता व्यक्त है। तो दूसरी ओर कृष्ण की निष्ठुरता के लिए उपालम्भ भी मिलता है। प्राणी अभिलषित को प्राप्त कर जो सुख प्राप्त करता है, इस भाव की व्यञ्जना कालिदास और रामपाणिवाद ने समान रूप से की है।

शब्द विधान का एक दूसरा वैशिष्ट्य है चित्रोपमता। अर्थात् कवि व्यञ्जित भाव के लिए ऐसे शब्दों का प्रयोग करता है। जो पाठकों के मनः पटल पर चाक्षुष बिम्ब उपस्थित कर देते हैं। इस हेतु कवियों ने माधुर्य व्यञ्जक अथवा गतिशील क्रियात्मक शब्दों का प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं -

त्वामारुढ़ पवनपदवी मुद्गृहीतालकान्ताः

प्रेक्षिष्यन्ते पथिक वनिता प्रत्ययादाश्वसत्यः। 5

यहाँ पथिक वनिताओं द्वारा पलक उठाकर मेघों को देखने की कल्पना का बिम्ब प्रस्तुत किया गया है।

येन श्यामं वपुरतितरां कान्तिमापत्स्यते ते

बर्हेणेव स्फुरति रुचिना गोपवेषस्य विष्णोः। 6

उक्त उदाहरण में कवि कालिदास ने रंगों के मिश्रण से बने इन्द्रधनुषी छटा का रंग बिम्ब उपस्थित कर मेघ को और भी अधिक दर्शनीय बना दिया है। इसी प्रकार स्त्री सौन्दर्य में लावण्य, कान्ति, आंगिक देहयष्टि

---

1. शारिका सन्देश - 44
2. शारिका सन्देश - 55
3. शारिका सन्देश - 75
4. शारिका सन्देश - 108
5. पूर्वमेघ - 8
6. पूर्वमेघ - 15

उपस्थित करने के लिए कालिदास ने जिन शब्दों का प्रयोग किया है। वह सचमुच ही आकर्षक, भव्य और उदान्त है।

तन्वी श्यामा शिखरिदशना पक्व बिम्बाधरोष्ठी
मध्ये क्षामा चकित हरिणी प्रेक्षणा निम्ननाभिः
श्रोणीभारादलस गमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां
यातत्र स्याद्युवति विषये सृष्टिराद्येव धातुः। 1

रामपाणिवाद साहित्य की विविध कलाओं के मर्मज्ञ, ज्ञाता और प्रयोक्ता हैं। अतः उन्होंने ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है जिसमें चित्रमयता तो है ही नादात्मकता भी दिखाई पड़ती है। इसे हम पिछले पृष्ठों में यमकाभास शब्दावली के नाम से उल्लेख कर चुके हैं। कवि ने समश्रुति मूलक शब्दों के बहुल प्रयोग किए हैं। एक दो उदाहरण द्रष्ट्व्य हैं -

क - दिव्या भव्या खलु भगवती भारती सारबोधे
दिव्यं चक्षुः किमपि मम सा दत्तवत्यत्युदारा। 2

ख - कर्णोद्घूर्णन्मकर मणिमत्कुण्डलं गण्डलाम्बि
स्वर्णाम्भोज प्रघटित शिरश्शेखर स्रङ्मनोज्ञम्। 3

ग- त्वत्तुण्डश्री तुलनविलसद् घोणमेणाङ्कबिम्ब
च्छायास्तेय प्रवण वदनं पक्व विम्बाधरोष्ठम्। 4

प्रथम उदाहरण में कर्णोद्धूर्ण कुण्डल स्वर्णाम्भोजप्रघटित शिरश्शेखर जैसे शब्दों में नादात्मकता है तो द्वितीय उदाहरण में पक्वबिम्बाधरोष्ठम् में कोमलकान्त पदावली का प्रयोग है। रामपाणिवाद ने दीर्घ समास बहुल समश्रुति मूलक शब्दों का प्रयोग कर चाक्षुष बिम्ब उपस्थित किया है -

क- मुक्ताहारोन्मिलितवन मालाब्जमाला कलापम्
तप्त स्वर्णाभरण किरण श्रेणि शोण प्रकाशम्
पञ्चत्काञ्ची पटलघटनो सङ क्वणत्किंकण्णीक
श्रेणी बिम्ब प्रचुर रुचिर स्फीत पीताम्बराढ्यम्। 5

ख- मञ्जीरालङ्करण चरणाम्भोरुहं भूसुराणाम्
अम्भोजादि प्रसवा निकरैरर्चितं श्री पदाग्रम्

---

1. उत्तरमेघ - 22
2. शारिका सन्देश - 18
3. शारिका सन्देश - 39
4. शारिका सन्देश - 40
5. शारिका सन्देश - 41

नेत्रानन्दन्निखिल जगतां गात्रमापादचूडं

पश्यन्तीतत्सफलय दृशौपार्थ सूतस्यविष्णोः। 1

पहले कहा जा चुका है कि भावों का वहन भाषा के द्वारा होता है। और भाषा की समृद्धि शब्दों के सुष्ठु प्रयोग से होती है। इस प्रयोग में प्रतिभा, अभ्यास, व्युत्पत्ति शक्ति, निपुणता का विशेष योगदान रहता है। अतः यह कहा जा सकता है कि आलोच्य दोनों कवियों की भाषा ने हृदयगत भावों को अभिव्यक्ति दी है। सौशब्द से रस का अम्लान प्रवाह हुआ है। शब्द अर्थजन्य अलंकारों ने भावों को अनुभूतिगम्य बनाया हैं। एवं व्युत्पत्तिजन्य प्रयुक्त शब्दों के नाद सौन्दर्य ने संगीतात्मकता का पुट देकर चित्रोपमता एवं माधुर्य उत्पन्न किया है। आलोच्य दोनों कवियों का शब्द विधानगत वैशिष्ट्य के रूप में यह कहा जा सकता है कि कालिदास वैदर्भी रीति का कवि होने के कारण कोमलकान्त वर्णसगुम्फन को अधिक महत्त्व दिया है तो रामपाणिवाद ने पद संघटना और उक्ति सौन्दर्य के लिए यमकाभास शब्दों का पुष्कल प्रयोग किया है। दोनों ही कवि काव्यात्मक भाव और उसकी अभिव्यक्ति के लिए शब्दों में नयी विच्छिन्ति भरने में पूर्ण समर्थ है। कालिदास के मेघदूत में न्यून समास है। दूरारुढ़ कल्पना का अभाव है। श्रेष्ठ सूक्तियाँ है तो रामपाणिवाद की शब्द रचना में कलात्मक पद रचना, समास बहुलभाषा, दीर्घ विशेषणों से युक्त शब्दों का अधिक प्रयोग है। इस प्रकार कालिदास मधुरता का, हार्दिकता का, प्राञ्जलता का कवि है जिसका अनुकरण रामपाणिवाद ने यत्र-तत्र शब्द एवं भावों के प्रयोग करने का प्रयास किया है।

मेघदूत एवं शारिका सन्देश में शैली के विविध रूप -

पहले कहा जा चुका है कि भाषा सम्प्रेषण से पूर्व संवेदन का माध्यम है। काव्य में समाज से प्राप्त शब्द उपादान लेकर विशिष्ट अर्थ विच्छिन्ति प्रकट करना कवि का कार्य होता है। यह अर्थ विच्छिन्ति उत्पन्न करने के लिए रचनाकार वर्णों का उपयोग करता है। इस लिए भाषा सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के लिए हमने पहले वर्ण ध्वनि सौन्दर्य का प्रतिपादन किया है, जिसमें पद संघटना कुछ व्याकरणिक सरणियाँ, समासादि के प्रयोगजन्य उदाहरण प्रस्तुत किए है। प्रस्तुत परिच्छेद में वाक्यजन्य विभिन्नता और उससे अर्थ की संवहन क्षमता का विश्लेषण करेंगे।

बात यह है कि भाषा शैली के लिए संस्कृत काव्यशास्त्र में रीति और वृत्ति का उपयोग हुआ है जिसका विश्लेषण भी आगे चलकर करेंगे। यहाँ तो रचनाकार की संवेदनजन्यशीलता बनाने के लिए प्रयुक्त विविध शैलियों के उदाहरण दिए जा रहे हैं क्योंकि रचनाकार शब्द से बड़ा कार्य लेता है और यह शब्द विधान

---

1. शारिका सन्देश - 42

से ऋक्थ्य रूप में प्राप्त होती है। जिसका वह कलात्मक संयोजन करता है। अतः शैली के अन्तर्गत न तो पद संघटना न ही अनुप्रासिकता, न शब्दों की विभिन्न आवृत्तियों, आगम, लोक या विपर्यय का विश्लेषण किया जा रहा है। अपितु भाव की अभिव्यञ्जना में प्रयुक्त वाक्य विधान स्वरूप का विश्लेषण किया जायेगा। अंग्रेजी में एक उक्ति बहुत प्रचलित है। (Style is the man him self) अर्थात शैली ही मनुष्य के व्यक्तित्व का द्योतक है। इस दृष्टि से कालिदास के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि उनकी कविता विशेष रूप से मेघदूत बाल्मीकि की सरल और भावमयी कविता है। हर्ष का सा पाण्डित्य है। भास की नाटकीयता है, माघ के समान अलंकारों की रमणीयता है और भारवि का अर्थ गौरव उसमें निहित है। इस लिए संस्कृत में सूत्रपरक आलोचना पद्धति में श्रृंगारे ललितोद्गारे कालिदासो विशिष्यते अथवा उपमा कालिदासस्य या वैदर्भी रीति वैशिष्ट्य का कवि कहा जाता है। यहाँ हम के0एस0 रामस्वामी का मन्तव्य उद्धृत कर यह सूचित करना चाहते हैं कि कालिदास की शैली वर्ण्यविषय को पाण्डित्य पूर्ण ही नहीं बनाया अपितु भाव के साथ कला और कला के साथ भाव का संयोजन कर ऐसे शैल्पिक प्रयोग किए हैं जिसमें आचार्यत्व का लेशमात्र भी नहीं है और जिसे वागर्थ इव सम्प्रक्तौ रूप में कहा जा सकता है- In him find perfection of sound as well as perfection of sense style and sentiment are fused in his works into something greater then either or both - Mathew Arnold. 1 इस प्रकार प्राचीन काव्यशास्त्र में उल्लिखित श्लेष, समता, सुकुमारता, कान्ति, उदारता आदि गुणों से निर्मित कुछ शैलियों के उदाहरण आलोच्य दोनों काव्यों से दिए जा रहे हैं।

1. रसानुरूप शैली - पाश्चात्य जगत में क्रोचे और इलियट ने यह कहने का प्रयास किया है कि सफल वही कवि है जिसके वर्णन में विश्वसनीयता और अभिव्यञ्जना में आकर्षण हो इसे ही हम रसानुरूप शैली कह सकते है। आलोच्य दोनों काव्य विप्रलम्भ श्रृंगार के काव्य है। श्रृंगारिक अनुभूतियाँ वियोगी व्यक्ति के भावों के बन्धन में नहीं रहती मेघदूत का यक्ष और शारिका सन्देश की विरहिणी गोपी अपने अर्थ उद्गार का जिस प्रकार से विस्तार किया है। कवियों ने इस हेतु जिस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है। उसमें न तो दीर्घसमास है न ही कर्ण कटु शब्दों का प्रयोग अपितु कोमल भावों की व्यञ्जना हेतु कलामात्र हिमांश एवं नीता रात्रि क्षण जैसे शब्दों से विप्रलम्भ श्रंगार का चित्र अंकित किया गया है - आधिक्षामां विरहशयने सन्निषण्णैक पार्श्वा

प्राचीमूले तनुमिव कलामात्रशेषां हिमांशोः

नीता रात्रिः क्षण इव मया सार्धमिच्छारतैर्या

तामेवोष्णैविरह महती मश्रुभिर्यापयन्तीम्। 2

---

1. महाकवि कालिदास और अभिज्ञान शाकुन्तलम् - डा0 मधु सक्सेना पृ0 - 136 पर उद्धृत।

2. उत्तरमेघ - 29

किसी प्रकार बड़ी कठिनता से यक्ष पर्वतीय गेरु से शिला पर नायिका का चित्र अंकित करता है किन्तु उसके दुर्भाग्य का कोई अंत नहीं होता क्योंकि भावावेग या भावोच्छलन के कारण अश्रुपात से चित्र धूमिल हो जाता है। निर्दय दैव भला कब प्रेमियों का सम्मिलन देख सकता है -

त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागैः शिलाया
मात्मानं ते चरण पतितं यावदिच्छामि कर्तुम्
अस्रैस्तावन्मुहुरुपचितै र्दृष्टिरालुप्यते मे
क्रूरस्तस्मिन्नपि न सहते संगमंनौ कृतान्तः। 1

रामपाणिवाद तो रसानुरूप शैली के लिए विख्यात ही है। मूल रूप से वियोग श्रंगार का काव्य है। जिसे हम कान्ता या मधुराभक्ति निरूपित कर चुके हैं। साथ ही कवि ने दशावतार वर्णन प्रसंग में वीर रस के लिए तदनुरूप शैली का प्रयोग किया है। नारी स्वभाव से ही सरल हृदया होती है। जिससे वह प्रेम करती है उसमें अनन्यता के साथ अधिकार भावना भी अन्तर्निहित रहती है। अतः हृदय को ठेस पहुँचने पर उसकी वाणी में उपालम्भ या व्यंग्य आ जाना अत्यन्त स्वाभाविक होता है। गोपी अपने दारुण कष्ट का निरूपण वर्णन छोटे-छोटे शब्दों से करती हैं जिसमें व्यञ्जना और उपालम्भ की ध्वनि से उसके हृदय की रसदशा का अनुभव बड़ी सरलता से हो जाता है।

कष्टावस्था मम खलु तदा किन्नु दष्टास्मि सर्पैः
प्लुष्टा किन्नु स्मरशरकुकूलाग्निना दारुणेन
कृष्टा वाहं मुहुरसिवने नारके कालदूतैः
स्पृष्टा किन्नु ग्लपित वपुषा क्षेत्रियेण ज्वरेण। 2

इसी प्रकार वीर रस के लिए मर्दयिष्यन्, दारुणम, नारसिंहम् जैसे शब्दों का प्रयोग किया है-

त्वद्भक्तानाम चरमम शेषान्तराह्लादकत्वात्
प्रह्लादाख्यं निजमपि सुतं किञ्च लोकत्रयञ्च
योऽभ्यद्रुहयन्तमपि दनुजं निदर्यं मर्दयिष्यन्
किन्नाधत्था वपुरपि च यो दारुणं नारसिंहम्। 3

2. <u>ललित शैली</u> – जिसमें मधुर संगीतमय, सुकुमार एवं कोमल शब्दों का प्रयोग कर भावों की व्यञ्जना की जाती हो उसे ललित शैली कहा जाता है। **डा0 मधु सक्सेना ने लिखा है**– ''मेघ की भाषा एवं भावों की सुकुमारता

1. उत्तरमेघ - 45 2. शारिका सन्देश - 50 3. शारिका सन्देश - 64

विश्व विश्रुत है। न भाषा का आडम्बर है न अलंकारों का गुरुतर बोझ पद लालित्य तो वर्णनातीत है।" 1

उत्संगे वा मलिनवसने सौम्य निक्षिप्य वीणां

मदगोत्रांकः विरचितपदं गेयमुद्गातुकामा

तन्त्री मार्दा नयन सलिलैः सारयित्वा कथन्चिद्

भूयोभूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती। 2

उक्त श्लोक में विरह विधुरा यक्ष पत्नी की चेष्टाओं का चित्र है। न कहीं दीर्घ समास है न अप्रचलित शब्द विधान है न श्रुति कटु वर्ण गुम्फ है और न क्लिष्ट कल्पना है। शारिका सन्देश में अखिल जगदानन्द कृष्ण के प्रति अपने प्रेम का प्रकटीकरण गोपी जिस प्रकार गलदश्रु रूप में करती है वह दर्शनीय है-

माद्यद् भृंगीं कलकलमिलत्पुष्प पुञ्जे निकुञ्जे

मिथ्यागर्वात कमपि समयं यत्तदाहन्न्यलीये

तन्मे कृष्ण ! स्मरशर हुताशावकाश प्रवेश

प्रख्यं कस्मैं कथयितुमलं हन्त भोः ! साहसिक्यम्। 3

3. पात्रानुकूल शैली – ऊपर कहा जा चुका है कि वाणी व्यक्तित्व का दर्पण है। जिस शैली से रचनाकार स्वाभाविकता का अतिक्रमण किए बिना किसी पात्र का अन्तर्जगत प्रत्यक्ष करते हुए उसके व्यक्तित्व को मूर्तिमान कर देता है। वह शैलर पात्रानुकूल कहलाने की अधिकारिणी है। आलोच्य दोनों काव्यों में यक्ष और गोपी मेघ और शारिका यक्षिणी एवं कृष्ण तथा प्रसंगवश यत्र-तत्र अन्य पात्रों की चर्चा है। मुख्य रूप से यक्ष और गोपी के हृदयों का चित्रांकन हुआ है। पात्रानुकूल शैली प्रयोग में कालिदास को अद्वितीय कहा जाता है। मेघदूत और ऋतुसंहार से अतिरिक्त उनकी रचनाओं में पात्रों का वैविध्य है और वहाँ पात्रानुकूल शैली के विविध रूप देखे जा सकते हैं। मेघदूत में मेघ मानवीय भाषा का प्रयोग नहीं कर सकता किन्तु वह यक्ष के मनोभावों को प्रतीकात्मक रूप से व्यञ्जित तो कर ही सकता है। कालिदास ने लिखा है- कि अपनी प्रशंसा को सुनकर भला कौन व्यक्ति हर्षित नहीं होता उसे लगता है कि वह अपनी प्रशंसा सुनता ही रहे। मेघ मयूरों की केकाध्वनि को सुनकर उसे अपना स्वागतगान मानकर अगर वहीं रुक गया तो मेघ का संदेश या दौत्यकर्म कैसे पूर्ण होगा। इस मनोवैज्ञानिक तथ्य का विश्लेषण मेघदूत में इस प्रकार किया है -

उत्पश्यामि द्रुतमपि सखे मीत्प्रयार्थ यियासोः

---

1. महाकवि कालिदास और अभिज्ञान शाकुन्तलम् पृ0 - 138

2. उत्तरमेघ - 26 3. शारिका सन्देश - 48

कालक्षेपं ककुभसुरभौ पर्वते-पर्वते ते

शुक्लापांगै सजलनयनैः स्वागतीकृत्य केकाः

पत्युद्यातः कथमपि भवान् गन्तुमाशु व्यवस्येत्। 1

शारिका सन्देश की गोपी विश्वैक बन्धो, ब्रजप विधुरं कर्म शब्दों का प्रयोग कर कृष्ण के प्रति अपना उपालम्भ व्यक्त करती है।

क्षीणोपृष्ठे विलुठ विपट व्युत्क्रमस्तोत्रवर्णान्

दुर्गे मार्गे विचर विकिर स्थूलबाष्पोद्बिन्दून्

त्वन्नामानि व्रजप ! विलप व्याकुलं गोकुल स्त्री

वृन्दं किन्न व्यथित विधुरं कर्म विश्वैक बन्धो ! 2

4. <u>समास प्रधान शैली</u> – समास का अर्थ संक्षेप में कहना है। चतुर निष्णात कवि छोटे-छोटे शब्दों में भारी अर्थ की व्यञ्जना करते हैं। इस हेतु वह समास शैली का प्रयोग करते हैं। महाकाव्य में लम्बी कथा जीवन के विस्तृत क्षेत्र की महागाथा होती है। अतः उसमें अभिधा या विस्तार प्रधान शैली का प्रयोग स्वाभाविक होता है जबकि गीतिकाव्य भाव गुच्छों का ऐसा स्तबक है जिसमें कवि अपने भावों का प्रकाशन बड़ी कुशलता एवं चतुराई से करता है। मेघदूत में मेघ के मार्ग का अत्यन्त विस्तृत वर्णन है किन्तु सन्देश अत्यन्त सीमित शब्दों में कहा गया है। वह संतोष करता है कि विष्णु के शेषनाग रूपी शय्या से उठ जाने पर उसका शापान्त हो जाएगा। इस छोटी सी बात को कालिदास ने जिस ढंग से कहा है उसमें शांर्गपाणौ भुजगशयनात्, विरह गणितं, शापान्तः समासों का उपयोग तो है ही कामना पूर्ति की आशा का उल्लास भी व्यञ्जित है -

शापान्तो मे भुजगशयनादुत्थिते शार्ंगपाणौ

शेषान्मासान्गमय चतुरो लोचने मीलयित्वा

पश्चादावांविरह गणितं तं तमात्माभिलाषं

निर्वेक्ष्यावः परिणतशरच्चन्द्रिकासु क्षपासु। 3

इसी प्रकार शरर्दतु में रासारम्भ के समय कृष्ण की शोभा का वर्णन समास प्रधान शब्दों से किया गया है। इसमें समश्रुतिमूलक शब्दों के प्रयोग के साथ आनुप्रासिकता भी वक्ता के कथन को एक नयी अर्थ छवि प्रदान करता है -

व्यत्यस्ताङ्घ्रिद्वितयमत सीश्यामल श्रीमदंग

---

1. पूर्वमेघ - 35 2. शारिका सन्देश - 93 3. उत्तरमेघ - 50

कम्रं नम्रं किमपि दधतं वक्त्रमाकूणिताक्षम्

बन्धूकाभे निहित मधरे वेणुमापूरयन्तं

रासारम्भे रसिक रमणी सेवितं भावयेत्वाम्। 1

5. <u>चित्रात्मक शैली</u> – कवि अपनी रचना में ऐसे शब्द पदों का प्रयोग करता है जिन्हें पढ़कर सहृदय पाठक या रसिक पाठक के मनःपटल पर चाक्षुष प्रत्यक्षीकरण होता है और यह कार्य चित्र गुण संवलित शब्दों से ही सम्भव है। कालिदास ने मेघदूत में ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है जिससे पाठक के सम्मुख बिम्ब सा उपस्थित हो जाता है। प्रसिद्ध पाश्चात्य विचारक **एजरा पाउण्ड** के अनुसार -

It is batter to create bolumeous work than a simple image.[2]

अर्थात अत्यधिक बड़े ग्रन्थ या विस्तारपूर्ण कार्यों या रचना की अपेक्षा एक छोटा बिम्ब उपस्थित करना अधिक श्रेष्ठ है। यह उक्ति मेघदूत और शारिका सन्देश में पूर्ण चरितार्थ होती है। इसी चित्रमयता के कारण कालिदास अद्वितीय कवि कहलाता है। यक्ष प्रिया का सौन्दर्य चित्रांकन कवि ने जिस ढंग से किया है, उसमें एक ओर कामशास्त्र के पारिभाषिक शब्द हैं तो दूसरी ओर काव्यशास्त्र में प्रचलित अंगना लावण्य की भाँति दमकता सौन्दर्य की प्रति छवि भी है। एक-दो उदाहरण देखिए -

क - तन्वी श्यामा शिखरिदशना पक्व बिम्बाधरौष्ठी

मध्ये क्षामा चकित हरिणी प्रेक्षणा निम्ननाभिः

श्रोणीभारादलस गमना स्तोकनम्रा स्तनाभ्यां

या तत्र स्याद्युवति विषये सृष्टिराद्येव धातुः। 3

ख- रुद्धापांग प्रसरमलकै रञ्जनस्नेह शून्यं

प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृतभ्रूविलासम्

त्वय्यासन्ने नयनमुपरिस्पन्दि शङ्के मृगाक्ष्या

मीनक्षोभाच्चल कुवलय श्री तुलामेष्यतीति। 4

ग - वामश्चास्याः कररुह पदैर्मुच्यमानोमदीयै

र्मुक्ता जालं चिरपरिचितं त्याजितो दैवगत्या

---

1. शारिका सन्देश - 82
2.
3. उत्तरमेघ - 22
4. उत्तरमेघ - 35,

सम्भोगान्ते मम समुचितो हस्त संवाहनानां

यास्यत्युरुः सरस कदली स्तम्भ गौरश्चलत्वम्। 1

शारिका सन्देश में गोपी का सन्देश मेघदूत की अपेक्षा अधिक विस्तृत है। अतः उसमें शब्द चित्रों का बाहुल्य है। एक-दो उदाहरण द्रष्ट्व्य हैं -

क - विभ्राणं त्वामदिरगदाब्जानि दोर्भिश्चतुर्भि

विंभ्राज्यं च प्रकट मुकुटोदार हारांगदाद्यैः

श्री वत्स श्री परिलसदुरो विस्फुरद्वन्यमालं

बालं बालार्क मिव सुषुवे देवकी पूर्व सन्ध्या।

ख - एवं भूतामनितरगतेरस्मदा देरवस्थां

जानानस्त्वं तरुण करुणासार सिक्तान्तरात्मा

आविभूतो रविरिव निशाकाल निष्पीडिताना

मब्जालीनां वरद ! पुरस्तावदस्मादृशीनाम्।

ग - कान्ति कामप्यविरल कलायालिलालित्य बन्धुम्

बन्धूक श्रीहरण निपुणां दन्तवासोद्युतिं च

तुल्यं विभ्रन्तव वपुरिदं साधु सन्ध्यार्करोचि

स्सम्पृक्ताम्भोधर वदनद्यं दर्शयेश ! प्रसीद। 2

6. अलंकृत शैली - कवि का कथन सामान्य जन के कथन से भिन्न होता है क्योंकि समाज या लोक व्यवहार में प्रचलित शब्दों से कवि सर्वथा नया अर्थ व्यक्त करता है। अलंकृत शैली ऐसे ही अवसरों के लिए उपयुक्त होती है। इस शैली में कवि काव्यशास्त्रीय तत्वों को लेकर ऐसा शब्द विधान या वाक्य विन्यास करता है कि उस कथन में वक्रता, अलंकारिता या विदग्धता स्वतः उत्पन्न हो जाती है। मेघदूत के एक-दो उदाहरण द्रष्ट्व्य है। पके हुए फलों से चमकता आम्रकूट पर्वत स्त्री के वक्षस्थल के समान दिखाई देता है। यहाँ उपमेय बड़ा और विस्तीर्ण और उपमान छोटा अवश्य बताया गया है किन्तु वर्णों के उपयोग उनसे उत्पन्न बिम्बधर्मिता स्तनों का पीलापन एवं अग्रभाग की कालिमा का अलंकृत चित्रांकन बड़ी कल्पना का द्योतक है। इसी प्रकार मेघ सन्देश में चकित हरिणी की चितवन, मयूर पंखों के समान केशों की कालिमा एवं नदी की तरंगों में यक्ष प्रिया की भ्रूविलास के उल्लेख में वाक्यगत चमत्कार दिखाई पड़ता है -.

---

1. उत्तरमेघ - 36

2. शारिका सन्देश - 72, 96, 106

क- छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रै
स्त्वय्यारूढे शिखरमचलः स्निग्धवेणी सवर्णे
नूनं यास्यत्यमर मिथुन प्रेक्षणीयामवस्थां
मध्ये श्यामः स्तन इव भुवः शेष विस्तार पाण्डुः। 1

ख - श्यामास्वंग चकित हरिणी प्रेक्षणे दृष्टिपातं
वक्त्रच्छायां शशिनि शिखिनां वर्हभारेषु केशान्
उत्पश्यामि प्रतनुषु नदी वीचिषु भ्रूविलासान्
हन्तैकस्मिन् क्वचिदपि न ते चण्डि सादृश्यमस्ति। 2

शारिका सन्देश से अलंकृत शब्दविधान के उदाहरण द्रष्टव्य है -

अद्राक्षं त्वामभिदिशमहं यद्यपि भ्रान्ति हेतोः
अप्राक्षं च क्व नु स गतवानित्यगान्वा मृगान्वा
संकल्पो पागमित रमणीयांग मालिंगिषं त्वा
मत्युद्गाढं तदपि विरहिण्यस्मि ! विस्मेयमेतत्।
आकर्ण्योच्चैर धरित सुधा सौभगं वेणुनादं
व्याघूर्णन्त्यो गृहपति सुताद्युज्जहत्यस्समस्तम्
तीव्रोत्सुक्य प्रसर विवशाः शीघ्रमव्राजिषुर्य
सर्वा एव व्रजयुवतयो नाथ ! तस्मै नमस्ते। 3

<u>अभिधा प्रधान विवरणात्मक शैली</u> - कवि भावों के साथ वस्तुओं का चित्रण परिवेश को यथार्थ रूप देने के लिए करता है। ऐसे चित्रण वस्तुपरक या विवरण प्रधान होते है। यहाँ अभिधा शक्ति का बाहुल्य होता है। इस वर्णन में पाठकों को विश्वसनीयता प्रतीत होती है। कालिदास और रामपाणिवाद ने यात्रा वर्णन प्रसंग में वन, उपवन, नदी, प्रदेश, मन्दिर आदि वस्तुओं व्यक्तियों नगरों का वर्णन प्रस्तुत किया है। ऐसे विवरण प्रस्तुत करने का यह कदापि अर्थ नहीं है कि इनमें काव्यत्व नहीं होता वस्तुतः पाठकीय विश्वसनीयता अर्जित करने के लिए अथवा कथा को गति देने के लिए इस शैली का प्रयोग किया जाता है। एक-दो उदाहरण द्रष्टव्य है -

क- आपृच्छस्व प्रियसखममुं तुंगमालिङग्य शैलं
वन्द्यैः पुंसां रघुपति पदैरंकित मेखलासु

---

1. पूर्वमेघ - 18 2. उत्तरमेघ - 44 3. शारिका सन्देश - 52, 83

काले काले भवति भवतो यस्य संयोगमेत्य

स्नेह व्यक्ति श्चिरविरहिजं मुञ्चतो वाष्पमुष्णम्। 1

ख - यत्रोन्मत्त भ्रमर मुखराः पादपाः नित्यपुष्पाः

हंस श्रेणी रचित रशना नित्यपद्माः नलिन्यः

केकोत्कण्ठाः भवन शिखिनो नित्यभास्वत्कलापाः

नित्य ज्योत्स्नाः प्रतिहत तमो वृत्ति रम्याः प्रदोषाः। 2

शारिका सन्देश में चम्पक क्षेत्र स्थित तड़ाग और उसके रक्षकों का वर्णन है-

क- तत्र क्षेत्रे किल भगवतः प्राङ्मुखस्याग्रभागे

वृत्ताकारो विलसतितरां वीतपङ्कस्तटाकः।

यत्रोद्यावे कनक फलकाः खंगिंनः काण्डपृष्ठाः

विष्वद्रयञ्चो विदधति विगाह्याद्‌भुत क्रीडितानि। 3

इसी राज्य का **राजा देवनारायण** का परिचय भी इसी शैली में दिया गया है -

ख- सम्पन्नश्री विभवसुलभं चम्पक श्रेणिराज्यं

यो गोपायन्नपि हि भगवानेष गोपायमानः

गोप्तेप्युच्चैर्निजमपि यशो देवनारायणाख्ये

क्षोणी देवक्षिति भुजि समावेशयञ्जोषमास्ते। 4

निष्कर्ष यह है कि मेघदूत एवं शारिका सन्देश में कथा की विरलता के कारण भावों की अधिकता है। इस कारण शैली में वैशिष्ट्य दिखाई पड़ता है। विवरण प्रधान शैली से लेकर भाव, सरस, ललित पात्रानुकूल, चित्रात्मक समास प्रधान शैलियों की इन्द्रधनुषी छटा विखरी पड़ी है। आलोच्य दोनों कवियों ने ऐसे शैली पट का निर्माण किया है जिसमें धूपछाहीं वस्त्र के अनुकूल विविध शैलियों की छटा दिखाई पड़ती है। मेघदूत की शैली में बिम्बात्मकता है। चित्रात्मकता का आधिक्य है तो शारिका सन्देश की शैली में शब्द प्रयोगजन्य लयात्मकता और नादात्मकता है। शारिका सन्देश में यमकाभास प्रधान शब्दों का पुष्कल प्रयोग है। इससे उसकी शैली में भागवत विविधता दिखाई पड़ती है। कहना नहीं होगा कि शैली की दृष्टि से दोनों सफल कवि हैं। कालिदास ने कोमल शब्दों के प्रयोग से शैली में मसृणता उत्पन्न की है तो रामपाणिवाद ने ओज प्रधान अथवा कर्णकतु (ण ड) जैसे शब्दों

---

1. पूर्वमेघ - 12
2. उत्तरमेघ - 3
3. शारिका सन्देश - 19
4. शारिका सन्देश - 28

का प्रचुर प्रयोग कर प्रभावोत्पादकता और पाण्डित्य प्रदर्शन किया है।

छन्द विधान – छन्द शब्द छद् धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ है - प्रसन्न करना, फुसलाना, आच्छादन करना, बाँधना। वेदों में छन्द को स्थान देकर इन्हें वेद के चरण कहे गए हैं। छन्दः पादौ तु वेदस्य। 1

1. **डा0 गौरी शंकर मिश्र ने लिखा है** - कि छन्द वह लयात्मक नियमित तथा अर्थपूर्ण वाणी है जिसमें आबद्ध होकर कोई वाक्य या वाक्यांश पद्य का रूप धारण करता है। 2

छन्दों की महत्ता निरुपित करते हुए **डा0 रामदेव प्रसाद ने लिखा है** - कि काव्य और संगीत दोनों श्रव्य कला है। इस नाते काव्य और संगीत का पारस्परिक सम्बन्ध है और इस सम्बन्ध को दृढ़ करने के लिए कविता में छन्द की आवश्यकता है। सृष्टि के आरम्भ से मनुष्य के भाव संगीतमयी भाषा में व्यक्त हुए हैं, जो अधिकांश में गम्भीर और मार्मिक है। छन्द निसृत कमनीयता एवं आनन्द से मनोवेगों की अभिव्यक्ति में तीव्रता आती है। 3

पाश्चात्य विद्वानों में से सिडनी रोमसर्ड, हॉपकिन्स ने छन्दों का विरोध किया है तो **ड्राइडन, जानसन, स्टुअर्ट मिल** आदि ने छन्द की आवश्यकता को स्वीकार किया है। **डा0 जॉनसन** की मान्यता है कि काव्यगत सौन्दर्य का आधार भाषागत सौन्दर्य तथा छन्द माधुर्य है। छन्दों की सांगीतिकता एवं नियमितता से काव्य सौन्दर्य की निर्मिति होती है। 4

वस्तुतः छन्द लय का विशिष्ट रूप है जो आवृत्ति आकांक्षा पर निर्भर करता है। छन्दों से ही भाषा में प्रवाहमयता और लयात्मकता आती है।

मेघदूत और शारिका सन्देश दोनों सन्देश या दूतकाव्य हैं जिसमें एक ही छन्द मन्दाक्रान्ता का प्रयोग हुआ है। इसका लक्षण इस प्रकार है -

वृत्तरत्नाकर के अनुसार - मन्दाक्रान्ता जलधि षडगैम्भौनतो ताद् गुरू चेत्। 5

अर्थात जिस छन्द के प्रत्येक चरण क्रमशः मगण, भगण, नगण, दो तगण और अन्त में दो गुरू हों तथा 4, 6, और 7 वर्णों पर यति हो उसे मन्दाक्रान्ता छन्द कहते हैं। इस छन्द के प्रत्येक चरण में 17 अक्षर होते हैं अतः एक-एक उदाहरण दिए जा रहे हैं -

---

1. पाणिनीय शिक्षा
2. सूर साहित्य का छन्दशास्त्रीय अध्ययन पृ0 - 13
3. रामचरित मानस की काव्य भाषा पृ0 - 124
4. पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धान्त पृ0 - 114
5. वृत्तरत्नाकर - 3/97तत्र स्कन्द नियत वसतिं पुष्पमेघीकृतात्मा

पुष्पासारैः स्नपयतु भवान्योमगंगाजालाद्रैः

रक्षा हेतोर्नवशाशिभृता वासनीनां चमूना

मत्यादित्यं हुतवहमुखे सम्भृतं तद्धितेजः। 1

देवेश ! त्वदनुजदमनो देवकी गर्भशुक्तेः

मुक्तारत्नं किमपि यमुना तोयसच्छायकायम्

आविभूतो भुवनमवनन्नेतु मानन्दमूर्त्ते !

गोविन्द तं त्रिदश तटिनी नाथमाद्यं प्रपद्ये। 2

प्रथम अध्याय में दूत काव्यों की परम्परा विस्तार के समय यह लिखा गया है कि प्रायः सन्देशकाव्य इसी मन्दाक्रान्ता छन्द में लिखे गये हैं। सन्देश काव्य गीति काव्य है जिसमें गेयात्मक तत्व मधुर लय की तरलता विद्यमान रहती है। **क्षेमेन्द्र ने सुवृत्ततिलक नामक ग्रन्थ में लिखा है** - कि काव्य में रस तथा वर्णनीय वस्तु के अनुसार छन्दों का विनियोग सोच समझकर करना चाहिए।

काव्ये रसानुसारेण वर्णनानुगुणेन च

कुर्वीत सर्ववृत्तानां विनियोग विभागवित्। 3

मन्दाक्रान्ता छन्द में भाव तरलता का आधिक्य होता है। उसमें द्रुति नहीं होती अपितु मत्तयौवना विलासिनी की मन्थर गति की भाँति मन्दाक्रान्ता छन्द की गति रहती है। कालिदास का मेघदूत वर्षाकाल के प्रारम्भ से होता है। इस हेतु मन्दाक्रान्ता छन्द से बढ़कर दूसरा कोई छन्द ही नहीं है। जैसा कि **क्षेमेन्द्र ने लिखा है** - 'प्रावृट् प्रवास व्यसने मन्दाक्रान्ता विराजते' **वृत्तरत्नाकर** में भी मन्दाक्रान्ता मृदु मन्थर गति से चरण क्रीड़ा करती हुई मुग्धा कहा गया है -

नानाऽऽश्लेष प्रकरण चणाचारुवर्णोज्ज्वलांगीं

नाना भावाकलित रसिक श्रेणी कान्ताऽन्तरांगां

मुग्ध स्निग्धैर्मृदुमृदुपदैः क्रीडमाना पुरस्ताद्

मन्दाक्रान्ता भवति कविता कामिनी कौतुकाय। 4

इस ऋतु में दौत्यकर्म करने वाला भी मन्द-मन्द तथा मन्द्र-मन्द्र चरणन्यास से अपनी यात्रा पूर्ण

---

1. पूर्वमेघ - 46 2. शारिका सन्देश - 69

3. महाकवि कालिदास -रमाशंकर तिवारी पृ0 - 363 पर उद्धृत

4. वृत्तरत्नाकर अध्याय 3 पृ0 111

करता है। इसीलिए कालिदास ने रसानुकूल छन्द मन्दाक्रान्ता का प्रयोग किया है। इस सम्बन्ध में **डा0 सूर्यनारायण व्यास ने लिखा है** – ''इसी पथ से वर्षा के नायक मेघदूत ने मन्दाक्रान्ता के रथ पर चढ़ कर मनोहारी प्रवास किया है। मेघदूत का यह मन्दाक्रान्ता छन्द उत्कृष्ट कल्पना वैभव कलापूर्ण सृजन सौष्ठव भावों की भव्यता एवं अलंकारों की मनोहारिता की दृष्टि से अनुपम और अद्भुत है। मेघदूत काव्य के इस सौन्दर्य और सौरभ को लेकर कालिदास की अमर मन्दाक्रान्ता ने मृदु मंथर गति से सारे विश्व का सफल सांस्कृतिक प्रवास किया है और यशो विस्तार कर अपनी जन्मभूमि का सार्वभौमिक गौरव बढ़ाया है। 1

जैन कवियों ने इसी मेघदूत के प्रत्येक चरण को समस्यापूर्ति काव्य बनाकर अनेक जैन काव्यों की रचना की है। कालिदास का अनुसरण कर परवर्ती कवियों ने इसी छन्द का प्रयोग किया है। रामपाणिवाद का शारिका सन्देश भी इसी छन्द में लिखा गया है। जिसमें वर्षा ऋतु का तो नहीं किन्तु प्रवास और विरह की भावाकुलता इस छन्द के माध्यम से व्यञ्जित की गई है। कालिदास ने मन्दाक्रान्ता के लिए कोमल, लालित्यपूर्ण वर्णों का अधिक प्रयोग किया है क्योंकि प्रेमी अपनी प्रिया के पास तक सन्देश भिजवाने के लिए मेघ से अनुनय-विनय के साथ ही मधुर मिष्ट शब्दों का प्रयोग करता है जबकि शारिका सन्देश में पुरुषगत स्थैर्य और धीरता नहीं है। वहाँ नारी के प्रेम की व्याकुलता अधैर्य गलिद्राक्षा रस की भाँति इस छन्द में भावों की विवृत्ति हुयी है। भक्ति का एक उपविभाग मधुरा या कान्ता भक्ति है, जिसमें भावोच्छलन का ही प्रामुख्य होता है। गोपी कृष्ण को उपालम्भ भी देती है। दशावतार के रूप में उनकी विरुदावलि का वर्णन ही नहीं करती अपितु हृद्यगत पश्चाताप और ग्लानि का निदर्शन भी इसी छन्द के माध्यम से करती है। आलोच्य दोनों काव्यों से उदाहरण द्रष्ट्व्य है –

क –

विश्रान्तः सव्रज वन नदी तीर जातानि सिञ्च
न्नुद्यानानां नवजल कणै यूथिकाजालकानि
गण्डस्वेदापनयनरुजा क्लान्त कर्णोत्पलानां
छायादानात् क्षणपरिचितः पुष्पलावीमुखानाम्।

ख–

विचिक्षोभस्तनित विहग श्रेणि काञ्ची गुणायाः
संसर्पन्त्याः स्खलित सुभगं दर्शितावर्तनाभेः
निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्निपत्य
स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु। 2

---

1. विश्व कवि कालिदास एक अध्ययन – पृ0 84

2. पूर्वमेघ –27, 29

शारिका सन्देश से निम्न उदाहरण द्रष्टव्य हैं -

क - गोप स्त्रीणामनुकमनुकालिन्दिकेली वनान्ते
चूताशोक प्रसव सरसामोदकान्ते वसन्ते
आसं क्रीडन्मधुकर वधू भाजि संक्रीडमानं
नाना रूपं नलिन नयनन्नौमि नारायणं त्वाम्। शा0 सं0 81

ख - रम्या रामा रहसि रमयन्नेव रामानुजस्त्वं
रागाम्भोधौ चिरतरममूर्मज्जयन्मादो यः
भूयस्ताभ्यस्सुबहु सुभगम्मन्यतां प्रापिताभ्यः
स्वेनैवान्तर्दधिथ तरसा कृष्ण ! तस्मै नमस्ते। शा0 सं0 90

ग- क्षोणी पृष्ठे विलुठ विपठ व्युत्क्रमस्तोत्र वर्णान्
दुर्गे मार्गे विचर विकिर स्थूल वाष्पोदबिन्दून
त्वन्नामानि व्रजम ! विलप व्याकुलं गोकुल स्त्री
वृन्दं किन्न व्यथित विधुरं कर्मसस्य विश्वैक बन्धो। शा0 सं0 93

कालिदास ने मेघ यात्रा में पड़ने वाले ग्राम युवतियाँ, शस्य श्यामला उर्वरभूमि, नदियों, उपवनों का ऐसा आलंकारकि चित्रण किया है जो बड़े ही हृदयावर्जक बन पड़े हैं। छन्द की मन्थरता के कारण है। यात्रा में पड़ने वाले प्रदेशों की छोटी-छोटी वस्तुओं का भी वर्णन कवि से छूटा नहीं है। उक्त तथ्यो का निरूपण रस एवं प्रकृति के सन्दर्भ में किया जा चुका है। तात्पर्य यह है कि रामपाणिवाद ने कालिदास के मेघदूत से प्राप्त परम्परा का पालन का इसी छन्द में अपने श्रृंगार भक्ति परक काव्य का प्रणयन किया है। इस छन्द के द्वारा आत्माभिव्यक्ति संगीतात्मकता और प्रणय निवेदन अत्यन्त सूक्ष्म एवं प्रभावी ढंग से हो सका है।

आलोच्य काव्यों में शब्द शक्तियाँ - शब्द के मूल में शब्द धातु है जिसका अर्थ है - शब्द करना या ध्वनि करना। श्रूयमाण होने के कारण इसके दो भेद माने जा सकते हैं। ध्वन्यात्मक, वर्णनात्मक। काव्य वर्णात्मक शब्दों का अक्षय भण्डार है। इसमें सार्थक शब्द सृष्टि का ही महत्व है। सहृदय-हृदय संवादी सौन्दर्य से विशिष्ट होने पर काव्य की अभिधा प्राप्त करता है। यह सौन्दर्य विविध रूपा है। **दण्डी, रुद्रट, जयदेव** इसे अलंकार में ढूंढ़ते हैं तो **वामन** इसे रीति कहते हैं। **आनन्दवर्धन** इसी सौन्दर्य को ध्वनि के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं, तो **अभिनय गुप्त** उसे रस रूप में आस्वाद्य बताते हैं। यहाँ यह प्रश्न सहज ही उठाया जा सकता है कि एक ही सौन्दर्य के अभिधान एवं रूप वैविध्य का क्या कारण है। भतृहरि से अभिनव गुप्ततक सभी आचार्य इसे शब्द और अर्थजन्य चमत्कार मानते हैं। शब्द और अर्थ के सम्बन्ध का दूसरा नाम व्यापार है। अतः शब्द शक्ति एवं शब्द

व्यापार पर्यायवाची प्रतीत होते हैं।

शब्द के अर्थ आचार्यों ने तीन प्रकार के कहे हैं। अभिधेय, लक्ष्य एवं व्यंग्य इनका विवर्तन करने वाली शक्तियों को क्रमशः अभिधा, लक्षणा, और व्यञ्जना के अभिधान दिए गए हैं। साक्षात संकेतित अर्थ को अभिधेयार्थ, मुख्यार्थ, वाच्यार्थ कहते हैं। मुख्यार्थ के बाद होने पर उसी से सम्बन्धित प्रयोजन या रुढ़ि के कारण जो अर्थ लिया जाता है। उसकी संज्ञा लक्ष्यार्थ है। इन दोनों अर्थों से विलक्षण प्रसंग या प्रकरण आदि के कारण जो सर्वथा एक नवीन अर्थ को संकेतित करे या ग्रहण किया जाये उसे व्यंग्यार्थ कहते हैं।

जैसा कि **मम्मट** ने लिखा है - स्याद्वाचको लाक्षणिकः शब्दोऽत्र व्यञ्जक स्त्रिधा। 1

विश्वनाथ ने भी यही नाम दिया है - अर्थो वाच्यश्य लक्ष्यश्च व्यंग्यश्चेति त्रिधा मतः। 2

प्रश्न ये उठता है कि शब्द में संकेत की प्रतिष्ठा कैसे होती है। इस दृष्टि से नव्य नैयायिक व्यक्ति शक्तिवादी है। प्राचीन नैयायिक और मीमांसक जातिवादी है। कुछ बौद्ध अपोहवादी है। वैयाकरणों ने इसे संकेत ग्रह कहकर जाति, गुण, क्रिया और यदृच्छा इत्यादि चार भेद या कारण कहे है। जैसा कि **मम्मट** ने लिखा है -

संकेततश्चतुर्भेदो जात्यादिर्जातिरेव वा। 3

यहाँ विस्तृत विवेचन न कर जाति, गुण, क्रिया और यदृच्छा के आधार पर मेघदूत और शारिका सन्देश के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करेंगे। यहाँ यह एक बात और स्मरणीय है कि अभिधा में निष्पन्न अर्थ शक्ति को पण्डितराज जगन्नाथ ने समुदाय शक्ति केवलावयव शक्ति तथा समुदायावयव शक्ति संकर कहा है। जिसे हम रुढ़ि, योग एवं योग रुढ़ि कह सकते हैं। रुढ़ि शब्दों का स्वरूप निर्धारित करते हुए यह कहा जा सकता है कि शब्दों का विभाजन अलग-अलग वर्णों में किया जा सकता है किन्तु उनका अर्थ सम्मिलित रूप में ही होगा। योग या यौगिक शब्द वे शब्द होते हैं जिनके टुकड़े होने पर प्रत्येक टुकड़े का अलग-अलग अर्थ होने पर भी एक दूसरे अर्थ की परिकल्पना की जाती है। इस दृष्टि से भी अति संक्षेप में अभिधा शक्ति के यहाँ उदाहरण दिए जा रहे हैं -

1. <u>अभिधा शक्ति - जातिवाचक</u> - इसके अन्तर्गत वे शब्द आयेंगे जिससे किसी जाति विशेष जैसे -

क - स प्रत्यग्रैः कुटजकुसुमैः कल्पितार्धाय तस्मै । 4

ख - कासारश्च क्रमुक कदलीकेरवत्तीरभागः। 5

तात्पर्य यह है कि कुटज, मेघ, चातक, शुक, शारिका, पीपल, कमल, सारस, शिप्रा आदि शब्द अभिधा के अन्तर्गत जातिवाचक और रुढ़ शब्द हैं।

गुण वाचक - जाति या व्यक्ति की विशेषता बताने वाले शब्दों को गुणवाचक शब्द कहते हैं।

---

1. काव्यप्रकाश - 2/5 2. साहित्यदर्पण - 2/2 3. काव्यप्रकाश - 2/10

4. पूर्वमेघ - 4 5. शारिका सन्देश - 20

क - कश्चितकान्ता विरह गुरुणा स्वाधिकारात्प्रमन्तः । 1

ख - सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः। 2

ग - अन्यासक्तस्त्वमिति किमपि कौर्य्यमज्ञान हेतो । 3

घ - दिव्या भव्या खलु भगवती। 4

यहाँ गुरुणा, पटु, निदर्य, कौर्य्य, दिव्य, भव्य इत्यादि शब्द गुण वाची शब्द हैं।

3. क्रियावाचक - जो शब्द क्रिया के व्यापार से ओत-प्रोत रहते हैं ऐसे क्रियावाचक अभिधा कहलाते हैं।

जैसे - वसितम् रामगिर्याश्रमेषु -

सन्देशं मे हर धनपति क्रोध विश्लेषितस्य -

मास्म क्रन्दो मदिरनयने माधवो मानशाली -

प्रथम उदाहरण में वसतिम् या द्वितीय उदाहरण में हर शब्द एक विशिष्ट अर्थ का भी द्योतक है हर शब्द का अर्थ हरण करना है किन्तु क्रिया वैशिष्ट्य के कारण ले जाने के अर्थ में प्रयुक्त है।

4. व्यक्ति वाचक - (यदृच्छा) - जो शब्द केवल एक व्यक्ति या वस्तु के वाचक होते हैं। उन्हें व्यक्ति वाचक अभिधा कहते हैं। रामगिरि आश्रम, पुष्कर आवर्तक, आम्रकूट, विन्ध्य आदि शब्द व्यक्ति विशेष के वाचक है। इसी प्रकार शारिका सन्देश में **माधव, देवकी, गोपाल, चक्रपाणि, देवनारायण, विष्णु** इत्यादि एक-एक उदाहरण यहाँ दिया जा रहा है -

क - जातं वंशे भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां। पूर्वमेघ - 6

ख - मदिनयने माधवो मानशाली । शा0सं0 - 4

ग - हित्वा गच्छन्नमरतटिनी नामयत् केरलेषु। शा0सं0 -4

उपर्युक्त उदाहरणों में कुछ रुढ़ि कुछ यौगिक शब्दों का प्रयोग है किन्तु यहाँ हम अलग से रुढ़ि, यौगिक, योग रुढ़ अर्थों को बताने वाले शब्दों के उदाहरण प्रस्तुत कर रहे हैं।

रुढि -

त्वामारुढ़ पवन पदवी । पूर्वमेघ - 8

तां चावश्य दिवसगणना। पूर्वमेघ - 9

मन्दं-मन्दं नुदति । पूर्वमेघ - 10

शारिका सन्देश में -

श्री मानाध्यम्बर धुनि। पूर्वमेघ - 11

वपुः शत्रुभिः । पूर्वमेघ - 26

---

1. पूर्वमेघ - 1, 5
2. शारिका सन्देश - 2, 18
3. पूर्वमेघ - 1, 7

यौगिक शब्द - जिन शब्दों के अलग-अलग टुकड़े हों और प्रत्येक टुकड़े का अपना अर्थ हो जैसे -

क - विहतगतिर्द्रक्ष्यसि भ्रातृजाया । पूर्वमेघ - 9

ख - पक्षिराजे। द्विजेन्द्रः भूसुराणां । शारिका सन्देश - 22

भुसुरेन्द्रः। शा0सं0 - 24

इन शब्दों के टुकड़े अलग होने पर अलग-अलग टुकड़े के अलग-अलग अर्थ टुकड़ों के आधार पर न कर कहीं रुढ़ अर्थ में प्रयुक्त हो उसे योग रुढ़ शब्द कहते हैं।

शापान्तो मे भुजग शयनादुत्थिते शांर्गपाणौ। 2/50

जीमूतेन स्वकुशलमयीं। 1/4

वन्द्यैः पुंसां रघुपतिपदैकिंतं मेखलासु। 1/12

हा गोविन्द । शा0सं0 - 2

पावनः पार्थसूतः । शा0सं0 - 6

यहाँ जीमूत का अर्थ बादल रघुपति का अर्थ राम और गोविन्द का अर्थ इन्द्रियों के स्वामी या गायों के स्वामी के अर्थ में न कर कृष्ण अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। इसलिए ऐसे शब्दों को योग रुढ़ि कहा जाता है।

लक्षणा - **आचार्य मम्मट** के अनुसार जहाँ मुख्य अर्थ में बाधा पड़े और दूसरा अर्थ रुढ़ि या प्रयोजन के कारण दूसरा अर्थ प्रयुक्त हो वहाँ लक्षणा शब्द शक्ति होती है।

मुख्यार्थ बाधे तद्योगे रुढ़ितोऽथ प्रयोजनात्

अन्योऽर्थो लक्ष्यते यत् सा लक्षणारोपिता क्रिया। 1

इसी मत की पुष्टि विश्वनाथ ने भी की है -

मुख्यार्थ बाधे ययाऽन्योऽर्थः प्रतीयते

रुढ़े प्रयोजनाद्वासौ लक्षणा शक्तिरर्पिता। 2

तात्पर्य यह कि अधिक से अधिक तथ्य को कम से कम शब्दों में व्यक्त करने की कामना लक्षणा के मूल में है। संकोच, मर्यादा उक्ति वैचित्र्य, शालीनता, प्रभाव वैशिष्ट्य की योजना के कारण लक्षणा का प्रयोग किया जाता है। उक्त दोनों परिभाषाओं के अनुसार लक्षणा की तीन शर्ते हैं। मुख्यार्थ बाध, तद्योग प्रयोजन अथवा रुढ़ि। लक्षणा के भेद उपभेद की विस्तृत चर्चा काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में प्राप्त है। कहीं यह रुढ़ि लक्षणा प्रयोजनवती

1. काव्यप्रकाश - 2/   2. साहित्यदर्पण -

लक्षणा के रूप में और उसके उपभेदों में गौणी और शुद्धा प्रयोजनवती लक्षणा। गौणी लक्षणा के सारोपा साध्यवसाना शुद्धा के उपादान और लक्षण लक्षणां इस प्रकार कहीं ये 12 प्रकार की कहीं 6 प्रकार की तो साहित्यदर्पण के अनुसार यह 80 प्रकार की होती हैं। उन्होंने गौणी के 4 शुद्धा के 4 गूढ़ व्यंग्य एवं अगूढ़ व्यंग्य की दृष्टि से 16 पर एवं वाक्य की दृष्टि से 32 रुढ़ा के 8 कुल 40 हुए। इन्हें धर्म एवं धर्मी की दृष्टि से भेद कर 80 प्रकार की लक्षणाओं का उल्लेख किया है। विस्तार भय से यहाँ हम उसके मूल भेदों के उदाहरण देकर इस विषय को समाप्त करना चाहेंगे।

1.रुढ़ि लक्षणा – जिस लक्षणा में रुढ़ि के कारण मुख्यार्थ का परित्याग कर दिया जाय उससे सम्बन्ध रखने वाले अर्थ का ग्रहण किया जाय उसे रुढ़ि लक्षणा कहते हैं।

जैसे - अस्तङमित महिमा वर्ष भोग्येणभर्तुः। 1/1 मेघूदत

यहाँ महिमा के अस्त होने का शब्दार्थ अभिधा से लिया तो महिमा तो अस्त होती नहीं अतः यहाँ महिमा शब्द को लेकर अस्तंगत में लक्षणा करेंगे। तात्पर्य यह कि सामर्थ्य या उसकी विशेषता समाप्त हो गयी है। यहाँ महिमा मूल अर्थ के साथ सामर्थ्य, वैभव आदि का अर्थ दे रहा है।

जातं वंशे भुवन विदिते पुष्करावर्तकानां। पूर्वमेघ -6

यहाँ भुवन को ज्ञात नहीं हो सकता अतः इसमें मूल भुवन का अर्थ न लेकर संसार के लोग या लोगों में ऐसा अर्थ रुढ़ि के कारण करना पड़ेगा।

क्षोणीदेवक्षिति पति रति प्रौढ़कीर्तिः प्रशास्ति। शा0सं0 - 5

यहाँ निर्जीव पृथ्वी का कोई पति नहीं अतएव नृप अर्थ में यह रुढ़ हो गया है।

क- माशापाशग्रथित हृदया किञ्चिदभ्यर्थयेऽहम्। 8

ख- पुण्यात्मानः पुखरमिदं पावयन्ति प्रवीणाः। 24

प्रथम उदाहरण में आशा को बन्धन के रूप में चित्रित किया गया है जो सम्भव नहीं है। फिर भी रुढ़ि के कारण आशा रखने वाले लोग इस प्रकार का अर्थ किया जायेगा। प्रवीण तो अत्यन्त विख्यात है। वीणा बजाने में कुशल इस अर्थ को न लेकर मात्र चतुर अर्थ लिया जाएगा। यहाँ यह एक बात विचारणीय अवश्य है। क्योंकि रुढ़ि में भी कोई न कोई प्रयोजन छिपा रहता है। जैसा कि मम्मट ने रुढ़ा लक्षणा के उदाहरण के रूप में कर्मणि कुशलः कहा है, जिसका अर्थ है। काम करने में चतुर। रुढ़ि के कारण यह निपुण अर्थ में मुख्यार्थ से भिन्न हो गया और धीरे-धीरे प्रयोजन को ही स्वीकार कर लिया। अतः रुढ़ा को भी प्रयोजनवती लक्षणा में अन्तर्भाव किया जा सकता है।

प्रयोजनवती लक्षणा – प्रयोजनवती लक्षणा वहीं पर होती है जहाँ हम मुख्यार्थ से सम्वन्धित लक्ष्यार्थ का ग्रहण किसी प्रयोजन से करते हैं। इसके अनेक भेदों में से गौणी और शुद्धा भेद अधिक प्रसिद्ध हैं। गौणी लक्षणा वहीं होती है जहाँ लक्ष्यार्थ उपचार आधारित रहता है। यद्यपि मुकुलभट्ट ने इस धारणा का खण्डन किया है। जैसे -

क - नीचैराख्यं गिरिमधिवसेस्तत्र विश्राम हेतो
स्त्वत्संपर्कात् पुलकितमिव प्रौढ़पुष्पैः कदम्वैः
यः पुण्यस्त्रीरति परिमलोद्गारि भिर्नागराणा
मुद्दामानि प्रथयति शिलावेश्मभिः यौंवनानि। पूर्वमेघ - 26

ख - पश्चादुच्चैर्भुजतरुवनं मण्डलेनाभिलीनः
सान्ध्यं तेजः प्रतिनवजपा पुष्परक्तं दधानः
नृत्यारम्भे हर पशुपतेरा र्द्रनागाजिनेच्छां
शान्तोद्वेगस्तिमित नयनं दृष्टभक्तिर्भवान्या। पूर्वमेघ - 39

ग - पत्र श्यामा दिनकर हयस्पर्धिनो यत्र वाहाः
शैलोदग्रास्त्वमिव करिणो वृष्टिमन्तः प्रभेदात्
योधाग्रण्यः प्रतिदशमुखं संयुगे तस्थिवांसः
प्रत्यादिष्टा भरणरुचयश्चन्द्रहास व्रणांकै। उत्तरमेघ - 13

यहाँ कदम्ब के समान रोमाञ्चित भाव की व्यञ्जना के लिए वेश्या और पर्वत से सम्बन्ध जोड़ा गया है जिसका प्रयोजन पर्वत कन्दराओं के सुगन्धित होने से है। मेघ के आने से रोमाञ्चित रमणियाँ हैं। कदम्ब के खिलने से पर्वत के रोमाञ्चित होने का आरोप है। इस लिए यहाँ गौणी सारोपा प्रयोजनवती लक्षणा मानी जा सकती है।

यहाँ कालिदास ने यह कहने का प्रयास किया है कि शिव ने गजासुर को मारकर रक्त से सने हुए चर्म को भुजाओं में धारण कर ताण्डव नृत्य किया था। जिसे डर के मारे पार्वती ने नहीं देखा किन्तु सान्ध्यकालीन सूर्य और मेघ के संयोग से जपापुष्प के समान लाल रंग के मेघों में गजचर्म के आरोप के कारण भयरहित पार्वती निश्चल नेत्रों से शिव के ताण्डव नृत्य को देख सकेगीं। यह परिकल्पना लक्ष्यार्थ की पूर्ति करता है।

कालिदास ने अन्तिम श्लोक में अलकापुरी के घोड़ों को सूर्य के अश्व से तुलना करते हुए वर्ण और गति पर अधिक बल दिया है क्योंकि अलकापुरी के वीर रावण से लड़ने पर घायल हो गए थे और वीरों

की शोभा आभूषणों से न होकर घातचिन्हों से होती है। कवि का प्रयोजन है कि अलकापुरी निवासियों की वीरता और वहाँ के अश्व की क्षिप्रता अतुलनीय है। इस प्रयोजन की पूर्ति हेतु कवि ने अलंकार के माध्यम से लक्षणा का प्रयोग किया है।

क - विभ्राणं त्वामदिरगदाब्जानि दोर्भिश्चतुर्भि
विंभ्राज्यं च प्रकट मुकुटोदार हारांगदाद्यैः
श्री वत्स श्री परिलसदुरो विस्फुरद्धन्यमालं
बालं बालार्क मिव सुषुवे देवकी पूर्व सन्ध्या। शा0सं0 -72

ख - गोष्ठोद्देशे विहित वसितः पूतनामारणादि
क्रीडाशाली मुनि विनिहित ख्यातिमत्पूतनामा
मुष्णन कृष्ण ! त्वमथ नवनीता दिगव्यानि गोपीः
तृष्णाभाजो नट इव नरान्नवमून्वकार्षीः। शा0सं0 -74

यहाँ देवकी रूपी पूर्वसन्ध्या के कृष्ण रूपी सूर्य का वर्णन कर कवि ने सारोपा लक्षणा का उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार कृष्ण द्वारा नवनीत गव्य पदार्थों को चुराते हुए संसार में रहने वाली गोप वनिताओं के हृदय को चुरा लिया है। चोरी तो किसी वाह्य वस्तु की होती है किन्तु मन या हृदय का चुराना लोक व्यवहार में सम्भव नहीं है। अतः इसे हम गौणी लक्षणा से ही अभीष्ट अर्थ की प्राप्ति कर सकते हैं।

शुद्धा लक्षणा – प्रयोजनवती लक्षणा का दूसरा भेद है शुद्धा लक्षणा। इसके भी दो प्रमुख भेद माने गये हैं। उपादान लक्षणा और लक्षण लक्षणा। इनका सैद्धान्तिक विवेचन करते हुए आचार्य मम्मट ने लिखा है कि उपादान लक्षणा वह है जो अपनी सिद्धि के लिए किसी अन्य का आक्षेप करे। लक्षण इस प्रकार है -

स्वसिद्धये पराक्षेपः परार्थ स्वसमर्पणम्
उपादानं लक्षणं चेत्युक्ता शुद्धैव सा द्विधा। 1

आचार्य विश्वनाथ ने भी इसी भाव की पुष्टि की है -

मुख्यार्थस्येतराक्षेपो वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये
स्यादात्मनोऽप्युपादाना देषो पादान लक्षणा। 2

तात्पर्य यह है कि आरोप के इतर अन्य सम्बन्धों के आधार पर जिस अर्थ की अभिव्यक्ति हो उसे हम प्रयोजनवती शुद्धा लक्षणा कहते हैं। इस प्रकार शुद्धा लक्षणा के लिए सारोपा शुद्धा उपादान सारोपा शुद्धा

---

1. काव्यप्रकाश - 2/10 2. साहित्यदर्पण - 2/6

लक्षण लक्षणा भेद भी मम्मट ने उल्लिखित किया है। मेघदूत एवं शारिका सन्देश से सामीप्य सम्बन्धः आधार आधेय सम्बन्धः अंगांगि भाव सम्बन्धः कारण कार्य सम्बन्धः इत्यादि भेदों के कुछ उदाहरण दिए जा रहें हैं।

क - नीत्वामासान् कनक वलयभ्रंश रिक्त प्रकोष्ठः। 1

ख- मूर्धोपान्ते मुकुलित करैर्भावना सावधानै। 2

कालिदास का कथन है कि यक्ष प्रिया के वियोग में एक मास रहकर इतना दुर्बल हो गया है कि उसकी कलाई से स्वर्ण वलय गिर गया है। यहाँ पर आधार आधेय सम्बन्ध के आधार पर कनक वलय भ्रंश के माध्यम से यक्ष का दौर्बल्य और कलाई (हाथ) की रिक्तता के भाव को व्यञ्जित किया गया है। ये कहा जा सकता है कि **यस्यबाहू विरह कृशतः वशात् कनक कंकङ्पातेन रिक्तः**। यहाँ पर लक्षणा से ही दौर्बल्य कलाई का पतला होना कनक वलय का गिर जाना अर्थ लिया जायेगा। स्वाभाविक ही है। वलय (बाजूबन्द) जो भुजदण्डों (कन्धे का निचला हिस्सा) पर पहना जाता है। अब दौर्बल्य के कारण हाथ से गिर गया है। इसी प्रकार शारिका सन्देश में सिर के समीप अग्जलिपुट को मुकुलित (कमल) के रूप में लगाकर लगातार नारायण का नाम लेने वाले भक्तों की चर्चा की गई है। कर का मूल शब्दार्थ हाथ है किन्तु यहाँ दोनों हाथों की दसों उँगलियों को जोड़कर कमलवत् बनाकर प्रणाम करने की बात कही गई है। हस्त और उँगलियों में अंगांगिभाव सम्बन्ध होता है। अतः यहाँ शुद्धा लक्षणा मानी जाएगी।

क - कण्ठाश्लेष प्रणयिनिजने किं पुनर्दूरसंस्थे। 3

कालिदास का मन्तव्य यह है कि संयोगी या प्रियायुक्त व्यक्ति के लिए मेघ उद्‌दीपन विभाव का कार्य करते हैं। उनके चित्त में अन्यथा वृत्ति या विकार भाव उत्पन्न हो जाता है तो फिर आलिंगनोत्सुक प्रिय जनों के दूर रहने पर किस प्रकार की अनुभूतियाँ होगीं। यहाँ दूरसंस्थे किं पुनः कहकर कवि ने साहचर्यजन्य लक्षणा का उपयोग किया है। ऐसे ही मेघदूत में कवि कालिदास ने यक्ष प्रिया को मेघ की भ्रातृजाया (भाभी) जैसे सम्बन्ध से साहचर्य जन्य लक्षणा की अभिव्यक्ति की है। बात यह है कि सामाजिक सम्बन्ध जीवित व्यक्तियों या समाज में होते हैं कवि का यहाँ मूलाभाव यक्ष प्रिया के प्रति मेघ के मन में आदर भाव, सम्मान का भाव रहे इस अर्थ की अभिव्यक्ति सम्बन्ध रूपा लक्षणा के द्वारा की है।

आरोप तथा अनारोप की दृष्टि से भी शुद्धा लक्षण लक्षणा के भी भेद बताये गये हैं। सारोपा गौणी लक्षणा तथा साध्यवसाना गौणी लक्षणा। विस्तृत एवं सूक्ष्म विवेचन में न जाकर यहाँ इतना ही कह देना पर्याप्त है कि मेघदूत और शारिका सन्देश में लक्षणा के भेद और उपभेदों की विस्तृत चर्चा की है। प्राक्तन एवं नवीन

1. पूर्वमेघ - 2 2. शारिका सन्देश - 4 3. पूर्वमेघ - 3

आचार्यों में यह आज भी विवाद का विषय बना है कि वास्तव में मम्मट लक्षणा षड्विधा कहकर किन-किन लक्षणाओं का अन्तर्भाव करना चाहते थे। वस्तुतः प्रयोजनवती लक्षणा के भेदों का उल्लेख करें तो गौणी और शुद्धा उपादान और लक्षण लक्षणा तथा इसमें आरोप का सम्बन्ध जोड़ लें तो यह रूप कुछ इस प्रकार दिखाई देगा।

1. सारोपा गौणी लक्षणा, जैसे - बाहीक बैल है। गौर्बाहीकः।
2. सारोपा शुद्धा उपादान लक्षणा, जैसे - यष्टयः प्रविशन्ति।
3. सारोपा शुद्धा लक्षण लक्षणा, जैसे - आयुधृतम (धृत आयु है)
4. साध्यवसाना गौणी लक्षणा, जैसे - गौरयम् (यह बैल है)
5. साध्यवसाना शुद्धा उपादान लक्षणा, जैसे - अयं कुन्ताः सन्ति।
6. साध्यवसाना शुद्धा लक्षण लक्षणा, जैसे - आयुरेवेदम् यही आयु है।

3. व्यञ्जना - कहीं-कहीं वक्ता ऐसे वाक्यचातुर्य से काम लेता है कि प्रत्यक्ष वाक्य का अभिधेयार्थ या लक्ष्यार्थ ऐसे साधारण व्यक्ति को ग्राह्य नहीं होता। केवल सहृदय ही उसके प्रतीपमान अर्थ को समझ-समझ कर भाव विभोर होता रहता है। इसी अभिधा और लक्षणा से भिन्न विलक्षण शक्ति को व्यञ्जना कहते हैं। तात्पर्य यह कि अपने-अपने अर्थ का बोध कराकर अभिधा और लक्षणा के विरत हो जाने पर जिस शक्ति द्वारा व्यंग्यार्थ का बोध होता है उसे व्यञ्जना कहते हैं। व्यञ्जना से प्रतीत होने वाले अर्थ को व्यंग्यार्थ, ध्वन्यार्थ या प्रतीयमानार्थ कहते हैं। इस दृष्टि से इसका विस्तृत विवेचन अगले अध्याय के अन्तर्गत ध्वनि सिद्धान्त में करेंगे। इस व्यञ्जना व्यापार की विशेषता यह है कि अभिधा और लक्षणा व्यापार तो केवल शब्द व्यापार भर है किन्तु व्यञ्जना व्यापार शब्द और अर्थ दोनों में होता है। इसीलिए साहित्य दर्पणकार **विश्वनाथ** ने लिखा है कि यह व्यञ्जना दो प्रकार की होती है।

विरतास्वभिधाद्यासु ययार्थो बोध्यते परः
सा वृत्तिर्व्यञ्जना नाम शब्दस्यार्था दिकस्य च
अभिधालक्षणा मूला शब्दस्य व्यञ्जना द्विधा। 1

व्यञ्जना के मूल कारणों की चर्चा करते हुए **मम्मट** ने लिखा है -

संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्य विरोधिता
अर्थः प्रकरणं लिंगं शब्दस्यान्यस्य सन्निधिः
सामर्थ्यमौचिती देशः कालो व्यक्तिः स्वरादयः
शब्दार्थस्यानवच्छेदे विशेष स्मृति हेतवः। 2

---

1. साहित्यदर्पण - 2 / 12-13 2. काव्यप्रकाश - 2/19 की वृत्ति

इस व्यञ्जना के भी शाब्दी और आर्थी तथा शाब्दी व्यञ्जना के अभिधामूला शाब्दी व्यञ्जना एवं लक्षणा मूला शाब्दी व्यञ्जना कहे गये हैं। उपर्युक्त श्लोक में अभिधा मूला शाब्दी व्यञ्जना के कारक तत्वों में संयोग, विप्रयोग, साहचर्य, अर्थ, प्रकरण, सामर्थ्य, विरोध, देशकाल आदि तत्वों की चर्चा की गई है तो आर्थी व्यञ्जना के लिए आचार्य **विश्वनाथ** ने निम्न कारणों की चर्चा की है -

वक्तृबोद्धव्यवाक्यानामन्य संनिधि वाच्ययोः
प्रस्ताव देश कालानां काकोश्चेष्टा दिकस्य च
वैशिष्ट्यादृन्यमर्थं या बोधयेत्सार्थसंभवा। 1

यहाँ मेघदूत और शारिका सन्देश से कुछ उदाहरण द्रष्ट्व्य हैं -

विचिक्षोभस्तनित विहाग श्रेणि काञ्ची गुणायाः
संसर्पन्त्याः स्खलित सुभगं दर्शितावर्तनाभेः
निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्निपत्य
स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु। 2

यहाँ विश्वनाथ कथित प्रस्ताव वैशिष्ट्योत्पन्न वाच्य सम्भवा व्यञ्जना रस शब्द में माना जा सकता है। क्योंकि कोश में रस अनेकार्थी हैं किन्तु यहाँ प्रसंग सन्दर्भ से युक्त वातावरण वीचि, निर्विन्ध्या आदि के कारण यहाँ रस, जल, पानी आदि अर्थ की व्यञ्जना करता है। शारिका सन्देश में भी प्रस्ताव वैशिष्ट्य उत्पन्न आर्थी व्यञ्जना का उदाहरण द्रष्ट्व्य है -

सम्पन्नश्री विभवसुलभं चम्पक श्रेणिराज्यं
यो गोपायन्नपि हि भगवानेष गोपायमानः। 3

यहाँ पर गो, इन्द्रिय, गाम, भूमि आदि में से गाय के अर्थ में गोपाय शब्द का प्रयोग हुआ है। प्रायः प्राचीन टीकाकारों ने मेघदूत को व्यञ्जना प्रधान उत्तम काव्य की संज्ञा दी है। जहाँ यक्ष व्यक्ति विशेष न होकर साधारण मनुष्य का प्रतीक है साथ ही मेघ मार्ग के बहाने कवि कालिदास ने अपने निवास स्थान उज्जयिनी की ओर भी संकेत किया है। इसलिए व्यक्ति विशेष की प्रणय गाथा होकर भी यह काव्य सामान्य प्रेमी-प्रेमिका के लिए प्रतीक बना गया है। मेघदूत में वाच्य वैशिष्ट्य, देश वैशिष्ट्य उत्पन्न व्यञ्जना के उदाहरण गम्भीरा नदी तथा अलकापुरी में वेश्याओं की या उन्मत्त रति कोविदा स्त्रियों का वर्णन कर इसे व्यञ्जना प्रधान बना दिया है। शारिका सन्देश मधुरारति का काव्य है। जिसमें भक्त अपने हृदय में स्थित आत्मा को गोपी एवं इस

1. साहित्यदर्पण - 2/16   2. पूर्वमेघ - 29   3. शारिका सन्देश - 28

शरीर को सुदूर स्थान मानकर भावुक तरल हृदयावर्जक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति अपने को गोपी मान कर करता है। यह गोपी शरीरस्थ आत्मा का ही प्रतीक है। इसके कारण समस्त काव्य कृष्ण और गोपी के विरह की अभिव्यक्ति तो करता ही है साथ ही आत्मा रूपी गोपी के प्रणय निवेदन की व्यञ्जना से भी इन्कार नहीं किया जा सकता है।

निष्कर्ष यह है कि भाव एवं भाषा या अर्थ और शब्द काव्य के प्राण हैं। कवि समाज स्वीकृत शब्दार्थ को अपनी मौलिक उद्‌भावना का पुट देकर ऐसे शब्दों का प्रयोग करता है जिससे उसके शब्द एक नयी भाव भंगिमा की अभिव्यक्ति करते हैं। कालिदास शब्दों के कुशल शिल्पी हैं। शब्द प्रयोग से नयी-नयी अर्थ छवियों की निष्पत्ति रसानुकूल भावों के प्रयोग में वे अद्वितीय हैं। उनका शब्द विधान अत्यन्त विस्तृत है। रामपाणिवाद संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश में अनेक काव्य विधाओं का प्रणयन किया है। वे ऐसे शब्दों के प्रयोग में अत्यन्त चतुर दिखाई देते हैं। जिन्हें हम मणिकुट्टिम संयोग कहते हैं। कालिदास की भाषा और शब्द विधान से सरलता, माधुर्य, प्रसादमयता, रसपेशलता, और अर्थ सौरस्य है तो शारिका सन्देश में यमकाभास जैसे पुष्कल शब्दों के प्रयोग से रस के छोटे-छोटे विवर्त या स्वर लहरियाँ उत्पन्न कर उन्हें नाद प्रधान शब्द रूप में व्यवहृत किया है। आलोच्य दोनों कवियों को शब्द शक्तियों का पूर्णज्ञान है। हो सकता है कि कालिदास के समय काव्यशास्त्र का अत्यन्त सूक्ष्म विवेचन कम हुआ हो इसीलिए प्रायः उदाहरण देने के लिए टीकाकारों ने या आलोचकों ने कालिदास के वाक्यों का प्रयोग किया है। रामपाणिवाद काव्यशास्त्र में निष्णात पण्डित है। दोनों कवियों का एक वैशिष्ट्य समान रूप से दिखाई पड़ता है। अर्थ सौरस्य के लिए परिस्थिति एवं पात्रानुकूल भाषा के विविध प्रयोग किय गये हैं। दोनों काव्यों में मन्दाक्रान्ता छन्द का प्रयोग है जिसमें श्रृंगार विशेष रूप से वियोग श्रृंगार के लिए यह छन्द अत्यन्त उपयुक्त माना गया है। यदि कालिदास ने इस छन्द के माध्यम से भावों की मन्दगति से अभिव्यञ्जना की है तो रामपाणिवाद ने इस छन्द के माध्यम से मन्द्र गति का प्रयोग किया है। यदि अन्यथा न लिया जाय तो जैसा कि मनोवैज्ञानिकों की यह धारणा है कि पुरुष के वियोग में धीरता, स्थैर्य किन्तु गम्भीरता होती है। इसके विपरीत नारी के वियोग में वचनवक्रता, उपालम्भ, अस्थिरता तथा तीव्र भावाभिव्यक्ति होती है। इस हेतु दोनों कवियों ने भावानुकूल भाषा का प्रयोग किया है। जैसा कि पिछले पृष्ठों में आलोच्य दोनों कवियों के शब्द विधान, शब्द शक्तियों छन्द के विविध प्रयोग के उदाहरण देकर यह पुष्ट किया गया है कि कालिदास भले ही **कनिष्ठिकाधिष्ठित** कवि हों किन्तु रामपाणिवाद का यह शारिका सन्देश अनामिका में ही स्थित होकर नाम वाला कवि सिद्ध हुआ है।

काव्यशास्त्रीय सिद्धान्त एवं आलोच्य काव्य ग्रन्थ

(क) - अलंकार-विधान

(ख) - रीतिगुण, वृत्ति

(ग) - वक्रोति स्वरुप

(घ) - ध्वनि सिद्धान्त

(ङ) - साम्य वैषम्य

सप्तम अध्याय

आलोच्य दोनों काव्यों में रीति गुण एवं वृत्तिविधान - संस्कृत काव्य शास्त्र में रस की भाँति गुण विवेचन भी नाट्यशास्त्र में उपलब्ध है। आचार्य भरत ने अभिनय के प्रसंग में अलंकारों, गुणों के लक्षणों पर विचार करते हुए गुणों को दोषों का विपर्यय माना है।

एतएव विपर्ययस्ता गुणाः काव्येषु कीर्तिता। 1

दण्डी ने गुण का स्पष्ट लक्षण तो नहीं लिखा किन्तु वैदर्भी और गौणी मार्गो के आधार पर वैदर्भी को अनुप्राणित करने वाले दशधर्म विशेष गुणों की चर्चा की है।

इति वैदर्भमार्गस्य प्राण दशगुणाः स्मृता। 2

वामन के अनुसार काव्यशोभा के कर्ता ही गुण है।

काव्यशोभायाः कर्तारो धर्माः गुणाः। 3

आनन्दवर्धन ने ध्वनि की प्रतिष्ठा तो अवश्य की है किन्तु अन्य तत्वों में अलंकारों की तरह गुण का भी उल्लेख किया है। 4

आचार्य कुन्तक ने काव्यमार्गो के प्रसंगों में गुणों का विवेचन किया है। इसीप्रकार मम्मट ने गुणों की चर्चा करते हुए कहा है कि जिसप्रकार शूरवीरता आत्मा के धर्म है इसीप्रकार रसोत्कर्ष के हेतु गुण कहलाते हैं।

ये रसस्यांगिनों धर्माः शैर्यादयः इवात्मनः

उत्कर्ष हेतवस्ते स्युरचलस्थितयो गुणाः। 5

आचार्य विश्वनाथ ने भी इसी मत को पुष्ट किया है। वे लिखते हैं -

य रसस्यांगित्वमाप्तस्य धर्माः शैर्यादयः यथा गुणाः। 6

तात्पर्य यह कि गुण काव्य के उत्कर्ष साधक तत्व हैं। ये गुण अलंकारों से इस बात में भिन्न हैं कि शौर्य, औदार्य एवं त्याग आदि गुणों से जिसप्रकार मनुष्य की आत्मा का गौरव और महत्ता प्रकट होती है। उसी प्रकार गुणों की सन्निविष्टि से काव्य की आत्मा भी प्रदीप्त हो उठती है जबकि अलंकार तो उसके वाह्य उपकरण मात्र हैं।

1.नाट्यशास्त्र- 17/85
2. काव्यादर्श - 2/3
3.काव्यालंकार सूत्र - 3/1/1
4. ध्वन्यालोक -2/6
5. काव्यप्रकाश - 8/66
6. साहित्यदर्पण - 8/1/1

गुणों की संख्या - भरत ने अभिनय प्रसंग में दशगुणों की चर्चा की है।

श्लेषः प्रसादः समतासमाधि माधुर्यभोजः पदसौकुमार्यम्

अर्थस्य च व्यक्तिरुदारता च कान्तिश्च काव्यस्य गुणादशैते। 1

भामह ने इन्हें तीन गुणों में ही समाहित कर लिया है। दण्डी ने दशगुणों की चर्चा की है। जो भरत के समान ही नाम वाले हैं।

श्लेषः प्रसादः समतासमाधि माधुर्य सुकुमारता

अर्थव्यक्तिरुदारतभोजः कान्तिसमाधयः। 2

परवर्ती आचार्यों ने गुणों की संख्या को सीमित करने का प्रयास किया है कुन्तक ने माधुर्य, प्रसाद, लावण्य और आभिजात्य का प्रतिपादन करने के उपरान्त औचित्य तथा सौभाग्य दो अन्य गुणों की चर्चा की है। 3

मम्मट ने इन्हें माधुर्य, ओज, प्रसाद की ही चर्चा कर इन्हें रस से जोड़ने का प्रयास किया है।

माधुर्योजः प्रसादाख्यास्त्रयस्ते न पुनर्दश। 4

ऐसी ही उपपत्ति आचार्य विश्वनाथ की है -

माधुर्यभोजोडथ प्रसाद इति ते त्रिधा। 5

विश्लेषण करके देखा जाय कि भरत तथा भामह द्वारा उल्लिखित दश गुणों में कुछ तो माधुर्य और प्रसाद में अन्तर्भुक्त हो जाते हैं और कुछ दोषाभाव रूप होते हैं। अतः मान्यता माधुर्य, प्रसाद और ओज को ही प्राप्त है। यहाँ हम आलोच्य काव्य मेघदूत और शारिका संदेश में प्राप्त माधुर्य, प्रसाद और ओज गुण के उदाहरण देकर मात्र निदर्शन के लिए ही भरतोक्त कुछ काव्य गुणों के उदाहरण प्रस्तुत करेंगे।

1. माधुर्य गुण - आचार्य मम्मट ने चित्त की द्रुति या आनन्द से द्रवीभूत के जो कारण है वही माधुर्य गुण है यह श्रृंगार रस में अधिक मिलता है।

आह्लादकत्वं माधुर्य श्रृंगारे द्रुतिकारणम्। 5

आचार्य विश्वनाथ ने माधुर्य गुण को रस से युक्त करते हुए उसके अभिव्यञ्जक शब्द विधान की भी चर्चा की है कि इसमें ट, ठ, ड, ढ से भिन्न वर्ण वर्गो के अन्तिम वणों से युक्त अक्षर माधुर्य व्यंजक होते हैं।

चित्तद्रवी भावमयो ह्लादो माधुर्यमुच्यते। 6

---

1. नाट्यशास्त्र-17/93
2. काव्यादर्श - 1/41
3. वक्रोक्तिजीवितम - 156
4. काव्यप्रकाश -8/89
5. साहित्यदर्पण - 8/1
6. साहित्य दर्शन - 8/ 3-2

संभोगे करुणे विप्रलम्भे शान्तेऽधिकं क्रमात्

मूर्ध्नि वर्गान्त्यवर्णेन युक्ताष्टठडढान्विना

रणौलघू तद् व्यक्तौ वर्णाः कारणतां गताः

अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा मधुरा रचना तथा।

मेघदूत और शारिका सन्देश संयोग और वियोग के काव्य हैं। अतः इनमें माधुर्य गुण सर्वत्र व्याप्त हैं। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं -

मन्दं मन्दं नुदति पवनश्चानुकूलो यथा त्वां

वामश्चायं नदति मधुरं चातकस्ते सगन्धः

गर्भाधानक्षण परिचयान्नूमाबद्ध मालाः

सेविष्यन्ते नयन सुभगं रवे भवन्तं बलाकाः। 1

उक्त उदाहरण में अल्पसमास तथा अनुस्वार प्रधान शब्दों का बाहुल्य है। इसी प्रकार दो-तीन समासों से युक्त यत्र-तत्र संयुक्त व्यंजन होने पर भी माधुर्य गुण सुरक्षित है। जैसे -

विधुत्वन्तंललित वनिताः सेन्द्रचापं सचित्राः

संगीताय प्रहतमुरजा स्निग्धगम्भीर घोषम्

अन्तस्तोयं मणिमयभुवस्तुङ्गम भ्रलिहाग्राः

प्रसादास्त्वां तुलयितुमलं यत्र तैस्तैविशेषः। 2

इसी प्रकार शारिका संन्देश में भी पंचमवर्ण और अनुस्वार प्रधान शब्दों के कारण काव्य में रसात्मकता वृद्धि हो गयी है।

पारे वाचामपि च मनसां पश्चिमस्याम्बुराशे

स्तीरे तीर्थं किमपि कमनीयांगि तत्क्षेत्रमाहुः

विख्यातं यद्विपुल महिमा देवनारायणख्य

क्षोणीदेव क्षितिपतिरति प्रौढ़ कीर्तिः प्रशास्ति। 3

उत्तरमेघ में विरहिणी यक्षिणी का चाक्षुष बिम्ब उपस्थित करने के लिए कवि ने मलिनवसने मद्गोत्रांक नयनसलिलैः जैसे अल्प समास का प्रयोग किया है।

---

1. पूर्वमेघ - 10 2. उत्तरमेघ - 1 3. शारिका सन्देश - 5

उत्संगे वा मलिनवसने सौम्य निक्षिप्य वीणां

मदगोत्रांकः विरचितपदं गेयमुद्गातुकामा

तन्त्री मार्दा नयन सलिलैः सारयित्वा कथञ्चिद्

भूयोभूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती। 1

शारिका सन्देश में कृष्ण गोपियों के महारास के समय में अनुस्वार प्रधान शब्दों का बहुल प्रयोग माधुर्य गुण को व्यंजित करता है। भाषा प्रवाह के कारण ड शब्द कहीं खटकने नहीं पाता।

गोप स्त्रीणामनुकमनुकालिन्दिकेली वनान्ते

चूताशोक प्रसव सरसामोदकान्ते वसन्ते

आसं क्रीडन्मधुकर वधू भाजि संक्रीडमानं

नाना रूपं नलिन नयनन्नौमि नारायणं त्वाम्। 2

रामपाणिवाद ने गोपी द्वारा भागवतोक्त गजेन्द्र मोक्ष के समय गज की करुण पुकार हेतु प्रयुक्त शब्दावली का शारिका सन्देश में प्रयोग कर माधुर्य गुण की मार्मिक अभिव्यंजना की है। इससे गोपी के माधुर्यभाव और कातर ध्वनि के लिए कारुण्य कमला, कान्त चारुण्य जैसे शब्दों का प्रयोग किया है।

ग्राहग्रस्तद्विप वरपरित्राण कण्ठोक्तमेतत्

कारुण्यं ते कथय कमलाकान्त कुत्र प्रयातम्

तारुण्य श्री सुमधुर तनो! तावंके तावदेषा

चारुण्यंगध्रिद्वितय कमले नाहमप्यानताकिम्। 3

2. <u>प्रसाद गुण</u> - प्रसाद का शब्दार्थ है प्रसन्नता, जिस वैशिष्ट्य के कारण किसी रचना की अर्थसत्ता से हम शीघ्र ही सामीप्य स्थापित करने में समर्थ हो जाते हैं। काव्यशास्त्रीय परिभाषा में इसकी संज्ञा प्रसाद है।

भरत के अनुसार - विद्वानों में अप्रचलित शब्दों के अर्थ का स्फुटन ही प्रसाद गुण है। 4

दण्डी की मान्यता है कि प्रसिद्ध अर्थ में शब्द का प्रयोग जिसे सुनते ही अर्थ समझ में आ जाये प्रसाद गुण कहलाता है।

प्रसादवत् प्रसिद्धार्थ मिन्दोरिन्दीवरधुति। 5

---

1. उत्तरमेघ - 26
2. शारिका सन्देश 81
3. शारिका सन्देश -99
4. नाट्यशास्त्र - 17/99
5. काव्यदर्श - 1/45

जबकि वामन ने शब्द गुण के रूप में रचना की शिथिलता को प्रसादगुण कहा है।

शैथिल्यं प्रसादः (काव्यालंकार सूत्रवृत्ति 3/1/6)

मम्मट ने सूखी लकड़ी में प्रज्ज्वलित होने वाली अग्नि का उदाहरण देकर यह बताया है कि प्रसाद गुण के द्वारा चित्त में एक साथ अर्थ का प्रकाश हो उठता है और वह चित्त को व्याप्त कर लेता है।

शुष्केन्धनाग्निवत् स्वच्छजलवत्सहसैवयः

व्याप्नोत्यन्यत्प्रसादोऽसौ सर्वत्र विहित स्थितिः। 1

इसी प्रकार आचार्य विश्वनाथ ने भी प्रसाद गुणों की स्थिति सभी रसों में मानी है। उसका वैशिष्ट्य सुनने मात्र से ही अर्थ ग्रहण है।

चित्तं व्याजोति यः क्षिप्रं शुष्केन्धनमिवानलः

स प्रसादः समस्तेषु रसेषु रचनासु च

शब्दास्तद्व्यन्जका अर्थबोधकाः श्रुतिमात्रतः। 2

कालिदास ने मेघ के सौन्दर्य में कहा है -

प्रत्यासन्ने नभसि दयिता जीवितालम्बनार्थी

जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन् प्रवृत्तिम्

स प्रत्यग्रैः कुटजकुसुमैः कल्पितार्धाय तस्मै

प्रीतः प्रीति प्रमुख वचनं स्वागतं व्याजहार। 3

शारिका सन्देश में त वर्ग की प्रधानता के साथ गोपी के वाक्चातुर्य में प्रसाद गुण दिखाई पड़ता है -

तस्मिन्नास्ते तरुणजलदश्याम धामाभिरामः

श्रीगोपालः शिवहितकरः पावनः पार्थसूतः

तस्मै तावत्तरुणि ! करूणाशालिने मञ्च कञ्चित्

सन्देशोक्तौ चतुर मधुनाचन्द्र बिम्बानने ! त्वम्। 4

मेघदूत में अत्यन्त छोटे-छोटे शब्दों के साथ प्रसाद गुण अत्यन्त प्रभावी बन पड़ा है -

शब्दायन्ते मधुरमनिलैः कीचिकाः पूर्यमार्णाः

संरक्ताभिस्त्रिपुर विजयो गीयते किन्नरीभिः

---

1. काव्यप्रकाश - 8/70
2. साहित्य दर्शन - 8/ 7-8
3. पूर्वमेघ - 4
4. शारिका सन्देश - 6

निर्ह्रादस्ते मुरज इव चेत् कन्दरेषु ध्वनि स्यात्

संगीतार्थो ननु पशुपतेस्तत्र भावी समग्रः। 1

इसी प्रकार शारिका सन्देश में भी सन्धि रहित शब्दों के प्रयोग से प्रसादमयता दिखाई पड़ती है।

किं जागर्मि स्वपिमि किमहं किं मुहुर्मोमुहीमि

क्वाहं क्वेक इव समयः किं दिवा किं निशा वा

का चास्मीत्थं बहुमुख विकल्पेन मत्तेव सत्यं

चिन्तेनाहं चिरमविभरं कृष्ण ! किं किन्नदैन्यम्। 2

<u>ओज</u> - ऊपर कहा जा सकता है कि गुण का सम्बन्ध चित्त दीप्ति से है जिसमें ओज गुण के कारण चित्त में उत्तेजना अधिक आती है। मम्मट इसे क्रमशः वीभत्स और रौद्र रस में अधिक देखता है।

दीव्यात्म विस्तृते हेतु रोजो वीर रस स्थिति। 3

आचार्य विश्वनाथ इस गुण की अभिव्यक्ति हेतु कहते हैं कि वर्गो के प्रथम अक्षर के साथ दूसरे और तीसरे वर्णो का संयोग रेफ युक्त अक्षर ट, ठ, ड, ढ, दीर्घ समास उद्धत रचना ओज का व्यंजन करती है।

ओजश्चित्तस्य विस्तार रूपं दीप्तत्वमुच्यते

वीर वीभत्स रौद्रेषु क्रमेणाधिक्यमस्यतु

वर्गस्याद्यतृतीयाभ्यां युक्तौ वर्णौ तदत्तिमौ

उपर्यधो द्वयोर्वा सरेफाष्टठडढैः सह

शकारश्च षकारश्च तस्य व्यञ्जकतां गताः

तथा समासो बहुलो घटनौ द्धत्यशालिनी। 4

मेघदूत और शारिका सन्देश दोनों और माधुर्य भाव के काव्य है। अतः इसमें ओजगुण के स्थल कम ही दिखाई पड़ते हैं। इतना अवश्य है कि लम्बे और दीर्घ समास के कारण ओजगुण यत्र-तत्र दिखाई पड़ता है -

नीपं दृष्ट्वा हरित कपिशं कसरैरर्धरूदै

राविर्भूत प्रथम मुकुलाः कन्दलीश्चानुकच्छम्

जग्ध्वारण्येष्वधिक्र सुरभिं गन्धमाघ्राय चोर्व्याः

सारंगास्ते जललवमुचः सूचयिष्यन्ति मार्गम्। 5

---

1. पूर्वमेघ - 59
2. शारिका सन्देश - 51
3. काव्यप्रकाश - 8/69
4. साहित्य दर्शन - 8/4-5-6
5. पूर्वमेघ - 21

इसी प्रकार शारिका सन्देश में नृसिंहावतार और परशुराम प्रसंग में कवि ने दीर्घ समासयुक्त अथवा क्षत्रियों के संहार हेतु परशुराम के उत्साह वर्णन में ओजगुण दिखाई पड़ता है -

त्वद्भक्तानामचरम शेषान्तराह्लाद कत्वात्
प्रह्लादाख्यं निजमपि सुतं किञ्च लोकत्रजञ्च
योऽभ्यद्रहयान्तमपि दनुजं निर्दयं मर्दयिष्यन्
किन्नाधत्था वपुरपि च योदारुणं नारसिंहम्
देव ब्रह्मद्रविण हरणं कुर्वतो दुर्विनीतान्
अत्युत्सिक्तानखिल जनतापिनः पापशीलान्
सर्वोनुर्वीवलयनिलयान् क्षत्रियान्त्संहारिष्यमन्
संभूतो यस्सकलभुवनक्षेमदो जामदग्न्यः। 1

निष्कर्ष यह कि आलोच्य दोनों काव्य माधुर्य गुण प्रधान काव्य है। दोनों कवियों ने काम, प्रेम और श्रृंगार की आन्तरिक व्यथा का हृदयद्रावक चित्रण किया है। स्वाभाविक है माधुर्य गुण व्यंजक शब्दों का प्रयोग काव्य की रसपेशलता की वृद्धि में सहायक बना है। मेघ के अलकापुरी पहुँचते ही यत्र-तत्र दीर्घ समास में ओजगुण या शारिका सन्देश में वामन, परशुराम, राम के कृत्यों में उत्साह का वर्णन है। इसलिए वहाँ ओजगुण माना जा सकता है। कालिदास के मेघदूत में कोमल शब्दों का अधिक प्रयोग है तो शारिका सन्देश में यमकाभास या दुरुक्तियों की प्रधानता है। इसके अतिरिक्त भरत एवं वामनोक्त काव्य के दश गुणों के उदाहरण भी यत्र-तत्र ढूँढे जा सकते हैं। जैसे - श्लेष - भरत के अनुसार जहाँ रचना वृत्ति से विचार करके ग्रहण की जाए स्वभाव से स्फुट तथा स्वतः प्रतिवद्ध हो वहाँ श्लेष होता है। जैसे - कालिदास मेघ के प्रादुर्भाव और अपनी काम दशा में सम्बन्ध निरुपित करते हुए लिखा है -

धूम ज्योतिः सलिल मरूतां सन्निपात क्व मेघः
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीया
इत्यौसुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्ता हि प्रकृति कृपणाश्चेतनाश्चेतनेषु। 2

रामपाणिवाद ने शारिका सन्देश में गोपी द्वारा सतर्क सिद्ध कराया है कि शारिका मनुष्यों के समान वाणी का प्रयोग कर उसके संदेश को प्रेषित करने में पूर्ण समर्थ है।

---

1. शारिका सन्देश - 64-66 2. पूर्वमेघ - 5

मानुष्योक्त्या मनुज मनसो हारिके शारिके त्वा

माशापाशग्रथित हृदया किञ्चिद्भ्यर्थयेऽहम्

आशासाना पुररपि हरेस्संगमं त्वामवाची

माशान्तावद् गमयितु मितः प्रारभे दूरदीर्घाम्। 1

समता - भरत के अनुसार जहाँ अलंकार और गुण समभाव से विद्यमान होकर एक दूसरे के सदृश तथा शोभावर्धक हों वहाँ समता नामक गुण होता है।

अन्योन्यसदृशं यत्र तथा ह्यन्योन्यभूषणम्

अलंकार गुणाश्चैव समासात् समता तथा। 2

दण्डी ने विषमता सहित पदरचना को समता गुण माना है। इसमें अल्पप्राण अक्षरों की प्रचुरता या कर्कश वर्णो की बहुलता रहती है।

अम्भोबिन्दु ग्रहण चतुरांश्चातकान् वीक्षमाणाः

श्रेणीभूताः परिगणनया निर्दिशन्तो बलाकाः

त्वामासाद्य स्तनित समये मानयिष्यन्ति सिद्धाः

सोत्कम्पानि प्रिय सहचरी सम्भ्रमालिंगितानि। 3

रक्षोन्निद्रस्स कलजगतां तद्द्रुहं रावणाख्यं

रक्षोराजं समिति ससुतं सानुगं संजिहीर्षुः

यो जातस्त्वं निजजनन तोऽतीव मेध्यामयोध्या

मातन्वानस्तरुण जलद श्यामलो रामदेवः। 4

समाधि - भरत ने लिखा है कि जहाँ उपमा से व्यञ्जित प्राप्त अर्थो का यत्नपूर्वक अति संयोग किया जाए वहाँ समाधि गुण होता है।

उपमास्वियहिवटानां अर्थानां य न तस्तथा

प्राप्तानां चाति संयोगः समाधि परिकीत्यते। 5

इसे ये भी कहा जा सकता है कि जहाँ ओज आरोह में और प्रसाद अवरोह में हो वहाँ समाधि गुण पाया जाता है। जैसे -

---

1. शारिका संदेश- 8
2. नाट्यशास्त्र 17/100
3. पूर्वमेघ - 22
4. शारिका संदेश - 67
5. नाट्यशास्त्र - 17/101

तत्रावश्यं वलयकुलिशोद्घट्टनोद् गीर्णतोयं

नेष्यन्ति त्वां सुरयुवतयो यन्त्रधारा गृहत्वम्

ताभ्योमोक्षस्तव यदि सरवे धर्म लब्धस्य न स्यात्

क्रीडालोलाः श्रवण परुषै गर्जितै भार्ययेस्ताः। 1

क्षोणी पृष्ठे विलुठ विपठ व्यत्क्रमस्तोत्र वर्णान्

दुर्गे मार्गे विचर विकिर स्थूल वाष्पोद बिन्दून्

त्वन्नामानि व्रजप ! विलप व्याकुलं गोकुल स्त्री

वृन्दं किन्न व्यधित विधुरं कर्म विश्वैक बन्धो ! 2

<u>सौकुमार्य</u> - भरत के अनुसार जो रचना सुश्लिष्ट सन्धि वाले सुख प्रयोज्य शब्दों तथा सौकुमार्य अर्थ से युक्त हो वह सौकुमार्य कही जाती है।

सुखप्रयोज्यैर्यच्छब्दैर्युक्तं सुश्लिष्ट सन्धिभिः

सुकुमारार्थ संयुक्तं सौकुमार्य तदुच्यते। 3

निः श्वासेनाधर किसलय क्लेशिना विक्षिपन्तीं

शुद्ध स्नानात् परुषमलकं नूनभागण्डलम्बम्

मत्संभोगः कथमुपनयेत् स्वपनजोऽपीति निद्रा

माकाङक्षन्ती नयन सलिलोत्पीडरुद्धावकाशाम्। 4

लक्ष्मी जाने ! कि मिह बहूना चक्षुषोंर्मे कदाचित्

लक्षीकत्तुं प्रदिशतु भवानक्षतानन्द सान्द्रम

राका चन्द्रप्रतिभवदनं राजरम्भोरुकाण्डं

राजीवाक्षं तव वपुरये राजगोपाल विष्णो। 5

इस प्रकार निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि अर्थ की स्पष्टतः अथवा सरसता, सुबोधता का महत्व काव्य रचना में सर्वोपरि होता है। आलोच्य दोनों कवियों ने इस बात का ध्यान रखा है कि भागवत भक्ति या श्रृंगार आदि भावों की अभिव्यञ्जना में अपवाद स्वरुप छोड़कर कर्ण कटु शब्दों का प्रयोग नहीं किया है। अन्य गुणों के लिए वक्ता या कवि निबद्ध पात्र की दृष्टि से कान्ति, उदारता, अर्थव्यक्ति जैसे गुणों का यहाँ अभाव नहीं हे। इन सबका विवेचन पिष्टपेषण मात्र ही होगा।

1. पूर्वमेघ - 64
2. शारिका सन्देश - 93
3. नाट्यशास्त्र - 17/104
4. पूर्वमेघ - 31
5. शारिका सन्देश - 105

रीति एवं वृत्ति तथा गुणों से इनका सम्बन्ध – काव्य शास्त्र की दृष्टि में रीति और वृत्ति के बीच कोई महत्वपूर्ण अन्तर नहीं किया गया है। रीति का अर्थ है शैली या कहने का ढंग। काव्यजगत में इस उपादान को सर्वोपरि महत्व देने वाले आचार्य वामन है। उन्होंने रीति की व्याख्या करते हुए विशिष्ट पद रचना रीति कहा है। (काव्यालंकार सूत्र वृत्ति 1/2/7) इसी प्रकार विश्वनाथ ने पद संघटना को रीति कहा है।

पद संघटना रीतिरंग संस्थाविशेषवत्। 1

राजशेखर के अनुसार वचन विन्यास क्रमोरीतिः आशय यह है कि जिस प्रकार शरीर के सम्पूर्ण अवयव सुसंगठित रूप में शारीरिक सौन्दर्य का संवर्धन करते हैं उसी प्रकार काव्य में भी अनुकूल पदों की संघटना रसोत्कर्ष होती है। दूसरे शब्दों में रीति वह शब्द संघटन है। जिसका आश्रय लेकर कवि अपने इष्टार्थ को पाठक के हृदय में तीव्रता के साथ प्रतिभासित करा दें।

रीति और वृत्ति – वामन ने वैदर्भी, गौड़ी और पान्चाली का विस्तृत विवेचन करते हुए वृत्ति से इनका संबन्ध स्थापित किया है। आनन्दवर्धन ने वृत्ति को व्यवहार कहा है। रुद्रट ने समासयुक्त पदों की संघटना को वृत्ति कहा है। इनका सम्बन्ध नाटकों से होता है तथा शब्द वृत्ति के अन्तर्गत उपनागरिका, परुषा और कोमला आती हैं। इस प्रकार इन दोनों के सम्बन्ध में तीन मत सामने आते हैं।

1. वर्ण व्यवहार या रसानुकूल वर्ण विन्यास रूपी वृत्तियाँ रीतियों से भिन्न हैं।
2. वृत्ति और रीति एक ही है।
3. वृत्तियाँ रीति के अंग हैं।

इसमें सन्देह नहीं कि वृत्तियाँ भी रीतियों की भाँति गुणों के माध्यम से रस का उत्कर्ष बढ़ाने वाली हैं। माधुर्य गुण व्यञ्जक वर्णों से सम्बन्ध रखने वाली उपनागरिका ओज गुण के सम्पोषक वर्णों से युक्त होने वाली परुषा और इन दोनों से युक्त अतिरिक्त वर्णों वाली वृत्ति कोमला का गुणों से और रीतियों से कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है। इस प्रकार यह सहज ज्ञात किया जा सकता है। यहाँ गुणों का विवेचन पहले कर चुके हैं। अतः इनके साथ सम्बन्ध रखने वाले रीति और वृत्ति के उदाहरण देकर कविगत वैशिष्ट्य का निरुपण करेंगे।

1. वैदर्भी रीति एवं उपनागरिका वृत्ति –

माधुर्य व्यंजकै वर्णे रुपनागरिकोच्यतें। 2

मम्मट की दृष्टि में माधुर्य व्यंजक वर्णों से युक्त वृत्ति उपनागरिका और रीति वैदर्भी कहलाती है। जिसकी व्याख्या आचार्य विश्वनाथ ने इस प्रकार की है –

---

1. साहित्य दर्शन - 9/1 2. काव्यप्रकाश - 9/108

माधुर्य व्यंजकै वर्णे रचना ललितात्मिका

अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा वैदर्भी रीतिरिष्यते। 1

तस्मिन काले नयन सलिलं योषितां खण्डितानां

शान्ति नेयं प्रणयिभिरतो वर्त्म भानोस्त्यजाशु

प्रालेयास्त्रं कमल वदनात् सोऽपि हर्तु नलिन्याः

प्रत्यावृत्तस्त्वयि कररुधि स्यादनल्पाभ्यसूयः। 2

माद्यद्भृंगी कलकलमिलतपुष्प पुञ्जे निकुञ्जे

मिथ्यागर्वात् कमपि समय यन्तदाहन्नयलींये

तन्मे कृष्ण ! स्मरशर हुताशावकाश प्रवेश

प्रख्यं कस्मै कथयितुमलं हन्तभोः ! साहसिक्यम्। 3

उक्त दोनों उदाहरणों की व्याख्या करते हुए ये कहा जा सकता है कि कालिदास ने मेघदूत में वैदर्भी का अधिक प्रयोग किया है। कोमल शब्द, कोमल भावनाओं से युक्त है। तो रामपाणिवाद ने गोपी के पश्चाताप का सानुप्रास प्रधान शब्दावली से व्यञ्जित किया है।

2. गौड़ी रीति एवं परुषा वृत्ति – इन दोनों का सम्बन्ध ओज गुण से है। इसमें संयुक्ताक्षर द्वित्व वर्ण दीर्घ समास बहुल शब्दों का प्रयोग होता है। विश्वनाथ ने लिखा है –

ओजः प्रकाशकै वर्णैर्बन्ध आडम्बरः पुनः समास बहुला गौड़ी। 4

तत्रावश्यं वलयकुलिशोद घट्टनोद्गीर्णतोयं

नेष्यन्ति त्वां सुरयुवतयो यन्त्रधारा गृहत्वम्

ताभ्यो मोक्षस्त्वं यदि सखे धर्मलब्धस्य न स्यात्

क्रीडालोलाः श्रवण परुषैर्गजितैर्भाय येरताः। 5

उड्डीना त्वं जितमरुदितः पक्षविक्षेप वेगात्

तावद्दूरामपि हितरसा लङघय व्योमबोथीम्

मध्येमार्ग क्वचिदपि न ते विश्रमस्यावकाशो

दत्तस्सत्यं सखि मम मनस्सञ्ज्वरेणोत्कटेन। 6

---

1. नाट्यशास्त्र - 9/2
2. पूर्वमेघ - 42
3. शारिका संदेश - 48
4. साहित्य दर्पण - 9/3
5. पूर्वमेघ - 64
6. शारिका संदेश - 32

उक्त दोनों उदाहरणों में टकार और डकार शब्दों के साथ महाप्राण वर्णो की बहुलता है।

3. <u>पाञ्चाली रीति एवं कोमला वृत्ति</u> - संस्कृत काव्यशास्त्र में पाञ्चाली रीति एवं कोमलावृत्ति को लक्षणबद्ध करने का विशेष प्रयत्न नहीं हुआ है। विश्वनाथ ने (वैदर्भी और गौड़ी) रीति के शेष वर्ण अर्थात जो वर्ण न माधुर्य के व्यञ्जक हो न ओज के उनसे जो रचना की जाए वह रीति पाञ्चाली कहलाती है।

वर्णैः शेषैः पुनर्द्वयोः
समस्त पञ्चपदो बन्धः पाञ्चालिका मता। 1

नन्वात्मानं बहुविगणयन्नत्मनै वा वलम्बे
तत्कल्याणि ! त्वमपि नितरां मा गमः कातरत्वम्
कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा
नीचैर्गचछत्युपरि च दशा चक्रनेमि क्रमेण। 2

दिव्याभव्या खलु भगवती भारती सारबोधे
दिव्यं चक्षुः किमपि मम सा दत्तवत्यत्युदारा
व्यक्तं हस्तामलकवदहं तत्र तांस्तान् विशेषा
नुत्पश्यामि प्रिय सखि ! यतो यावदेवं ब्रवीमि। 3

कहना नहीं होगा कि दोनों कवियों ने अपनी कलात्मक संयोजना के क्षेत्र में रीति गुण एवं वृत्तियों के लिए जिस प्रकार के शब्द विन्यास का नियोजन किया है। उससे प्रतीत होता है कि वे भावनुकूल शब्द प्रयोग में पूर्ण दक्ष हैं। कालिदास के विषय में यह प्रचलित है कि उनकी कला में वैदर्भी गुण विशिष्ट रूप से मिलता है -

वैदर्भी रीति सन्दर्भे कालिदासो विशिष्यते।

मेघदूत एवं शारिका सन्देश कोमल भावाभिव्यञ्जन प्रधान काव्य है। स्वाभाविक है कवि ने इस हेतु माधुर्य गुण, उपनागरिका वृत्ति एवं वैदर्भी रीति को विशेष रूप से अपनाया है। मेघों के गर्जन में वप्रक्रीड़ा और विद्युत नर्तन का वर्णन है। वहाँ महाप्राण या दीर्घसमास अथवा संयुक्ताक्षरों का प्रयोग यद्यपि इस प्रकरण में ओज गुण या परुषा वृत्ति का स्थान नहीं है फिर भी दोनों कवियों ने कुछ स्थलों में इनका प्रयोग किया है। मेघदूत में पुरुष अपने प्रणय का संदेश कामलांगी भीरूप्रिया, विरहविधुरा नारी के पास भेजता है। अतः स्वाभाविक है कि उसमें माधुर्य गुण और वैदर्भी रीति का प्रयोग किया जाए। शारिका सन्देश में गोपी पुरुष कृष्ण के प्रति अपना प्रणय सन्देश भेजती है । जिसमें कृष्ण की निष्ठुरता के प्रति नारी का उपालम्भपूर्ण वचन स्वाभाविक रीति में कहे गये

---

1. साहित्य दर्पण - 9/4 2. उत्तरमेघ - 49 3. शारिका संदेश - 18

हैं। यद्यपि काव्यशास्त्र में कान्ता सम्मिति उपदेश को बहुत महत्ता दी गयी है किन्तु कलहन्तारिका नायिका अपने प्रिय के प्रति जो उपालम्भ देती है, उसमें उसके खण्डिता नायिका होने के कारण आवेश या आक्रोश अधिक होता है। इस हेतु रामपाणिवाद ने यमकाभास प्रधान शब्दों का पुष्कल प्रयोग किया है। जिस प्रकार कवियों द्वारा नियोजित माधुर्यादि गुणादि काव्य के प्राणभूत रस को उत्कृष्ट बनाने में अपना योगदान करते दिखाई देते हैं वैसे ही रीति वृत्ति सम्बन्धी संविधान भी वर्णविषय के स्वरूप का साक्षात्कार कराने के साथ ही काव्यात्मभूत रस एवं भाव का चित्र खड़ा करने में समान रूप से सफल हुए हैं। वृत्ति और रीति की दृष्टि से कालिदास में सहजता, सरलता और स्वाभाविकता है तो रामपाणिवाद ने नादात्मकता उत्पन्न करने के लिए सन्धि बहुलता एवं यमकाभास शैली का प्रयोग अत्यधिक रूप में किया है।

आलोच्य काव्यों में अलंकार विधान - अलंकार शब्द का प्रयोग दो अर्थो में होता है। अलंकार शब्द (अलङ्कृति अर्थात अलम्+ कृ + क्तिन् तथा अलम् + कृ + धञ् = अलंकार) 1) पहला भूषण या शोभा के अर्थ में प्रयुक्त होता है। अलंकृतिरलङ्कारः इस अर्थ में अलंकार सौन्दर्य से अभिन्न है। वामन ने इसी अर्थ में अलंकार को सौन्दर्य का पर्याय कहकर अलंकारयुक्त काव्य को ग्राह्य कहा है।

काव्यं ग्राह्यमलङ्कारात्। 2

कर्ण व्युत्पत्ति से अलंङक्रियते - अनेन इति अलंङकारः -3

जिसका अर्थ है वह तत्व जो अलंकार को सुन्दर बनाने का साधन हो। आचार्य भामह ने वक्राभि धेय शब्दों को अलंकार कहा है।

वक्राभिधेयशब्दोक्तिरिष्टा वाचामलङ्कृति। 4

अलंकारों के विषय में दण्डी की यह उक्ति बहुत प्रसिद्ध है।

काव्याशोभाकरान् धर्मान् अलंङ्कारान् प्रचक्षते। 5

वामन ने काव्य में सौन्दर्य को ही अलंकार स्वीकार किया है। जबकि कुन्तक का मन्तव्य है कि विदग्ध कथन भंगिमा ही वक्रोक्ति है और वही अलंकार है।

वक्रोक्तिरेवं वैदग्धभंगी भागिति रुच्यते। 6

ध्वनिवादी आचार्य आनन्दवर्धन ने अलंकारों को शोभावर्धक धर्म माना है।

---

1. काव्यालंकार - सूत्र वृत्ति - 5
2. काव्यालंकार - 1/1/1
3. काव्यालंकार - 5
4. काव्यालंकार - 1/36
5. काव्यादर्श - 2/1
6. वक्रोक्तिजीवितम् 1/10

अंगाश्रितास्त्वलङ्कारा मन्तव्या कटकादिवत्

ते तमर्थ रसादि लक्षणभङ्गिन सन्तमवलम्बन्ते ते गुणा शैर्यादिवत्। 1

आचार्य विश्वनाथ के अनुसार रस का उपकारक अलंकार है।

शब्दार्थयोरस्थिरा ये धर्माः शोभातिशायिनः

रसादीनुपकुर्वन्तो ऽलंकारास्तेऽऽगदादिवत्। 2

तात्पर्य यह कि प्रारम्भ से लेकर ध्वनिवादी आचार्यो तक अलंकार दो रूपों में दिखाई पड़ता है। किसी ने इसे अलंकार और किसी ने अलंकार्य कहा है। इस प्रकार अलंकार मानव की सहज प्रवृत्ति एवं रुचि के परिचायक है। कवि अपनी उक्तियों को प्रभावोत्पादक बनाने के लिए इनका प्रयोग करता है। इनसे काव्य में चारुता और चमत्कार दोनों ही उत्पन्न होते हैं।

अलंकारों के वर्गीकरण करने के बहुविध प्रयास संस्कृत काव्यशास्त्र में उपलब्ध है। सादृश्य गर्भ, विरोध गर्भ, श्रृंखलाबद्ध न्यायमूल तो दूसरी तरफ औपम्य, विरोध, श्रृंखला न्यायवस्तुमूलक कहीं शब्दालंकार, अर्थालंकार जैसे- उल्लेख मिलते हैं। यहाँ हम शब्द और अर्थ के आधार पर आलोच्य काव्य मेघदूत और शारिका सन्देश के अलंकारों का स्वरुप प्रस्तुत कर रही है।

शब्दालंकार - यह वह अलंकार है जहाँ शब्दों के प्रयोग के कारण काव्य में चमत्कार उत्पन्न होता है। यदि उन शब्दों के स्थान पर पर्यायवाची शब्द रख दिए जाएँ तो वह चमत्कार नष्ट हो जाता है। इसके प्रमुख भेद अनुप्रास, यमक, श्लेष, वक्रोक्ति इत्यादि होते हैं।

अनुप्रास - अनु + प्र + आस से बने अनुप्रास में बारम्बार प्रकृष्ट रूप से रसानुकूल वर्णो की आवृत्ति होती है। मम्मट ने लिखा है - वर्ण साम्यमनुप्रासः। 3 इसके भी कई भेद होते हैं।

1. छेकानुप्रास - जहाँ अनेंक वर्णो की आवृत्ति एक बार हो वहाँ छेकानुप्रास होता है।

छेकोव्यंजन संघस्य सकृत्साम्यमनेकधा। 4

कश्चित्कान्ता विरह गुरूणा स्वाधिकारा। 5

नेत्राः नीताः सतत गतिना। 6

नैवापश्यन्नलिन नयनं । 1

---

1. ध्वन्यालोक - 216
2. साहित्य दर्शन - 10/1
3. काव्यप्रकाश - 9/104
4. साहित्य दर्शन - 10/3
5. पूर्वमेघ - 1
6. उत्तरमेघ - 8
7. शारिका संदेश - 1

श्रीगोपालः श्रितहितकरः पावनः पार्थसूतः। 1

2. वृत्यानुप्रास - जहाँ एक या अनेक वर्णो की आकृति अनेक बार हो वहाँ वृत्यानुप्रास होता है।

एकस्याप्यसकृत्परः। 2

सद्यः सीरोत्कषण सुरभि। 3

कनक कमलैः कर्णविभ्रंशिभिश्च। 4

मानुष्योक्त्या मनुज मनसो हारिके शारिके त्वां। 5

3. श्रुत्यानुप्रास - जहाँ तालु, कण्ठ, मूर्धा आदि किसी एक स्थान से उच्चारण किये जाने वाले व्यञ्जनों की समानता हो वहाँ श्रुत्यानुप्रास होता है।

विश्वनाथ ने लिखा है -

उच्चार्यत्वाद्यदेकत्र स्थाने तालुरदादिके
सादृश्यं व्यञ्जनस्यैव श्रुत्यनुप्रास उच्यते। 6

प्रत्यासन्ने नभसि दयिता जीवितालम्बनार्थी
जीमूतेन स्वकुशलमयीं हारयिष्यन् प्रवृत्तिम्
स प्रत्यग्रैः कुटज कुसुमैः कल्पितार्धाय तस्मै
प्रीतः प्रीति प्रमुख वचनं स्वागतं व्याजहार। 7

गोशालस्थस्सततमभितो गोगणेनोपपन्नः
श्रीगोपालो निजभजनतो भासुरान् भूसुरादीन्
क्षैरयेण स्वपदरजसा पावितेनामृतेन
प्रागिन्द्रादीनिव दिविषदस्तर्पयत्योदनेम्। 8

यमक अलंकार - जहाँ भिन्नार्थक वर्णों की निरर्थक या सार्थक पुनरावृत्ति हो वहाँ यमक अलंकार होता है।

अज्ञानान्मां प्रणय कलहे वर्तमानां समानां। 9

र्जापं जापं प्रणमन परैर्नाम नारायणेति। 10

---

1. शारिका संदेश - 6
2. काव्यप्रकाश - 9/107
3. पूर्वमेघ- 16
4. उत्तरमेघ - 11
5. शारिका सन्देश -8
6. साहित्यदर्शन - 10/5
7. पूर्वमेघ - 4
8. शारिका सन्देश - 11
9. शारिका सन्देश-
10. शारिका सन्देश-

श्लेष अलंकार - जहाँ भिन्नार्थक शब्द एक बार आकर अनेक अर्थो की व्यजंना करे।

शिलष्टैः पदैरनेकार्थाभिधाने श्लेष इष्यते। 1

जैसे - विचिक्षोभस्तनित विहाग श्रेणि कान्ची गुणायाः। 2

योगोपायन्नपि हिभगवानेष गोपायमानः। 3

वक्रोक्ति - किसी एक अभिप्राय से कहे हुए वाक्य का श्रोता द्वारा श्लेष अथवा काकु से अन्य लिए जाने को वक्रोक्ति अलंकार कहते हैं।

मम्मट ने लिखा है - यदुक्तमन्यथा वाक्यमन्यथाऽन्येन योज्यते

श्लेषेण काक्वा वा ज्ञेया सा वक्रोक्तिस्तथा द्विधा। 4

कुन्तक ने वक्रोक्ति को काव्यसर्वस्य के रूप में ग्रहण किया है। मम्मट और विश्वनाथ ने इसे शब्दालंकार का भेद मात्र कहा है। आचार्य विश्वनाथ ने लिखा है -

अन्यस्यान्यार्थकं वाक्यमन्यथा योजयेद्यदि

अन्यः श्लेषेण काक्वा वा सा वक्रोक्तिस्ततो द्विधा। 5

. शारिका सन्देश में कहा गया है कि गोपी काकु के कारण कृष्ण की उद्धार उदारता पर प्रश्नचिन्ह लगाती है, वह कहती है कि वह गज से भी हीनतर अवस्था में पहुँच गई है क्योंकि भगवान ने ग्राह्य से उसकी रक्षा करके मुक्ति प्रदान किया था। ऐसी कारुण्यशीलता कृष्ण की कहाँ चली गई है। वे मुझ पर कृपा की वर्षा क्यों नहीं कर रहे हैं।

ग्राहग्रस्तद्विपवर परित्राण कण्ठोक्तमेतत्

कारुण्यं ते कथय कमलाकान्त ! कुत्र प्रयातम्

तारुण्य श्रीसुमधुर तनो ! तावंके तावदेषा

चारुण्यङध्रिद्वितय कमले नाहमप्यानता किम्। 6

पुनरूक्तवदाभास - भिन्न आकार वाले शब्दों का वस्तुतः एक अर्थ न होने पर भी एक अर्थ सा प्रतीत होने को पुनरक्तवदाभास कहते है। आचार्य मम्मट ने लिखा है -

पुनरक्तवदाभासो विभिन्नाकार शब्दगा एकार्थतेव। 7

---

1. साहित्य दर्शन - 10/11
2. पूर्वमेघ - 29
3. शारिका संदेश - 28
4. काव्यप्रकाश - 9/103
5. साहित्य दर्शन - 10/9
6. शारिका सन्देश - 99
7. काव्यप्रकाश - 9/122

वस्तुतः इसमें शब्द की भिन्न प्रकार से आवृत्ति होती है। अर्थ की पुनरूक्ति न होकर उसका आभास मात्र होता है। जैसे -

तातट्टक्च्छैत्या अपि बत त एवाधुना तप्ततप्ताः। 1

तात्पर्य यह है कि शब्दालंकार की दृष्टि से कालिदास छेक, वृत्ति, श्रुत्य अनुप्रासों का कवि है। वर्णसाम्य एवं ध्वनि साम्य के लिए श्रुत्यनुप्रास एवं वृत्यनुप्रास के विविध प्रयोग कालिदास ने किए हैं। यमक और श्लेष का प्रयोग मेघदूत में कम ही हुआ है क्योंकि ये दोनों अलंकार पाण्डित्य प्रदर्शन हेतु प्रयुक्त होते हैं। रामपाणिवाद का शारिका सन्देश में इन सबके साथ यमकाभास शब्दों का बाहुल्य है। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि का शाब्दीक्रीड़ा में मन बहुत रमा है। इसलिए उसने काकु श्लेष यमक के अर्थ वाले शब्दों का बहुत प्रयोग किया है।

अर्थालंकार - इसमें सादृश्य की प्रधानता के कारण भावों की वैविध्यपूर्ण अभिव्यक्ति अधिक मिलती है। प्राज्ञों की परम्परा और लोक सामान्य भी सादृश्य एवं रमणीय वाग्विकल्पों का प्रयोग करता है। अर्थालंकार के अन्तर्गत वे अलंकार आते हैं जहाँ शब्दों के पर्यायवाची रख देने से भी अर्थगत वैदग्ध विद्यमान रहता है। पूर्वपृष्ठों में अर्थालंकारों का वर्गीकरण किया जा चुका है। यहाँ सामान्य रूप से प्रचलित या अतिप्रसिद्ध अलंकारों की दृष्टि से मेघदूत एवं शारिका सन्देश से लक्षण उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

उपमा अलंकार - जहाँ किसी एक वस्तु की तुलना गुण या धर्म की समानता के कारण दूसरे वस्तु से की जाती है उसे उपमा अलंकार कहा जाता है। इसके चार अंग कहे गये हैं। उपमेय, उपमान, साधारण धर्म, और वाचक।

उपमा में दो भिन्न पदार्थों का साधर्म्य वर्णित किया जाता है। यही दोनों पदार्थ उपमेय और उपमान कहलाते हैं। यह साधर्म्य चमत्कारपूर्ण होता है और यह साधर्म्य एक वाक्य में होता है। राजशेखर ने इसे काव्य सम्पदा का शिरोरत्न कहा है। दण्डी ने (काव्यादर्श 2/15-50) उपमा के 32 भेद बतायें हैं। उद्भट, मम्मट, विश्वनाथ ने पण्डितराज जगन्नाथ ने व्याकरण के आधार पर उपमा के भेद प्रभेदों का सविस्तार विवेचन किया है। कालिदास का तो यह प्रिय अलंकार रहा है। मम्मट ने साधर्म्य को उपमा कहा है।

साधर्म्यमुपमा भेदे - 2

मेघदूत में उपमा का बहुल प्रयोग हुआ है। कहीं ये स्वतंत्र रूप से कहीं संकर अलंकार के रूप में। इसी प्रकार शारिका सन्देश में उपमा के अनेक उपभेदों के उदाहरण मिलते हैं। कुछ उदाहरण द्रष्ट्व्य हैं -

---

1. शारिका सन्देश - 102 2. काव्याप्रकाश- 10/125

क- रत्नच्छायाव्यतिकर इव प्रेक्ष्यमेतत्पुरस्ताद्

वल्मीकाग्रात्प्रभवति धनुः खण्डमाखण्डलस्य। 1

ख- पादानिन्दोरमृत शिशिरान्जालमार्ग प्रविष्टा

न्पूर्वप्रीत्या गतमभिमुखं संनिवृतं तथैव।

चक्षुः खेदात्सलिल गुरुभिः पक्ष्मभिश्छादयन्तीं

साभ्रेऽह्नीव स्थलकमलिनीं न प्रबुद्धां न सुप्ताम्। 2

ग - निश्वासेनाधर किसलय क्लेशिना विक्षिपन्तीं

शुद्ध स्नानात्परुषमलकं नूनभागण्डलम्बम्

मत्संभोगः कथमुपनमेत्स्वप्नजोऽपीति निद्रा

माकाङक्षन्तीं नयन सलिलोत्पीडरुद्धावकाशाम्। 3

घ- श्रीवत्स श्री परिलसदुरो विस्फुरद्वन्यमालं

बालं बालार्कमिव सुषुवे देवकी पूर्वसन्ध्या।

मुष्णन् कृष्ण ! त्वमथ नवनीतादिगव्यानि गोपीः

तृष्णाभाजो नटं इव नरान्नवमूनन्वकार्षीः। 4

च - गोशालस्थस्ततमभितो गोगणेनोपपन्नः

श्रीगोपालो निज भजनतो भासुरान् भूसुरादीन्

क्षैरयेण स्वपदरजसा पावितेनामृतेन

प्रागिन्द्रादीनिव दिविषदस्तर्पयत्योदनेन् । 5

उपमा की दृष्टि से कालिदास तो जगत विख्यात ही हैं। मेघदूत में उपमेय, उपमान, वाचक धर्म लुप्तोपमा के उदाहरण के साथ ही एक वाक्य में लुप्त या पूर्ण उपमा का प्रयोग कवि ने किया है। ऐसा ही प्रयोग

---

1. पूर्वमेघ - 15
2. उत्तरमेघ - 30
3. उत्तरमेघ - 31
4. शारिका सन्देश - 74
5. शारिका सन्देश - 10

रामपाणिवाद के शारिका सन्देश में हुआ है। दोनों कवियों में इस दृष्टि से एक और भी समानता दिखाई पड़ती है कि कालिदास और रामपाणिवाद ने कृदन्तीय या तद्धितीय शब्दों का निर्माण कर लम्बे विशेषण युक्त वाक्यों के द्वारा उपमा का निदर्शन कराया है जैसा कि उदाहरण 'ख' और 'च' से यह बात स्पष्ट है।

रूपक – उपमेय पर उपमान के निषेधरहित अभेद आरोप को रूपक अलंकार कहते हैं। मम्मट और विश्वनाथ के लक्षण नीचे लिखे जा रहे हैं।

क – तद्रूपकम भेदों य उपमानोपमेययोः। 1

ख – रूपकं रूपितारोपो विषये निरपह्नवे। 2

तात्पर्य यह है कि रूपक में उपमेय पर उपमान का अभेद आरोप होता है। यह आरोप सादृश्य पर आधारित है। इस आरोप के लिए इव जैसे प्रतिपादक शब्दों का कथन नहीं होता तथा साधारण धर्म कथित न होने पर भी लक्षणा द्वारा उसका ज्ञान कराया जाता है।

हेमाम्भोज प्रसवि सलिलं मानसस्याददानः
कुर्वन्कामं क्षणमुख पटप्रीति मैरावतस्य। 3
वासश्चित्रं मधुनय नयोर्विभ्रमादेश दक्षं
पुष्पोद्भेदं सह किसलयैर्भूषणानां विकल्पम्। 4
श्रीवत्सश्री परिलसदुरो विस्फुरद्वन्यमालं
बालं बालार्कमिव सुषुवे देवकी पूर्वसन्ध्या। 5
मुष्णन् कृष्ण ! त्वमथ नवनीतादिगव्यानि गोपीः
तृष्णाभाजो नटं इव नरान्नवमूनन्वकार्षीः। 6

उत्प्रेक्षा अलंकार – **मम्मट** ने लिखा है –

सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेनयत्। 7

जहाँ प्रस्तुत में अप्रस्तुत की सम्भावना की जाए वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में इसके अनेक भेद उपभेद की चर्चा की गई है, जिसमें वस्तु, हेतु, फलोत्प्रेक्षा का विशेष उल्लेख मिलता है। यहाँ हम सामान्य उदाहरण प्रस्तुत करेंगे –

---

1. काव्याप्रकाश – 10/139
2. साहित्य दर्पण – 10/28
3. पूर्वमेघ – 65
4. उत्तरमेघ – 12
5. शारिका सन्देश – 72
6. शारिका सन्देश – 74
7. काव्यप्रकाश – 10/137

हित्वा तस्मिन भुजगवलयं शम्भुना दत्तहस्ता
क्रीडाशैले यदि च विचरेत् पादचारेण गौरी
भंगीभक्त्या विरचित वपुः स्तम्भितान्र्जलोघः
सोपान त्वं कुरू मणितटारोहणायाग्रयायी। 1

(क) - मन्येऽहं ते कुवलयदल स्निग्ध मुग्धाः कटाक्षाः
साक्षाद् भूता मम खलु पुरात्वत्समीप स्थितायाः
तादृक्च्छैत्या अपि बत त एवाधुना तप्ततप्ताः
सप्तार्चिर्वन्मदन विशिखीभूय मामुद्भमन्ति।

(ख) - क्वासौ कामः कुसुम विशिखो व्रजवत्कर्कशसं मे
क्वेदं चेतस्तव हि विरहे क्षिप्रमेवाप्रदीर्ण्णम्
यद्वा कामः क्व नु खलु! खलः कालजित्फालनेत्रे
दग्धस्तस्य ध्रुवमिह पदे तेऽभिषिक्ताः कटाक्षाः। 2

प्रतीप अलंकार - जहाँ प्रसिद्ध उपमान का निषेध अथवा निन्दित वर्णन हो या उसकी उपमेय रूप में कल्पना किए जाने का वर्णन हो वहाँ प्रतीप अलंकार होता है। आचार्य मम्मट ने लिखा है -

आक्षेप उपमानस्य प्रतीपमुपमेयता
तस्यैव यदि वा कल्प्या तिरस्कार निबन्धनम्। 3

साहित्यदर्पणकार ने अत्युत्कृष्ट वस्तु का उत्कर्ष रूप में वर्णन कर अन्य वस्तु को उपमान बना देने को प्रतीप अलंकार कहा है -

उक्त्वा चात्यन्तमुत्कर्ष मत्युत्कृष्टस्य वस्तुनः
कल्पितेऽप्युपमानत्वे प्रतीपं केचिद् चिरे। 4

मेघदूत में प्रसिद्ध उपमान मेघ की उपमेय रूप में कल्पना इस प्रकार की गई है -

भर्तुः कण्ठच्छविरिति गणैः सादरं वीक्ष्यमाणः
पुण्ययाया स्त्रिभुवन गुरोर्धाम चण्डीश्वरस्य

---

1. पूर्वमेघ - 63
2. शारिका सन्देश - 102, 103
3. काव्यप्रकाश - 10/201
4. साहित्य दर्पण - 10/88

धूतोद्यानं कुवलय जोगन्धि गन्धवत्या

स्तोयक्रीडा निरत युवति स्नानातिक्तैमरुदिभः। 1

शारिका सन्देश में श्री कृष्ण के श्रीवत्स चिन्हांकित वक्षस्थल को उपमान बनाकर तारक खचित आकाश को उपमेय मानकर कवि ने प्रतीप अलंकार की सुन्दर व्यञ्जना की है।

श्रीवत्सांक सुरभि वनमालाञ्चितं तारहार

स्फारश्रीकं गलतमिलत्कौस्तुभोद्योतहृद्यम्

मेघश्यामं तव घनमुरो गाढमाभ्यां स्तनाभ्या

माश्लिष्यन्ती मनसिरुजं मार्जयिष्ये कदा नु। 2

काव्य लिंग - जहाँ वाक्यार्थ रूप से या पदार्थ रूप हेतु का अभिधान हो वहाँ काव्य लिंग होता है।

मम्मट ने लिखा है - काव्यलिंग हेतोर्वाक्य पदार्थता। 3

अप्यन्यस्मिञ्जलधर महाकालमासाद्य काले

स्थातव्यं ते नयन विषयं यावदत्येति भानुः

कुर्वन्सन्ध्याबलि पटहतां शूलिनः श्लाघनीया

मामन्द्राणां फलमविकलं लप्स्यसे गर्जितानाम्। 4

यहाँ कहा गया है कि शिवजी की सान्ध्यकालिक आरती के समय बजने वाले नगाड़ों की ध्वनि को मेघ अपने गर्जन से उसके नाद सौन्दर्य में अभिवृद्धि कर सकेगा, जिसके कारण मेघ का गर्जन सार्थक हो जाएगा। इस प्रकार पूर्वार्धवाक्य के प्रति उत्तरार्ध वाक्य को कारण रूप में प्रस्तुत किया गया है। अतः यहाँ काव्य लिंग अलंकार माना गया है।

राधा साधारण तनु गुणा नाहमेतावता का

बाधा साधो ! मम तु भवता साऽपि किन्नोज्झिताऽभूत

सौन्दर्यन्नो भवति कमितुर्योषिति प्रीतिहेतु

स्तस्यामनुष्यां रचयति रतिं किन्तु सौशील्यमेव। 5

उक्त उदाहरण में गोपी का आक्षेप है कि कृष्ण ने अप्रतिम सुन्दरी राधा को भी छोड़ दिया था।

---

1. पूर्वमेघ - 36
2. शारिका सन्देश - 107
3. काव्यप्रकाश - 10/174
4. पूर्वमेघ - 37
5. शारिका सन्देश - 108

वस्तुतः कामी पुरुषों को स्त्री का सौन्दर्य उतना आकृष्ट नहीं करता जितना कि उसकी सुशीलता। यहाँ कृष्ण द्वारा छोड़ने के वाक्य को गोपी स्त्रियोचित सौशील्य के द्वारा कामीजनों की प्रवृत्ति को पुष्ट करती है। प्रथम वाक्य के अर्थ का कारण द्वितीय वाक्य बन पड़ा है। इस लिए यहाँ काव्य लिंग अलंकार माना जा सकता है।

अर्थान्तरन्यास - **मम्मट ने लिखा है -** सामान्यं वा विशेषो वा तदन्येन समर्थ्यते

यत्तु सोर्थन्तरन्यासः साधर्म्येणेतरेण वा। 1

अर्थात जहाँ विशेष रूप मुख्यार्थ के समर्थन के लिए सामान्य रूप अन्य वाक्यार्थ का अथवा सामान्य रूप मुख्यार्थ के लिए विशेष रूप अन्य वाक्यार्थ का प्रयोग किया जाए वहाँ अर्थान्तन्यास अलंकार होता है। तात्पर्य यह है कि अर्थान्तरन्यास में परस्पर निरपेक्ष दो वाक्यों का प्रयोग होता है। जिसमें एक वाक्य सामान्य और दूसरा विशेषपरक तथा दोनों वाक्यार्थो में सामर्थ्य समर्थक सम्बन्ध माना जाता है। मेघदूत में अर्थान्तरन्यास के अनेक स्थल हैं। सामान्य रूप से एक पूर्वमेघ एक उत्तरमेघ के उदाहरण दिए जा रहे हैं।

धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः
इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्ता हि प्रकृति कृपणाश्चेतना चेतनेषु। 2

नन्वात्मानं बहुविगणयन्नात्मनै वा वलम्बे
तत्कल्याणि ! त्वमपि नितरां मा गमः कातरत्वम्
कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा
नीचैर्गचछत्युपरि च दशा चक्रनेमि क्रमेण। 3

यहाँ श्लोक के चतुर्थ चरणों में सामान्य बात कही गई है। जो ऊपर के वाक्यों को पुष्ट करता है -

लक्ष्मीनाथ ! त्रिदशतटिनी नाथ ! विश्वैकनाथ !
प्रीयस्वेति प्रथम भणितिः श्रेयसे जायतां ते
बीजावापो यदि सुविहितस्तर्हि दुर्मेधसोपि
प्रायेणोक्तिः कृषिरिव भवेदप्रहीणा फलेन। 4

---

1. काव्यप्रकाश - 10/165
2. पूर्वमेघ - 5
3. उत्तरमेघ - 49
4. शारिका सन्देश - 44

बद्धो मात्रा दधिघटभिदा क्रद्धुयोलूखले त्वं

बद्धौ शापाद्धनदतनयौ मोचयामासिथेति

चित्रीयेऽहन्न भृशमयमेवान्र्तबन्धोस्स्वभावो

व्यापन्ना अप्यरविपदं साधवो हयाधुनन्ति। 1

प्रथम उदाहरण में कृषि कर्म को लेकर उस कवि ने विशेष बात कही है जैसे क्षेत्र में बीजवपन करने पर अधिक वह फल प्रदान करता है। इसकी पुष्टि मूर्खों द्वारा स्तुत आदि के उपरान्त कही बात को फलप्रद कहकर पूर्ववाक्य की पुष्टि की गई है। द्वितीय उदाहरण में यमलार्जुन के सहज उद्धार की चर्चा करते हुए मित्र लोगों के स्वभाव की उदारता का वर्णन है। कि वे स्वयं कष्ट में रहकर भी दूसरों के कष्टों को दूर करते हैं। कृष्ण स्वयं ऊखल रज्जु से बँधे थे फिर भी उन्होंने यमलार्जुन का उद्धार किया।

स्मरण अलंकार – **मम्मट** के अनुसार जहाँ पूर्व अनुभूत वस्तु के समान दूसरी वस्तु प्रथम का स्मरण करा दे वहाँ स्मरण अलंकार होता है।

यथाऽनुभवमर्थस्य दृष्टे तत्सदृशे स्मृतिः स्मरणम्। 2

तस्यास्तीरे रचित शिखिरः पेशलैरिन्द्रनीलैः

क्रीडाशैलः कनक कदली वेष्टन् प्रेक्षणीयः

मंद्गेहन्याः प्रिय इति सखे चेतसा कातरेण

प्रेक्ष्योपान्त स्फुरित तडितं त्वां तमेव स्मरामि। 3

उक्त उदाहरण में मेघ को देखकर यक्ष को अपने क्रीडा पर्वत का स्मरण हो आता है।

ते तावन्मां स्मृतिमुपगता दन्दहत्यम्बुजाक्ष

स्पृष्टा एवं ग्लपयितुमलं हव्यवाह स्फुलिंगाः

प्रत्यक्षा ये तुहिन कणिकाशीतलास्ते परोक्षा

रुक्षास्सन्ती त्यजित ! भवतो दुर्विभाव्या अपांगाः। 4

गोपी यह कह रही है कि संयोग काल में कृष्ण के कटाक्ष चन्द्रकिरण के समान लगते थे किन्तु इस वियोग में चन्द्रकिरणें दाहक होकर कटाक्षों का स्मरण करा रही हैं।

अर्थापत्ति अलंकार – जहाँ एक पदार्थ के वर्णन से दूसरे पदार्थ की सिद्धि का वर्णन हो वहाँ अर्थापत्ति अलंकार

---

1. शारिका सन्देश - 75
2. काव्यप्रकाश - 10/199
3. उत्तरमेघ - 17
4. शारिका सन्देश - 104

होता है। **आचार्य विश्वनाथ** ने लिखा है -

दण्डापूपिकयान्यार्थगमोऽर्थापत्ति रिष्यते। 1

त्वामासार प्रशमित वनोप्लवं साधु मूर्ध्ना

वक्ष्यत्यध्वश्रम परिगतं सानुमानाम्रकूटः

न क्षुद्रोऽपि प्रथम सुकृता पेक्षया संश्रयाय

प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः किं पुनर्यस्तथेच्चैः। 2

यहाँ 'पुनर्यस्तथोच्चैः' अर्थात जो पर्वत के समान श्रेष्ठ ऊँचा हो वह तो परोपकार करने से विमुख हो ही नहीं सकता। इस प्रकार यक्ष ने आम्रकूट पर्वत द्वारा मेघ के सत्कार सिद्धि के लिए उच्च पर्वत की कल्पना कर अर्थापत्ति की योजना की है।

कालानेतानपि हि भवतो विप्रयोगानलेन

व्याविद्धं मे सदपि हृदयं न स्म भस्माधुनास्ति

जाल्मस्तादृग् दृढतरमिदं मन्मथस्त्वन्मतोऽपि

प्रत्याहन्तुं प्रभवति कथं दुर्बलैः पुष्पबाणैः। 3

जहाँ गोपी की यह धारणा है कि कृष्ण के वियोग से यदि हमारा शरीर भस्म नहीं हुआ तो दुर्बल कामदेव के पुष्प बाणों से कैसे हम भस्म हो सकेंगी अर्थात अत्यधिक दुःख पाकर भी हम जीवित रहीं तब यह अल्पवियोग हमें कैसे नष्ट कर सकेगा।

<u>दृष्टान्त अलंकार</u> - जहाँ उपमेय वाक्य तथा उपमान वाक्य में निर्दिष्ट भिन्न धर्मों में बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव हो वहाँ दृष्टान्त अलंकार होता है। **आचार्य विश्वनाथ** ने इसका लक्षण लिखा है -

दृष्टान्तस्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिम्बनम्। 4

ऐसा ही लक्षण **मम्मट** ने भी लिखा है -

दृटान्तः पुनरेतेषां सर्वेषां प्रतिबिम्बनम्। 5

एभिः साधो हृदय निहितैर्लक्षणैर्लक्षयेथा

द्वारोपान्तो लिखित वपुषौ शंखपद्मौ च दृष्ट्वा

---

1. साहित्य दर्पण - 10/83
2. पूर्वमेघ - 17
3. शारिका सन्देश - 101
4. साहित्य दर्पण - 10/51/1
5. काव्यप्रकाश - 10/155

क्षामच्छायं भवनमधुना मद्वियोगेन नूनं

सूर्यापाये न खलु कमलं पुष्यति स्वामभिख्याम्। 1

यहाँ यक्ष का संयोग काल में सज्जित घर वियोग काल में क्षीण शोभा वाला हो गया होगा जैसे सूर्यास्त होने पर कमल अपनी शोभा को नहीं रख पाता इसी प्रकार यक्ष की अनुपस्थिति में उसका घर भी कान्तिहीन हो गया होगा।

तुल्ययोगिता – जहाँ अनेक प्रस्तुतों अथवा अप्रस्तुतों का एक ही धर्म से सम्बन्ध दिखाया जाय वहाँ तुल्ययोगिता होता है। **आचार्य विश्वनाथ** ने लिखा है -

पदार्थानां प्रस्तुतानामन्येषां वा यदा भवेत्

एकधर्माभि संबन्धः स्यात्तदा तुल्ययोगिता।

मेघदूत का उदाहरण द्रष्ट्व्य है -

वासश्चित्रं मधु नयनयोर्विभ्रमादेश दक्षं

पुष्पोदभेदं सह किसलयैर्भूषणानां विकल्पम्

लाक्षारागं चरण कमल न्यास योग्यं च यस्या

मेकः सूते सकलमबलामण्डनं कल्पवृक्षः। 2

यहाँ वासश्चित्रं मधुनयन पुष्पोद्भेदं इत्यादि अनेक प्रस्तुतों के वाचक पद केवल एक सूते क्रिया के कर्म है। अतः अनेक अप्रस्तुतों के एक क्रिया के सम्बद्ध होने के कारण यहाँ तुल्ययोगिता है। इसी प्रकार शारिका सन्देश में श्रीवत्सांक तारहार कौस्तुभ इत्यादि अप्रस्तुतों के लिए मार्जयिष्ये क्रिया के कर्म माश्लिष्यन्तीं प्रयुक्त होने से तुल्ययोगिता अलंकार माना जा सकता है।

श्रीवत्सांक सुरभिवनमालाञ्चितं तारहार

स्फारश्रीकं गलतलमिलत्कौस्तुभोद्योत हृद्यम्

मेघ श्यामं तव घनमुरो गाढमाभ्यां स्तनाभ्या

माश्लिष्यन्ती मनसिज रुजं मार्जयिष्ये कदा नु। 3

दीपक अलंकार – जहाँ प्रस्तुतों तथा अप्रस्तुतों का धर्मैक्य वर्णन किया जाए वहाँ दीपक अलंकार होता है। **आचार्य मम्मट** ने लिखा है -

---

1. उत्तरमेघ - 20 2. उत्तरमेघ - 12

3. शारिका सन्देश - 107

सकृद्वृत्तिस्तु धर्मस्य प्रकृताप्रकृतात्मनाम्

सैव क्रियासु बह्वीषु कारकस्येति दीपकम्। 1

इसी प्रकार **विश्वनाथ** ने लिखा है - जहाँ अप्रस्तुत और प्रस्तुत पदार्थों में एक धर्म का सम्बन्ध हो अथवा अनेक क्रियाओं का एक ही कारक हो वहाँ दीपक अलंकार होता है।

कालिदास ने लिखा है - आलोके ते निपतति पुरा सा बलिव्याकुला वा

मत्सादृश्यं विरहतनु वा भावगम्यं लिखन्ती

पृच्छन्ती वा मधुरवचनां सारिका पञ्जरस्थां

कच्चिद्भर्तुः स्मरसि रसिके त्वं हि तस्य प्रियेति। 2

यहाँ यक्षिणी और सारिका के प्रस्तुत तथा अप्रस्तुतों के बीच मधुर वचना जैसे एक ही धर्म के वर्णन होने के कारण दीपक अलंकार है। यद्यपि इस अलंकार के विषय में अलंकार शास्त्रियों में पर्याप्त मतभेद है। भरत, दण्डी इत्यादि इस पर प्रश्नवाचक चिन्ह लगाते हैं कि यह अलंकार औपम्य पर आश्रित है अथवा नहीं या उपमेय उपमान का होना आवश्यक है या नहीं उद्भट, वामन, जगन्नाथ आदि औपम्यभाव स्वीकार करते हैं, नहीं तो तुल्ययोगिता हो जायेगा।

अतिशयोक्ति अलंकार - जहाँ उपमान के द्वारा उपमेय का निगरण करके उसके साथ कल्पित अभेद का निश्चय किया जाय अर्थात कार्य तथा कारण के पूर्व अपर भाव का विपरीत वर्णन हो वहाँ अतिशयोक्ति अलंकार होता है। **विश्वनाथ जी** ने लिखा है -

सिद्धत्वेऽध्यवसाय स्यातिशयोक्ति र्निगद्यते

भेदेऽप्यभेदः संबन्धेऽसंबन्ध स्तद्विपर्ययौ

पौर्वापर्यात्ययः कार्य हेत्वोः सा पञ्चधा ततः। 3

कालिदास ने लिखा है - मत्वा देवं धनपति सखं यत्र साक्षाद् वसन्तम्

प्रालश्चापं न वहति भयान्मन्मथः षटपदज्यम्

सभ्रूभङ्गप्रहित नयनैः काभिलक्ष्येष्मोधै

स्तस्यारम्भश्चतुर वनिताविभ्रमै रेव सिद्धः। 4

विशेषोक्ति अलंकार - **आचार्य विश्वनाथ** ने लिखा है कि हेतु के रहते हुए भी फल के न होने पर विशेषोक्ति

---

1. काव्यप्रकाश - 10/103
2. उत्तरमेघ - 25
3. साहित्य दर्पण - 10/46-47
4. उत्तरमेघ - 14

अलंकार होता है -

सति हेतौ फलाभावे विशेषोक्तिस्तथा द्विधा। 1

नीवीवन्धोच्छवसित शिथिलं यत्र बिम्वाधराणां
क्षौमं रागाद निभृत करेष्वाक्षिपत्सु प्रियेषु
अर्चिस्तुंगानविमुखमपि प्राप्य रत्न प्रदीपान्
हीमूढानां भवति विफल प्रेरणा चूर्ण मुष्टि। 2

यहाँ पर रत्नदीपों को बुझाने में हेतु भूत चूर्णमुष्टि के होते हुए भी दीपकों का न बुझना इस कथन में विशेषोक्ति है।

विरोधाभास अलंकार - विरोध वह अलंकार है जहाँ विरोध न होने पर भी दो वस्तुओं का विरुद्धों के समान वर्णन किया जाता है। वस्तुतः विरोध होता नहीं उसकी प्रतीती मात्र होती है। **मम्मट** के अनुसार -

विरोधः सोऽविरोधेऽपि विरुद्धत्वेन यद्वचः। 3

मन्येऽहं ते कुवलयदल स्निग्ध मुग्धाः कटाक्षाः
साक्षाद् भूता मम खलु पुरात्वत्समीप स्थितायाः
तादृक्च्छैत्या अपि बत त एवाधुना तप्ततप्ताः
सप्तार्चिर्वन्मदन विशिखी भूय मामुद्धमन्ति। 4

यहाँ पर स्निग्ध कुवलय दलों का प्रज्ज्वलित अग्नि शिखा के समान वर्णन करने में विरोधाभास अलंकार है। शीतल, स्निग्ध, मसृण, कुवलयदल कृष्ण के वियोग में सप्तार्चि वत प्रज्ज्वलित अग्नि के शिखावत दाहक हो गए है। वस्तुतः संयोगकालिक वस्तुएँ वियोग काल में दुःखदायी ही होती है। इस लिए यहाँ विरोधाभास है।

कहना नहीं होगा कि काव्य में अलंकारों की सज्जा आवश्यक होती है। बात यह है कि भावों की स्पष्टता सफल अभिव्यंजना उनमें प्रभावोत्पादकता उत्पन्न करना अलंकारों के माध्यम से सहज हो जाता है। अलंकारों की दृष्टि से मेघदूत का विश्लेषण करें तो कालिदास ने इसमें शब्दाडम्बर प्रधान शब्दालंकारों का कम ही प्रयोग किया है क्योंकि यमक, श्लेष, वक्रोति आदि के प्रयोग में रचना में वैदुष्य तो अवश्य दिखाई पड़ता है किन्तु उसमें कृत्रिमता भी आ जाती है। इसलिए मेघदूत में अर्थालंकारों का बाहुल्य है। कवि की कल्पना का रम्यविलास उपमा, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास में विशिष्ट रूप से देखा जा सकता है। मेघदूत में उपमा, रुपक, अर्थान्तरन्यास के सर्वाधिक उदाहरण है। यद्यपि प्राचीन समालोचकों ने उपमा कालिदासस्य अवश्य कह रखा है।

---

1. साहित्य दर्पण - 10/67
2. उत्तरमेघ - 7
3. काव्यप्रकाश - 10/166
4. शारिका सन्देश - 102

किन्तु मेघदूत का यदि विश्लेषण करें तो यह निश्चित रूप से शोधकर्त्री कह सकती है कि 'अर्थान्तरन्यास विन्यासे कालिदासो विशिष्यते।'

मेघदूत की सूक्तियाँ अत्यन्त प्रसिद्ध है। दूसरी तरफ शारिका सन्देश का कवि रामपाणिवाद संस्कृत काव्य के अलंकृत काल से सम्बन्धित है, जिसमें शब्द वैदुष्य एवं पाण्डित्य प्रदर्शन काव्य का एकमात्र लक्ष्य माना गया है और इस हेतु शब्दालंकारों में अनुप्रास के विभिन्न प्रयोग यमक, यमकाभास, श्लेष, वक्रोति अर्थालंकारों में उपमा, अर्थान्तरन्यास इन अलंकारों का कवि ने प्रचुर प्रयोग किया है। रामपाणिवाद ने गलदश्रु भावुक गोपी के जिस विरह का अरन्तुद वर्णन किया है। उसकी भाव व्यञ्जना में ये अलंकार सहायक तो बने है क्योंकि इसमें आकांक्षा, उपालम्भ और वक्रोक्ति से हृदय के कोमल प्राञ्जल मधुर भावों की अभिव्यञ्जना हुई है। साथ ही कवि का पाण्डित्य प्रदर्शन भी अभिप्रेत था। इसके लिए कवि ने समास प्रधान यमकाभास या नाद उत्पन्न करने के लिए सम और विषम शब्दों का पुष्कल प्रयोग किया है।

यदि कालिदास ने पुरुष की प्रणयव्यञ्जना कोमल और उसमें मंजीष्ठ राग की अभिव्यञ्जना के लिए कोमल शब्द बहुल अर्थालंकारों का प्रयोग किया है तो रामपाणिवाद ने स्त्रियों के प्रेम में जिस उपालम्भ की या वक्रता के प्राधान्य हेतु शब्दालंकारों का प्रयोग किया है।

निष्कर्षतः भाव भूमि के अन्तर के कारण अलंकारों के प्रयोग में भी वैशिष्ट्य आ गया है। यक्ष के प्रेम में प्रणय निवेदन में विवशता और आतुरता है। इस हेतु कालिदास ने उपमा, रुपक, और अर्थान्तरन्यास के प्रयोग से इन भावों की विवृति की है तो रामपाणिवाद ने भाव विह्वलता, सापत्न्यजन्य जन्य ईर्ष्या तथा उपालम्भ के कारण शब्दालंकारों का प्रचुर प्रयोग किया है।

<u>वक्रोति विधान</u> – काव्य रागात्मक अभिव्यक्तियों का व्यापार है। जिस प्रकार समाज में रह कर मनुष्य जीवन-यापन करता हुआ कहीं संकीर्ण कहीं स्वार्थयुक्त तो कहीं सहिष्णु और उदार होता है। उसी तरह कविता में भी हृदय की उदारता रस दशा कहलाती है। कालान्तर में काव्य शरीर की परिकल्पना कर उसकी आत्मा की खोज हेतु अलंकार, रीति, रस, ध्वनि, वक्रोक्ति इत्यादि तत्वों की खोज कर इन्हें साम्प्रदायिक रूप देने के लिए इनका सैद्धान्तिक विवेचन विस्तृत रूप से हुआ है।

अलंकार और रस से यह यात्रा चलकर औचित्य सम्प्रदाय में जाकर समाप्त हुई जिसमें रस, ध्वनि और वक्रोक्ति सम्प्रदाय की विशेष ख्याति है। बात यह है कि कविता में सहृदय पाठक को आकृष्ट करने की जो क्षमता विद्यमान है उसकी ही व्याख्या इन आचार्यों ने की है। वक्रोक्ति सम्प्रदाय के **आचार्य कुन्तक** कहे गये है।

उनके मतानुसार वक्रोक्ति वैदग्ध्य भंगिभणिति है। उन्होंने लिखा है -

शब्दार्थौ सहितौ वक्र व्यापार शालिनी

बन्धे व्यवस्थितौ काव्यं तद्विदाह्लाद कारिणि। 1

यद्यपि अलंकार के रूप में वक्रोक्ति का उल्लेख भामह, दण्डी, भोज, राजशेखर इत्यादि आचार्यों ने किया है किन्तु इसके **आचार्य कुन्तक** ही माने गये हैं। **कुन्तक** ने वक्रोक्ति के छः भेद बताए हैं -

1. वर्ण विन्यास वक्रता 2. पदपूर्वार्ध वक्रता 3. पदपरार्ध वक्रता
4. वाक्य वक्रता 5. प्रकरण वक्रता 6. प्रबन्ध वक्रता

इसी दृष्टि से आलोच्य काव्यों की समीक्षा की जा रही है। सम्बन्धित वक्रोक्ति विभाग का सैद्धान्तिक विवेचन कर मेघदूत और शारिका सन्देश के उदाहरण दिए जाएगें।

1. वर्ण विन्यास वक्रता - जिसमें एक, दो या अनेक वर्ण क्रमशः या कुछ अन्तराल से बार-बार ग्रथित होते हैं वह वर्ण विन्यास वक्रता कहलाती है। **कुन्तक** ने लिखा है -

एको द्वौ वहवो वर्णा बध्यमानाः पुनः पुनः

स्वल्पान्तरा स्त्रिधा सोक्ता वर्ण विन्यास वक्रता। 2

वस्तुतः वर्ण विन्यास वक्रता कवि कर्म का प्रथम सोपान है। इसे हम अनुप्रास के अन्तर्गत रख सकते हैं। चित्त की द्रुति और दीप्ति में व्यञ्जना की आवृत्ति उसमें सौन्दर्य उत्पन्न करता है। इससे श्रोता आवेग की वक्रता से प्रभावित हो जाता है। मेघदूत और शारिका सन्देश के एतद्विषयक कुछ उदाहरण निम्न द्रष्ट्व्य हैं -

1. स प्रत्यग्रैः कुटजकुसुमैः कल्पितार्घाय तस्मै।
2. काले-काले भवति भवतो यस्य संयोग मेत्य।
3. खिन्नः खिन्नः शिखरिषु पदं न्यस्सगन्तासियत्र।
4. क्षीणः क्षीणः परिलघु पयः स्रोतसां चोपभुज्य। 3

रक्ता शोकश्चल किसलयः केसरश्चात्र कान्तः। 4

1. काचिद् गोपी कलित कलह प्रक्रमा चक्रपाणौ।

कामार्ताऽपि क्वचन यमुना कूल कुञ्जे निलीना।

कञ्चित्कालं कथमपि विनीयाक्षमा निस्सरन्ती। 5

---

1. वक्रोक्ति जीवितम् - 1/10
2. वक्रोक्ति जीवितम् - 2/1
3. पूर्वमेघ - 4, 12, 13
4. उत्तरमेघ - 18
5. शारिका सन्देश - 1

नैवापश्यन्नलिननयनं देवमेनं मुकुन्दम्।

2. मास्म क्रन्दो मदिरनयने माधवो मानशाली।

3. मानुष्योक्त्या मनुज मनसो हारिके शारिके त्वां।

4. श्रीगोपालो निजभजनतो भासुरान् भूसुरादीन्। 1

उक्त उदाहरणों पर दृष्टिपात करने पर यह सहज ही ज्ञात हो जाता है कि शब्दों की द्विरुक्ति या एक ही वर्ण की अनेक बार आवृत्ति हुई है जिसके कारण उच्चरित ध्वनि की आवृत्ति से काव्य में चारुता आ गई है।

कुन्तक ने इस वर्ण विन्यास वक्रता के भी कुछ उपभेदों का भी उल्लेख किया है। जैसे- य, र, ल, व, श, ष, स के साथ र का संयोग अथवा अव्यवहित व्यञ्जन विन्यास आदि जैसे -

1. प्रत्याश्वस्तां सममभिनवैर्जालकैर्मालतीनाम्

विद्युद्गर्भः स्तिमितनयनां त्वत्सनाथे गवाक्षे । 2

2. रंङधिक्षेप प्रवणित फणाशृंगरंगस्थलेषु

प्रारब्धास्त्वं प्रचटुल तुला कोटि-कोटि प्रधर्षे। 3

वर्ण विन्यास वक्रता की दृष्टि से मेघदूत की अपेक्षा शारिका सन्देश अधिक श्रेष्ट काव्य है क्योंकि इसमें शब्दों की आवृत्ति क्रमशः व्यवधान युक्त पदों की पुनरुक्ति प्रायः सर्वत्र दिखाई देती है। इसका कारण सम्भवतः कवि का पाण्डित्य प्रदर्शन के साथ ही यमकाभास शब्दों का प्रचुर प्रयोग है जबकि कालिदास का मेघदूत कोमल किन्तु नादात्मक शब्द प्रधान रचना है। चमत्कार प्रियता की ओर कवि ने विशेष ध्यान नहीं दिया है क्योंकि तीव्रभावाभिवेग में पाण्डित्य प्रदर्शन की प्रवृत्ति छूट जाती है।

2. <u>पद वक्रता</u> – पद सार्थक वर्ण समूहों का नाम है। इसके दो अंग संस्कृत में कहे गए हैं। प्रकृति और प्रत्यय। इस प्रकार पद वक्रता के दो भेद माने गए हैं - पद पूर्वार्ध वक्रता और पद परार्ध वक्रता।

पद पूर्वार्ध वक्रता के **आचार्य कुन्तक** ने इसके आठ भेद बताए हैं -

1. रुढ़ि वैचित्र्य वक्रता | **2. पर्याय वक्रता** | **3. उपचार वक्रता**

4. संवृत्ति वक्रता | **5. विशेषण वक्रता** | **6. वृत्ति वक्रता**

7. लिंग वैचित्र्य वक्रता | **8. क्रिया वैचित्र्य वक्रता**

---

1. शारिका सन्देश - 1, 4, 8, 10   3. शारिका सन्देश - 77

2. उत्तरमेघ - 38

यहाँ लक्षणानुधावन न कर आलोच्य काव्य में प्राप्त पद पूर्वार्ध वक्रताजन्य सौन्दर्य सम्बन्धी कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

1. रुढ़ि वैचित्र्य वक्रता – जहाँ लोकोत्तर तिरस्कार अथवा प्रशंसा के कथन करने से वाच्य अर्थ की रुढ़ि (शब्द) से असम्भव अर्थ का अध्यारोप हो वहाँ यह वक्रता होती है। **कुन्तक** ने लिखा है –

यत्र रुढ़ेरम्भाव्य धर्माध्यारोपगर्भता।

सद्धर्मातिशयारोप गर्भत्वं वा प्रतीयते।। 1

लोकोत्तर तिरस्कार श्लाघ्योत्कर्ष भिधित्सया।

वाच्यस्य सोच्यते कापि रुढ़ि वैचित्र्य वक्रता।। 1

वास्तव में रुढ़ि वैचित्र्य वक्रता संज्ञा शब्दों की ही वक्रता है।

1. इत्याख्याते पवनतनयं मैथिली वोन्मुखी सा। 2
2. पाकोत्पिंगा चलदल फल श्रेणिमास्वादयन्ती। 3

यहाँ पवन तनय, मैथिलि एवं चलदल में रुढ़ि अर्थ हनुमान सीता पीपलवृक्ष की व्यञ्जना होती है।

2. पर्याय वक्रता – पर्याय का अर्थ है समानार्थी शब्द का प्रयोग। **कुन्तक** ने लिखा है - जो वाच्य (अभिधेय अर्थ) का अन्तर्तम उसके अतिशय का पोषक होता है। जो स्वयं बिना विशेषण के अपने सौन्दर्यातिशय के कारण मनोहर है। जो अलंकार से शोभित होने से मनोहर रचना युक्त पयार्य है। उसे पर्याय वक्रता कहते हैं।

अभिधेयान्तर तमस्तस्यातिशय पोषकः

रम्यच्छायान्तर स्पर्शान्तदलङ्कृर्तमीश्वरः

स्वयं विशेषणोनापि स्वच्छायोत्कर्ष पेशलः

असम्भाव्यार्थ पात्रत्वगर्मयश्चाभिधीयते

अलंङ्कारोप संस्कार मनोहारि निबन्धनः

पर्यायस्तेन वैचित्र्यं परा पर्याय वक्रता। 4

जैसे – 1. यत्र स्त्रीणां प्रियतमं भुजालिंगनोच्छ्वासितानां

मंगलानिं सुरत जनितां तन्तु जालावलम्बा

त्वत्संरोधापगम विशदैश्चन्द्र पादै निशीथे

---

1. वक्रोक्ति जीवितम् - 2/ 8 - 9
2. उत्तरमेघ - 40
3. शारिका सन्देश - 36
4. वक्रोक्ति जीवितम् - 2/ 10 - 12

व्यालुम्पन्ति स्फुटजललवस्यन्दिनश्चन्द्रकान्ताः। 1

2. मुक्ताहारोन्मिलितवन मालाब्जमाला कलापम्

तप्त स्वर्णाभरण किरण श्रेणि शोण प्रकाशम्

पञ्चत्काञ्ची पटलघटना सङ क्वणत्किंकणीक

श्रोणी बिम्ब प्रचुर रुचिर स्फीत पीताम्बराढयम्। 2

प्रथम उदाहरण में अलकापुरी के प्रासादों में उट्टंकित मणियों से टपकने वाले जलबिन्दुओं को मेघ से टपकने वाले जल बिन्दुओं से तुलना कर कवि ने पर्यायवाची रूप में भवन की झालर और मेघ के लघु आवर्तों का प्रयोग किया है। इसी प्रकार शारिका सन्देश में अलंकारों के माध्यम से कृष्ण के श्यामवर्ण पीतपट आदि की तुलना की है। अतः यहाँ पर्याय जन्यवक्रता कही जा सकती है।

3. उपचार वक्रता – जहाँ वर्णित पदार्थ से अप्रस्तुत पदार्थ में रहने वाली समानता को किसी धर्म के अतिशय को प्रतिपादित करने के लिए उपचार या गौणी वृत्ति से वर्णन किया जाता है। उसे उपचार वक्रता कहते हैं। यह वक्रता प्रायः रुपक अलंकार में मिलती है।

1. तां चावश्यं दिवस गणनातत्परामेक पत्नी

मव्यापन्नाम विहित गति र्द्रक्ष्यसि भ्रातृजायाम्

आशाबन्धः कुसुम सदृशं प्रायशो ह्यांगनानां

सद्यः पाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रुणद्धि। 3

2. विचिक्षोभस्तनित विहग श्रेणि काञ्ची गुणायाः

संसर्पन्त्याः स्खलित सुभगं दर्शितावर्तनाभेः

निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्निपत्य

स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु। 4

3. स्वावज्ञान क्षुभित बलजित्प्रेरिताम्भोद निर्यद्

धाराहारा वलि वलयिते देवः गोवर्धनाख्ये

क्षत्रे तस्मिन्मरकतमणी दण्डतामाप भूमन्

उद्धर्न्तुस्ते कनक वलये रञ्चितः पञ्चशाखः। 5

यहाँ पर कालिदास ने आशाबन्ध कुसुम हृदय, रशनातरंग भंवर नाभि का आरोप कर कवि ने

---

1. उत्तरमेघ - 9

2. शारिका सन्देश - 41

3. 4. पूर्वमेघ - 9, 29

5. शारिका सन्देश - 80

गौणी वृत्ति से प्रस्तुत और अप्रस्तुत में नाम मात्र की समानता का वर्णन किया है। इसी प्रकार शारिका सन्देश में कनिष्ठा में धारण किए हुए गोवर्धन पर्वतयुक्त हाथ की समानता मरकत मणि के दण्ड एवं कनक वलय युक्त पाणि से की है। अतः यहाँ उपचार के प्रधान होने के कारण उपचार वक्रता मानी जा सकती है।

4. विशेषण वक्रता - किसी भाव के आलम्बन को विशिष्ट बनाने के लिए जहाँ विशेषण उपवाक्यों अथवा विशेषण पदों की श्रृंखला प्रयुक्त की जाती है। वहाँ विशेषण वक्रता मानी जाती है। **कुन्तक** ने लिखा है कि विशेषण के प्रभाव से क्रिया अथवा कारक का सौन्दर्य प्रस्फुटित होता है। वह विशेषण वक्रता कहलाती है।

विशेषणस्य माहात्म्यात् क्रियायाः कारकस्य वा

पत्रोल्लसति लावण्यं सा विशेषण वक्रता। 1

कालिदास ने चतुर चातक, बकपंक्ति तथा गर्जन के समय रसिकों को प्राप्त होने वाले प्रिय आलिंगन के उल्लेख में विशेषणों का उपयोग किया है।

अम्भोबिन्दु ग्रहण चतुरांश्चातकान् वीक्षमाणाः

श्रेणीभूताः परिगणनया निर्दिशन्तो बलाकाः

त्वामासाद्य स्तनित समये मानयिष्यन्ति सिद्धाः

सोत्कम्पानि प्रिय सहचरी सम्भ्रमालिंगितानि। 2

इसी प्रकार उज्जयिनी के सुन्दरियों के अपांगों को बिजली की रेखा का विशेषण कवि ने देकर वक्रता उत्पन्न की है।

विद्युद्दाम स्फुरित चकितैस्तत्र पौरांगनानां

लोलापांगैर्यदि न रमसे लोचनैर्वञ्चितोऽसि। 3

शारिका सन्देश तो विशेषणों से भरा पड़ा है। गोपी कहती है -

त्वद्विश्लेष ज्वलनशलभी भूयमा पत्स्यमाना

मानोपज्ञन्निजमपि कृतं कर्म नेनिन्द्यमाना

गोपी कापि त्रिभुवनपते ! प्रातिमन्तं भवन्तं

कर्त्तुं वार्ता कथयति निजामुन्मना मन्मुखेन। 4

कालिदास ने मेघदूत में अपनी प्रिया का परिचय देते हुए निम्न विशेषण उपवाक्यों का प्रयोग किया है, जिससे श्रृंगार रस की तीव्र व्यञ्जना दिखाई पड़ती है।

---

1. वक्रोक्ति जीवितम् - 5/ 15
2. पूर्वमेघ - 22
3. पूर्वमेघ - 28
4. शारिका सन्देश - 45

रुद्धापांग प्रसरमलकै रञ्जनस्नेह शून्यं

प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृतभ्रूविलासम्

त्वय्यासन्ने नयनमुपरिस्पन्दि शङ्के मृगाक्ष्या

मीनक्षोभाच्चल कुवलय श्री तुलामेष्यतीति। 1

5. संवृत्ति वक्रता – संवृत्ति का अर्थ है संवरण करना या रोकना। कुन्तक ने लिखा है - जहाँ किसी कथन की इच्छा से सर्वनाम आदि के द्वारा किसी वस्तु का निगूहन किया जाता है और उससे विशिष्ट व्यञ्जना भी निकलती हो वह संवृत्ति वक्रता कहलाती है।

यत्र संव्रियते वस्तु वैचित्र्यस्य विवक्षया

सर्वनामादिभिः कश्चित् सोक्ता संवृत्ति वक्रता। 2

कालिदास ने मम, त्वम् तथा इससे बने माम्, मयि आदि सर्वनामों के द्वारा यक्ष की विवृत्ति कराई है। अतः यहाँ संवृत्ति वक्रता मानी जा सकती है। एक उदाहरण देखिए -

एतस्मान्मां कुशलिनमभिज्ञान दानाद् विदित्वा

मा कौलीनादसित नयने मय्यविश्वासिनी भूः

स्नेहानाहुः किमपि विरहे ध्वंसिनस्ते त्वभोगा

दिष्टे वस्तुन्युपचितरसाः प्रेमराशी भवन्ति। 3

शारिका सन्देश में गोपी सन्देह हरणार्थ शारिका को नियुक्त करती हुई निम्नलिखित सर्वनामों का प्रयोग करती है।

तत्वं तस्मिन्नमरतटिनी धाम्नि यत्सन्निधन्ते

तत्वं किञ्चित्परममलं धाम दामोदराख्यम्

तद्विश्लेष व्यथित मनसो मेऽतिदुः स्थामवस्थां

तस्मै तावन्मधुर वचने ! गूढमावेदयेथाः। 4

6. वृत्ति वक्रता – वृत्ति वक्रता से अभिप्राय विषय अथवा भाव सौन्दर्य के अनुरूप समास, कृत आदि वृत्ति के प्रयोग का वैचित्र्य है। **कुन्तक** ने लिखा है - कि जिसमें अव्ययी भाव आदि (समास, तद्धित, कृत) वृत्तियों का सौन्दर्य प्रकाशित होता है। उसको वृत्ति वैचित्र्य वक्रता कहते हैं। इसमें **कुन्तक** का अधिक बल अव्ययी भाव समास में दिया गया है।

---

1. उत्तरमेघ - 35
2. वक्रोक्ति जीवितम् - 2/ 16
3. उत्तरमेघ - 52
4. शारिका सन्देश - 13

अव्ययी भाव मुख्यानां वृत्तीनां रमणीयता
यत्रोल्लसति सा ज्ञेया वृत्ति वैचित्र्य वक्रता। 1

मार्ग तावच्छृणु कथयतस्त्वत् प्रयणानुरूपं
सन्देशं मे तदनु जलद श्रोष्यसि श्रोतपेयम्
खिन्नः खिन्नः शिखरिषु पदं न्यस्सगन्तासियत्र।
क्षीणः क्षीणः परिलघु पयः स्रोतसां चोपभज्य। 2

यत्काङक्षन्ति प्रणतिनुतिमात्रोन्मुखा देहभाजः
तस्मादर्थानति हि बहुशो यच्छति स्वच्छधीभ्यः
श्रीमानध्यम्बरधुनि वसन् वासुदेवस्स इत्थं
मामाकाश प्रभव सुभगा कापि वाणी ह्यभाणीत्। 3

प्रथम उदाहरण में अनुरूपम् में अव्ययी भाव समास बनाने के लिए रूपस्य योग्यं = अनुरूपं तथा खिन्नः खिन्नः में द्विरुक्ति के साथ खिद्+क्त तथा क्षीणः क्षीणः में क्षै+क्त द्वित्व के कारण वृत्ति वक्रता दिखाई पड़ती है। द्वितीय उदाहरण में अध्यम्बर धुनि का अर्थ 'अम्बरनदीश क्षेत्रे विभक्त्यर्थे' अव्ययी भाव समास बनेगा, जिसके कारण मूल शब्द अम्बरनदीश क्षेत्र की व्यञ्जना कर रहा है।

7. <u>क्रिया वैचित्र्य वक्रता</u> – संज्ञा या विशेषण से जिस प्रकार कविता में सौन्दर्य या लावण्य की प्रतीति होती है। उसी प्रकार क्रिया की विचित्रता से कविता में निखार आ जाता है। क्रिया का अर्थ वाच्यार्थ से आगे बढ़कर अन्य अर्थ की विशेषता उत्पन्न करता है। जैसे -

तस्योत्संङ्गे प्रणायेन इव स्रस्तगङ्गादुकूलां
न त्वं दृष्ट्वा न पुनरलकां ज्ञास्यसे कामचारिन्
या वः काले वहति सलिलोद्गार मुच्चैर्विमाना
मुक्ताजल ग्रथितमलकं कामिनी वाभ्रवृन्दम्। 4

उक्त उदाहरण में स्रस्त शब्द द्विविधा वक्रता लिए हुए है। स्र+क्त से निष्पन्न शब्द नदी और नायिका के वस्त्र खिसकने या श्वेतजल वाली अलकापुरी से बहने वाली गंगा का वर्णन है। अलकापुरी से क्रमशः धीरे-धीरे उतरती गंगा का प्रवाह ऐसा प्रतीत होता है। जैसे- किसी कामिनी के अधोवस्त्र खिसक रहे हों और वह अपने प्रियतम की गोद में लेटी हो। शारिका सन्देश में क्रियाओं की द्विरुक्तियाँ या तज्जन्य वैचित्र्य का बहुविध

---

1. वक्रोक्ति जीवितम् - 2/ 19
2. पूर्वमेघ - 13
3. शारिका सन्देश - 12
4. पूर्वमेघ - 66

प्रयोग हुआ है। जैसे -

उद्गायन्तं क्वचन कुहचिद् वेणुमापूरयन्तं
क्वापि क्रीडा परमपरतो वात्सकं चारयन्तं
हस्ते कृत्वा विपुलमचलं कुत्रचित्तस्थिवांसं
किं किं भूतं भ्रमसमुदयान्नाथ ! नालो किषि त्वाम्।
रम्या रामा रहसि रमयन्नेव रामानुजस्त्वं
रागाम्भोधौ चिरतरममूर्मज्जयन्मानदो यः
भूयस्ताभ्यस्सुबहु सुभगम्मन्यतां प्रापिताभ्यः
स्वेनैवान्तर्दधिथ तरसा कृष्ण ! तस्मै नमस्ते। 1

2. <u>पद परार्ध वक्रता</u> - पद के पूर्वार्ध अर्थात प्रातिपदिक और धातु के प्रयोग वैचित्र्य की भाँति पद के परार्ध अर्थात प्रत्यय का विचित्र प्रयोग भी कविता की एक विशेषता है। अतः इसे प्रत्यय वक्रता भी कह सकते हैं। **आनन्दवर्धन** ने इसे इस प्रकार प्रतिपादित किया है -

सुप्-तिङ् वचन सम्बन्धैस्तथा कारक शक्तिभिः
कृत तद्धित समासैश्च द्योत्योऽलक्ष्य क्रमः क्वचित्। 2

इसके भी लगभग आठ भेद कहे गये हैं -

1. काल वैचित्र्य वक्रता	**2. कारक वक्रता**	**3. वचन वक्रता**	**4. पुरुष वक्रता**
5. उपग्रह वक्रता	**6. प्रत्यय वक्रता**	**7. उपसर्ग वक्रता**	**8. निपात वक्रता**

1. <u>काल वैचित्र्य वक्रता</u> - इसमें काल विशेष के प्रयोग के कारण चमत्कार दिखाई पड़ता है। **कुन्तक** के अनुसार- जहाँ औचित्य की अन्तर्तमता से काल को रमणीयत्व प्राप्त होता है। वहाँ काल वैचित्र्यतता होती है क्योंकि कवि तो वर्तमान में जीता है और कविता वह भूत या भविष्य दोनों को ही वर्तमान में ही रूपान्तरित कर देता है। कालिदास का मेघदूत इस बात का प्रतीक है कि आषाढ़ मास में विरही प्रेमी आकाश स्थित मेघगर्जन, विद्युतनर्तन आदि को देख अपनी प्रिया के प्रति सशंकित हो उठता है। मेघदूत का यही मनोवैज्ञानिक रहस्य है कवि ने अनेक स्थानों पर अतीत काल की घटनाओं को वर्तमान काल के रूप में लिखा है। जैसे - वर्षाकाल में अभिसारिकाएँ कृष्णाभिसारिका बनकर सूचिभेदन योग्य अंधकार की चिन्ता न कर प्रियमिलन हेतु उद्यत होती हैं। ऐसे समय में वह मेघ को परामर्श देता है -

---

1. शारिका सन्देश - 53, 90 2. हिन्दी ध्वन्यालोक (आचार्य विश्वेश्वर) पृ0 - 271

गच्छन्तीनां रमण वसतिं योषितां तत्र नक्तं

रुद्धालोके नरपति पथे सूचिभेद्यैस्तमोभिः

सौदामिन्या कनकनिकष स्निग्धया दर्शयोर्वी

तोयोत्सर्गस्तनित मुखरो मास्म भर्विक्लवास्ताः। 1

इसी प्रकार रामपाणिवाद ने शारिका सन्देश में शारिका द्वारा गोपी के विरह का जिस प्रकार चित्रांकन किया है। उसमें क्रियागत वैचित्र्य काल के कारण स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

किं जागर्मि स्वपिमि किमहं किं मुहुर्मोमुहीमि

क्वाहं वर्त्ते क इव समयः किं दिवा किं निशा वा

का चास्मीत्थं बहुमुख विकल्पेन मत्तेव सत्यं

चिन्तेनाहं चिरमविभरं कृष्ण ! किं किन्न दैन्यम्। 2

2. कारक वक्रता – जहाँ सामान्य कारक का मुख्य रूप से और मुख्य कारक का सामान्य रूप से कथन किया जाता हो वहाँ कारक वैचित्र्य वक्रता होती है। जैसे -

तस्मिन्काले जलद यदि सा लब्ध निद्रासुखास्या

दन्वास्यैनां स्तनित विमुखो याममात्रं सहस्व

मा भूदस्याः प्रणयिनि मयि स्वप्नलब्धे कथञ्चि

त्सद्यः कण्ठच्युत भुजलता ग्रन्थि गाढोपगूढ़म्। 3

यहाँ पर माभूदस्याः प्रणयिनी मयि में आस्याः से प्रिया का और मयि से अपने अर्थात यक्ष का वर्णन कर कवि ने कारक वक्रता का उपयोग किया है क्योंकि यक्ष यह परिकल्पना करता है कि उसकी प्रिया स्वप्न में बड़े कष्ट से यक्ष का गाढ़ालिंगन कर रही होगी। ऐसे समय मेघ गर्जन न कर उसके (प्रिया के) स्वप्न में विध्न न डाले। यहाँ पर मुख्य कर्ता यक्ष को मयि तथा प्रिया को आस्याः सामान्य रूप में प्रयुक्त किया है।

3. उपग्रह वक्रता – जहाँ काव्य की शोभा के लिए आत्मनेपद और परस्मैपद दोनों पदों में से औचित्य के कारण किसी एक का प्रयोग किया जाता है। उसको उपग्रह वक्रता कहते हैं। धातुओं के लक्षण के अनुसार नियत पदों का प्रयोग उपग्रह कहलाता है।

---

1. पूर्वमेघ - 40
2. शारिका सन्देश - 51
3. उत्तरमेघ - 37

भित्वा सद्यः किसलयपुटान् देवदारु द्रुमाणां

ये तत्क्षीरस्रुति सुरभयो दक्षिणेन प्रवृत्ताः

आलिङग्यन्ते गुणवति मया ते तुषाराद्रविाताः

पूर्वं स्पृष्टं यदि किल भवेदंगमे भिस्तवेति। 1

कालिदास के अनुसार यक्ष की भावना यह है कि मेघ उसकी प्रिया से यह सन्देश कहे कि उत्तर से दक्षिण की ओर प्रवाहित होने वाली वायु का वह इसलिए आलिंगन करता है। सम्भवतः इस वायु में यक्ष प्रिया का स्पर्श भी सम्मिलित होगा। इस आलिंगन हेतु कवि ने आलिङ्ग्यन्ते भाव कर्म लट् रूप में प्रयोग किया है। जिसका सामान्य अर्थ आलिंगित किया जाता है। इस प्रकार अर्थ करना पड़ेगा तभी इसमें उपग्रहजन्य वक्रता दिखाई पड़ेगी।

4. <u>उपसर्ग वक्रता</u> – संस्कृत व्याकरण के अनुसार पद चार प्रकार के होते हैं। नाम, आख्यात, उपसर्ग और निपात। इनमें नाम पद संज्ञा है। आख्यात धातु को कहते हैं। उपसर्ग वक्रता में उपसर्गो के माध्यम से कविता में चारुत्व या सौन्दर्य उत्पन्न किया जाता है। जैसे-

नीचैराख्यं गिरिमधिवसेस्तत्र विश्राम हेतो

स्त्वत्संपर्कात पुलकितमिव प्रौढ़पुष्पैः कदम्बैः

यः पुण्यस्त्रीरति परिमलोद्गारि भिर्नागराणा

मुद्दामानि प्रथयति शिलावेश्मभिः यौवनानि। 2

एतत्कृत्वा प्रियमनुचित प्रार्थना वर्तिनो मे

सौहार्दाद्वा विधुर इति वा मय्यनुक्रोशबुद्ध्या

इष्टान्देशाञ्जलद विचर प्रावृषा संभृत श्री

र्मा भूदेवं क्षणमपि च ते विद्युता विप्रयोगः। 3

यहाँ प्रथम उदाहरण में विश्राम और उद्गार क्रमशः वि+श्रम् धातु से भाव अर्थ में धञ् प्रत्यय लगाकर बनाया गया है। इसी प्रकार उत् उपसर्ग से बना हुआ उद्गार अपने विशिष्ट अर्थ को व्यक्त करता है।

---

1. उत्तरमेघ - 47   2. पूर्वमेघ - 26   3. उत्तरमेघ - 55

द्वितीय उदाहरण में संभृत सम्+भृ+क्त और विप्रयोग वि+प्र+युज् में विशिष्ट एवं प्रकृष्ट अर्थो की अभिव्यक्ति करता है। अतः यहाँ उपसर्ग वक्रता मानी जाएगी। मेघदूत में इसी प्रकार के अनेक स्थल प्राप्त होते हैं। जहाँ कवि ने उपसर्गों के माध्यम से विशिष्ट अर्थों की अभिव्यञ्जना कराई है।

शारिका सन्देश का भी एक उदाहरण द्रष्ट्व्य है -

उड्डीना त्वं जितमरुदितः पक्षविक्षेप वेगात्

तावद्दूरामपि हितरसा लङ्घय व्योमबोथीम्

मध्येमार्ग क्वचिदपि न ते विश्रमस्यावकाशो

दत्तस्सत्यं सखि मम मनस्सञ्ज्वरेणोत्कटेन। 1

यहाँ पर विक्षेप, विश्रम शब्दों में क्रमशः वि उपसर्ग लगा हुआ है। एक ही उपसर्ग दो स्थानों में प्रयुक्त होने पर भी अलग-अलग छवि प्रस्तुत करता है। विश्रम में विश्राम के अवसर की व्यञ्जना स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इसी प्रकार विज्ञान, विश्रान्त निर्वायान्न शब्दों में लगे हुए उपसर्ग धातुज अर्थ से भिन्न अर्थ की व्यञ्जना कराते हैं।

5. <u>निपात वक्रता</u> - ये अवयव रहित अव्युत्पन्न अव्यय शब्द होते हैं। जिनके प्रायः अपने शब्दगत एवं वस्तुपरक अर्थ नहीं होते। प्रयोग के आधार पर पूरे वाक्य को एक अतिरिक्त अर्थ की गरिमा प्रदान करते हैं।

वापी चास्मिन्मरकत शिला बद्ध सोपानमार्गा

हैमैश्छन्ना विकचमकलैः स्निग्ध वैदूर्यनालैः

यस्यास्तोये कृत वसतयो मानसं सन्निकृष्टं

नाध्यास्यन्ति व्यपगतशुचस्त्वामपि प्रेक्ष्य हंसा। 2

उक्त उदाहरण में च और अपि ऐसे ही निपात हैं, जो वाक्य की शोभा में अभिवृद्धि कर रहे हैं।

यत्काङ्क्षन्ति प्रणतिनुतिमात्रोन्मुखा देहभाजः

तस्मादर्थानति हि बहुशो यच्छति स्वच्छधीभ्यः

श्रीमानध्यम्बरधुनि वसन् वासुदेवस्स इत्थं

मामाकाश प्रभव सुभगा कापि वाणी ह्यभाणीत्। 3

उक्त उदाहरण में हि निपात सम्पूर्ण वाक्य को चमत्कृति प्रदान करता है।

---

1. शारिका सन्देश - 32 2. उत्तरमेघ - 16 3. शारिका सन्देश - 12

6. <u>वस्तु वक्रता</u> - कुन्तक के अनुसार - वस्तु का उत्कर्षशाली स्वभाव से सुन्दर रूप में केवल सुन्दर शब्दों के द्वारा वर्णन या वस्तु की वक्रता कहलाती है।

उदार स्वपरिस्पन्दसुन्दरत्वेन वर्णनम्

वस्तुनो वक्र शब्दैक गोचरत्वेन वक्रता। 1

इसके दो भेद होते हैं - 1. सहज शोभा वक्रता 2. आहार्य वक्रता।

सहज शोभा में रमणीय वस्तुओं का चित्रांकन होता है जबकि आहार्य में वस्तुओं का रमणीय वर्णन होता है।

जैसे -

यत्रोन्मत्त भ्रमर मुखराः पादपाः नित्यपुष्पाः

हंस श्रेणी रचित रशना नित्यपद्माः नलिन्यः

केकोत्कण्ठाः भवन शिखिनो नित्यभास्वत्कलापाः

नित्य ज्योत्स्नाः प्रतिहत तमो वृत्ति रम्याः प्रदोषाः। 2

केतुस्तम्भ स्फुरति पुरतः पत्रिकेतो रुदग्रो

दीपस्तम्भो विलसति तथा पृष्ठतः पुष्टशोभः

तस्योपान्ते घटित सुदृषन्निर्मलापश्च कूपः

सत्सोपानं सुविहित गवोधाम्बुपानं विपानम्। 3

<u>आहार्य</u> -

उत्संगे वा मलिनवसने सौम्य निक्षिप्य वीणां

मदगोत्रांकङं विरचितपदं गेयमुद्गातुकामा

तन्त्री मार्दा नयन सलिलैः सारयित्वा कथन्चिद्

भूयोभूयः स्वयमपि कृतां मूर्च्छनां विस्मरन्ती। 4

<u>प्रकरण एवं प्रबन्ध वक्रता</u> - प्रकरण और प्रबन्ध वक्रता में कुन्तक ने कथानक के संगठन और स्वरूप की मीमांसा की है। प्रकरण कथा के एक विशेष प्रसंग को कहते है। इस प्रकार कई प्रकरण मिलकर प्रबन्ध को शक्ति, दीप्ति शोभा और सौन्दर्य से युक्त करते हैं। प्रकरण को चमत्कृत, सरस या रोचक बनाने वाले प्रसंग रसाप्लावित होना चाहिए। आलोच्य दोनों काव्यों में एक ही प्रकरण का उल्लेख है। मेघदूत में विरही यक्ष अधिकार शून्य होकर आषाढ़ मास के मेघों को देखकर अपनी प्रिया को सन्देश उनके माध्यम से भेजना चाहता है। इस हेतु से कालिदास

1. वक्रोक्ति जीवितम् - 3/1
2. उत्तरमेघ - 3
3. शारिका सन्देश - 21
4. उत्तरमेघ - 26

ने मेघ के मार्ग, मार्गस्थ रमणीय, प्राकृतिक भौगोलिक स्थल वनस्पतियाँ, तीर्थ, ग्राम युवतियाँ आकाशस्थ प्राकृतिक परिवर्तनों का चित्रांकन मेघ के श्रम परिहारार्थ किया है। अलकापुरी के मणि उट्टंकित मन्दिरों, प्रासादों के बहुविध वर्णनोपरान्त अपनी प्रिया के क्षीण मलिन सौन्दर्य का ऐसा आकर्षक वर्णन किया है, जिसमें विरह विधुरा की एक निष्ठा प्रत्यक्षगोचर होती है। इसी प्रकारा शारिका सन्देश में अहंकारजन्य छिपी गोपी को छोड़कर केरल प्रदेश में जा बसने वाले कृष्ण के प्रति किसी गोपी द्वारा शारिका को माध्यम बनाकर उससे दौत्यकर्म सम्पन्न कराया गया है। इसमें गोपी ने विष्णु के दशावतार की भी चर्चाकर अपने ऐकान्तिक मधुरारति की व्यञ्जना सन्देश में की है।

कवि रामपाणिवाद ने प्रकरण की एकतानता के लिए उसके कौशल, संगठन, शक्ति व्यञ्जित करने हेतु उद्दाम, तीव्र भावव्यापारों का आश्रय लिया है। दोनों काव्यों में भावपूर्ण प्रकरणों की उद्भावना, प्रसंगों का हृदयावर्जक वर्णन, रसानुकूल प्रकरणों का चयन और कथा से सम्बद्ध भावों की अभिव्यञ्जना मार्मिक ढंग से की है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि काव्य में चारुत्व, विदग्धता, भंगिमापूर्ण कथन के द्वारा वक्रोक्ति सिद्धान्त के वर्ण विन्यास, पद पूर्वार्ध, पद परार्ध सभी वक्रताओं का उपयोग किया है। इससे अर्थ विच्छिन्ति को नूतनता प्राप्त हुई है। इतना अवश्य कहा जा सकता है कि कालिदास ने मेघदूत में अनायास आगत सौशद्यौ का प्रयोग किया है। अतः उनके वर्णन में स्वाभाविकता है, जबकि रामपाणिवाद ने शब्द चारुत्व हेतु वक्रता का विशेष उपयोग किया है। अतः उसमें सायासपूर्ण वर्णन मिलते हैं।

<u>आलोच्य काव्यों में ध्वनि</u> – ध्व् धातु में इन् (इ) प्रत्यय के योग से ध्वनि शब्द निष्पन्न होता है। इसे पांच अर्थो में प्रयोग किया जाता है।

1. ध्वनित करने वाला या शब्द अर्थात् वाचक, लक्षक, व्यञ्जक शब्द जब किसी काव्य के व्यञ्जक होते हैं तब वे ध्वनि कहलाते हैं। ध्वनित, ध्वनयति इति वा ध्वनिः।

2. ध्वनि उत्पादक शब्द व्यापार अर्थात वह शब्द व्यापार (शब्द शक्ति) जिसके द्वारा ध्वनि की उत्पत्ति होती है। ध्वनि कहा जाता हैं ध्वन्यते अनेन इति ध्वनिः।

3. ध्वनित रसालंकार वस्तु अर्थात काव्य में जब रस अलंकार और वस्तु ध्वनित होते हैं, तब वे ध्वनि कहे जाते हैं। ध्वन्यतः इति ध्वनिः।

4. ध्वनि काव्य (रसालंकार वस्तु ध्वनित काव्य) अर्थात जिस काव्य में रस, अलंकार, वस्तु आदि ध्वनित हों उस काव्य को ध्वनि कहते हैं। ध्वन्यतः अस्मिन्निति ध्वनिः।

5. रसालंकार वस्तु ध्वनन अर्थात रस, अलंकार, वस्तु आदि की सूचना (ध्वनन) को ध्वनि कहा है। ध्वननं ध्वनिः। 1

इस सम्प्रदाय के प्रतिष्ठापक आचार्य आनन्दवर्धन हैं। उन्होंने ध्वनि को काव्य की आत्मा कहा है। इस ध्वनि की प्रेरणा उन्हें व्याकरणों के स्फोटवाद से मिली है। व्याकरण शास्त्र में प्रधानभूत स़्फोट की अभिव्यक्ति जिस ध्वनि या शब्द से होती है। उसे वहाँ ध्वनित स्फोट व्यनक्ति इति ध्वनिः इस व्युत्पन्ति के अनुसार स्फोट के अभिव्यंजक शब्द के लिए ध्वनि का प्रयोग किया है। वर्णोच्चारण काल में स्थान प्रयत्न के कारण जो नाद होता है। उसे ध्वनि और ध्वनियों से स्फुटित होने वाला भाग स्फोट कहलाया।

ध्वनिवादी आचार्यों ने इस सिद्धान्त में इसी का प्रसार किया है। आनन्दवर्धन के मतानुसार - जहाँ शब्द और अर्थ अपने को अप्रधान बनाकर अन्य अर्थ (व्यंग्य अर्थ) की व्यञ्जना करते हैं, उसे ध्वनि काव्य कहते हैं। इस तथ्य की पुष्टि के लिए निम्नलिखित वचन देखे जा सकते हैं -

.1 व्यंग्य प्राधान्ये हि ध्वनिः ध्वनि संज्ञितः प्रकारः
काव्यस्य व्यञ्जितः सोऽयम् ननु ध्वनिः काव्य
विशेषः इत्युक्तम् व्यङग्योऽर्थो ललना लावण्य
प्राख्यौ च प्रतिपदितस्य प्राधान्ये ध्वनिरित्युक्तम्। 2

2. यत्रार्थः शब्दो वा तमर्थमुपसर्जनी कृत स्वार्थौ
व्यङक्तः काव्य विशेषः स ध्वनिरिति सूरिभिः कथितः। 3

आचार्य मम्मट ने वाच्य की अपेक्षा व्यंग्य की प्रधानता होने पर ध्वनि काव्य की संज्ञा दी है।

इदमुत्तममतिशयिनि व्यङ्ग्ये वाच्याद् ध्वनिर्बुधैः कथितः। 4

आचार्य विश्वनाथ ने वाच्यातिशायि व्यंग्य युक्त काव्य के लिए ध्वनि का प्रयोग किया है।

वाच्यातिशायिनि व्यंग्ये ध्वनिस्तत काव्यमुच्यते। 5

आचार्य **पण्डित राज जगन्नाथ** ने ध्वनि शब्द का प्रयोग वस्तु अलंकार रसादि व्यंग्य अर्थो से युक्त उत्तमोत्तम नामक काव्य विशेष अर्थ में किया है।

शब्दार्थौ यत्र गुणी भवितात्मानौ कमप्यर्थमभिव्यङक्त स्तदाद्यम्। 6

1.रामचरित मानस राग्वैभव - डा0 अम्बा प्रसाद सुमन, पृ0- 374

2. ध्वन्यालोक - 1/13 3. ध्वन्यालोक - 1/13 4. काव्याप्रकाश - 1/

5. साहित्यदर्पण - 4/1 6. रस गंगाधर - 1/2

इस प्रकार ध्वनि सम्प्रदाय में ध्वनि का व्युत्पत्ति निमित्तक अर्थ हुआ व्यञ्जक तथा प्रवृत्तिनिमित्तक अर्थ हुआ व्यंग्य अर्थ को प्रयुक्त कराने वाला काव्य विशेष। इसमें प्रतीयमान अर्थ को ही प्रधानता दी गई है। यही व्यंग्यार्थ है। वस्तुतः सम्पूर्ण ध्वनि सिद्धान्त व्यंग्यार्थ एवं व्यञ्जना पर आधारित है और व्यंग्यार्थ की प्रतीति व्यञ्जना व्यापार से होती है।

ध्वनि काव्य के भेद – व्यंग्यार्थ की प्रधानता एवं अप्रधानता के आधार पर ध्वनि एवं गुणीभूत व्यंग्य दो भेद किए जाते हैं। ऊपर कहा जा चुका है कि जहाँ वाच्य की अपेक्षा व्यंग्य अर्थ की प्रधानता होती है। वह ध्वनि काव्य है। गुणीभूत व्यंग्य वह काव्य कहलाता है जिसमें व्यंग्य की अपेक्षा वाच्य की अधिक चारुता होती है। **आनन्दवर्धन** ने लिखा है – प्रकारोऽयं गुणीभूत व्यङ्ग्य काव्यस्य दृश्यते

यत्र व्यङ्ग्यान्वये वाच्य चारुत्वं स्यात्प्रकर्षवत्। 1

ध्वनिकार ने दो प्रकार की ध्वनियाँ मानी है। अविवक्षित वाच्य ध्वनि - जहाँ पर वाच्यार्थ को समझने का उद्देश्य नहीं होता और वह व्यर्थ रहता है।

विवक्षितान्वयपर वाच्य ध्वनि - जहाँ वाच्यार्थ उद्दिष्ट रहता है और वह दूसरे अर्थ की व्यञ्जना कराता है। अविवक्षित वाच्य ध्वनि के दो भेद उल्लिखित हैं- 1. अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य एवं अर्थान्तर संक्रमित वाच्य

अर्थान्तर संक्रमितत्यन्तं वा तिरस्कृतं

अविवक्षितवाच्यस्य ध्वनिर्वाच्यं द्विधामतम्। 2

प्रथम प्रकार की ध्वनि वहाँ मानी जाती है, जहाँ लक्ष्यार्थ तथा प्रयोजन के प्रत्यायन में वाच्यार्थ का सर्वथा परित्याग किया जाता है तथा अर्थान्तर संक्रमित वाच्य वहाँ पर होता है, जहाँ प्रयोग सामर्थ्य से वाच्यार्थ दूसरे अर्थ से संवलित होकर अपना अर्थ देता है। इस प्रकार शब्द एवं वाक्यगत रूप में इस ध्वनि के चार रूप होते हैं –

1. शब्दगत अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य
2. वाक्यगत अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य
3. शब्दगत अर्थान्तर संक्रमित वाच्य
4. वाक्यगत अर्थान्तर संक्रमित वाच्य

विवक्षितन्वयपर वाच्य ध्वनि को अभिधामूलक ध्वनि कहते हैं। इसमें न तो तात्पर्यानुपत्ति होती है और न बाध प्रति संधान या मध्यवर्ती वाच्यार्थ सम्बन्ध लक्ष्यार्थ की अप्रतीति। इसमें वाच्यार्थ स्वतः पूर्ण तथा संगत होता है किन्तु सहृदयता के कारण परिस्थिति के प्रकाया में एक अन्य अर्थ की प्रतीति होने लगती है। स्थूलरूप

---

1. ध्वन्यालोक - 3/34 2. ध्वन्यालोक - 2/11

से रस ध्वनि, वस्तु ध्वनि और अलंकार ध्वनि इसके तीन भेद कहे गए हैं। इसी प्रकार अभिधामूलक ध्वनि को असंलक्ष्यक्रम व्यंग्य तथा संलक्ष्यक्रम व्यंग्य आदि भेदों का विस्तृत उल्लेख काव्य शास्त्रीय सिद्धान्तों में प्राप्त होता है। यहाँ हम आलोच्य काव्य मेघदूत एवं शारिका सन्देश में मोटे तौर पर कुछ ध्वनियों के लक्षण एवं उदाहरण देकर उनकी व्याख्या करेंगे कि किस प्रकार इन कवियों ने अपने काव्यों में ध्वनि का उपयोग किया है।

तात्पर्य यह कि व्यंग्यार्थ की दृष्टि से ध्वनि सम्प्रदाय में काव्य के दो भेद माने गये हैं।

1. ध्वनि 2. गुणीभूत व्यंग्य

पहले कहा जा चुका है कि जहाँ वाच्य की अपेक्षा व्यंग्य अर्थ की प्रधानता होती है। वह ध्वनि काव्य कहलाता है। गुणीभूत व्यंग्य काव्य उसे कहते हैं, जहाँ व्यंग्य की अपेक्षा वाच्य की अधिक चारुता होती है। **ध्वन्यालोककार** ने लिखा है -

प्रकारोऽयं गुणीभूत व्यङ्ग्य काव्यस्य दृश्यते

यत्र व्यङग्यान्वये वाच्य चारुत्वं स्यात्प्रकर्षवत्। 1

साहित्यदर्पणकार ने भी इसकी पुष्टि की है -

काव्यं ध्वनिर्गुणीभूत व्यंग्य चेति द्विधामतम्। 2

रस प्रकरण पर ध्वनि प्रधान रसों के लक्षण और उदाहरणों की विस्तृत समीक्षा प्रस्तुत की गई है। मात्र भाव ध्वनि, भाव शान्ति भावाभास या रसाभास इत्यादि कुछ बातें रह गयी हैं, जिसका विवेचन यहाँ किया जायेगा किन्तु उसके पूर्व गुणीभूत व्यंग्य के कुछ उदाहरण देकर उनका विश्लेषण यहाँ किया जा रहा है। आचार्य **मम्मट** ने लिखा है - वाच्य के व्यंग्य से अतिशायी होने पर गुणीभूत नामक मध्यम काव्य होता है। यहाँ व्यंग्य का वाच्य से अतिशायी न होने का अर्थ है। व्यंग्य का वाच्य से न्यून होना अथवा समान होना माना जा सकता है। क्षेत्र की दृष्टि से गुणीभूत व्यंग्य अत्यन्त विस्तृत है। वस्तुतः गुणीभूत व्यंग्य काव्य का वास्तविक अभिप्राय व्यंग्यार्थ के सम्बन्ध से विशेष रमणीय वाच्य सौन्दर्यमय काव्य बन्ध है। यहाँ मेघदूत के कुछ उदाहरण देकर गुणीभूत व्यंग्य को स्पष्ट किया जा रहा है। कवि कालिदास निर्विन्ध्या नदी का वर्णन कर वियोगिनी नायिका की विरह दशा की व्यञ्जना कराई है। जहाँ वाच्यार्थ प्रमुख और व्यंग्यार्थ उपस्कारक रूप में प्रयुक्त हुआ है -

वेणीभूत प्रतनुसलिला तामतीतस्य सिन्धुः

पाण्डुच्छाया तटरुह तरु भ्रंशिभिजीर्ण पर्णैः

सौभाग्यं ते सुभग विरहावस्थया व्यञ्जयन्ती

---

1. ध्वन्यालोक - 3/34 2. साहित्यदर्पण - 4/1

कार्श्यं येन व्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्यः। 1

इसी प्रकार उत्तर मेघ में उपपति के निकल भागने के बिम्ब को स्पष्ट करने के लिए मेघ और वायु का किस प्रकार आश्रय लिया गया है। यहाँ द्रष्टव्य है -

नेत्राः नीताः सतत गतिना यद्विमानाग्रभूमि
रालेख्यानां सलिल कणिका दोषमुत्पाद्य सद्यः
शङ्कास्पृष्टा इव जलमुचस्त्वादृशा जालमार्गे
धूमोद्गारानुकृगतनिपुणाः जर्जरा निष्पतन्ति। 2

कवि का मन्तव्य यह है कि अन्तःपुर में निरन्तर आने-जाने वाले किसी दूत के द्वारा गोपनीय संकेत स्थल में पहुँचाये गये जार पुरुष वहाँ की स्त्रियों में व्यभिचार दोष उत्पन्न कर भयभीत कर वेश बदलकर टेढ़े-मेढ़े गुप्त रास्तों से निकल जाते हैं। इसी प्रकार की क्रियायें अलकापुरी में मेघ भी करते हैं। उत्प्रेक्षा अलंकार के माध्यम से अभिधेय अर्थ यहाँ मुख्य हो गया है। इसी प्रकार पूर्वमेघ में भू, अग्नि, मरुत, सलिल से बना मेघ और कहाँ सन्देश हरण करने में चतुर लोग इन दोनों के मध्य जो वैषम्य है उसकी व्यञ्जना कवि ने अर्थान्तरन्यास के माध्यम से की है कि कामी लोग चेतन-अचेतन में भेद नहीं करते। एक अन्य श्लोक में कवि कालिदास ने अभिधेय अर्थ को प्रामुख्य दिया है, जबकि व्यंग्य गौण सा हो गया है।

क - धूमज्योतिः सलिलमरुतां सन्निपातः क्व मेघः
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः
इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन् गुह्यकस्तं ययाचे
कामार्ता हि प्रकृति कृपणाश्चेतना चेतनेषु।

ख- जातं वंशे भुवन विदिते पुष्कारावर्तकानां
जानामि त्वां प्रकृति पुरुषं कामरूपं मघोनः
तेनार्थित्वं त्वयि विधिवशाद् दूरबन्धुर्गतोऽहं
याच्ञा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा। 3

इसी प्रकार उत्तरमेघ में सूर्योदय होने पर मार्ग में पड़े हुए मन्दार पुष्प, स्वर्णकमल, मुक्ताजाल को देखकर लोग अभिसारिकाओं के गमनमार्ग का अनुमान कर लेते हैं।

---

1. पूर्वमेघ - 30 2. उत्तरमेघ - 8 3. पूर्वमेघ - 5, 6

गत्युत्कम्पादलक पतितैर्यत्र मन्दारपुष्पैः

पत्रच्छेदैः कनककमलैः कर्ण विभ्रंशिभिश्च

मुक्ताजालैः स्तनपरिसरच्छिन्न सूत्रैश्च हारै

नैशो मार्गः सवितुरुदये सूच्यते कामिनीनाम्। 1

इसी प्रकार पूर्वजन्म में शारिका सन्देश में गुणीभूत व्यंग्य के अनेक स्थल मिलते हैं। गोपी शारिका से निवेदन करती है कि स्त्री होने के कारण वह उससे ईर्ष्या न करे क्योंकि इस कार्य में शारिका को शुक से अलग होना पड़ेगा।

क - प्राचीनं यत् किमपि कलुषं कर्म तद् धार्मिकैर

व्यस्मिञ्जन्मन्यशुभ फलकं प्राणिभिर्नापहेयम्

तच्चाप्येष क्षपयति हरिस्स्वर्धुनीवर्धनोयः

तत्तादृक्षं क्वचिदपि परं दैवतं नैव भूमौ। 2

ख - स्वेच्छावाप्ति त्वरित मनसो दुस्सहातंकभाजो

नान्विच्छन्ति क्वचिदपि परक्लेशमात्मार्थ लुब्धाः

इत्थं मत्वा मनसि मयि ते मास्मभूदभ्यसूया

यज्जानीषे शुकि ! तव शुके स्वां रुजं दूरभाजि। 3

इसी प्रकार पूर्वजन्म शारिका सन्देश मे कृत कल्मष या पाप कर्मों का परिणाम व्यक्ति को तो भोगना ही पड़ता है। चाहे व्यक्ति कितना ही धार्मिक क्यों न हो। अम्बरनदीश क्षेत्र इसका अपवाद है। यहाँ व्यंग्यार्थ गौण है क्योंकि अनुमान करना पड़ेगा कि अम्बरनदीश क्षेत्र के रहने वाले भक्तों के कल्मष विष्णु की कृपा से परिमार्जित हो जाते हैं। पूर्वार्ध के श्लोक में द्रष्टव्य है।

ध्वनि सिद्धान्त के प्रतिपादन के समय अविवक्षित वाच्य ध्वनि एवं विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनि की चर्चा की गई है। इस दृष्टि से भी आलोच्य काव्य के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं -

एतत्कृत्वा प्रियमनुचित प्रार्थना वर्तिनो मे

सौहार्दाद्वा विधुर इति वा मय्यनुक्रोशबुद्ध्या

इष्टान्देशाजलद विचर प्रावृषा संभृत श्री

---

1. उत्तरमेघ - 11 2. शारिका सन्देश - 29 3. शारिका सन्देश - 33

र्मा भूदेवं क्षणमपि च ते विद्युता विप्रयोगः। 1

इसी प्रकार शारिका सन्देश में ग्राह ग्रस्त एवं कमलाकान्त शब्दों का मूल अर्थ क्रमशः विपद्ग्रस्त एवं वनितारक्षण अर्थ में प्रयोग हुआ है। उदाहरण द्रष्टव्य है -

ग्राह ग्रस्त द्विपर परित्राण कण्ठोक्तमेतत्

कारुण्यं ते कथय कमलाकान्त ! कुत्र प्रयातम्

तारुण्यश्री सुमधुर तनो ! तावके तावदेषा

चारुण्यङ घ्रद्वितयकमले नाहमप्यानता किम् । 2

ध्वनि का दूसरा भेद विवक्षितान्यपरवाच्य ध्वनि है। जिसमें क्रमशः असंलक्ष्य क्रमव्यंग्य एवं संलक्ष्यक्रमव्यंग्य उपभेद बताये गये हैं।

1. असंलक्ष्यक्रमव्यंग्य - इसे मूलतः रस ध्वनि कहते हैं। जिसका विवरण भाव एवं रस निरुपण सम्बन्धी अध याय में विस्तृत रूप से किया जा चुका है। वहाँ विभाव, अनुभाव, संचारी भावों के उचित सन्निवेश से व्यक्त रव्यादि स्थायी भावों की चवर्णा से प्रयुक्त आस्वाद रस की चर्चा की गई है। अतः यहाँ रस ध्वनि की चर्चा कर भाव, रसाभाव, भावाभास, भावोदय, भाव सन्धि एवं भावशबलता के कुछ उदाहरण आलोच्य काव्यों से प्रस्तुत किए जायेंगे -

1. भाव ध्वनि - जहाँ कोई व्यभिचारी भाव उद्वित्त अवस्था में पहुँचकर चमत्कार उत्पन्न करता है। उसे भाव ध्वनि काव्य कहते है। लोचनकार ने कहा है -

यदा कश्चिदुद्वित्तावस्थां प्रतिपन्नो व्यभिचारी चमत्कारातिशय प्रयोजको भवति तदाभाव ध्वनि। 3

आश्लिष्ट सानु मेघ को देखकर यक्ष देर तक अपनी प्रिया की चिन्ता करता रहा इसे कालिदास ने मेघदूत में इस प्रकार लिखा है -

तस्य स्थित्वा कथमपि पुरः कौतुकाधान हेतो

रन्तर्वाष्पश्चिरमनुचरो राजराजस्य दध्यौ

मेघालोके भवति सुखिनोऽप्यन्यथावृत्ति चेतः

कण्ठाश्लेष प्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे। 4

---

1. उत्तरमेघ - 55
2. शारिका सन्देश - 99
3. लोचन- पृ0 - 175
4. पूर्वमेघ - 3

इसी प्रकार औत्सुक्य, आवेग, दैन्य इत्यादि संचारी भावों के अनेक उदाहरण मेघदूत में मिलते है। औत्सुक्य का उदाहरण देखिए -

अद्रेः श्रृंग हरति पवनः किंस्विदित्युन्मुखीभि
दृष्टोत्साहश्चकित चकितं मुग्धसिद्धांगनाभिः। 1

शारिका सन्देश में रूपगर्विता गोपी का ईषत् क्रोध जिसमें मद सम्मिलित है। भाव ध्वनि व्यञ्जित हो रहा है -

काचिद् गोपी कलित कलह प्रक्रमा चक्रपाणौ
कामार्ताऽपि क्वचन यमुनाकूल कुञ्जे निलीना। 2

रसाभास - मम्मट, विश्वनाथ आदि आचार्यों ने रसाभास या भावाभास के सम्बन्ध में कहा है कि श्रृंगार आदि रसों का अनौचित्य प्रयोग रसाभास तथा भावाभास व्यञ्जित करता है -

तदाभासा अनौचित्य प्रवर्तिता तदाभासा रसाभासा भावाभासाश्च। 3

ध्वन्यलोक की टीका में लिखा है - अनौचित्येन प्रवृत्तौ चित्तवृत्तैरास्वाद्यस्वै रसौ व्यभिचारण्यिा
भावा अनौचित्येन तदाभासः रावणस्येव सीतायां रतैः। 4

मेघदूत में नदी रूपी नायिका की कायिक और सात्विक दशाओं का चित्रण कर रसाभास एवं उत्तरमेघ में एक स्त्री के अनेक प्रेमियों (जार) की चर्चा में भावाभास के लक्षण देखे जा सकते हैं।

क- विचिक्षोभस्तनित विहग श्रेणि काञ्ची गुणायाः
संसर्पन्त्याः स्खलित सुभगं दर्शितावर्तनाभेः
निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्निपत्य
स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेषु। 5

ख- नेत्राः नीताः सतत गतिना यद्विमानाग्रभूमि
रालेख्यानां सलिल कणिका दोषमुत्पाद्य सद्यः
शङ्कास्पृष्टा इव जलमुचस्त्वादृशा जालमार्गे
धूमोद्गारानुकृगतनिपुणाः जर्जरा निष्पतन्ति। 6

---

1. पूर्वमेघ - 14
2. शारिका सन्देश - 1
3. काव्यप्रकाश - 49
4. लोचन - पृ0 - 178
5. पूर्वमेघ - 29
6. उत्तरमेघ - 8

शारिका सन्देश में मधुरारति की विस्तृत चर्चा है। यदि यह किसी साधारण गोपी का किसी साधारण नायक के प्रति आसक्ति का वर्णन होता तो निश्चित ही यह विप्रलम्भ श्रृंगार कहलाता लक्षणानुधावन की दृष्टि से यह एक साधारण गोपी का ईश्वर के प्रति प्रणय निवेदन है। अतः कामाभिभूत साधारण गोपी और दुष्ट दलन कर्ता दशावतार धारण करने वाले ईश्वर (ब्रह्म) की चर्चा है। तब इसमें आलम्बनगत वैषम्य दिखाई पड़ेगा। अतः शास्त्रीय दृष्टि से इसे रसाभास माना जा सकता है। एक उदाहरण देकर इसकी पुष्टि की जाएगी। यद्यपि शोधकर्त्री ने शारिका सन्देश के अंगी रस के रूप में मधुर रस की सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक व्याख्या की है।

जैसे -

त्वं मे लक्ष्मीरमण ! रमणस्त्वं मम प्राणबन्धः
त्वं मे देहस्त्वमसि हृदयं त्वं ममास्यन्तरात्मा
त्वं मे शर्म त्वमसि भगवन् ! जन्मसाफल्यहेतुः
त्वं मे देवं परममथवा साहमंग ! त्वमेव। 1

इसी प्रकार दोनों काव्यों में भावोदय, भावसन्धि एवं भावशबलता के अनेक उदाहरण मिलते हैं। विस्तार भय से यहाँ भावशबलता की चर्चा की जा रही है -

भाव शबलता - जहाँ अनेक संचारियों की द्वन्दशः अभिव्यक्ति हो वहाँ भाव शबलता है। मेघदूत में चिन्ता औत्सुक्य, हर्ष इत्यादि व्यभिचारियों की संगति दिखाई गई है। अतः यहाँ भाव शबलता मानी जा सकती है -

अंगेनांगं प्रतनु तनुना गाढतप्तेन तप्तं
सास्रेणास्त्र द्रुतमविरतोत्कण्ठमुत्कण्ठितेन
उष्णोच्छ्वास समधिक तरोच्छ्वासिना दूरवर्ती
संकल्पैस्तैर्विशति विधिना वैरिणा रुद्धमार्गः । 2

शारिका सन्देश में भी हर्ष, मद, गर्व, जड़ता एक स्थान पर सन्निहित है। अतः यहाँ भाव शबलता मानी जा सकती है।

रम्या रामा रहसि रमयन्नेव रामानुजस्त्वं
रागाम्भोधौ चिरतरममूर्मज्जयन्मादो यः
भूयस्ताभ्यस्सुबहु सुभगम्मन्यतां प्रापिताभ्यः
स्वेनैवान्तर्दधिथ तरसा कृष्ण ! तस्मै नमस्ते। 3

संलक्ष्यक्रम ध्वनि - इसमें वाच्य और व्यंग्य का क्रम उसी प्रकार लक्षित होता रहता है। जैसे- घण्टारणन के अनुरणन का। ध्वनिकार इसे अनुस्वनसंनिभ कहता है।

---

1. शारिका सन्देश - 57 2. उत्तरमेघ - 42 3. शारिका सन्देश - 90

क्रमेण प्रतिमात्यात्मा योऽस्यानुस्पानसन्निभः

शब्दार्थ शक्ति मूलत्वात्सोऽपि द्वैधा व्यवस्थितः। 1

आचार्य **मम्मट** ने इसी अनुरणन पर विशेष बल देते हुए कारिका और उसकी टीका में लिखा है -

अनुस्वानाभसंलक्ष्य क्रमव्यंग्यस्थितिस्तः यः । 2

(एवं अनुस्वानाभः संलक्ष्यः क्रमः यस्य तस्य व्यंग्यस्य स्थितिः यस्मिन् सः) 3

इसके दो भेद कहे गए हैं - 1. शब्दशक्ति मूलक ध्वनि   2. अर्थशक्ति मूलक ध्वनि

1. शब्दशक्ति मूलक ध्वनि के भी दो भेद होते हैं - वस्तु तथा अलंकार। यद्यपि आनन्दवर्धन ने इसके अन्तर्गत केवल अलंकार को ही व्यंग्य माना है। वस्तु को नहीं। जबकि मम्मट दोनों (वस्तु एवं अलंकार) को व्यंग्य मानते हैं। यहाँ हम शास्त्रीय विवेचन की गहराई में न जाकर मात्र उदाहरण देकर इसके स्व रूप को स्पष्ट करेंगे।

मेघदूत के पूर्वमेघ में उज्जयिनी नगरी के प्रातः कालिक सारस पूजन और कमलों की गन्ध में स्त्रियों के प्रति पुरुषों की चाटूक्ति एवं रतिजन्य खिन्नता का वर्णन कर उत्प्रेक्षा अलंकार को व्यंग्य रूप में वर्णित किया है -

दीर्घीकुर्वन पटु मदकलं कूजितं सारसानाम्

प्रत्यूषेषु स्फुटित कमला मोद मैत्रीकषायः

यत्र स्त्रीणां हरति सुरतग्लानिमंगानुकूलः

शिप्रावात प्रियतम इव प्रार्थना चाटुकार। 4

शारिका सन्देश में नायिकाओं के प्रियमिलनजन्य आनन्द कान्ति, मुख की लालिमा के वर्णन प्रसंग मे सूर्योदय का उल्लेख कर उपमा अलंकार व्यंग्य रूप में कहा गया है।

एवं भूतामनितरगतेरस्मदा देरवस्थां

जानानस्त्वं तरुण करुणासार सिक्तान्तरात्मा

आविभूतो रविरिव निशाकाल निष्पीडिताना

मब्जालीनां वरद ! पुरस्तावदस्मादृशीनाम्। 5

2. <u>अर्थशक्ति मूलक ध्वनि</u> - जहाँ वाच्य अर्थ के सामर्थ्य से अन्य वस्तु तथा अलंकार व्यंग्य हो उसे अर्थशक्ति मूलक ध्वनि कहते हैं। ध्वन्यालोक में इसके दो भेद किए गये हैं -

1. कवि प्रौढ़ोक्ति मात्र निष्पन्न शरीर   2. स्वतः सम्भवी ।

प्रौढ़ोक्ति मात्र निष्पन्न शरीरः सम्भवी स्वतः

---

1. ध्वन्यालोक - 2/20
2. काव्यप्रकाश - 4/37
3. काव्यप्रकाश - पृ0 -167
4. पूर्वमेघ - 32
5. शारिका सन्देश - 96

अर्थोऽपि द्विविधो ज्ञेयो वस्तुनोन्यस्य दीपकः। 1

मम्मट ने इसका विस्तृत विवेचन करते हुए लगभग 12 भेदों का उल्लेख किया है। उदाहरण द्रष्टव्य है -

अर्थशक्त्युद्भवोऽप्यर्थो व्यञ्जक सम्भवी स्वतः
प्रौढ़ोक्ति मात्रात्सिद्धो वा कवेस्तेनोम्भितस्य वा
वस्तु वाऽलङ्कारमथवा षड्भेदोऽसौ व्यनक्ति
वस्त्वलंकारमथवा तेनायं द्वादशात्मकः । 2

यहाँ आलोच्य ग्रन्थों से एक-एक उदाहरण देकर विषय-वस्तु को स्पष्ट किया जा रहा है -

हेमाम्भोज प्रसवि सलिलं मानसस्याददानः
कुर्वन्कामं क्षणमुख पटप्रीति मैरावतस्य
धुन्वन्कल्पद्रुम किसलयान्यंशुकानीव वातै
र्नानाचेष्टेर्जलद ललितैर्निर्विशेस्तं नगेन्द्रम्। 3

तात्पर्य यह है कि मेघ कैलाश का मित्र है। अतएव मित्र के घर में किसी प्रकार का संकोच नहीं करना चाहिए। इस वस्तु रूप अर्थ की व्यञ्जना निकलती है। कवि प्रौढ़ोक्ति मात्र निष्पन्न शरीर ध्वनि का अर्थ यह है कि कवि अपनी प्रतिभा द्वारा ऐसे अर्थों की भी कल्पना कर लेता है, जिसका होना लोक में आवश्यक नहीं है। पूर्वमेघ में यक्ष मेघ को निर्देश देता है कि अवन्ति प्रदेश में उज्जयिनी उसे अवश्य जाना चाहिए, क्योंकि वह देवताओं के शेष पुण्यों के द्वारा लाया गया स्वर्ग का एक उज्ज्वल टुकड़ा है। इसी बहाने उदयन की कथा भी उल्लिखित है -

प्राप्यावन्तीनुदयन कथा कोविद ग्रामवृद्धान्
पूर्वोद्दिष्टामुपसर पुरीं श्री विशालां विशालाम्
स्वल्पीभूते सुचरितफले स्वर्गिणां गांगतानां
शेषैः पुण्यैहृतमिव दिवः कान्तिमत्खण्डमेकम्। 4

इसी प्रकार शारिका सन्देश में अम्बरनदीश स्थित गोशाला की रक्षा के लिए कवि ने जो कल्पना की है, उसमें विष्णु ने मोहिनी रूप धारण कर दैत्यों से अमृत की रक्षा की थी। यहाँ मोहिनी की कथा उपमा अलंकार के माध्यम से व्यञ्जित की है। गोशाला की रक्षा के लिए उक्त पौराणिक कथा का उपयोग उपमा अलंकार के रूप में कर कवि ने कवि प्रौढ़ोक्ति निबद्ध ध्वनि की व्यञ्जना की है -

---

1. ध्वन्यालोक - 2/24
2. काव्यप्रकाश - 4/39-40
3. पूर्वमेघ - 65
4. पूर्वमेघ - 31

गोशालस्थस्ततमभितो गोगणेनोपपन्नः

श्रीगोपालो निज भजनतो भासुरान् भूसुरादीन्

क्षैरयेण स्वपदरजसा पावितेनामृतेन

प्रागिन्द्रादीनिव दिविषदस्तर्पययोदनेन । 1

2. **<u>गुणीभूतव्यंग्य</u>** – आनन्दवर्धन ने व्यंग्य तथा वाच्य का समप्राधान्य होने पर तथा व्यंग्यापेक्षया वाच्य के अधिक चमत्कारी होने पर गुणीभूत व्यंग्य काव्य माना है। इसके प्रकार के काव्यों के अन्तर्गत ऐसे अलंकारों की गणना की जाती है, जिसमें व्यंग्य अर्थ की चारुता कम होती है। यह चारुता वाच्य अर्थ का अनुगमन करता हुआ उसे उत्कृष्ट बनाता है। इसकी व्याख्या करते हुए ध्वन्यालोक में लिखा है –

व्यंग्यस्य यत्राप्रधान्यं वाच्यमात्रानुयायिनः

समासोक्त्यादयस्तत्र वाच्यालङ्कृतयः स्फुटाः

व्यंग्यस्य प्रतिभामात्रे वाच्यार्थानुगमेऽपि वा

न ध्वनिर्यत्र वा तस्य प्राधान्यं तु प्रतीयते। 2

मम्मट ने गुणीभूत काव्य के क्षेत्र को विस्तृत कर इसके आठ भेद किए हैं –

1. अगूढ़ व्यंग्य 2. अपरांग भूत गुणीभूत व्यंग्य 3. वाच्यसिद्धयंग व्यंग्य 4. अस्फुट व्यंग्य 5. संदिग्ध प्राधान्य व्यंग्य 6. काक्वाक्षिप्त व्यंग्य 7. तुल्यप्राधान्य व्यंग्य 8. असुन्दर व्यंग्य।

संक्षेप में यदि इन्हें स्पष्ट करना हो तो ये कहा जा सकता है कि अलंकारों को ध्वनि में अन्तर्भूत करने के लिए गुणीभूत व्यंग्य की कल्पना की गई है। इसमें व्यंग्य तत्व से युक्त अलंकार होते हैं, जिसमें समासोक्ति, आक्षेप, अनुक्तनिमित्ता, विशेषोक्ति दीपक, अपन्हुति, पर्यायोक्त और शब्दार्थालंकारों के अनेक संकर रूप। मेघदूत के कुछ स्थलों में गुणीभूत व्यंग्य के उदाहरण मिलते हैं। जैसे – उत्तरमेघ में यक्ष अपनी प्रिया के विरही जीवन के चित्र अंकित करते हुए कहता है कि उसकी प्रिया या तो देवता की पूजा कर रही होगी या उसका (यक्ष) चित्र बना रही होगी अथवा पिंञ्जरस्थ मैना से स्वामी की याद सम्बन्धी प्रश्न कर रही होगी। इस प्रकार दीपक अलंकार द्वारा कवि ने गुणीभूत व्यंग्य की व्यञ्जना की है –

आलोके ते निपतति पुरा सा बलिव्याकुला वा

मत्सादृश्यं विरहतनु वा भावगम्यं लिखन्ती

पृच्छन्ती वा मधुरवचनां सारिका पञ्जरस्थां

---

1. शारिका सन्देश – 10 2. ध्वन्यालोक – पृ0 – 15

कच्चिद्भर्तुः स्मरसि रसिके त्वं हि तस्य प्रियेति। 1

इसी प्रकार समासोक्ति अलंकार की व्यञ्जना के लिए कवि मेघ को निर्देश देता है कि उसे ऐसा उपाय करना चाहिए कि सिन्धु नदी अपनी क्षीणता को छोड़ दे। यहाँ नदी को नायिका और मेघ को नायक बताकर पति द्वारा पत्नी के प्रति रति सम्बन्धी कार्यो की व्यञ्जना समासोक्ति के माध्यम से की है -

वेणीभूत प्रतनुसलिला तामतीतस्य सिन्धुः

पाण्डुच्छाया तटरुह तरु भ्रंशिभिजीर्ण पर्णैः

सौभाग्यं ते सुभग विरहावस्थया व्यञ्जयन्ती

कार्श्यं येन व्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्यः। 2

मेघदूत मे संकर के अनेक स्थल प्राप्त होते हैं। जैसे- पूर्वमेघ के 5-6 एवं उत्तरमेघ के 11-7 गुणीभूत व्यंग्य काव्य के अच्छे उदाहरण कहे जा सकते हैं क्योंकि प्रथम उदाहरण में विषम, अर्थान्तरन्यास का संकर है तो अन्तिम में समुच्य एवं स्मरण का संकर है। शारिका सन्देश के अनेक स्थलों में संकर अलंकार दिखाई पड़ते हैं। जैसे -

सम्पन्नश्री विभवसुलभं चम्पक श्रेणिराज्यं

यो गोपायन्नपि हि भगवानेष गोपायमानः

गोप्तेष्युच्चैर्निजमपि यशो देवनारायणाख्ये

क्षोणी देवक्षिति भुजि समावेशयञ्जोषमास्ते। 3

तात्पर्य यह है कि पूर्वजन्म में किए गये कलुषित कर्म इस जन्म में भी अशुभ फल प्रदान करते हैं किन्तु अम्बरनदीश की महत्ता निरूपित करने के लिए रामपाणिवाद ने विष्णुभक्ति के माध्यम से पापों के परिणाम से बचने का उल्लेख किया है। जैसा कि पहले हम लिख चुके हैं कि ध्वनि सिद्धान्त के मूल में जहाँ व्यंग्य से वाच्यता को चारुता मिलती है वहीं गुणीभूत व्यंग्य होता है। इसी प्रकार गोपी शारिका से कहती है कि वह गोपी का सन्देश ले जाकर श्रीकृष्ण के कहने में उससे ईर्ष्या न करे क्योंकि इस कार्य सम्पादन में उसको अपने पति से अलग होना पड़ेगा। प्रिय प्रवास जनित दुःख का स्वानुभव गोचर इस वाक्य में वाच्यता को चारुत्व अधिक मिला है। अतः यहाँ गुणीभूत व्यंग्य माना जा सकता है।

स्वेच्छावाप्ति त्वरित मनसो दुस्सहातंकभाजो

नान्विच्छन्ति क्वचिदपि परक्लेशमात्मार्थ लुब्धाः

इत्थं मत्वा मनसि मयि ते मास्मभूदभ्यसूया

---

1. उत्तरमेघ - 25　　2. पूर्वमेघ - 30　　3. शारिका सन्देश - 28

यज्जानीषे शुकि ! तव शुके स्वां रुजं दूरभाजि। 1

सारांश यह है कि कृष्ण की अनन्त एवं रमणीय क्षमता के अनुमापन या परिशंसन हेतु साहित्याचार्यों ने विभिन्न मापदण्डों की निर्मिति की है। फिर भी वह इनसे पूरी तरह समझा गया है। यह कहने में किञ्चित सन्देह नहीं है। कविता में जो भावोत्कर्षण, प्राञ्जलता, मार्मिकता, आस्वादन क्षमता होती है, उसकी सहज अनुभूति पाठक स्वतः ही कर लेता है।

काव्यशास्त्रीय सिद्धान्त उसके बाह्य रूप को ही समझने एवं समझाने का साधन मात्र है। इस दृष्टि से अलंकार सिद्धान्त सर्वप्रथम सिद्धान्त रूप में स्वीकृत है, जिसमें कहा गया है कि इनसे अभिव्यक्ति में चारुता एवं उत्कर्षता आती है। कालिदास निर्भान्त रूप से उपमा, उत्प्रेक्षा और अर्थान्तरन्यास का अद्वितीय कवि है। उपमा कालिदासस्य इसी का प्रतीक है। कालिदास की सूक्तियाँ अर्थान्तरन्यास की अभिव्यञ्जना जीवन के अत्यधिक निकट प्रतीक रूप के माध्यम है। कालिदास ने इन अलंकारों के प्रयोग में सारल्य का अत्यधिक ध्यान रखा है। जबकि रामपाणिवाद सौशब्द का कवि है, जिसमें शब्दालंकार की अधिकता होती है। यमकाभास के रूप में तथा छेक, वृत्ति अनुप्रासों का प्रकष्ट प्रयोग शारिका सन्देश में हुआ है। मेघदूत में प्रायः साधर्म्य प्रधान अलंकारों का आधिक्य है। यद्यपि इस प्रकार के अलंकारों में ग्रहीत उपमान अत्यन्त वैविध्यपूर्ण है। इसकी अपेक्षा शारिका सन्देश के उपमान अत्यन्त सीमित हैं। अतः इसमें भाव स्फीति के क्षेत्र अत्यन्त सीमित हैं। पूर्वी एवं पश्चिमी विद्वानों ने कालिदास ग्रहीत उपमान विधान की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

शोधकर्त्री ने काव्य की आत्मा रस की प्रतीति एवं वर्धन हेतु वैदर्भी, पाञ्चाली, गौड़ी इत्यादि रीतियों के उदाहरण आलोच्य काव्यों से देकर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि कवि कालिदास वैदर्भी रीति का अप्रतिम कवि है। उनकी अल्पसमास युक्त रचना, रसाभिव्यक्ति में पूर्ण सक्षम है। रामपाणिवाद भी वैदर्भी रीति का कवि है। उनका शारिका सन्देश भावों की विविधता से उतना सम्पन्न एवं समृद्ध नहीं है जितना कि कालिदास का मेघदूत। आलोच्य दोनों कवियों ने हृदय की मार्मिक अभिव्यक्तियों को पुटपाक सदृश अभिव्यञ्जित किया है। दोनों में क्षेत्र विस्तारगत समता भी है किन्तु जहाँ पुरुष के प्रणय निवेदन में प्रेम की निश्छल अभिव्यक्ति, मसृणता होती है वहीं नारी विरह में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कहीं न कहीं व्यंग्य या उपालम्भ भी होता है। यद्यपि जीव गोस्वामी, सनातन गोस्वामी आदि आचार्यों ने कान्ताभाव की भक्ति को अत्यन्त शुचि, पूज्य, उज्ज्वल एवं मेद्य कहा है तथा उसमें गलिद्राक्षा रस की भाँति भावों का विस्तार और वैविध्य होता है जिसका रामपाणिवाद में अभाव सा है। यद्यपि मधुर उपासना शारिका सन्देश में अंगीरस के रूप में प्रयुक्त है फिर भी उसमें वैदर्भी रीति का उतना उत्कर्ष नहीं देखने को मिलता जितना कालिदास के मेघदूत में। कवि कालिदास ने मेघों की विभिन्न छटाओं नदी,

सरोवर, ग्राम बालाएं, देवालय आदि के माध्यम से केवल यक्ष के विरह को ही व्यञ्जित नहीं किया अपितु तदयुगीन सांस्कृतिक सम्पदा का सम्पन्न रूप भी उपस्थित किया है और इस कार्य में वैदर्भी रीति का अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान है। कव्याचार्यों ने अलंकार रूप में प्राप्त वक्रोक्ति के जिस रूप की व्याख्या की है, परवर्ती आचार्यों ने उसे एक सम्प्रदाय का ही रूप दे दिया है।

वस्तुतः वक्र व्यापार से युक्त वैदग्ध्यपूर्ण भंगीभणिति सरल, सहृदय और विद्वानों को एक साथ मुग्ध करती है। इस अलंकार के प्रयोग में भणिति की ही प्रधानता है। इसे कुन्तक ने काव्य की आत्मा रूप देने के लिए शब्द, पद, वाक्य और प्रबन्ध आदि भेदों का विस्तृत विवेचन किया है। मेघदूत और शारिका सन्देश में वक्रोक्ति अलंकार के रूप में तो मिलता ही है साथ ही उसके अनेक उपभेद भी मिलते हैं। मेघदूत में पदगत वक्रोक्ति के अनेक अच्छे उदाहरण मिलते हैं क्योंकि उसमें सार्वजनीन सूक्तियों का बाहुल्य है। अन्त में शोधकर्त्री ने वाच्यातिशायिनी व्यंग्य के लिए ध्वनि के दो भेद करके क्रमशः रस ध्वनि का विवेचन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला है कि आलोच्य दोनों काव्य विप्रलम्भ श्रृंगार के काव्य हैं। यद्यपि शारिका सन्देश मधुरा भक्ति का काव्य कहा गया है। रस ध्वनि के साथ ही भाव ध्वनि एवं भावसन्धि, रसाभास के लक्षण एवं उदाहरण देकर अन्त में मध्यम काव्य के रूप में स्वीकृत गुणीभूत व्यंग्य के कुछ उदाहरण दिए हैं। देखा गया है कि मेघदूत और शारिका सन्देश विप्रलम्भ श्रृंगार का वह अगाध समुद्र है जिसमें भावोच्छलन की तरंगे है। नूतन कल्पना विधान की मुक्ताएँ हैं जो भविष्य में भी पाठकों को आकृष्ट करने में पूर्ण समर्थ हैं। यद्यपि काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों का प्रतिपादन कालिदास के बाद हुआ है तथापि कवि कालिदास की अभिनव उन्मेषशालिनी प्रतिभा में इन सिद्धान्तों में प्राप्त मूलतत्वों के उदाहरण सर्वत्र मिल जाते हैं। शारिका सन्देश का कवि रामपाणिवाद काव्यशास्त्र का पण्डित है। अतः शारिका सन्देश में अलंकार, रीति, गुण, वक्रोक्ति, ध्वनि आदि के व्यावहारिक उदाहरण सुगमता से मिल जाते हैं। समग्र रूप से कहा जा सकता है कि दोनों आलोच्य कवि के काव्यों में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में इन सिद्धान्तों के दर्शन काव्य रसिक कर लेता है। अपनी कल्पना के उन्मेष से सहृदय के मस्तिष्क में ऐसे चाक्षुष बिम्बों को निर्मित करता है कि पाठक उसकी ऋजुता, कोमलता और भाव विवृत्ति में चमत्कृत होकर रह जाता है।

उपसंहार
सहायक सामग्री

उपसंहार

अपारे काव्य संसारे कविरेव प्रजापति : सूक्ति में समीक्षक आचार्य ने श्रेण्य साहित्य के अनुशीलन एवं अनुशंसन का मापदण्ड निर्धारित कर कालजयी रचनाओं के वैशिष्ट्य का निरुपण किया है। राजशेखर ने काव्य पुरुष की परिकल्पना कर उसके जीवित लक्षण के रूप में जिस आत्मा की चर्चा की है, उसकी व्याख्या कहीं अलंकार, कहीं गुण, रीति, ध्वनि, वक्रोक्ति, रस आदि तत्वों के रूप में की गयी है। फिर भी बहुत कुछ ऐसा रह जाता है जो इन्द्रियगोचर से परे, मनसा, वाचा अनिर्वचनीय होता है। ऐसा साहित्य अद्वेद्य, अविभाज्य और अखण्ड होता है किन्तु बोध सौकर्य हेतु गद्य, पद्य मिश्र, प्रबन्ध, मुक्तक, नाटक, महाकाव्य, खण्डकाव्य इत्यादि रूपों में विभक्त कर उसके सौन्दर्य की भावमयी एवं वस्तुपरक व्याख्या संस्कृत साहित्य में ही नहीं पश्चिमी आलोचना जगत में भी हुई है।

काव्य रूप की दृष्टि से सन्देश काव्य, खण्डकाव्य कहे गये हैं, जिनमें जीवन के कुछ अंशों का पल्लवन कवि करता है। इसे हम गीतिकाव्य भी कहते हैं, जिसमें सुख, दुःखात्मक अनुभूतियों का आत्मप्रकाशन संगीतात्मक दृष्टि से होता है। कहना नहीं होगा कि गीतिकाव्य में भावों की प्रबलता और बहुलता होती है। शोधकर्त्री ने कालिदास के मेघदूत एवं शारिका सन्देश का काव्यशास्त्रीय तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने के लिए शोध-प्रबन्ध के प्रारम्भ में बन्धमुक्त, गीति आदि की दृष्टि से काव्यों का वर्णन कर सन्देश काव्यों के लिए राग बोध का समन्वय, प्रभाव, लयात्मकता आदि का विवेचन विश्लेषण भारतीय एवं पश्चिमी आलोचकों के दृष्टि से किया है। दूतकाव्यों की परम्परा का विश्लेषण करने के पूर्व दूतकाव्यों में निहित तत्वों का उल्लेख कर यह कहा गया है कि विरही व्यक्ति चेतन-अचेतन के विवेक को खोकर अपने हृदय के उद्दाम वेग को येन-केन प्रकारेण प्रेषित करना चाहता है और यह परम्परा वैदिक काल से लेकर रामायण, महाभारत, संस्कृत के ललित साहित्य में जिसमें मेघदूत का अन्यतम स्थान है। मेघदूत एवं शारिका सन्देश का काव्यशास्त्रीय तुलनात्मक अध्ययन सात अध्यायों में प्रस्तुत किया गया है। प्रथम दो अध्याय दूतकाव्य की परम्परा, संस्कृत एवं अपभ्रंश साहित्य के सन्देश काव्य उल्लिखित किये गये हैं, जिसमें जैन कवियों द्वारा लिखित धार्मिक सन्देश काव्य उल्लिखित हैं। यहाँ यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि इन सन्देश काव्यों में समानताएँ एवं विषमताएँ दिखाई पड़ती हैं। अतः दूतकाव्य के सामान्य लक्षणों की चर्चा करते हुए यह निरूपित किया गया है कि इसमें विरह के मूल कारण को प्रस्तावना, दूत योजना, मार्गवर्णन, मार्ग में पड़ने वाले प्रदेश के आंचलिक सौन्दर्य, मन्दिर या मकान का परिज्ञान, प्रिय-प्रेमी की दशा, प्रेषती की भावनाएँ, सन्देश का प्रारम्भ, नायक या नायिका का परिज्ञान और उपसंहार का चित्रण, निरुपण, सामान्य रूप से हुआ है।

द्वितीय अध्याय में कालिदास और रामपाणिवाद का सामान्य परिचय देने के लिए दोनों के समय और कृतित्व का सामान्य परिचय प्रस्तुत किया गया है जिसके निष्कर्ष यह हैं -

1. कालिदास का समय ई0पू0 से लेकर ई0 के चौथी, पाँचवी शताब्दी तक माना जाता है। रामपाणिवाद का समय निश्चित तो नहीं है लेकिन अन्तः बाह्य के आधार पर सत्रहवीं-अट्ठारहवीं शताब्दी के मध्य का समय स्वीकार किया गया है।

2. आलोच्य दोनों कवि भाषा, व्याकरण, विविध काव्य कलाओं, प्रकृति प्रेम, मानव सौन्दर्य और कलाप्रिय हैं। ऐसा निष्कर्ष उनकी रचनाओं में वर्णित वस्तुओं से पता चलता है।

3. दोनों कवियों ने विभिन्न काव्य-विधाओं में अपनी रचनाएँ प्रस्तुत की है। रचनाओं का क्षेत्र सांस्कृतिक या पौराणिक रहे हैं।

4. कालिदास के नाटकों में परम्परया स्त्रीया अल्पज्ञ लोग प्राकृत भाषा का प्रयोग करते हैं, जबकि रामपाणिवाद ने प्राकृत भाषा में स्वतन्त्र रुप से ग्रन्थ का प्रणयन किया है।

5. कालिदास और रामपाणिवाद के मध्य पर्याप्त काल का अन्तर है। अतः परिस्थिति की विभिन्नता के कारण रचनाओं में चित्रित सांस्कृतिक परिवेश का अन्तर दिखाई पड़ता है।

6. मेघदूत प्रथम और मौलिक रचना है, जिसका अनुसरण रामपाणिवाद ने किया है।

7. कालिदास का यक्ष पुरुष है। प्रमादवश जिसे वर्षभर के लिए प्रिया का विरह शापरूप से प्राप्त है। निष्कर्ष यह है कि काव्य, नाटक तथा अन्य विधाओं में अपनी रचनाएँ प्रस्तुत करने वाले कालिदास एवं रामपाणिवाद में अनेक साम्य व वैषम्य दिखाई पड़ता है।

तृतीय अध्याय आलोच्य काव्य ग्रन्थों की कथावस्तु विश्लेषण से सम्बन्धित है। मेघदूत एवं शारिका सन्देश की कथावस्तु प्रस्तुत कर उसकी समीक्षा करते हुए यह कहा गया है।

1. मेघदूत का विरही पुरुष है तो शारिका सन्देश की विरहणी स्त्री है।

2. प्रेमी-प्रेमिका के वियोग का कारण भिन्न-भिन्न है। मेघदूत में प्रमाद के कारण वर्षभर का वियोग यक्ष को सहन करना पड़ता है जबकि शारिका सन्देश में विरह के मूल में ईर्ष्याजन्य मान वर्णन है।

3. मेघदूत का सन्देश वाहक जड़ मेघ है, जबकि शारिका सन्देश में शारिका को सन्देश वाहिका बनाया गया है क्योंकि दन्तकथा में यह प्रचलित है कि शारिका मानवी भाषा का अनुकरण कर सकती है।

4. मेघदूत में विस्तृत मार्ग और उसमें पड़ने वाले रम्य प्रदेश, उसकी भौगोलिक स्थितियाँ, नदी, पर्वत, ग्राम, नगर वहाँ के निवासियों के स्त्री-पुरुष सौन्दर्य का निरुपण कवि ने मनमोहक ढंग से किया है और यह वर्णन पूर्व और

उत्तर दो भागों में विभक्त है। मेघों के विभिन्न रूप उन पर पड़ती रश्मियों से उत्पन्न विभिन्न छटाएँ मेघ गर्जन से प्रियाओं का प्रिय के साथ गाढ़ालिंगन और विरहिणियों के दीर्घ दुःख निस्तार का निरूपण कवि ने किया है जबकि शारिका सन्देश में गोपिका का मान-मर्दन करने के लिए रुष्ट होकर कृष्ण का अम्बर नदीश क्षेत्र में जाकर देवालय में रहना शारिका के लिए तीन दिन में पहुँचकर सन्देश देने की क्षिप्रता के कारण प्राकृतिक परिवेश की उपेक्षा सी गयी है। कालिदास के उत्तरमेघ में यक्ष का सन्देश प्रिया की विरह विगलित दशा प्रेमी की अरन्तुद भावना और प्रिया के साथ मेघ का भातृजाया सम्बन्ध निरुपित कर अपनी कुशलता का समाचार देना सर्वथा नवीन रूप में प्रस्तुत किया गया है। शारिका सन्देश की सन्देशदात्री स्त्री है। अतः उसके विरह निवेदन में प्रेमी कृष्ण के माहात्म्य का गायन तो है किन्तु उसमें उपालम्भ का भी वर्णन है जो मेघदूत की पुरुष यक्ष की प्रकृति से मेल नहीं खाता। मेघदूत में यक्ष और प्रिया का मिलन परिकल्पना या प्रतीममान अर्थ रूप में प्रयुक्त है क्योंकि सन्देश देकर वर्ष भर बाद जब मेघ वर्षाऋतु के आषाढ़ मास में रामगिरि की पहाड़ियों से आएगा तब तक उसकी शापावधि समाप्त हो जाएगी। रामपाणिवाद ने शारिका द्वारा सन्देश का प्रेषण कृष्ण द्वारा मिलन का आश्वासन और अन्त में यमुना कुञ्ज में कृष्ण गोपी के मिलन का प्रत्यक्ष वर्णन कवि की नवीन कल्पना और मेघदूत से उसकी भिन्नता निरुपित करता है। कहना नहीं होगा कि मेघदूत और शारिका सन्देश में भागवत समानता तो है किन्तु परिस्थिति एवं अन्त में मिलन की अवस्था का वर्णन कर कवि ने उसे एक नये धरातल पर प्रस्तुत किया है।

चतुर्थ अध्याय में भाव एवं रस का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। काव्य में रस की महत्ता निरुपित करते हुए यह लिखा गया है कि किसी समर्थ एवं भावनावान कवि की रचना में अंकुरित रूप से रस का प्रयोग तभी हो सकता है जब लक्षणानुधावन न कर विभाव, अनुभाव सञ्चारी भावों की संख्या न गिनाकर इनका ऐसा विवेचन किया जाय जिसमें कार्य व्यापार मूर्तिवन्त हो उठे। दोनों काव्य वियोग से सम्बन्धित है अतः प्रारम्भ में वियोग के भेद, पूर्वराग, मान, प्रवास, करुण का सैद्धान्तिक विवेचन कर कालिदास के मेघदूत में शापज एवं प्रवासजन्य विप्रलम्भ श्रृंगार का चित्रांकन हुआ है। इस हेतु आलम्बन एवं आश्रय की विविध कायिक दशाओं का चित्रांकन उनकी भावोच्छलित उद्दाम मांसल, श्रृंगारिक भावनाओं का चित्रांकन कालिदास ने किया है। उसमें रस पेशलता, मार्मिकता, सहृदयता, प्रभविष्णुता और रागात्मकता है। रामपाणिवाद तक आते-आते दक्षिण में आलवार सन्तों एवं विभिन्न आचार्यों द्वारा मधुराभक्ति का अजस्त्र स्रोत प्रवाहित हो रहा था। अतः रामपाणिवाद ने कान्ता भक्ति को श्रेष्ठ रस निरुपित करने के लिए ऐसे कथानक का चयन किया है। स्त्री में पुरुष को रिझाने के लिए जो मान-मनोवृत्ति होती है उसका उपयोग कर रामपाणिवाद ने मधुराभक्ति का रसपेशल और हृदयावर्जक चित्रांकन किया है। यह मधुराभक्ति परम गोपनीय, शुचि, मेद्य, उज्ज्वल और अथर्व है जिसमें प्रिय कृष्ण के प्रति रुपासक्ति,

गुणासक्ति, विभूति आसक्ति का वर्णन कवि ने किया है, क्योंकि उपालम्भ के लिए भगवान के दशावतारों और उनके द्वारा शत्रु संहार का उल्लेख कर गोपी एक ओर महिमा का गायन करती है तो दूसरी ओर उपालम्भ के रूप में यह कहना चाहती है कि काम जैसे तुच्छ शत्रु का मर्दन भगवान नहीं करते है। इसका क्या कारण हो सकता है। मेघदूत का अंगीरस विप्रलम्भ श्रृंगार है तो शारिका सन्देश का मधुराभक्ति है।

रसों के इस निरूपण के पश्चात् काव्य में प्राप्त अन्य रसों के उदाहरण देकर विविध अनुभाव एवं सञ्चारी भावों के लक्षण एवं उदाहरण देकर यह कहने का प्रयास किया गया है कि दोनों कवि रस सिद्ध कवि हैं। अन्तर इतना है कि मेघदूत में प्रिय की भावनाएँ कायिक स्तर तक ही सीमित है जबकि मधुराभक्ति, भावभक्ति, प्रेमाभक्ति कहलाती हैं जिसमें ईश्वर को परम प्रेमास्पद और आत्मा को उसकी प्रेमिका मानकर एतद्विषयक साधना का चित्रांकन किया जाता है।

निष्कर्ष यह है कि रसगत भिन्नता होने पर भी दोनों काव्यों में भावगत कामनाएँ, प्रिय की अभिलाषाएँ, मिलन की उत्कट चाह समान रूप से चित्रित है।

पंचम अध्याय आलोच्य दूतकाव्यों में प्रकृति एवं अन्य वस्तु वर्णन से सम्बन्धित है। सामान्य रूप से मानव एवं प्रकृति के सम्बन्धों का आलोच्य दोनों काव्यों में नाम परिगणन संश्लिष्ट उद्दीपन आदि रूपों का चित्रांकन और उसका विश्लेषण करके यह निष्कर्ष निकाला गया है कि -

1. कालिदास प्रकृति के अन्यतम पुजारी हैं, उसके सौन्दर्य के उपासक ही मेघदूत में प्रकृति के ऐसे संश्लिष्ट बिम्ब अंकित हैं जिन्हें पढ़कर पाठक भाव विभोर हो उठता है। मेघों की वप्रक्रीड़ा सप्तरंगी विविध आकार-प्रकार वाले मेघों की छाया से ग्राम बधूटियों का अपांग दृष्टि दर्शन, मुग्धाओं की चकित चितवन, पूजा के समय मेघ गर्जन करते हुए मेघों की भक्ति का प्रदर्शन आदि ऐसे प्रकृति के रम्य और मोहक चित्र जो कालिदास ने अंकित किये हैं इससे उनकी सूक्ष्म निरीक्षण दृष्टि तो प्रतीत होती ही है साथ ही प्रकृति की सहानुभूति मानव प्रकृति के अनादिकालिक सम्बन्ध, आकाशस्थित मेघों की छाया से जलाशयों, आम्र कुञ्जों आदि की शोभा के विविध रूपों का वर्णन करके भी कवि तृप्त नहीं हुआ है। शारिका सन्देश में प्रकृति के ऐसे भव्य उदान्त चित्र नहीं हैं क्योंकि शारिका के पास इनको देखने का अवकाश ही नहीं था।

2. कालिदास के प्रकृति चित्रण में बिम्ब ग्रहण की शक्ति आद्यन्त विद्यमान है। चाहे वह धारासार वर्णन हो या बूँद-बूँद पर बरसते टपकते बादलों में पड़ती सूर्य रश्मियों से बनते मण्डप के झालर हों। अन्य वस्तु वर्णन में दोनों कवियों ने सौन्दर्य, ग्राम, नगर, सरोवर, तीर्थ, मन्दिर, देवालय आदि का चित्रांकन किया है। इससे आलोच्य दोनों कवियों की बहुज्ञता का पता लगता है। कालिदास ने मानव सौन्दर्य के इतने बहुविध रूप अंकित किये है कि हम

संदेह में पड़ जाते है कि कालिदास को प्रकृति का कवि कहें या मानव सौन्दर्य के अप्रतिम रूप का चितेरा कहें सामान्य स्त्री पुरुषों के सौन्दर्य, उनकी चेष्टाओं तथा अलकापुरी के गणिकाओं की अंगराग सहित प्रसाधन सामग्री का और व्यञ्जना के माध्यम से उनके काम प्रेम सौन्दर्य का जैसा चित्रांकन कालिदास ने किया है ऐसा नैसर्गिक चित्रांकन किसी कवि ने नहीं किया।

षष्ठ अध्याय दूतकाव्यों के भाषा सौन्दर्य वर्णन से सम्बन्धित है इसके अन्तर्गत संस्कृत के भाषिक प्रतिमानों की संक्षिप्त चर्चा कर अर्थ की व्यञ्जना करने वाले अभिधा, लक्षणा, व्यञ्जना के भेदों के उदाहरण लक्षण ग्रन्थों के अनुसार दिया है। कालिदास और रामपाणिवाद दोनों ध्वनिप्रधान कवि हैं। लक्षणा और व्यञ्जना के विविध रूप इनमें मिलते हैं। वक्ता के कथन में जिस भाषा का प्रयोग है वह भाषा भावानुकूल और रसानुकूल है। दोनों कवियों में अभिधा प्रधान विवरणात्मक शैली के साथ पात्रानुकूल भाषा के उदाहण देकर यह सिद्ध किया गया है कि कालिदास यदि कोमल, मसृण, सुचिक्कण निष्णात हैं तो रामपाणिवाद संस्कृत और प्राकृत के अपभ्रंश का ज्ञाता और कुशल प्रयोक्ता हैं और उन्होंने भाषा में नारात्मकता तथा ध्वन्यत्मकता उत्पन्न करने के लिए यमकाभास शब्दों का बहुत प्रयोग किया है। ऐसी भाषा माघ और श्रीहर्ष की याद दिलाती है।

सप्तम अध्याय अन्तिम अध्याय है। इसमें भारतीय प्राक्तन आचार्य प्रणीत काव्य सिद्धान्तों में से अलंकार, रीति, गुण, वृत्ति, वक्रोति, ध्वनि आदि के सिद्धान्तों के लक्षण लक्ष्य ग्रन्थों से लेकर उदाहरण आलोच्य सन्देश काव्यों से दिये गये है। आलोच्य दोनों काव्यों में शब्द और अर्थालंकारों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत कर यह कहा गया है कि कालिदास को उपमा और अर्थान्तरन्यास अत्यन्त प्रिय हैं क्योंकि उपमा के लिए जो अप्रस्तुत विधान कवि ने प्रस्तुत किये हैं। उसका क्षेत्र अत्यन्त व्यापक हैं और अर्थान्तरन्यास के अन्तर्गत मेघदूत में ऐसी सूक्तियों का प्रयोग है, जिनसे मानव की गहन अनुभूतियों एवं कवि की सूक्ष्म निरीक्षण प्रवृत्ति का पता लगता है। उपमा अलंकार में उपमान वैविध्य हों तो कवि की भावुकता उतनी ही सफल होती है। मेघदूत की सूक्तियों में तत्वान्वेषण के साथ तथ्यान्वेषण है। लोक व्यवहार ज्ञान है और बुद्धि का विश्लेषण भी वे कोरी कल्पनाजन्य नहीं या महल में बैठकर इन सूक्तियों की कल्पना कर नहीं लिखी गयी हैं। अर्थान्तरन्यास में प्रयुक्त सूक्तियाँ प्रेम, नीति, सौन्दर्य, अध्यात्म विषयक और लोक व्यवहारपरक हैं। रामपाणिवाद शब्दालंकार का विशिष्ट कवि है। वृत्त, श्रुत्य और यमक प्रधान शब्दों में बुद्धि कौशल और व्याकरण वैदुष्य का उपयोग होता है क्योंकि इनके पीछे आचार्यत्व या पांडित्य प्रदर्शन की कामना रहती है।

दोनों कवियों ने ओज, प्रसाद, माधुर्य के उदाहरण उपस्थित किये हैं। कालिदास माधुर्य का कवि है। मेघदूत में माधुर्य के साथ ओज का मिश्रण कर कवि ने एक नये गुणजनित रस का प्रयोग किया है। साथ ही

समाधि, सौकुमार्य , गौणी रीति एवं परुषावृत्ति, वैदर्भी एवं उपनागरिका वृत्ति, पांचाली एवं कोमलावृत्ति पर आधारित शब्द एवं वाक्यों का प्रयोग किया है। वैदर्भी रीति तो कालिदास को अत्यन्त प्रिय है क्योंकि इसमें कोमल शब्दों का अनुस्वार प्रधान वर्णो का नातिदीर्ध समासों का प्रयोग होता है। रामपाणिवाद वैदर्भी की अपेक्षा गौणी रीति का कवि है।

काव्य की आत्मा वक्रोति सिद्धान्त के अनुसार वर्णित कर शब्द, पद, वाक्य, प्रकरण आदि वक्रताओं के लक्षण और उदाहरण देकर यह कहा गया है कि दोनों कवियों को वक्रोति सिद्धान्त का पूर्ण ज्ञान था। नारी के वचनों में जो शब्द या पदगत वक्रता होती है, वह शारिका सन्देश में अधिक दिखाई देती है।

काव्य में प्रतीममान अर्थ की चारुता, अर्थ गर्भत्व और जो अर्थ चमत्कार होता है, उसकी व्याख्या ध्वनि सिद्धान्त के ग्रन्थों के अनुसार कर भाव ध्वनि, संलक्ष्य, अलक्ष्य ध्वनि, रसाभाव, भावाभास आदि के उदाहरण देकर शोधकर्त्री ने यह बताने का प्रयास किया है कि भले ही लक्षणानुधावन के रूप में ध्वनि के भेद या उपभेदों के उदाहरण हमें दोनों काव्य में मिल जायें परन्तु दोनों कवि रस या रस ध्वनि के प्रमुख कवि हैं क्योंकि रस जो सर्वजन ग्राह्य, सर्वजनीन, सार्वकालिक, हृदयसंवेद्य होता है जिसमें श्रोता, प्रमाता या भावक आनन्दोपलब्धि करता है। वही तो कवि का काम्य है।

निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि वस्तु विन्यास, चरित्र-चित्रण, प्रकृति एवं अन्य वस्तु वर्णन, भाषा शिल्प, अलंकार, गुणरीति, ध्वनि आदि की दृष्टि से आलोच्य कवियों में अनेक समानताएँ हैं। कालिदास के मेघदूत की परिकल्पना का अनुसरण अनेक कवियों ने किया है उसी के आधार पर अनेक पक्षियों को दूत बनाकर दौत्यकर्म सम्पन्न कराया गया है। इस दृष्टि से कालिदास और रामपाणिवाद में काव्यशास्त्रीय दृष्टि से अनेक समानताएँ एवं विषमताएँ हैं किन्तु कथावस्तु में मिलन की परिकल्पना, नायिका की ग्लानि, प्रेमव्यञ्जना का आधिक्य, मधुराभक्ति के कारण भावाधिक्य तथा शिल्पगत अन्तर रामपाणिवाद को कालिदास से अलग खड़ा करता है। शारिका सन्देश न तो जैन कवियों की भाँति समस्यापूर्ति का काव्य है जिसके अन्तिम या किसी एक चरण को लेकर काव्य लिखा जाता है, न ही यह विलासिनियों, गणिकाओं, वेश्याओं के मांसल, कामुक चेष्टाओं का काव्य है, यह तो विरह विधुरा गोपी के प्रेम की करुण गाथा है जिसमें द्रवणशीलता, चारुता, प्रभावोत्पादकता और उपासना के क्षेत्र में गुह्नता निरुपित है।

शोधकर्त्री को यह विश्वास है कि दक्षिण भारत में संस्कृत के प्रसार में रामपाणिवाद ने जितना प्रयास किया है, विविध काव्य रुपों में अपने रचना कौशल का प्रदर्शन किया है, भावना और कल्पना तथा शैली शिल्प की दृष्टि से शारिका सन्देश उनके रचना कर्म का प्रतिनिधित्व करने वाला काव्य है। इस दिशा में अन्य काव्यों से तुलना समीक्षा करना नये आयाम उद्घाटित करेंगे।

ग्रंथ सूची

1.	(क) आलोच्य काव्य	डॉ0बाबूराम त्रिपाठी	महालक्ष्मी प्रकाशन, आगरा–2
	(1) मेघदूतम–कालिदास		
	(2) मेघदूतम	डॉ0विजेन्द्र कुमार शर्मा	साहित्य भण्डार–मेरठ
2.	(ख) शारिका सन्देश	सी0एम0नीलकण्ठन	नाग पब्लिशर्स–दिल्ली
3.	चिन्तामणि	रामचन्द्र शुक्ल	इण्डियन प्रेस इलाहाबाद
4.	काव्यमीमांशा	राजशेखर	बिहार राष्ट्र भाषा परि0पटना
5.	काव्यालंकार	भामह	बिहार राष्ट्र भाषा परि0पटना
6.	काव्यादर्श	दण्डी	चौखम्भा संस्करण
7.	काव्य प्रकाश	मम्मट	बाल बोधनी प्रकाशन
8.	काव्य प्रकाश	मम्मट डॉ0हरिदत्त शास्त्री)	
9.	साहित्य शास्त्र के सिद्धान्त	डॉ0सरोजनी मिश्र	साहित्य प्रकाशन,मेरठ
10.	समीक्षा के मान और हिन्दी समीक्षा की विशिष्ट प्रवृत्तियाँ	डॉ0प्रताप नारायण टण्डन	विवेक प्रकाशन, लखनऊ
11.	साहित्य दर्पण	विश्वनाथ (1) मोतीलाल बनारसी दास	साहित्य भण्डार मेरठ
12	पोयटिक्स	अरस्तु (अरस्तु का काव्य शास्त्र) डॉ0नगेन्द्र	भारती भण्डार, इलाहाबाद
13	संस्कृत साहित्य का इतिहास	डॉ0कपिल देव द्विवेदी	–
14	विचार और विश्लेषण	डॉ0नगेन्द्र	आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली
15	काव्य के रूप	डॉ0गुलाबराय	आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली
16	दीपशिखा	महादेवी वर्मा	प्रयाग
17.	संस्कृत साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास	डॉ0बाबूराम त्रिपाठी	विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा
18	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी गीति का शिल्प विधान	डॉ0रामअत्रि सिंह	–
19	आधुनिक गीति और नवीन युग बोध	डॉ0विजयेन्द्र स्नातक	–

20.	आधुनिक गीतिकाव्य का शिल्प विधान	डॉ0मंजू गुप्ता	—
21	संस्कृत आलोचना	डॉ0 आचार्य बल्देव उपाध्याय	चौखम्बा संस्कृत सिरीज काशी
22.	हिन्दी काव्य शैलियों का विकास	डॉ0हरदेव बाहरी	—
23.	काव्य रूपों के मूल स्रोत और उनका विकास	डॉ0शकुन्तला दुबे	हिन्दी प्रचारक, वाराणसी
24.	संस्कृत के सन्देश काव्य	डॉ0रामकुमार आचार्य	रामलाल गोयल, अजमेर
25.	मनुस्मृति	—	—
26.	ऋग्वेद	—	—
27.	बाल्मीकि रामायण	बाल्मीकि	गीता प्रेस, गोरखपुर
28.	महाभारत	वेदव्यास	गीता प्रेस, गोरखपुर
29.	श्रीमद् भागवत	"	गीता प्रेस, गोरखपुर
30.	हिस्ट्री ऑफ संस्कृत क्लासिक लिटरेचर	श्रीकृष्ण माचारियर	बनारसीदास, वाराणसी
31.	इण्डियन एन्टिक्वेरी	—	
32.	मेघदूत	मेरूतुंग	जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर
33.	शीलदूत	चरित्र सुन्दर गणि	यशोविजय ग्रन्थमाला, बनारस
34.	पवनदूत	वादिचन्द्र सूरि	हिन्दी जैन साहित्य प्रसारक ,बम्बई
35.	चेतोदूत	अज्ञात कवि	जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर
36.	मेघदूत समस्या लेख	श्री मेघविजय	जैन आत्मानन्द सभा, भावनगर
37.	महाकवि कालिदास	डॉ0रमाशंकर तिवारी	चौखम्भा प्रकाशन, वाराणसी
38.	महाकवि कालिदास और अभिज्ञान शाकुन्तल	डॉ0मधु सक्सेना	मानसी प्रकाशन, मेरठ

39.	कालिदास	वासुदेव विष्णु मिराशी	–
40.	अर्ली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया	वी0सेण्ट स्मिथ	–
41.	हिस्ट्री ऑफ इण्डिया लिटरेचर	विण्टनिज–मोतीलाल बनारसीदास	
42.	कालिदास का स्थिति काल	प्रो0चट्टोपाध्याय	–
43.	एपिग्राफिक इण्डिया भाग–7	चन्द्रबली पाण्डेय	–
44.	मालविकाग्निमित्रम	कालिदास–कालिदास ग्रन्थावली	सम्मेलन प्रकाशन
45.	रामपाणिवाद का नाट्य साहित्य	डॉ0नमिता अग्रवाल	इन्दु प्रकाशन, दिल्ली
46.	बाल्मीकि रामायण एवं संस्कृत नाटकों में राम	डॉ0मंजुला सहदेव	–
47.	नाट्य शास्त्र	भरतमुनि	ओरियण्टल इंस्टीट्यूट, बड़ौदा
48.	अरस्तु का काव्यशास्त्र	डॉ0नगेन्द्र	भारती भण्डार, इलाहाबाद
49.	दशरूपक	धन्नजय–अनु0गोविन्द त्रिगुणायत	साहित्य निकेतन, कानपुर
50.	काव्यालंकार	रूद्रट	निर्णय सागर प्रेस, बम्बई
51.	काव्यानुशासन	हेमचन्द्र	महावीर जैन विद्यालय, बम्बई
52.	भाव प्रकाश	शारदातनय	ओरियण्टल इंस्टीट्यूट, बड़ौदा
53.	सरस्वती कण्डाभरण	भोजराज	राजकीय मुद्रालय, त्रिवेन्द्रम
54.	रस गंगाधर	जगन्नाथ	चौखम्बा संस्कृत सिरीज, वाराणसी
55.	ध्वन्यालोक	ध्यानन्द वर्धन	–
56.	हरिभक्त रसामृत सिन्धु	रूप गोस्वामी	–
57.	उज्जवल नीलमणि	रूप गोस्वामी	काव्यमाला बम्बई
58.	वृहदारण्य कोपनिषद	–	गीता प्रेस
59.	काव्यदर्पण	रामदहिन मिश्र	ग्रन्थमाला कार्यालय,पटना

60.	साहित्यलोचन	श्याम सुन्दर दास	–
61.	हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण	डॉ0किरन कुमारी गुप्त	आगरा
62.	कालिदास	के0एस0रामस्वामी	–
63.	काव्यालंकार सूत्र	वामन	चौखम्भासंस्कृत बुक डिपो,बनारस
64.	वक्रोक्ति जीवितम्	कुन्तक–डॉ0नगेन्द्र	दिल्ली
65.	हिन्दी काव्यालंकार सूत्र	भाण्यकार डॉ0देवेन्द्रनाथ शर्मा	बिहार राष्ट्र भाषा परि0पटना
66.	हिन्दी ध्वन्यालोक	आचार्यविश्वेश्वर सम्पा0डॉ0नगेन्द्र	दिल्ली
67.	रामचरित मानस वारवैभव	डॉ0अम्बा प्रसाद सुमन	किसान भारती, नई दिल्ली
68.	ध्वन्यालोक लोचन	अभिनव गुप्त	–
69.	पाणिनीय शिक्षा	–	–
70.	सूर साहित्य का छन्द शास्त्रीय अध्ययन	डॉ0गौरीशंकर मिश्र	–
71.	रामचरित मानस की काव्य भाषा	डॉ0रामदेव प्रसाद	वि0मु0प्रकाशन,साहिबाबाद
72.	पाश्चात्य काव्य शास्त्र के सिद्धान्त	डॉ0रामदत्त भारद्वाज	दिल्ली
73.	वृत्तरूनाकर	डॉ0भट्टनारायण	चौखम्बा संस्कृत सिरीज ,वाराणसी
74.	विश्वकवि कालिदास एक अध्ययन	डॉ0सूर्यनारायण व्यास	–
75.	दि कन्ट्रीव्यूशन ऑव केरल टु संस्कृत लिटरेचर	डॉ0के0कु0राजा (वी.राघवन)	संस्कृत विश्वविद्यालय, मद्रास
76.	आधुनिक संस्कृत नाटक	डॉ0रामजी उपाध्याय	सीरीजन 23 इलाहाबाद
77.	ऋतु संहार	कालिदास–कालिदास ग्रन्थावली	भारत प्रकाशन मंदिर अलीगढ़

78.	अभिज्ञान शाकुन्तलम	कालिदास	"
79.	रघुवंश	कालिदास	"
80.	कुमार संभव	कालिदास	"
81.	हिन्दी साहित्य का इतिहास	रामचन्द्र शुक्ल	नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
82.	मुक्तक काव्य परम्परा और बिहारी	डॉ0रामसागर त्रिपाठी	अशोक प्रकाशन–दिल्ली
83.	रामपाणिवाद प्राकृत वृत्ति	Pablised in Adyar library	S.No.54
84.	रामपाणिवाद बालपथ्य	–	
85.	आधुनिक संस्कृत साहित्य	डॉ0हीरालाल शुक्ल	रचना प्रकाशन, जयपुर
	आधुनिक संस्कृत नाटक	भाग 1 प्रथम संस्करण	संस्कृत परिषद सागर विश्वविद्यालय,सागर